B.Ed.SE-41

सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – एक : सामाजिक अध्ययन के आधार 3–76

इकाई 1 : सामाजिक अध्ययन की प्रकृति 7–20

इकाई 2 : सामाजिक अध्ययन का अधिगम, सामाजिक अध्ययन का मनोविज्ञान, सामाजिक अध्ययन का अधिगम और शिक्षण, निर्मितवाद, अभिनयवाद 21–48

इकाई 3 : पाठ्यक्रम सुधार, सामाजिक अध्ययन शिक्षण के उद्देश्य तथा लक्ष्य 49–76

खण्ड – दो : सामाजिक अध्ययन शिक्षण की रणनीतियाँः I 77–142

इकाई 4 : सामाजिक अध्ययन शिक्षण का सम्प्रत्यय 81–98

इकाई 5 : किसी सिद्धान्त अथवा योजना की व्याख्या द्वारा अधिगम तथा खोज द्वारा अधिगम 99–114

इकाई 6 : समूह में सामाजिक अध्ययन का अधिगम, समूह कार्य, सहकारी अथवा सहयोगात्मक शिक्षण रणनीति 115–142

खण्ड – तीन : सामाजिक अध्ययन शिक्षण की रणनीतियाँ : II 143–210

इकाई 7 : सामाजिक अध्ययन अधिगम में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ तथा अनौपचारिक उपागम 147–166

इकाई 8 : सामाजिक अध्ययन अधिगम में अभिक्रमित अनुदेशन 167–180

इकाई 9 : सामाजिक अध्ययन शिक्षण के नवीन उपागम 181–211

खण्ड – चार : सामाजिक अध्ययन का तथा सामाजिक अध्ययन के लिए आंकलन 211–300

इकाई 10 : शिक्षण सम्प्रत्यय के मापनीय उद्‌देश्य सामान्यीकरण, समस्या समाधान और योजना विधि 215–242

इकाई 11 : छात्र तथा परिणाम प्रक्रिया के आंकलन हेतु परीक्षण पदों का निर्माण अथवा रचना, निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण 243–272

इकाई 12 : इकाई परीक्षणों का निर्माण, ब्लू प्रिन्ट, प्रश्न पत्र का निर्माण 273–300

खण्ड – पाँच : सामाजिक अध्ययन के अधिगम संसाधन 301– 352

इकाई 13 : अधिगम संसाधन, अर्थ, प्रकार, संसाधनों की तैयारी तथा उपयोग 305–318

इकाई 14 : पाठ्य पुस्तक, जर्नल्स, हस्त पुस्तिकाएं, छात्रों की कार्य पुस्तिकाएं 319–338

इकाई 15 : सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला, कक्षा के बाहर तथा कक्षा के अन्दर सामाजिक अध्ययन 339–352

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.SE-41

सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

खण्ड – 1

सामाजिक अध्ययन के आधार

इकाई – 1

सामाजिक अध्ययन की प्रकृति 7–20

इकाई – 2

सामाजिक अध्ययन का अधिगम, सामाजिक अध्ययन का मनोविज्ञान, सामाजिक अध्ययन का अधिगम और शिक्षण, निर्मितवाद अभिनयवाद 21–48

इकाई – 3

पाठ्यक्रम सुधार, सामाजिक अध्ययन शिक्षण के उद्देश्य तथा लक्ष्य 49–80

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.SE-41 सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह	कुलपति, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर छत्रसाल सिंह	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर के० एस० मिश्रा	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर धनन्जय यादव	विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ० जी० के० द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लखक

डॉ० शक्ति शर्मा	सह आचार्य, बी० एड० विभाग, के० पी० बी० एड० ट्रेनिंग कॉलेज, प्रयागराज

सम्पादक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर विद्या अग्रवाल	पूर्व विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशकः

कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

Year -2023

ISBN: 978-81-963573-0-6

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj ©UPRTOU, 2023. Pedagogy of English is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

Published by: Uttar Pradesh Rajarshi tandon Open University Prayagraj, Registrar by Vinay Kumar - 2025

Printed by : Cygnus Information Solution Pvt.Ltd., Lodha Supremus Saki Vihar Road, Andheri East, Mumbai

खण्ड परिचय–1

खण्ड–1 के अन्तर्गत सम्मिलित तीन इकाइयों यथा इकाई संख्या 01 – "सामाजिक अध्ययन की प्रकृति", इकाई संख्या 02 "सामाजिक अध्ययन का अधिगम, मनोविज्ञान, शिक्षण, निर्मितवाद, अभिनयवाद", तथा इकाई संख्या 03 – "पाठ्यक्रम में सुधार तथा सामाजिक अध्ययन के लक्ष्य और उद्देश्य का अध्ययन विस्तार से करेंगे।"

इकाई संख्या 01 के माध्यम से बीसवीं शताब्दी की एक महत्वपूर्ण देन "सामाजिक अध्ययन" नामक विषय की प्रकृति से आप परिचित हो सकेंगे, जिसकी हमारे राष्ट्र के लिए अतिशय महत्ता को माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन टीम द्वारा दर्शाया गया है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप इस बात को भली भांति समझ सकेंगे कि छात्रों को यह विषय मानवीय सम्बन्धों का ज्ञान सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनो रूप से ही करा सकता है।

इकाई संख्या 02 के अन्तर्गत सामाजिक अध्ययन का शिक्षण और अधिगम का विस्तार से अध्ययन करेंगे। साथ ही साथ 21वीं शताब्दी की नवीन अधिगम प्रविधियों जैसे निर्मितवाद तथा अभिनयवाद से भी आप परिचित हो सकेंगे।

इकाई संख्या – 03 के माध्यम से आप सामाजिक अध्ययन के लक्ष्य तथा उद्देश्य से परिचित हो सकेंगे। आप में यह समझ विकसित हो सकेगी कि आखिर प्रस्तुत विषय को राष्ट्रव्यापी महत्व क्यों प्रदान किया गया तथा आदर्श नागरिक व सामाजिक चरित्र के निर्णायक तत्व जैसे– सहयोग, सहकारिता, सह–अस्तित्व, सम्मान, आदर, नेतृत्व, कर्तब्यपरायणता आदि जैसे गुणों को यह विषय किस प्रकार छात्रों में विकसित करता है। सन्दर्भतः आप पाठ्यक्रम सुधार समय–समय पर क्यों जरूरी है, इसका भी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

इकाई–1 सामाजिक अध्ययन की प्रकृति

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 सामाजिक अध्ययन विषय का स्वरूप

1.3.1 सामाजिक अध्ययन विषय के सन्दर्भ में की गई संस्तुतियां

1.3.2 सामाजिक अध्ययन का अर्थ तथा परिभाषाएं

1.3.3 सामाजिक अध्ययन का क्षेत्र

1.3.4 सामाजिक अध्ययन तथा सामाजिक विज्ञान में अन्तर

1.3.5 सामाजिक अध्ययन विषय की विशेषताएं

1.3.6 सामाजिक अध्ययन पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य

1.3.7 सामाजिक अध्ययन का अन्य विद्यालयी विषयों के साथ सह संबंध

1.4 सारांश

1.5 अभ्यास कार्य

1.6 चर्चा के बिन्दु

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.8 सन्दर्भ पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

भारत देश प्राचीन काल से ही अपनी विशिष्टता, आध्यात्मिकता, संस्कृति, शाश्वत परम्पराओं तथा आदर्शो के प्रति श्रद्धा तथा आदर का भाव रखने वाले देश के रूप में सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्व रहा। कालान्तर में विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में मनुष्यों ने आशातीत सफलता अर्जित की। आज उसने विज्ञान और तकनीकी के दम पर संपूर्ण विश्व को अपनी मुट्ठी में कर लिया। चन्द्रमा तथा मंगल ग्रहों पर भी उसका पदार्पण इसी वैज्ञानिक सफलता का परिणाम है। परन्तु इस प्रगति एवं सफलता की दौड़ में वह यह विस्मृति कर बैठा कि मात्र विज्ञान के क्षेत्र में उन्नति कर लेने से ही सामाजिक जीवन सफल नहीं हो सकता। आज मनुष्य भौतिक समृद्धि तथा शक्ति लोलुपता में ऐसा आकण्ठ डूबा है कि उसने सामाजिक जीवन, मान्यताओं संस्कृति, धर्म तथा मूल्यों को ताक पर रख दिया है। यही कारण हैं कि आज हमारा सामाजिक जीवन तनावों, संघर्षो तथा हिंसा से खोखला होता जा रहा हैं। प्रगति आवश्यक है परन्तु मानवीय संबंधों और आदर्शों को ताक पर रख कर नहीं, वरन इनको प्राथमिकता देते हुए। फलस्वरूप भारतीय समाज के अतीत कालीन गौरव पूर्ण स्वरूप को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए विद्यालयी पाठ्यक्रम में सामाजिक अध्ययन जैसे विषय को सम्मिलित किया गया जिससे भारत जैसे प्रजातान्त्रिक देश के लिए ऐसे कर्णधारों को तैयार किया जा सके जिनमें अपनी भारतीय संस्कृति, परम्पराओं तथा आदर्शो के प्रति आदर और सम्मान का भाव हो, जिनमें मानव संबंधों और भावनाओं की समझ हो तथा जो अपने राष्ट्र का कल्याण करने के साथ–साथ

अन्तर्राष्ट्रीय सौहार्द्र बढ़ाने तथा विश्व बन्धुत्व की भावना को बढ़ाने में अपना सहयोग दे सकें। कहना अतिश्योक्ति न होगा कि इस सन्दर्भ में सामाजिक अध्ययन जैसा विषय निःसन्देह मील का पथर साबित होगा।

सामाजिक अध्ययन शब्द का प्रयोग पिछले कुछ वर्षो से ही हो रहा है। विद्यालयी पाठ्यक्रम में यह संकल्पना नई–नई उभर कर अवश्य आई है परन्तु इस विषय के घटकों का अस्तित्व पूर्व में ही विद्यमान था। अर्थात विद्यालयी पाठ्यक्रम में इस विषय को इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र जैसे विषयों की समाजोपयोगी मूल सामग्री को लेकर सम्मिलित कर इसे एक एकीकृत विषय के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि भारत के अधिकतर राज्यों में सामाजिक अध्ययन को अपने–अपने विद्यालयी पाठ्यक्रम में सम्मिलित कर लिया गया है परन्तु अभी भी कुछ राज्य ऐसे हैं जहां इस विषय के विभिन्न घटकों का अध्यापन अलग–अलग ढ़ंग से किया जा रहा है। वास्तव में यदि हम सामाजिक एकता तथा अखण्डता के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते है तो हमें इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र जैसे विषयों के कायिक अन्तर को तिरोहित कर इनके एकीकृत स्वरूप का अध्ययन सामाजिक अध्ययन विषय के अन्तर्गत करना होगा।

प्रस्तुत इकाई में इस विषय का स्वरूप, अर्थ तथा परिभाषा, सामाजिक अध्ययन तथा सामाजिक विज्ञान में विभेद तथा सामाजिक अध्ययन की विशेषताओं की चर्चा की जा रही है जिसका अध्ययन आपको इस विषय के एकीकृत स्वरूप तथा उसकी आपके जीवन में व्यावहारिक उपयोगिता को समझने में सहायक होगा।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के अध्ययनोपरान्त आप –

- सामाजिक अध्ययन के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन के अर्थ को बता सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन तथा सामाजिक विज्ञान में विभेद कर सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।

1.3 सामाजिक अध्ययन विषय का स्वरूप

15 अगस्त 1947 को जब भारत ब्रिटिश दासता से मुक्त हुआ, तो वह स्वतन्त्रता के स्वर्णिम प्रभात में ब्रिटिश हुकूमत से संबन्धित समस्त नियमों को जड़ से उखाड़ फेकने तथा अपने भारतीय समाज को एक नूतन आयाम तथा नवीन व्यवस्था देने हेतु तत्पर हुआ जिसके लिए एक व्यापक परिवर्तन की आवश्यकता महसूस हुई। इस व्यापक परिवर्तन के तहत एक ऐसे भारतीय समाज की संकल्पना की गई जिसमें लोगों के मध्य समरसता एवं भाईचारा हो, अपनी सभ्यता, संस्कृति तथा परम्पराओं के प्रति गर्व हो, अपने राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता को अक्षुण्य रखने का दृढ़ संकल्प हो, साथ ही साथ आने वाले समय की विभिन्न चुनौतियों का डटकर सामना करने का जज़्बा हो। एतदर्थ इस सकारात्मक परिवर्तन को यथा शीघ्र लाने का माध्यम शिक्षा को बनाया गया जिसके तहत एक ऐसे विषय की संकल्पना की गई जिसके माध्यम से भारत जैसे प्रजातान्त्रिक देश के लिए कुशल, आदर्श तथा श्रम की दुनिया के महत्व को अंगीकृत करने वाला नागरिक तैयार किया जा सके। फलस्वरूप सामाजिक अध्ययन को एक विषय के रूप में विद्यालयी पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किया गया।

सामाजिक अध्ययन की परिकल्पना इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र जैसे विषयों को समेकित करके की गयी सामाजिक अध्ययन वस्तुतः कोई नया विषय नहीं वरन पूर्व में प्रचलित इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र तथा नागरिकशास्त्र जैसे विषयों का ही एकीकृत स्वरूप है। यह इन विषयों का मात्र एकीकृत स्वरूप नहीं वरन उससे भी कहीं अधिक व्यापक और व्यावहारिक ज्ञान सामाजिक अध्ययन में निहित

है। क्योंकि जब हम इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र और नागरिकशास्त्र का अध्ययन करते हैं तो मात्र संबंधित विषय के सैद्धान्तिक पहलू को ही आत्मसात करते हैं। उसकी विषय वस्तु का मात्र अध्ययन कर विषय पर स्वामित्व प्राप्त करते हैं। जबकि सामाजिक अध्ययन सदव्यवहार, सद्विचार तथा विभिन्न मूल्यों को बालकों में रोपित करने का प्रयत्न करता है। जैसे इतिहास विषय के अन्तर्गत मुगल शासक ''अकबर'' नामक प्रकरण पढ़ाते समय अध्यापक अपने छात्रों को अकबर के माता पिता, व्यक्तित्व, उसके युद्ध अभियान, विजय, साम्राज्य विस्तार तथा अन्य उपलब्धियों के विषय में बताकर विषय वस्तु की जानकारी देता है। जबकि सामाजिक अध्ययन में संबंधित प्रकरण का सारतत्व यथा अकबर के द्वारा सर्वधर्म समभाव की स्थापना तथा उसका प्रयोजन, तत्कालीन ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहर, उसके साम्राज्य की भौगोलिक सीमा, सैन्य व्यवस्था में अकबर द्वारा किए गए सैन्य सुधार, उसकी अर्थ व्यवस्था, नागरिक के कर्तव्य तथा राष्ट्र के प्रति किए गए उनके कर्तव्य एवं उत्तर दायित्व का ज्ञान प्रदान कर बच्चों में व्यावहारिक क्षमता तथा कौशलों का विकास किया जाता है। छात्रों को इन बातों के माध्यम से मूल्यों को स्वंय में आत्मसात करने के योग्य बनाया जाता है। कहने का आशय है कि सामाजिक अध्ययन के माध्यम से प्रदत्त ज्ञान को छात्रों द्वारा अपने व्यवहार में लाकर उसका आचरण करने के योग्य बनाया जाता है। उसमें विषय वस्तु से संबंधित व्यावहारिक कौशलों को विकसित किया जाता है जो अधिक महत्वपूर्ण है न कि मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान। वास्तव में सामाजिक अध्ययन में ली गई विषय वस्तु इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र तथा नागरिकशास्त्र की ही है। इसमें किसी विषय (उपयफ्रक्त वर्णित चार विषय) की न तो अवहेलना की जाती है और न ही किसी अन्य विषय को बहुत महत्व दिया जाता है वरन प्रत्येक विषय को समन्वित करके ज्ञान प्रदान कर छात्रों में व्यावहारिक कौशल, निपुणता तथा दक्षता का विकास किया जाता है। वैसे भी ज्ञान एक अविभाज्य इकाई है। इसे हम पृथक–पृथक विषय के रूप में मात्र सुविधा के दृष्टिकोण से छात्रों तक सम्प्रेषित करते हैं जिससे कि छात्र उनमें दक्षता प्राप्त कर सकें। जहां तक सामाजिक अध्ययन जैसे विषय की बात है तो यह भी अनेक ऐसे विषयों का योग ही है जिनका सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से मनुष्य से ही होता है। जिस प्रकार समुद्र में जब कई नदियों का जल आकर मिलता है तो उनके जल का पृथक अस्तित्व नहीं रह जाता, उसी प्रकार सामाजिक अध्ययन में भी इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र और नागरिकशास्त्र मिलकर एकीकृत रूप धारण कर लेते हैं। चूकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है समाज से पृथक उसका कोई अस्तित्व नहीं है इसलिए कालान्तर में समाजशास्त्र जैसा विषय भी सामाजिक अध्ययन में समन्वित हो गया है। और इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र जैसे विषय सामाजिक अध्ययन की विविध शाखाओं के रूप में एकीकृत स्वरूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत हुए जिसकी संरचना को हम निम्नांकित रेखाचित्र के माध्यम से देख सकते हैं –

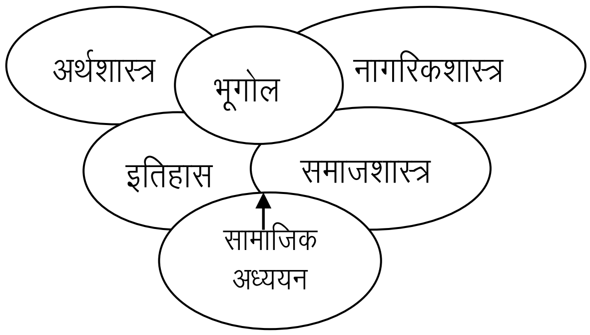

बोध प्रश्न–1

सामाजिक अध्ययन को विद्यालयी पाठ्यक्रम में एकीकृत विषय के रूप में क्यों सम्मिलित किया गया?

____

____

जैसा कि यह सर्वविदित है कि भाषा, कलाएं गणित तथा प्राकृतिक विज्ञान जैसे सभी विषय किसी न किसी अर्थ में विचारों, कौशलों और उत्पादों के रूप में मानवीय अनुभवों के परिचायक हैं। परन्तु सामाजिक अध्ययन ही वह महत्वपूर्ण विषय है जिसकी विषयवस्तु का केन्द्र बिन्दु प्रमुख रूप से मानव ही होता है जिसके चतुर्दिक व्याप्त समस्त पहलुओं का उत्तर मात्र हम सामाजिक अध्ययन जैसे विषय के

अनुशीलन से ही प्राप्त कर सकते हैं क्योंकि सामाजिक अध्ययन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक होता है। इसमें वे समस्त विषय आते हैं जो मानवीय जीवन को किसी न किसी रूप में प्रभावित करते है। दूसरे शब्दों में जिन – जिन विषयों का सम्बन्ध मनुष्य के क्रियाकलापों तथा गतिविधियों से होता है, वे सभी विषय सामाजिक अध्ययन के क्षेत्र में आ जाते हैं। उदाहरण के लिए यदि हमें अपने बारे में जानकारी व्यापक रूप से चाहिए तो सामाजिक अध्ययन विषय का अध्ययन हमारे समस्त प्रश्नों को उत्तरित करेगा। जैसे –

	हमारे प्रश्न	प्रश्नों को उत्तरित करने वाले विषय
1	हमारा अतीत क्या है ?	इतिहास विषय
2	हमारा पर्यावरण कैसा है, जिसमें हम जी रहें हैं?	भूगोल विषय
3	जिस समाज में हम रह रहें हैं उसमें हमारा क्या स्थान हैं ?	समाजशास्त्र विषय
4	हमारी जीविका या हमारी वित्तीय स्थिति कैसी है ?	अर्थशास्त्र विषय
5	हम किस प्रकार समाज में एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया कर रहे हैं। राष्ट्र और समाज के प्रति हमारे दायित्व तथा कर्तव्य क्या हैं ?	राजनीतिक विज्ञान या नागरिकशास्त्र

इस प्रकार इतिहास, भूगोल, सामाजशास्त्र, अर्थशास्त्र तथा नागरिकशास्त्र जैसे विषय जब सामजिक अध्ययन के क्षेत्र में आ जाते हैं तो उनके बीच का अन्तर तिरोहित हो जाता है और एक समग्र, स्वतः पूर्ण तथा समेकित पाठ्यचर्या के रूप में सामाजिक अध्ययन एक एकीकृत विषय के रूप में हमारे समक्ष आता है।

बोध प्रश्न –2

यदि आपको अपने विषय में जानना है, तो सामाजिक अध्ययन विषय आपकी किस प्रकार मद्द करेगा?

____

____

1.3.1 सामाजिक अध्ययन विषय के सन्दर्भ में की गई संस्तुतियाँ

कोठारी कमीशन ने कहा है कि राष्ट्र का निर्माण विद्यालयों की कक्षाओं में होता है। चूंकि आजादी के स्वर्णिम प्रभात में हमे एक ऐसे समाज का सृजन करना था जिसमें हर व्यक्ति का जीवन स्तर संतोषजनक हो, समानता, समता, भाईचारा तथा धर्म निरपेक्षता का भाव पल्लवित और पुष्पित हो, भारतीय सभ्यता और संस्कृति की पुनः प्राण प्रतिष्ठा हो, उसका संवर्द्धन और पल्लवन हो, देश की एकता और अखण्डता को अक्षुण्ण रखने हेतु लोगो मे तत्परता हो, देश को एक सफल लोकतात्रिंक देश बनाने हेतु वहां के जन–जन की लोकतान्त्रिक दृष्टि हो तथा लोगों में नए युग की आने वाली विभिन्न चुनौतियों का सफलता पूर्वक सामना करने का जज़्बा और उत्साह हो, इसलिए इन तत्कालिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कोठारी कमीशन के उपयफ्रक्त वक्तव्य को माध्यम बनाया गया तथा पाठ्यक्रम में सामाजिक अध्ययन जैसे विषय को रखा गया जिसकी संस्तुति कालान्तर में समस्त आयोगों एवं समितियों ने एक स्वर में की।

1952 में स्थापित माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार सामाजिक अध्ययन इतिहास, भूगोल अर्थशास्त्र और नागरिकशास्त्र का समिश्रण न होकर उनका ऐसा एकीकृत पूर्ण विषय होगा जो छात्रों को यह

समझा सकने में समर्थ हो कि समाज ने अपना वर्तमान रूप किस प्रकार धारण किया और जिन सामाजिक शक्तियों और आन्दोलनों के बीच वे रहते हैं उनकी विवेकपूर्ण ढ़ंग से व्याख्या कर सके।

मुदालियर आयोग के ही अनुसार इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र आदि को एक पूर्ण इकाई के रूप में देखना चाहिए। इस एकीकृत स्वरूप की विषय सामग्री ऐसी हो, जो छात्रों को सामाजिक पर्यावरण में व्यवस्थित करा सके।

महात्मा गांधी जी ने अपनी बेसिक शिक्षा के सप्तवर्षीय शिक्षा के पाठ्यक्रम में सामाजिक अध्ययन को स्थान देते हुए कहा कि यह विषय देश के भावी नागरिकों में ऐसे गुणों का विकास करेगा जो उनमें अपने राष्ट्र का कल्याण करने के साथ ही साथ अन्तर्राष्ट्रीय सौहार्द्र बढ़ाने और विश्वबन्धुत्व की भावना को बढ़ाने में सहयोग प्रदान करेगा।

कोठारी आयोग ने भी सामाजिक अध्ययन पर बल देते हुए कहा कि सामाजिक अध्ययन छात्र को पर्यावरण का ज्ञान देता है, बच्चों में मानव संबंधों को समझने की शक्ति लाता है तथा उनमें ऐसे मूल्यों का विकास करता है, जो उसे स्वदेश और विश्व स्तर पर संबंध स्थापित करने में सहायता करता है।

नीतिगत व्यवस्था अर्थात मूल पाठ्यचर्या (एन.ई.पी. 1986) के अनुसार सामाजिक अध्ययन को एक स्वतन्त्र विषय के रूप में पढ़ाने से मानवतावाद, पंथनिरपेक्षता अर्थात धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद और लोकतन्त्र के मूल्यों और विचारों की प्रसार वृद्धि होगी।

बोध प्रश्न 3

सामाजिक अध्ययन को विद्यालयी पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने हेतु कोठारी कमीशन ने क्या तर्क दिया।

____

____

1.3.2 सामाजिक अध्ययन का अर्थ तथा परिभाषाएँ

सामाजिक अध्ययन के सम्प्रत्यय को स्पष्ट करते हुए कुछ महत्वपूर्ण विचार तथा विद्वानों के अभिमत का विवरण अग्रांकित है :–

जैरोलिमेक ने अपनी पुस्तक ''प्रारम्भिक शिक्षा में सामाजिक अध्ययन'' में सामाजिक अध्ययन को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''सामाजिक अध्ययन मनुष्य का अन्य मनुष्यों तथा उसके पर्यावरण के साथ संबंधों का अध्ययन है।''

वाइंलिग के अनुसार ''सामाजिक अध्ययन की सामग्री विद्यार्थियों को विश्व को समझने का आधार प्रस्तुत करती है। उन्हें विशिष्ट कुशलताओं और आदतों का प्रशिक्षण देती है तथा उसमें अभिवृत्तियों और आदतों का विकास करती है, जिससे कि वे लोकतान्त्रिक समाज में कुशल तथा प्रभावी सदस्य के रूप में अपना स्थान बना सके।''

माइकोलिस ने इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''सामाजिक अध्ययन मनुष्य के तथा उसकी सामाजिक एवं भौतिक वातावरण के प्रति की गई प्रतिक्रियाओं से संबंधित है जिसमें मानवीय संबंधों का अध्ययन होता है।''

जेम्स हांमिग के अनुसार ''सामाजिक अध्ययन ऐतिहासिक, भौगोलिक तथा सामाजिक संबंधों और अन्तर्सम्बन्धों का अध्ययन है।''

वेस्ले ने इस सन्दर्भ में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि ''सामाजिक अध्ययन उस सामग्री की ओर संकेत करता है जिनके तथ्य तथा उद्देश्य प्रमुख रूप से सामाजिक होते हैं।''

इनसाइक्लोपीडिया ऑफ एजुकेशनल रिसर्च में सामाजिक अध्ययन को व्यापक रूप से परिभाषित करते हुए कहा गया है कि ''सभी विषय मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं, इसी प्रकार सामाजिक अध्ययन भी। किन्तु सामाजिक अध्ययन में विषयवस्तु तथा उद्देश्य दोनों ही सामाजिक होते हैं। यह सावधानी पूर्वक समझ लेना चाहिए कि सामाजिक अध्ययन का अभिप्राय ऐसे क्षेत्र से है जो कोई विषय तथा किसी विशिष्ट प्रकार के संगठन से नहीं है।''

एम.पी.मोफ्ट का इस संदर्भ में कथन विचारणीय है कि ''जीने की कला बहुत सुन्दर कला है, और यह कला सामाजिक अध्ययन द्वारा ही प्राप्त की जाती है।''

यू.एस.ए. परिषद के अनुसार सामाजिक अध्ययन मानव समाज, संगठन तथा विकास से संबंधित है।

जोन.वी.मिकाइलिस के अनुसार ''सामाजिक अध्ययन मनुष्य तथा उसकी अपने सामाजिक तथा भौतिक वातावरण से अन्तःक्रिया के साथ संबंधित है, यह मानवीय संबंधों का अध्ययन करता है। सामाजिक अध्ययन का केन्द्रीय कार्य शिक्षा के केन्द्रीय लक्ष्य के अनुरूप है अर्थात लोकतन्त्रात्मक नागरिकता का विकास।''

चार्ल्स ए.वीयर्ड ने इसे परिभाषित करते हुए कहा कि ''सामाजिक अध्ययन मानवीय क्रिया कलापों का अध्ययन करता है'' वह मानव समाज का विकास तथा उसके सामूहिक विचार द्वारा, मानवीय ज्ञान कैसे प्राप्त किया जाता है, इसका अध्ययन करता हैं।

फोरेस्टर के अनुसार ''सामाजिक अध्ययन समाज का अध्ययन है। इसका मुख्य उद्देश्य छात्रों को उस संसार को समझने में सहायता प्रदान करना है जिसमें उनको रहना है, जिससे वे उसके जिम्मेदार सदस्य बन सकें। इसका उद्देश्य विवेचनात्मक चिन्तन तथा सामाजिक परिवर्तन की तत्परता को प्रोत्साहित करना, सामान्य कार्य के लिए कार्य करने की आदत को विकसित करना, दूसरी संस्कृतियों के प्रति प्रशंसात्मक दृष्टिकोण रखना तथा यह अनुभव कराना है कि सभी मानव तथा राष्ट्र एक दूसरे पर आश्रित हैं।''

पीटर एच.मार्टोरोला के अनुसार ''सामाजिक अध्ययन को प्रयोगात्मक क्षेत्र के साथ सम्बन्धित करना अधिक उचित होगा, क्योंकि इसमें वैज्ञानिक ज्ञान को उन नैतिक, दार्शनिक, धार्मिक तथा सामाजिक विषयों के साथ समन्वित किया जाता है जो निर्णय लेने की प्रक्रिया में नागरिकों के सामने आते हैं।''

<u>क्रियाकलाप</u>

सामाजिक अध्ययन की वह परिभाषा लिखिए, जो आपके दृष्टिकोंण से सर्वोत्तम हो।

____

____

1.3.3 सामाजिक अध्ययन का क्षेत्र

किसी भी विषय के क्षेत्र से अभिप्राय उस विषय की सामग्री तथा अनुभवों से होता है जिसे उस विषय के माध्यम से छात्रों तक पहुँचाना होता है। सामाजिक अध्ययन के क्षेत्र में वे सभी विषय आते हैं जो मानवीय जीवन को किसी न किसी रूप में प्रभावित करते हैं या जिनका सम्बन्ध प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य से होता है। इसका अध्ययन क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत, व्यापक तथा विविध होता है। यह विस्तृत इसलिए होता है क्योंकि इसे छात्रों को उन समस्त मानवीय क्रियाओं से परिचित कराना होता है जो उसके जीवन के लिए उपयोगी होती है। यह व्यापक इसलिए होता है क्योंकि इसमें विभिन्न काल के मानव के वे अनुभव समाहित होते हैं जो छात्रों को न केवल इस मानवीय समाज के विषय में बताएंगे वरन दिन प्रतिदिन होने वाली विभिन्न समस्याओं का सफलता पूर्वक सामना करने के योग्य भी बनाएंगे। सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम विविध इस दृष्टिकोण से है क्योंकि यह छात्रों को अनुभवों की विविधता से परिचित कराता है जिससे छात्रों का अधिगम सन्तुलित तथा सम्पूर्ण हो सके।

The National Association of Social Studies (NASS) ने सामाजिक अध्ययन के क्षेत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित दस बिन्दुओं को समाहित करने की संस्तुति की :–

1.	विविध संस्कृति
2.	मानव विकास का ब्योरा कालक्रम के अनुसार तथा मानव विकास अतीत से वर्तमान तक
3.	व्यक्तित्व के विकास तथा उसकी पहचान में संस्कृति तथा उसके समूह का योगदान
4.	व्यक्ति स्थान तथा पर्यावरण
5.	विभिन्न संस्थाओं का व्यापक एवं विस्तृत ज्ञान
6.	शक्ति, सत्ता तथा सरकार
7.	उत्पादन तथा उसका वितरण
8.	विज्ञान, तकनीकी तथा समाज
9.	वैश्विक सम्बन्ध
10.	नागरिक कर्तव्य और आदर्श

सामाजिक अध्ययन के क्षेत्र के संदर्भ में कुछ विद्वानों ने अपने मत प्रस्तुत किए हैं :–

साइकेलिस के अनुसार ''सामाजिक अध्ययन का कार्यक्रम सामाजिक विज्ञानों– भूगोल, इतिहास, राजनीतिशास्त्र, मानवशास्त्र, समाजशास्त्र, शिक्षा के सामाजिक आधारों, हमारी लोकतन्त्रीय विरासत का अध्ययन, तथा सामाजिक समस्याओं एवं परिवर्तनों और शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधारों में निहित है।''

प्रो.एम.जी. मुफात का कहना है कि ''सामाजिक अध्ययन वह अध्ययन क्षेत्र है जो युवकों को उस ज्ञान, सूचना तथा क्रियात्मक अनुभवों के द्वारा सहायता प्रदान करता है, जो मूलभूत मूल्यों, वांछित आदतों, स्वीकृत वृत्तियों तथा उन महत्वपूर्ण कौशलों के निर्माण के लिए आवश्यक है जिनको प्रभावी नागरिकता का आधार माना जाता है।''

चूंकि सामाजिक अध्ययन मनुष्य तथा उसके पर्यावरण के साथ उसकी अन्तःक्रिया तथा समायोजन का अध्ययन करता है इसलिए सामाजिक अध्ययन के क्षेत्र में मनुष्य तथा उसका पर्यावरण केन्द्र बिन्दु होना चाहिए। इस दृष्टिकोण से निम्नलिखित बातें इसके क्षेत्र के अन्तर्गत सम्मिलित की जानी चाहिए –

1.	मानवीय आवश्यकताओं से सम्बन्धित तथ्य
2.	समाज सम्बन्धी अध्ययन
3.	पर्यावरण सम्बन्धी अध्ययन
4.	तत्कालीन घटनाओं का विवरण

5.	प्राकृतिक विज्ञान तथा विभिन्न कलाओं का व्यावहारिक अध्ययन
6.	मानवीय सम्बन्धों के सन्दर्भ में चार बातों का अध्ययन 1. मनुष्य का अन्य मनुष्यों के साथ सम्बन्ध 2. मनुष्य का विभिन्न संस्थाओं के साथ सम्बन्ध 3. मनुष्य तथा अन्य वस्तुओं का सम्बन्ध 4. मनुष्य का संपूर्ण विश्व के साथ सम्बन्ध
7.	लोकतान्त्रिक गुणों का विकास
8.	राष्ट्रीय समाकलन, भावात्मक एकता तथा अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध
9.	उन समस्त तथ्यों का अध्ययन, जिनका सम्बन्ध मनुष्य तथा उसके पर्यावरण के साथ है।

विषयों के दृष्टिकोण से यदि सामाजिक अध्ययन के क्षेत्र की बात की जाए, तो हम दो श्रेणी में इसे रख सकते हैं,:–

1. ऐसे विषय जो मानव जीवन को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं जैसे इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजविज्ञान (विज्ञान में सामाजिक अध्ययन इन्ही विषयों का एकीकृत स्वरूप है।)
2. ऐसे विषय जो मानव जीवन को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं जैसे मनोविज्ञान, मानव विज्ञान, दंड विज्ञान, अपराध शास्त्र, विधि शास्त्र, धर्मशास्त्र, न्याय व्यवस्था तथा शिक्षा।

बोध प्रश्न 4

NASS ने सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में किन– किन बिन्दुओं को सम्मिलित करने की संस्तुति की?

____

____

1.3.4 सामाजिक अध्ययन तथा सामाजिक विज्ञान में अन्तर

प्रायः सामाजिक अध्ययन तथा सामाजिक विज्ञान को लोग एक दूसरे का पर्यायवाची मानते हैं। परन्तु वस्तु स्थिति यह है कि इन दोनो में पर्याप्त अन्तर है यथा –

- ➢ सामाजिक अध्ययन की विषय वस्तु बौद्धिक दृष्टिकोण से प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए होती है जिसका अध्ययन विद्यालय के निम्न माध्यमिक स्तर (10 वीं कक्षा तक) के छात्रों के लिए होता है, जबकि सामाजिक विज्ञान की विषय वस्तु का स्तर ऊँचा होता है जिसके अध्ययन का प्रावधान उच्च माध्यमिक स्तर (11 तथा 12 वीं कक्षा) के छात्रों के लिए होता है।
- ➢ सामाजिक अध्ययन का क्षेत्र सामाजिक विज्ञान की तुलना में संकुचित तथा सीमित होता है।
- ➢ सामाजिक अध्ययन व्यावहारिक होता है, जबकि सामाजिक विज्ञान सैद्वान्तिक होता है।
- ➢ सामाजिक अध्ययन की शैक्षिक उपयोगिता अधिक होती है, जबकि सामाजिक विज्ञान की सामाजिक उपयोगिता अधिक होती है।

- सामाजिक अध्ययन का मुख्य तत्व निर्देशात्मक होता है, जबकि सामाजिक विज्ञान का मुख्य तत्व विद्वता है।
- सामाजिक अध्ययन में मनुष्य का उसके वातावरण के साथ सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है जबकि सामाजिक विज्ञान में मानवीय सम्बन्धों से सम्बन्ध रखने वाले विचारों और ज्ञान का अध्ययन किया जाता है।
- सामाजिक अध्ययन लोगों में सामाजिक चेतना तथा जनतान्त्रिक नागरिकता का विकास करता है जबकि सामाजिक विज्ञान मानवीय सम्बन्धों को विशिष्ट क्षेत्र से सम्बन्धित कर छात्रों में सूझ का विकास करता है।

इस प्रकार दोनों का अन्तर व्यावहारिक दृष्टिकोंण से है। सैद्धान्तिक रूप से दोनों एक दूसरे से जुड़े भी हुए हैं। क्योंकि दोनो ही मानवीय सम्बन्धों की विवेचना करते हैं। मानव सम्बन्धों की यह विवेचना सामाजिक विज्ञान द्वारा प्रौढ़ावस्था पर तथा सामाजिक अध्ययन द्वारा बालक के स्तर पर ही की जाती है। सामाजिक विज्ञानों में मानव सम्बन्धों का सैद्धान्तिक वर्णन होता है जबकि सामाजिक अध्ययन में उनका सैद्धान्तिक वर्णन नहीं वरन व्यावहारिक या क्रियात्मक वर्णन होता है। वास्तव में सामाजिक अध्ययन का मूल आधार सामाजिक विज्ञान ही है। सामाजिक विज्ञान का सरलतम व्यावहारिक स्वरूप सामाजिक अध्ययन ही है। इस प्रकार दोनो विषय एक दूसरे से भेद रखते हुए भी एक दूसरे से सम्बन्धित है। इनके सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए मार्टोरेला जी का विचार है कि सामाजिक अध्ययन को प्रयोगात्मक सम्बन्ध के साथ सम्बन्धित करना अधिक उचित होगा। क्योंकि इसमें वैज्ञानिक ज्ञान को उन नैतिक दार्शनिक, धार्मिक तथा सामाजिक विचारों के साथ सम्बन्धित किया जाता है जो निर्णय लेने की प्रक्रिया में नागरिक के सामने आते हैं।

जैसे विज्ञान की शिक्षा प्राकृतिक विज्ञानों पर आधारित होती है वैसे ही सामाजिक अध्ययन, सामाजिक विज्ञानों पर आधारित होता है अर्थात सामाजिक अध्ययन मूलतः सामाजिक विज्ञानों से ही अपनी िविषयवस्तु ग्रहण करता है।

क्रियाकलाप

सामाजिक अध्ययन तथा सामाजिक विज्ञान में व्याप्त किन्हीं पाँच अन्तरों को लिखिए।

1 ....

2 ....

3 ....

4 ....

5 ....

1.3.5 सामाजिक अध्ययन विषय की विशेषताएँ

- सामाजिक अध्ययन व्यक्ति और उसके पर्यावरण का अध्ययन है।
- यह प्रजातान्त्रिक भारत देश के लिए कुशल, उपयुक्त तथा आदर्श नागरिक का निर्माण करता है।
- यह सामाजिक तथा भौतिक पर्यावरण के प्रति मनुष्य की प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करता है।
- यह स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लोगो के एक साथ मिल बैठकर जीवन यापन करने और साथ–साथ काम करने का अध्ययन है।

- समस्त विश्व आर्थिक तथा राजनीतिक दृष्टि से किस प्रकार और क्यों निर्भर है, इसकी जानकारी देता है।
- यह मनुष्य द्वारा अपने अतीत की जानकारी में वृद्धि करने में सहायक है।
- यह व्यक्ति में अपने समाज का प्रभावशाली सदस्य बनने हेतु वांछित कौशलों का विकास करता है।
- यह मानव जीवन के रहन सहन के ढंगों, मूलभूत आवश्यकताओं, क्रियाओं जिनमें मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संलग्न रहता है, तथा संस्थाओं, जिसका उसने विकास किया है, का ज्ञान प्रदान करता है।
- यह व्यक्ति को उस ज्ञान, सूचना तथा क्रियात्मक अनुभवों के द्वारा सहायता प्रदान करता है, जो मूलभूत मूल्यों वांछित आदतों, स्वीकृत वृत्तियों तथा उन महत्वपूर्ण कौशलों के निर्माण के लिए आवश्यक है, जिनको प्रभावी नागरिकता का आधार माना जाता है।
- इसमें अनेक विषयों का योग होता है, परन्तु किसी भी विषय का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं होता।
- छात्रों के सर्वगींण विकास के लिए सामाजिक अध्ययन अपने आप में सम्पूर्ण है।
- यह विषय सामाजिक पर्यावरण के बारे में, सामाजिक पर्यावरण द्वारा तथा सामाजिक पर्यावरण के लिए ही अधिगम है।

बोध प्रश्न 5

सामाजिक अध्ययन की मुख्य विशेषतायें क्या हैं?

____

____

1.3.6 सामाजिक अध्ययन पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट में कहा है कि ''पाठ्यक्रम का अर्थ केवल उन सैद्धान्तिक पाठ्य विषयों से नहीं है, जो विद्यालय में परम्परागत ढंग से पढ़ाए जाते हैं, वरन इसमें अनुभवों की वह सम्पूर्णता निहित है, जिसको छात्र विद्यालय, कक्षा–कक्ष, पुस्तकालय, कार्यशाला, प्रयोगशाला और खेल के मैदान तथा शिक्षकों एवं छात्रों के अगणित अनौपचारिक सम्पर्कों से प्राप्त करता है। इस प्रकार विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठयक्रम हो जाता है, जो छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर सकता है और उनके सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता देता है।'' कहने का तात्पर्य है कि पाठ्यक्रम में विद्यालयी तथा विद्यालय से बाहर के समस्त अनुभव तथा क्रियाकलाप सम्मिलित होते हैं जिनके विषय की प्रकृति के अनुरूप कुछ मुख्य उद्देश्य होते हैं। सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम के भी कुछ मुख्य उद्देश्य निर्धारित है यथा :–

1. छात्रों को कुछ ऐसे सामाजिक अनुभव प्रदान करना जो व्यक्ति तथा सामाजिक समस्याओं से किसी भी तरह जुड़े हों यथा जनाधिक्य, निर्धनता, अशिक्षा, पर्यावरण प्रदूषण, दहेज प्रथा, लिंग भेद, आतंकवाद आदि।
2. छात्रों को ऐसे अनुभव प्रदान करना जो उनके भावी जीवन की समस्याओं के समाधान में सहायक हो।
3. छात्रों को विभिन्न दृष्टान्तों के माध्यम से प्रेरित करते हुए इस योग्य बनाना कि वे प्रजातन्त्र के लिए वांछनीय उत्तम नागरिकता का विकास स्वंय में कर सकें।
4. माध्यमिक विद्यालयों को इस योग्य बनाना कि वे ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन करें जो समाज एवं राष्ट्र के हित में हो तथा ऐसे कार्यक्रमों में सभी छात्र पूरे उत्साह के साथ भाग लें जैसे विभिन्न

राष्ट्रीय पर्वों का आयोजन यथा 26 जनवरी, 15 अगस्त तथा 2 अक्टूबर, विभिन्न समस्याओं तथा उनके अपेक्षित निराकरण को केन्द्र में रखते हुए मंचन की प्रस्तुति आदि।

5. छात्रों की आत्मानुभूति के लिए अधिक से अधिक अवसर प्रदान करना जिससे वे स्वंय के साथ–साथ समाज तथा राष्ट्र को भी भली भांति समझ सकें।

इस प्रकार सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य छात्रों का सर्वागींण विकास करना है जिसके अन्तर्गत शारीरिक तथा बौद्धिक कौशल का विकास, स्वस्थ जीवन का ज्ञान तथा उसके अभ्यास का अवसर, सौन्दर्यानुभूति तथा दूसरों की संस्कृति, परम्परा, दृष्टिकोंण तथा उनके ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धरोहरों का सम्मान तथा सराहना की आदत तथा विभिन्न परिस्थितियों में खुद को दिशा निर्देशित करने की प्रवृत्ति निहित होती है।

बोध प्रश्न 6

सामाजिक अध्ययन विषय का अधिगम आपके लिए क्यों आवश्यक है

____

____

1.3.7 सामाजिक अध्ययन का अन्य विद्यालयी विषयों से सह–संबंध

सम्पूर्ण ज्ञान एक अविभाज्य इकाई है जिसे हम खण्ड रूप में नहीं बांट सकते। परन्तु मात्र ज्ञान के स्वामित्व तथा छात्रों के अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से इसे विभिन्न विषयों में वर्गीकृत किया गया है जिसे छात्र विद्यालय में पढ़ते हैं। यही कारण है कि विद्यालय में पढ़ाए जाने वाले विभिन्न विषयों में सहसम्बन्ध होते हैं। सामाजिक अध्ययन अपेक्षाकृत एक नवीन विषय के रूप में है जिसमें इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र जैसे विषयों का योग होता है। अर्थात उपरोक्त पांचों विषय की सामग्री संयुक्त रूप से सामाजिक अध्ययन विषय को अस्तित्व प्रदान करती है। सामाजिक अध्ययन का अन्य विषयों के साथ सहसम्बन्ध को हम निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं :–

सामाजिक अध्ययन तथा भौतिक विज्ञान का सहसम्बन्ध –भौतिक विज्ञान के अन्तर्गत भौतिक पर्यावरण का अध्ययन किया जाता है भौतिक विज्ञान तथा सामाजिक अध्ययन दोनों विषय ही भोजन, वस्त्र, मौसम, जलवायु, यातायात तथा संचार से संबंधित होते हैं। यह भौतिक विज्ञान ही है जिसने आज मानव जीवन में नई क्रान्ति लाई है तथा सम्पूर्ण विश्व के लोगों को एक दूसरे के करीब ला दिया। उसके अविष्कारों ने मानव की जीवन शैली ही बदल डाली। सामाजिक अध्ययन भी मनुष्य का उसके पर्यावरण के साथ सम्बन्धों का अध्ययन करता है। मनुष्य की जीवन शैली का अध्ययन करता है।

सामाजिक अध्ययन छात्रों को पेड़ पौधे, स्वस्थ्य जीवन शैली के सिद्धान्त तथा मानव संस्कृति एवं सभ्यता के विकास का स्पष्ट ज्ञान देता है और विज्ञान भी इन समस्त पहलुओं को अपने परिधि में रखता है। विज्ञान में विभिन्न प्राणियों के विकास क्रम तथा विकासवाद के अध्ययन से सामाजिक अध्ययन की अनेक ऐतिहासिक घटनाओं का स्पष्टीकरण हुआ है।

सामाजिक अध्ययन तथा गणित का सहसम्बन्ध – गणित तथा सामाजिक अध्ययन का एक दूसरे के साथ अप्रत्यक्ष रूप से घनिष्ठ सम्बन्ध है। गणित का ज्ञान छात्रों को उत्पादन, क्रय, विक्रय, योजना विभिन्न मुद्राओं, (currency) भार, माप, कैशमेमो, वाउचर, प्राइस लिस्ट तथा अन्य गणितीय संक्रियाएँ आदि के बारे में जानने में सहायक होता है। इन समस्त क्रियाओं का सामाजिक महत्व है और ये मनुष्य के जीवन से सम्बन्धित होती है। गणित का ज्ञान रखने वाले सामाजिक अध्ययन के छात्र बजट तैयारी कर तथा विभिन्न प्रकार की गणना यथा जनसंख्या गणना, वोट की गणना, लोक सभा तथा राज्य सभा के चुनाव में विभिन्न गणनाओं में सफल होते हैं। इसके अतिरिक्त जब सामाजिक अध्ययन का छात्र सारणी तथा मानचित्र बनाते हैं उस समय गणित का ज्ञान ही उन्हें उनके कार्यो में सफल करता है। उपरोक्त बातें दोनो विषय के मध्य व्याप्त सहसम्बन्ध की पुष्टि करते हैं।

सामाजिक अध्ययन तथा भाषा का सहसम्बन्ध :– भाषा, शिक्षण और अधिगम का आधार प्रस्तुत करता है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण एवं अधिगम में भाषा ही सहायक होती है। दूसरी तरफ सामाजिक अध्ययन भाषा को अपनी विषय सामग्री देता है। भाषा चाहे हिन्दी, अंग्रेजी अथवा संस्कृत हो इनके माध्यम से हम मनुष्य, समाज तथा उनकी पारस्परिक अन्तःक्रिया को पढ़ते और समझते हैं। इस प्रकार इन दोनो विषयों का पारस्परिक सम्बन्ध अत्यन्त घनिष्ठ है।

सामाजिक अध्ययन और कला का सहसम्बन्ध :– विभिन्न प्रकार की कला कृतियों के माध्यम से हम समाज, सामाजिक व्यवहार तथा मानवीय सम्बन्धों को समझते हैं। तस्वीर, चार्ट मानचित्र, आकृतियां, कार्टून, समय रेखा तथा इसी प्रकार की अन्य कलाएं वस्तुतः मनुष्य तथा उसके पर्यावरण का सजीव चित्रण करती है और सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत इन्ही कलाकृतियों के माध्यम से बीती हुई घटनाओं का अनुमान लगाकर उन्हें क्रमबद्ध तरीके से विषय सामग्री के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार कला सामाजिक अध्ययन की विभिन्न घटनाओं को अपनी विषय वस्तु बनाती हैं और सामाजिक अध्ययन उन कलाकृतियों को शाब्दिक जामा पहना कर अपने को सम्पूर्ण करता है।

सामाजिक अध्ययन तथा कम्प्यूटर का सहसम्बन्ध :– कम्प्यूटर आधुनिक तकनीकी शास्त्र का सबसे बड़ा योगदान है। इसकी अतिशय महत्ता को दृष्टिगत रखते हुए ही उसे एक विषय के रूप में विद्यालयी पाठ्यक्रम में रखा गया। कम्प्यूटर ने व्यापार, उद्योग, शासन प्रणाली या यूँ कहें कि सम्पूर्ण मानव जीवन को ही बहुत अधिक प्रभावित किया। चूंकि कम्प्यूटर अधिगम सामग्री को संचित भी करता है अतएव सामाजिक अध्ययन की सम्पूर्ण अधिगम सामग्री उसमें संचित है। बस आवश्यकता है इण्टरनेट पर सामाजिक अध्ययन की कोई भी सामग्री, जिसके बारे में हम जानना चाहते हैं, उसे अंकित करने की । पूरा का पूरा ब्यौरा हम घर बैठे सचित्र देख सकते हैं। कम्प्यूटर ने तो सम्पूर्ण मानव जीवन ही अपने में समेट लिया है। अतएव इन दोनो विषयों का सहसम्बन्ध घनिष्ठ है।

क्रियाकलाप

सामाजिक अध्ययन का अन्य विद्यालयी विषयों के साथ सम्बन्ध निरूपित कीजिए।

____
____
____
____

1.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में हमने सामाजिक अध्ययन विषय के स्वरूप का अध्ययन किया। संदर्भतः यह भी स्पष्ट किया कि इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र विषयों की कायिक सीमा को समाप्त करके सामाजिक अध्ययन विषय को विद्यालयी पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने का क्या उद्देश्य है ? आप इस इकाई के माध्यम से सामजिक अध्ययन के सम्प्रत्यय को भली भांति समझ सकेंगे। साथ ही साथ इसी के समान्तर प्रयुक्त शब्द सामाजिक विज्ञान से इसके अन्तर को भी समझ सकेंगे। प्रस्तुत इकाई आपको सामाजिक अध्ययन की प्रकृति को समग्रता के साथ समझने में सहायक होगी।

1.5 अभ्यास कार्य

1. सामाजिक अध्ययन विषय की प्रकृति को उदघाटित कीजिए।
2. सामाजिक अध्ययन के अर्थ को स्पष्ट कीजिए।
3. सामाजिक अध्ययन, सामाजिक विज्ञान से किस प्रकार भिन्न है?

4. सामाजिक अध्ययन, की विशेषताओं का विस्तारण कीजिए।

1.6 चर्चा के बिन्दु

1. सामाजिक अध्ययन एक समेकित विषय के रूप में अधिक प्रभावशाली सिद्ध होगा।
2. स्वंय को समझने के लिए सामाजिक अध्ययन विषय का अध्ययन अत्यन्त उपयोगी है।

1.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सामाजिक अध्ययन को विद्यालयी पाठयक्रम में एकीकृत विषय के रूप में इसलिये सम्मिलित किया गया क्योकि जब हम इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र तथा नागरिकशास्त्र का अध्ययन करते हैं तो सम्बन्धित विषय के मात्र सैद्धान्तिक पहलू को ही आत्मसात करते हैं। उसकी विषय वस्तु पर ही स्वामित्व प्राप्त करते हैं। जबकि सामाजिक अध्ययन एकीकृत विषय के दौरान बालकों में सामाजिक कौशल, सहकारिता, सहयोगात्मक प्रवृत्ति तथा विभिन्न सामाजिक मूल्यों का विकास करता है।

2. अपने विषय में जानने के लिये सामाजिक अध्ययन विषय आपकी बहुत मदद करेगा क्योकि इस विषय का अध्ययन क्षेत्र अत्यन्त व्यापक होता है। मनुष्य के जीवन से सम्बन्धित विभिन्न क्रियाकलापों तथा गतिविधियों का प्रतिनिधित्व करने वाले समस्त विषय सामाजिक अध्ययन विषय के क्षेत्र में समाहित होते हैं।

3. कोठारी कमीशन के इस वक्तव्य कि "राष्ट्र का निर्माण विद्यालयों की कक्षाओं में होता है" ने सामाजिक अध्ययन विषय को विद्यालयी पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने की पृष्ठभूमि निर्मित की। इस कथन के पीछे उनकी मंशा यह थी कि आज का युवा ही देश का भावी कर्णधार होगा। इसलिये विद्यालयों में सामाजिक अध्ययन विषय को सम्मिलित कर उसे एक आदर्श नागरिक बनाया जाये।

4. NASS ने सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में मनुष्य तथा उसके पर्यावरण से सम्बन्धित कुल 09 बिन्दुओं को सम्मिलित करने की संस्तुति दी।

5. सामाजिक अध्ययन विषय, व्यक्ति तथा उसकी समस्त परिस्थितियों, गतिविधियों तथा क्रियाकलापों का वर्णन करता है। इसके माध्यम से व्यक्ति अतीत के अनुभवों से लाभान्वित होकर अपने वर्तमान तथा भावी जीवन के सन्दर्भ में उचित निर्णय लेने में सफल हो पाता है।

6. सामाजिक अध्ययन विषय का अध्ययन समाज में हो रहे परिवर्तन को उचित दिशा प्रदान करता है। इसके अध्ययन से समाज की प्रकृति को समझने में सहायता मिलती है। समाज में व्याप्त विभिन्न समस्याओं तथा उनके समाधान के लिये सामाजिक अध्ययन विषय अत्यन्त उपयोगी है। समाज में प्रचलित विभिन्न विचारधाराओं के मध्य तुलना करने के लिये इस विषय का अध्ययन सहायक होता है। अतीत को वर्तमान तथा वर्तमान को भविष्य के साथ जोड़ने के लिये यह विषय अत्यन्त उपयोगी है।

1.8 सन्दर्भ पुस्तकें

Ellis, A.K. (1977)- Teaching and learning Elementary social studies, Allyn and Bacon Inc.London

Sharma, R.L. (2005)- Teaching of social studies, Vinod Pustak Mandir, Agra-2

https://sstmaster.com/social-studies-hindi/

इकाई–2 सामाजिक अध्ययन का अधिगम, सामाजिक अध्ययन का मनोविज्ञान, सामाजिक अध्ययन का अधिगम और शिक्षण, निर्मितवाद, अभिनयवाद

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 सामाजिक अध्ययन का अधिगम

2.3.1 अधिगम का अर्थ

2.3.2 अधिगम की प्रकृति एवं विशेषताएं

2.3.3 अधिगम के सिद्धान्त

2.3.4 छात्रों में अधिगम हेतु वांछित आवश्यकताएं

2.3.5 सामाजिक अध्ययन के प्रभावशाली अधिगम हेतु अपेक्षित सुझाव

2.4 सामाजिक अध्ययन का मनोविज्ञान

2.4.1 सामाजिक अध्ययन का मनोवैज्ञानिक आधार

2.5 सामाजिक अध्ययन का अधिगम और शिक्षण

2.5.1 सामाजिक अध्ययन का शिक्षण प्रक्रम

2.5.2 शिक्षण प्रक्रिया के विभिन्न घटक

2.5.3 सामाजिक अध्ययन में अनुदेशनात्मक अथवा शिक्षण नियोजन के प्रकार

2.5.3.1 इकाई योजना का अर्थ

2.5.3.2 इकाई योजना का प्रारूप

2.5.3.3 इकाई योजना के मूल तत्व

2.5.3.4 पाठ योजना का अर्थ

2.5.3.5 पाठ योजना के घटक

2.5.3.6 पाठ योजना निर्माण में अपेक्षित सावधानियाँ

2.5.3.7 पाठ योजना का महत्व

2.5.3.8 पाठ योजना का प्रारूप

2.6 निर्मितवाद

2.6.1 निर्मितवाद का अर्थ

2.6.2 निर्मितवाद अनेक अधिगम परिप्रेक्ष्यों का ही संश्लेषण है।

2.6.3 निर्मितवाद शिक्षण एक सांस्कृतिक प्रणाली के रूप में तथा सामाजिक अध्ययन के शिक्षक की इसमें भूमिका

2.6.4 निर्मितवाद के प्रकार

2.6.5 पियाजे का संज्ञानात्मक निर्मितवाद सिद्धान्त

2.6.6 सामाजिक निर्मितवाद का सिद्धान्त

(क) स्थिति ज्ञान निर्मितवाद

(ख) सामाजिक सांस्कृतिक ज्ञान

2.6.7 निर्मितवाद के शैक्षिक निहितार्थ

2.7 अभिनयवाद

2.8 सारांश

2.9 अभ्यास कार्य

2.10 चर्चा के बिन्दु

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.12 सन्दर्भ पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

किसी भी विषय के उद्देश्य एवं लक्ष्य की प्राप्ति तभी संभव है जब अधिगम एवं शिक्षण प्रक्रिया प्रभावशाली हो। अधिगम और शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने की दिशा में हमारे मनोवैज्ञानिकों तथा शिक्षाशास्त्रियों ने महत्वपूर्ण कार्य किए जिसके फलस्वरूप ऐसे सिद्धान्तों का प्रतिपादन हुआ जो इन प्रक्रियाओं को प्रभावशाली बनाने में निःसन्देह मील का पत्यर साबित हो रहे हैं। अधिगम और शिक्षण में मनोविज्ञान के सिद्धान्तों का अनुपालन करके हमने इस प्रक्रिया को सहज तथा सरल बनाया। विगत वर्षो में दो और नवीन अधिगम विधि उभर कर सामने आई – निर्मितवाद और अभिनयवाद। निर्मितवाद ऐसा सिद्धान्त है जो यह मानता है कि ज्ञान, छात्र के बाहर नहीं है वरन उसमें ही निहित है। शोधकर्ताओं के अनुसार निर्मितवाद सिद्धान्त के अनुसार छात्र सक्रिय रहते हुए स्वंय के ज्ञान का निर्माण करते हैं और पूर्व ज्ञान तथा नवीन ज्ञान में सम्बन्ध स्थापित करते हुये अधिगम करते जाते हैं। अभिनयवाद सिद्धान्त की मान्यता है कि अधिगम की इस प्रविधि में छात्र का ज्ञानार्जन अधिक होता है क्योंकि इसमें एक साथ उसकी सभी ज्ञानेन्द्रियां क्रियाशील रहती हैं। प्रस्तुत इकाई में इन सबकी चर्चा की जा रही है। साथ–साथ शिक्षण की इकाई योजना तथा पाठ योजना की विधि को भी विस्तारित किया है जो निःसन्देह आपके शिक्षण अभ्यास में सहायक होगी।

2.2 उद्‌देश्य

प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करने के उपरान्त आप

1. अधिगम की परिभाषा का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।

2. सामाजिक अध्ययन के मनोवैज्ञानिक आधार का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
3. शिक्षण प्रक्रिया के विविध घटकों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
4. शिक्षण नियोजन के प्रकारों को सूचीबद्ध कर सकेंगे।
5. इकाई योजना तथा पाठ योजना में विभेद कर सकेंगे।
6. अधिगम परिस्थितियों में निर्मितवाद सिद्धान्त का विश्लेषण कर सकेंगे।
7. अभिनयवाद सिद्धान्त के प्रति वांछित दृष्टिकोण का विकास कर सकेंगे।

2.3 सामाजिक अध्ययन का अधिगम

सामाजिक अध्ययन मानवीय सम्बन्धों तथा उनके अन्तःस्वरूप का अध्ययन है जिसमें बालक में सामाजिकता के उत्तम गुणों के विकास पर बल दिया जाता है। इस विषय के अन्तर्गत उन्ही विषय वस्तु तथा क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है जो बालक के सामाजिक पक्ष के सर्वोत्तम विकास हेतु उपयोगी हो तथा जो छात्रों में उत्तम नागरिकता का विकास कर उनमें कुशल नेतृत्व का कौशल विकसित करें। जैसा कि मैने प्रथम इकाई के अन्तर्गत यह चर्चा की थी कि इस विषय की संकल्पना इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र जैसे विषयों, जिन्हें हम प्रस्तुत विषय के घटक भी कह सकते हैं, को एकीकृत करके प्रस्तुत की गई है जिसमें न ही उपयफ्रक्त विषयों में से किसी एक या दो पर बहुत अधिक बल दिया गया है और न ही किसी विषय की उपेक्षा की गई है। इन विषयों को एकीकृत करने का एक कारण यह भी है कि इन्हें पृथक–पृथक विषय के रूप में पढ़ने से छात्रों को दैनिक जीवन की सामाजिक समस्याओं का ज्ञान सम्यक रूप में ना होकर आंशिक अथवा सीमित रूप में ही हो पाता है। जबकि सामाजिक अध्ययन छात्रों को मात्र तथ्यात्मक सूचनाएं ही नहीं प्रदान करता वरन उनमें उन मानदण्डों, वृत्तियों आदर्शों तथा रूचियों का निर्माण भी करता है जिनको प्रभावशाली नागरिकता का आधार माना जाता है जिनकी सहायता से वह अपने व्यावहारिक जीवन की विविध समस्याओं का समाधान अत्यन्त सूझ एवं कुशलता से करता है। सामाजिक अध्ययन का अधिगम छात्रों को प्रभावशाली ढंग से किस प्रकार कराया जाए, यह जानने से पूर्व अधिगम क्या है ? इस सन्दर्भ में भी जानना आवश्यक है।

2.3.1 अधिगम का अर्थ

अधिगम छात्रों के व्यवहार में उसके पूर्व अनुभवों के आधार पर हुआ परिवर्तन है। यह वह प्रविधि है जिससे व्यक्ति के व्यवहार में उसके अनुभवों के आधार पर रूपान्तरण होता है। अधिगम की यह प्रक्रिया बालक के जन्म के साथ शुरू हो जाती है जो जीवन पर्यन्त चलती है। अधिगम प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष, आकस्मिक, अनभिज्ञता अथवा सचेतन अवस्था में किया जाता है जिसकी गति द्रुत अथवा मन्द अथवा सामान्य हो सकती है। अधिगम में वृद्धि शिक्षण, प्रशिक्षण, अभ्यास तथा अभिप्रेरणा के माध्यम से होती है जिसके परिणामस्वरूप छात्र के व्यवहार में वांछित परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम को अपने–अपने ढ़ंग से परिभाषित किया है –

वुडवर्थ नवीन ज्ञान और नवीन प्रतिक्रियाओं को प्राप्त करने की प्रक्रिया सीखने की प्रक्रिया है।

क्रो एण्ड क्रो :– सीखना आदतों, ज्ञान तथा अभिवृत्तियों का अर्जन है।

गेट्स तथा उनके सहयोगियों के अनुसार :– अधिगम अनुभव और प्रशिक्षण के द्वारा व्यवहार में होने वाला सुधारात्मक परिवर्तन है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि अधिगम का अर्थ है अनुभव, शिक्षण, प्रशिक्षण, अथवा अध्ययन आदि किसी भी विधि से नए–नए तथ्यों का ज्ञान प्राप्त करना, नई–नई क्रियाओं को करना तथा इन क्रियाओं को बहुत दिनों तक धारण करना और आवश्यकता पड़ने पर इनका समुचित प्रयोग करते हुए अपने व्यवहार को सही दिशा देना।

2.3.2 अधिगम की प्रकृति एवं विशेषताएँ

1. अधिगम मनुष्य की जन्मजात प्रकृति है।
2. अधिगम प्रक्रिया एवं परिणाम दोनो है।
3. यह उद्देश्य पूर्ण होता है।
4. यह प्रक्रिया जीवन पर्यन्त चलती है।
5. अधिगम क्रमिक प्रक्रिया है।
6. यह पर्यावरण तथा वंशानुक्रम दोनो पर निर्भर करती है।
7. इस प्रक्रिया में पूर्व अनुभवों का महत्व होता है।
8. अधिगम में किसी व्यक्ति, परिस्थिति, क्रिया तथा चिन्तन में अन्तःक्रिया आवश्यक है।
9. यह सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनो होता है
10. अधिगम में अभिप्रेरणा का विशेष महत्व है।
11. अधिगम एक सामाजिक प्रक्रिया है।
12. इसमें संतोष एवं सन्तुष्टि का महत्व होता है।
13. संज्ञानात्मक मनोवैज्ञानिक अधिगम को एक सक्रिय रचनात्मक तथा उद्देश्य आधारित प्रविधि मानते हैं जो छात्र की मानसिक प्रक्रिया पर निर्भर है।

2.3.3 अधिगम के सिद्धान्त

मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र मानव व्यवहार का अध्ययन करते हैं जिससे प्राप्त निष्कर्षो का प्रयोग हम शिक्षा में करते हैं। इस अध्ययन के फलस्वरूप अधिगम के कुछ सिद्धान्त भी प्रतिपादित किए गए हैं जैसे :–

1. छात्र सक्रिय होकर अधिगम करते हैं।
2. छात्रों के समक्ष प्रत्यक्ष तथा मूर्त अनुभव होने पर उनमें सम्प्रत्यय का निर्माण सरल हो जाता है।
3. छात्र सदैव पूर्व ज्ञान के सन्दर्भ में नवीन ज्ञान को जोडकर अधिगम करते हैं।
4. बौद्धिक, भावात्मक तथा संवेदनशील वातावरण में अधिगम प्रभावशाली ढ़ंग से होता है।
5. वैयक्तिक भिन्नता के आधार पर किया गया शिक्षण छात्रों के अधिगम में वृद्धि करता है।
6. सकारात्मक पुनर्वलन देने पर छात्र द्रुत गति से अधिगम करते हैं।
7. प्रासंगिक, अर्थपूर्ण तथा वास्तविक शिक्षण से अधिगम स्थायी होता है।
8. अभिप्रेरणा छात्रों के अधिगम तथा उनकी उपलब्धि संबंधित व्यवहार में तीव्रता और दृढ़ता बनाए रखते हैं।

यहां पर अभिप्रेरणा के संदर्भ में थोड़ा सा स्पष्ट कर दें कि यह अधिगम एवं व्यवहार के लिए आवश्यक अवस्था है। यह आन्तरिक तथा बाह्रय दोनो प्रकार से होता है। आन्तरिक अभिप्रेरणा छात्र की जानने की आवश्यकता तथा समझने की इच्छा शक्ति से संबंधित है जबकि बाहय अभिप्रेरणा पुरस्कार, लाभ तथा प्रशंसा से। शिक्षा में मनोविज्ञान के आगमन के फलस्वरूप वर्तमान में प्रयास यह किया जा रहा है कि छात्र अधिगम के समय आन्तरिक रूप से अभिप्रेरित हों।

अधिगम का अर्थ, उसकी प्रकृति तथा विशेषताएँ एवं अधिगम के सिद्धान्त को समझ लेने के पश्चात अब प्रश्न उठता है कि सामाजिक अध्ययन का छात्रों द्वारा भली भांति अधिगम हो, इस संदर्भ में छात्रों की क्या आवश्यकताएं हो सकती है ? इस प्रश्न का उत्तर आप अग्रांकित शीर्षक के अन्तर्गत पा सकते हैं –

2.3.4 छात्रों में अधिगम हेतु वांछित आवश्यकताएँ

1. चिन्तन :– अधिगम में छात्रों की सबसे प्रमुख आवश्यकता चिन्तन होती है अर्थात छात्र जब नवीन सम्प्रत्ययों का, अपनी ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग करते हुए अवलोकन करते हैं तो उनमें चिन्तन की प्रक्रिया शुरू हो जाती है जो किसी भी सम्प्रत्यय के मूल में पहुचने के लिए आवश्यक है। अतएव उनकी ज्ञानेन्द्रियों को प्रेरित करना आवश्यक है जिससे वे अपने चिन्तन को विस्तार दे सकें।

2. भौतिक क्रियाएँ :– विषय के ज्ञानार्जन के दौरान की गई विभिन्न क्रियाएँ चिन्तन को प्रखर करती हैं जैसे ध्वजारोहण अथवा राष्ट्रगाान शुरू होते ही लोग रोमान्च से भर जाते हैं और एक ही क्षण में भारत की आजादी का इतिहास तथा अमर शहीदों के बलिदान की अमर कथाएं मनस पटल पर उभरने लगती हैं और छात्र अपनी चिन्तन प्रक्रिया में इस आजादी को चिर कालिक रखने हेतु ताना–बाना बुनने लगता है। इसी प्रकार की गई अर्थपूर्ण क्रियाएँ छात्रों के चिन्तन विकास हेतु उसे आवश्यक अनुभव उपलब्ध कराती है जिनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध मस्तिष्क से होता है।

3. भाषा – पारस्परिक वार्ता तथा अन्तःक्रिया से छात्रों में भाषा के प्रयोग का कौशल विकसित होता है जो अधिगम का मूल तत्व है। उनमें पारस्परिक सम्प्रेषण से अपने भावों विचारों की अभिव्यक्ति तथा तक्र शक्ति की योग्यता का विकास होता है। इसलिए छात्रों को भाषा विकास का पूर्ण अवसर प्रदान करना चाहिए।

4. सामाजिक कौशल–छात्र समूह में रहते हुए अधिक प्रभावशाली ढंग से अधिगम करते हैं। इससे छात्रों के सामाजिक विकास को भी बढ़ावा मिलता है। समूह में कार्य करने से उनमें सामाजिक कौशलों का भी विकास होता है। इस प्रकार सामाजिक विकास का सम्बन्ध शैक्षिक सफलता से भी है। इसलिए छात्रों के समाजीकरण को अधिक से अधिक बढ़ावा देना चाहिए।

5. आत्मविश्वास –छात्रों के प्रत्येक कार्य पर पुनर्बलन दिया जाना चाहिए। उन्हें अधिगम हेतु अभिप्रेरित किया जाना चाहिए। इससे उनमें आगे बढ़ने हेतु उत्साह और आत्मविश्वास का भाव आएगा।

6. पर्याप्त समय– उपरोक्त सभी कार्यो हेतु छात्रों को प्रर्याप्त समय दिया जाना चाहिए जिससे छात्र अपनी गति से स्व अध्ययन कर सकें तथा एक प्रभावशाली, सुसमायोजित, सृजनात्मक तथा चिन्तनशील युवक बन सकें। इन अधिगम आवश्यकताओं को हम निम्नांकित रेखाचित्र के माध्यम से भी देख सकते हैं –

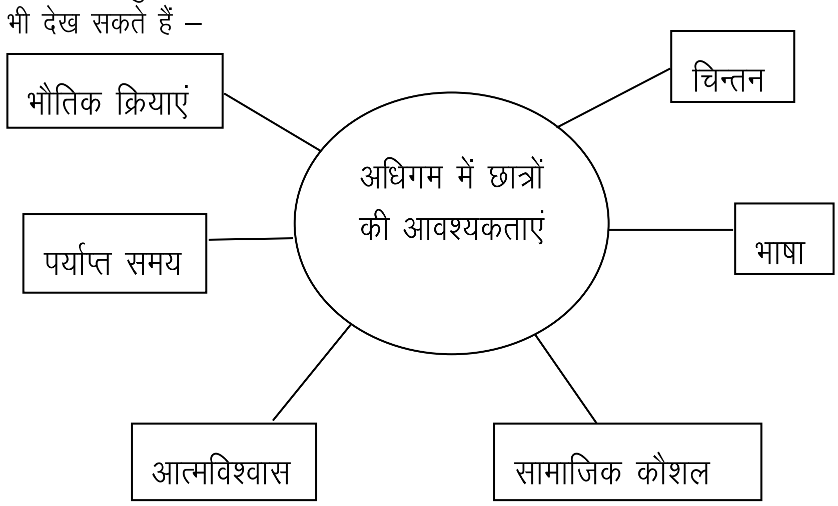

रेखा चित्र– 2.3.4.1

2.3.5 सामाजिक अध्ययन के प्रभावशाली अधिगम हेतु अपेक्षित सुझाव

सामाजिक अध्ययन का अधिगम प्रभावशाली ढ़ंग से हो, इसके लिए आवश्यक है कि :–

- छात्रों को नवीन ज्ञान उनके द्वारा अर्जित पूर्व ज्ञान से जोड़ते हुए ही देना चाहिए। जैसे यदि छात्रों को छठी शताब्दी ई0 पू0 का धर्म पढ़ाया जाना है तो उससे पूर्व छात्रों के वैदिक कालीन धर्म सम्बन्धित अवबोध स्तर का पता लगा कर उसे नवीन ज्ञान से जोड़ते हुए आगे बढ़ना चाहिए।
- छात्रों को सम्पूर्ण अधिगम प्रक्रिया में सम्मिलित किया जाए।
- व्यक्तिगत भिन्नता को अवश्य ध्यान में रखा जाए क्योंकि अधिगम एक वैयक्तिक विषय है।
- अधिगम हेतु छात्रों को अभिप्रेरित किया जाए।
- विषय का प्रस्तुतिकरण इस प्रकार किया जाए जिससे छात्रों में कुछ जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हो जाए और वे अधिगम में रूचि लें।
- उनकी क्रियाओं के आधार पर पुनर्बलन दिया जाए क्योंकि पुनर्बलन भी छात्रों के अधिगम को प्रभावित करता है।
- हमे यह स्मरण रखना होगा कि अधिगम मस्तिष्क का कार्य है। उसे एक सक्रिय प्रेरणादायक वातावरण चाहिए। इसलिए उत्तम अधिगम हेतु पोषक वातावरण की आवश्यकता होती है। छात्र को हम जितना समृद्ध पर्यावरण देंगे, वह उतना ही अधिक सम्प्रत्यय, कौशल तथा समस्या समाधान को समझने का अवसर प्राप्त करेगा और अधिगम उतना ही अधिक प्रभावशाली होगा।
- इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि छात्रों को अधिगम हेतु पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए अर्थात छात्र अधिगम में अपनी इच्छा से समय लगाएं।
- शिक्षक छात्रों को सकारात्मक सहायता दें तथा साथ ही साथ वह अधिगम सरलीकरण करने वाला भी हो।

क्रियाकलाप

आपके छात्रों की अधिगम आवश्यकताएं कौन–कौन सी हैं ? उन्हे पहचानते हुए उनकी एक सूची बनाइए।

____

____

2.4 सामाजिक अध्ययन का मनोविज्ञान

शिक्षा जगत में मनोविज्ञान विषय के प्रवेश ने एक नवीन क्रान्ति का सूत्रपात किया और सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रम में छात्र को शीर्ष स्थान पर रखा। आज सभी शिक्षाशास्त्री इस बात पर बल दे रहे हैं कि शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया छात्र की मनोवैज्ञानिक समझ पर आधारित होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में छात्र की रूचि, रूझान, योग्यता, क्षमता, अभिक्षमता तथा उसकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए ही शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया को संचालित कर उसे सफल बनाया जा सकता है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक एवं शिक्षाशास्त्री ई0एल0 थार्नडाइक ने वनमानुष पर अधिगम से सम्बन्धित अपना एक प्रयोग किया था और उस प्रयोग के आधार पर आपने अधिगम के तीन प्रमुख तथा छह गौण नियम प्रतिपादित किये, जिनकी संदर्भतः अति संक्षिप्त चर्चा अपेक्षित है।

मुख्य नियम 1. तत्परता का नियम

2. अभ्यास का नियम → उपयोग का नियम

2. अभ्यास का नियम → अनुपयोग का नियम

3. परिणाम का नियम

गौण नियम 1. स्पष्टता का नियम

2. उद्देश्य का नियम

3. चयन का नियम

4. सम्बद्धता का नियम

5. नवीनता का नियम

6. बारम्बारता का नियम

वास्तव में कोई भी अधिगम तभी शीघ्र और प्रभावशाली होगा, जब अध्यापक उपरोक्त नियमों को ध्यान में रखते हुए अपने शिक्षण का नियोजन करें। अतएव सामाजिक अध्ययन के अधिगम में भी उपयफ्रक्त नियमों का पालन करके हम विषय को छात्रों के लिए अधिक सुगम, रूचिकर तथा प्रभावशाली बना सकते हैं। यदि विभिन्न विषयों में संबद्धता है, उनके उद्देश्यों में समरूपता है, तो ऐसे विषयों को पृथक रूप से ना पढ़ा कर एकीकृत विषय के रूप में पढ़ाना अधिक उचित होगा। अन्य शब्दों में विषय की प्रकृति में तथा उसके लक्ष्य एवं उद्देश्य में समरूपता होने पर विषयों की सीमा हटा कर उसे एकीकृत विषय के रूप में पढ़ाना मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के अनुकूल है। यही कारण है कि सामाजिक विज्ञान के विभिन्न घटकों को, जिन्हे पृथक–पृथक विषय के रूप में पढ़ाया जाता था, एकीकृत कर विद्यालयी पाठयक्रम में उसे सम्मिलित किया गया।

2.4.1 सामाजिक अध्ययन का मनोवैज्ञानिक आधार

सामाजिक अध्ययन को एक एकीकृत विषय के रूप में पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने के मनोवैज्ञानिक कारण निम्नलिखित हैंः–

- छात्र उन्ही वस्तुओं के अधिगम में रूचि लेते हैं जो वास्तविक होती है और जिनका उनके जीवन से सम्बन्ध होता है। जहां तक सामाजिक अध्ययन विषय का प्रश्न है, तो इसका सम्बन्ध भी मूर्त वस्तुओं तथा वास्तविकता से होता है अर्थात सामाजिक अध्ययन विषय का सम्बन्ध मनुष्य के जीवन से होता है जो कि वास्तविक होता है जिसे बच्चे जीते हैं, महसूस करते हैं तथा उसे मूर्त रूप में देखते हैं।

- सामाजिक अध्ययन छात्र को जीवन के बारे में मात्र पुस्तकीय ज्ञान ही नहीं प्रदान करता वरन अनेक ऐसे वास्तविक तथ्यों से परिचित कराता है जो भविष्य में छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होते हैं और छात्र उनका चयन अपनी क्षमता, रूचि और योग्यता के अनुसार करते हैं। कहने का आशयहै कि जीवन का व्यावहारिक ज्ञान कराने में इस विषय की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

- सामाजिक अध्ययन छात्र को उसके उस पर्यावरण के विषय में बताता है जिसमें वह रहता है और व्यक्तित्व के विकास में पर्यावरण का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान होता है। यद्यपि यह सत्य हैं कि छात्र अपनी जन्मजात प्रवृत्तियों के अनुरूप ही व्यक्तित्व पाता है। परन्तु हम इस तथ्य को भी नहीं नकार सकते कि उसकी जन्मजात प्रवृत्तियों को विकसित होने का आधार उसके पर्यावरण से ही मिलता है अर्थात उसकी जन्मजात शक्तियां, अभिवृत्तियां, मूल प्रवृत्तियां तथा रूचियां उचित रूप में बालक के उस पर्यावरण में विकसित होती है जिस पर्यावरण का व्यापक अध्ययन और उसका मनुष्य के साथ सम्बन्ध को सामाजिक अध्ययन भली भांति स्पष्ट करता है।

- जीवन एक समग्र इकाई है। इसे हम विभिन्न उप इकाइयों में वर्गीकृत नहीं कर सकते अर्थात जीवन की समग्रता को हम टुकड़ों में विभक्त नहीं कर सकते। ठीक इसी प्रकार ज्ञान भी एक

अविभाज्य इकाई है इसे हम छोटे–छोटे टुकड़ों में स्थायी रूप से नहीं बांट सकते। परन्तु हां, यदि हमे किसी भाग अथवा क्षेत्र के ज्ञान पर स्वामित्व प्राप्त करना है तब भले हम सुविधा के दृष्टिकोण से अस्थायी रूप से पृथक कर सकते हैं। ज्ञान के इस अखण्ड तथा अविभाज्य रूप को शिक्षा के क्षेत्र में मनोविज्ञान के आगमन के साथ सभी ने स्वीकार किया है। मनोविज्ञान के गेस्टाल्ट वादियों ने अपने प्रयोग के आधार पर ज्ञान के अविभाज्य होने की पुष्टि भी की है। और इस कसौटी पर सामाजिक विज्ञान भी पूर्णतः खरा उतरता है जो मनुष्य का अन्य मनुष्यों के साथ सम्बन्ध, उसकी भौगोलिक स्थिति, उसका आर्थिक आधार, उसका अतीत तथा उसके कर्तव्य एवं दायित्वों का ज्ञान खण्डों में न देकर समग्रता के साथ देता है। अर्थात सामाजिक अध्ययन जैसा विषय समाजशास्त्र, भूगोल, अर्थशास्त्र, इतिहास तथा नागरिकशास्त्र जैसे विषयों को समेकित कर उनके माध्यम से बच्चे को उस जीवन, पर्यावरण, मनुष्य, उसका अन्य मनुष्यों के साथ सम्बन्ध तथा उसकी अन्तःक्रियाओं का वास्तविक ज्ञान प्रदान करता है जिसमें छात्र रूचि लेता है, जिसे सीखने के लिए छात्र अत्यन्त तत्परता के साथ पहल करता है।

- सामाजिक अध्ययन को एक समेकित विषय रूप में पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के पूर्णतः अनुकूल है। इसे हम माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53) की रिपोर्ट में प्रस्तुत निम्नलिखित उदाहरण से भी स्पष्ट कर सकते हैं जिसके अनुसार लोगो को प्रायः यह बात समझ में नहीं आती कि ढ़ेर सारे ज्ञान की जो शिकायत अक्सर की जाती है उसका सबसे बडा कारण विषयों की बहुलता है। इन सारे विषयों को अलग–अलग माना जाता है। यह नहीं समझा जाता कि इनमें से कई विषय परस्पर जुड़े हुए हैं अर्थात उनमें कायिक एकता है। इसलिए पाठ्यचर्या तैयार करते समय यह देखने का प्रयास किया जाए कि क्या कुछ ऐसे विषयों को एक बड़ी सुसंगठित इकाई में एकीकृत किया जा सकता है जो मानवीय ज्ञान एवं रूचि के मोटे दायरे में आते हैं। अतः मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अधिक अच्छा तो यह होगा कि सामाजिक पर्यावरण और मानवीय सम्बन्धों के अध्ययन से जुड़े हुए सभी विषयों को जैसे कि इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र आदि को एक दूसरे से बिल्कुल अलग विषयों के रूप में पढ़ाया न जाकर सामाजिक अध्ययन जैसे व्यापक शीर्षक के अन्तर्गत समेकित रूप में प्रस्तुत किया जाए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग का उपयफ्रक्त कथन अत्यन्त व्यावहारिक तथा अक्षरशः सत्य है। क्योंकि मनोविज्ञान भी बोझ रहित अधिगम पर बल देता है यदि हम सामाजिक विज्ञान के विभिन्न घटकों को अलग–अलग विषय के रूप में पढ़ाने के स्थान पर उन्हे एकीकृत विषय के रूप में पढ़ाए, तो छात्र कई विषयों के स्थान पर उस एकीकृत विषय को बिना किसी दबाव एवं बोझ के पढ़ेंगे जिसका परिणाम अधिक सार्थक होगा अर्थात विषय के लक्ष्य एवं उद्देश्य को हम प्राप्त कर सकेंगे।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि सामाजिक अध्ययन विषय मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर एकीकृत विषय के रूप में पूरी तरह खरा उतरता है। उपयफ्रक्त वर्णित समस्त कारण इस विषय को विद्यालयी पाठयक्रम में सम्मिलित किए जाने का मनोवैज्ञानिक आधार प्रस्तुत करते हैं।

क्रियाकलाप

सामाजिक अध्ययन विषय मनोविज्ञान के सिद्धान्तों का अनुसरण करता है। स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

____

2.5 सामाजिक अध्ययन का अधिगम और शिक्षण

2.5.1 सामाजिक अध्ययन का शिक्षण प्रक्रम

अधिगम को यदि शिक्षा मनोविज्ञान की आत्मा कही जाये, तो कोई अतिश्योक्ति नही होगी। अधिगम का शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान बताया गया है। क्योकि शिक्षा का प्रयोजन ही सीखाना है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि शिक्षा के तीन रूपों– औपचारिक शिक्षा (विद्यालय में दी जाने वाली) अनौपचारिक शिक्षा (घर/परिवार में दी जाने वाली) तथा नि–रौपचारिक (जिस तरीके से आप सभी शिक्षा प्राप्त कर रहें है अर्थात दूरस्थ या खुली शिक्षा) का नियोजन मात्र इसीलिये किया जाता है कि बच्चे सीखे अर्थात अधिगम करें और जब बच्चे सीखते हैं तो उन्हे अनुभव प्राप्त होता है और उन्ही विभिन्न प्रकार के अनुभवों के कारण ही बच्चे के व्यवहार में जो परिवर्तन आता है उसी को अधिगम या सीखना कहते हैं। दूसरे शब्दों में अनुभव के द्वारा व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को अधिगम कहते हैं और जब यह अधिगम सामाजिक अध्ययन विषय में किया जाता है तो वह सामाजिक अध्ययन का अधिगम कहलाता है।

सामाजिक अध्ययन विषय का शिक्षण एक बहुत ही जटिल मानवीय क्रिया कलाप है जिसका प्रारम्भिक छोर राष्ट्रीय लक्ष्य निर्धारण से लेकर कक्षा के सबसे कम उम्र के बच्चे के दैनिक क्रियाकलापों में प्रशिक्षण के छोर तक फैला हुआ है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण प्रक्रम को सार्थक तथा संदर्भयुक्त बनाने के लिए सर्वप्रथम यह जानना अति आवश्यक है कि मूलभूत तथा विशेष समझ क्या होती है उसके लिए किस प्रकार की अपेक्षित अभिवृत्तियां तथा कौन – कौन से कौशल सीखने होंगे। इसके पश्चात् सामाजिक अध्ययन के प्रकरण, जिसे पढ़ाना है, तथा उसके शिक्षण व्यूह की योजना शिक्षक को तैयार करना होता है। एक आदर्श शिक्षण प्रक्रिया वही होती है जो शिक्षक तथा छात्र को अपने–अपने पूर्व निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त करने के योग्य बनाए। अतएव आवश्यक है कि शिक्षक और छात्र उपयुक्त शिक्षण अधिगम कार्य नीति का अनुसरण करें।

2.5.2 शिक्षण प्रक्रिया के विभिन्न घटक

सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अध्यापक को कक्षा में किस प्रकार अपनी शिक्षण प्रक्रिया को विस्तार देना है– इसकी रूपरेखा वह पहले ही तैयार कर लेता है जिसके अन्तर्गत शिक्षक द्वारा शिक्षण प्रक्रम के निम्नलिखित घटकों का अनुपालन किया जाता है।

1. नियोजन
2. कार्यान्वयन
3. प्रबंधन तथा परिवीक्षण
4. प्रतिपुष्टि तन्त्र

शिक्षण नियोजन का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष उद्देश्यों का निर्धारण है। शिक्षक को सर्वप्रथम सुनिश्चित तथा सही–सही शब्दों में शिक्षण उद्देश्य अर्थात ज्ञानात्मक उद्देश्य, भावात्मक उद्देश्य तथा क्रियात्मक अथवा कौशलात्मक उद्देश्यों का निर्धारण करना चाहिए। उद्देश्यों का निर्धारण शिक्षक को उपयुक्त शिक्षण अधिगम विकल्पों के चयन में तथा मूल्यांकन प्रक्रिया को अपनाने में सहायक होगा। शिक्षण उद्देश्यों के निर्धारण के पश्चात अपनाई जाने वाली अधिगम क्रिया कलापों का अनुक्रम तय करना आवश्यक होता है। इसके पश्चात एक–एक करके समस्त क्रियाओं का किस प्रकार क्रियान्वयन, अनुभूत तथा समेकित करना है, इसकी भी शिक्षक द्वारा अपने मनोकूल एक श्रृंखला बना ली जाती है। शिक्षण की काफी सफलता शिक्षक द्वारा तैयार

की जाने वाली पाठ योजना अथवा इकाई योजना पर निर्भर करती है। शिक्षक इसे तैयार करने में जितना अधिक प्रयत्नशील होगा, उसका शिक्षण उतनी अधिक प्रभावशाली माना जाएगा। शिक्षक द्वारा अपनी पाठ अथवा इकाई योजना में पाठ्य पुस्तकों में उपलब्ध सामग्री के अतिरिक्त अन्य सामग्रियों को भी सम्मिलित करना उसके उच्च स्तरीय रचनात्मक कौशल को प्रतिबिंबित करेगा। शिक्षण से सम्बन्धित पाठ अथवा इकाई योजना तैयार कर उसे क्रियान्वित करते समय समस्त सामग्रियों, संसाधनों, कार्य प्रणालियों, माध्यमों तथा कार्यनीतियों को मॉनीटर करते हुए अर्थात सबका समुचित ध्यान रखते हुए शिक्षक छात्रों के मूल्यांकन के माध्यम से प्रतिपुष्टि (फीड बैक) प्राप्त करता है और यह सुनिश्चित करता है कि उसे पूर्व निर्धारित विशिष्ट शिक्षण परिणामों की प्राप्ति में कितनी सफलता प्राप्त हुई है और उसी के आधार पर उसमें वांछित परिवर्तन करते हुए वह पुनः उपयक्रक्त शिक्षण प्रक्रम का नियोजन करते हुए एक समाकलित उपागम अपनाता है। अर्थात योजना को निरन्तर परिवीक्षण करते हुए शिक्षक को इस बात की प्रति पुष्टि मिलती है कि छात्रों ने पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त किया है कि नहीं। और यदि प्राप्त किया है तो कितनी मात्रा में। परिवीक्षण करने से न केवल छात्रों की अधिगम प्रगति के बारे में जानकारी मिलती है वरन् शिक्षण प्रक्रम के समस्त घटक के प्रबंधन कौशलों के विषय में भी प्रतिपुष्टि मिलती है जिसके आधार पर अपेक्षित परिवर्तन करते हुए पुनः भावी नियोजन किया जाता है।

2.5.3 सामाजिक अध्ययन में अनुदेशनात्मक अथवा शिक्षण नियोजन के प्रकार

अनुदेशनात्मक नियोजन अधिगम को प्रभावशाली बनाने में सहायक होता है। सामाजिक अध्ययन में व्यापक रूप से निम्नलिखित योजनाएं बनाई जाती हैं:–

- वार्षिक योजना
- मासिक योजना
- साप्ताहिक योजना अर्थात इकाई योजना
- दैनिक योजना अर्थात पाठ योजना

प्रस्तुत इकाई में हम इकाई योजना तथा पाठ योजना का ही वर्णन करेंगे।

2.5.3.1 इकाई योजना का अर्थ

सामान्यतया इकाई शब्द का प्रयोग सामूहिक कार्य के संगठन के सन्दर्भ में किया जाता है। एक इकाई पढ़ाने के लिए बनाई गई योजना को ही इकाई योजना कहते हैं। इकाई योजना परस्पर सम्बन्धित पाठों की एक विस्तृत रूपरेखा है। सन् 1926 में हेनरी मोरीसन ने इसे परिभाषित करते हुए कहा कि इकाई किसी संगठित विज्ञान कला अथवा आचरण के वातावरण का व्यापक और महत्वपूर्ण अंग है जिसको जान लेने से व्यक्तित्व में अनुकूलता आती है।

इस प्रकार इकाई योजना वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु शिक्षकों द्वारा किसी एक प्रसंग पर उपलब्ध संसाधनो पर आधारित शिक्षण अधिगम की रूपरेखा है। यह न तो विषय वस्तु का एक खण्ड है और न ही एक स्वतन्त्र पाठ। यह तो किसी एक प्रसंग (Theme) पर आधारित 2–7 पाठों की योजना होती है। इस उपागम का आधार गेस्टाल्ट मनोविज्ञान है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह है कि इससे अधिगम प्रबन्ध में सुविधा होती है । सामाजिक अध्ययन की इकाई योजना के अन्त में छात्रों को उनकी उपलब्धि के विषय में भी ज्ञान हो जाता है । इसलिए हमे नियोजन तथा प्रबंधन पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हुए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इकाई योजना के निर्धारित उद्देश्य विशिष्ट, मॉनीटर/परिवीक्षण योग्य तथा प्रलेखों से प्रमाणित रूप में होने चाहिए और शिक्षण प्रक्रम के उपरान्त हमे छात्रों को उनकी अधिगम सफलता से

अवगत भी कराना चाहिए।

2.5.3.2 इकाई योजना का प्रारूप

विषय— समयावधि

कक्षा—

इकाई का नाम :—

उपइकाईयाँ :— (1) दिनांक...........से..............

तक (2)

उपइकाई एवं प्रकरण	शिक्षण बिन्दु	उद्देश्य एवं व्यवहारगत परिवर्तन	शिक्षक क्रियाएँ	छात्र क्रियाएँ	सहायक सामग्री	गृहकार्य	मूल्यांकन

2.5.3.3 इकाई योजना के मूल तत्व

इकाई योजना बनाते समय कुछ बातों को विशेष रूप से ध्यान में रखना अपेक्षित है यथा :—

- एक इकाई योजना के अन्तर्गत 2—7 पाठ विकसित किए जाने चाहिए।
- चूंकि इस योजना का उद्देश्य छात्रों की अधिगम आवश्यकता की पूर्ति करना है इसलिए छात्रों के पूर्व ज्ञान को जानना अति आवश्यक है तभी अर्थ पूर्ण अनुभव विकसित किए जा सकेंगे।
- इकाई योजना में शिक्षण के तीन उद्देश्य— ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्ष का भी समावेश होना चाहिए।
- अधिगम क्रियाओं में विविधता अनिवार्य रूप से होनी चाहिए जिससे छात्र सक्रिय रहते हुए विभिन्न सम्प्रत्ययों का विकास कर सकें।
- इसमें विषय से सम्बन्धित वांछित सामग्री तथा संसाधनों का समावेश होना चाहिए।

बोध प्रश्न

1. इकाई योजना का अर्थ स्पष्ट कीजिये।
2. सामाजिक अध्ययन विषय में अनुदेशनात्मक नियोजन क्या होता है?

____

____

क्रियाकलाप

सामाजिक अध्ययन विषय के कक्षा 7 के किसी पाठ को लेकर एक इकाई योजना तैयार कीजिए।

____

____

2.5.3.4 पाठ योजना का अर्थ

किसी पाठ के शिक्षण हेतु शिक्षक द्वारा बनाई जाने वाली योजना को पाठ योजना कहतें है। यह इकाई योजना का एक भाग है इसीलिए प्रत्येक दैनिक पाठ पिछले पाठ से सम्बन्धित होती है। शिक्षण की सफलता के लिए पाठ योजना का निर्माण आवश्यक होता है इसीलिए डेवीस महोदय ने कहा है कि –

''कक्षा में जाने से पूर्व शिक्षक को पूरी तैयारी कर लेनी चाहिए क्योंकि शिक्षक की उन्नति के लिए कोई वस्तु इतनी घातक नहीं है जितनी कि अपूर्ण तैयारी।''

इसलिए शिक्षक को अपने जड़ रूपी छात्रों को चेतन बनाना है तो उसे सदैव स्वाध्याय तथा अभ्यास करना होगा जो निःसन्देह शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में संजीवनी बूटी का कार्य करेगी अर्थात स्वाध्याय तथा अभ्यास शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने में अवश्य सहायक होगा। पाठ योजना को विभिन्न विद्वानों ने अपने–अपने दृष्टिकोण से परिभाषित किया है :–

सिम्पसनः– पाठ योजना में शिक्षक अपनी विषय सामग्री और छात्रों के बारे में जो कुछ जानता है उन बातों का प्रयोग सुव्यवस्थित ढ़ंग से करता है।

लेस्टर बी0 सेंड्सः– पाठ योजना वास्तव में अध्यापक की क्रियाओं की योजना है यह प्रभावी शिक्षण की नींव कही जा सकती है।

नेल्स वांसिगः– पाठ योजना उस कथन की शीर्षक है जिसमें घंटे के समय में कक्षा क्रियाओं द्वारा प्राप्त करने वाली उपलब्धियों और विशिष्ट साधनों का उल्लेख होता है।

इस प्रकार पाठ योजना शिक्षण की पूर्व तैयारी का महत्वपूर्ण घटक होता है। पाठ योजना निर्माण से पूर्व शिक्षक शिक्षण की प्रभावशीलता के विभिन्न पक्षों को ध्यान में रखता है। इन पक्षों या आयामों को हम अग्रांकित चित्र के माध्यम से देख सकते हैं –

बोध प्रश्न

3. पाठ योजना से आप क्या समझते है?

____

____

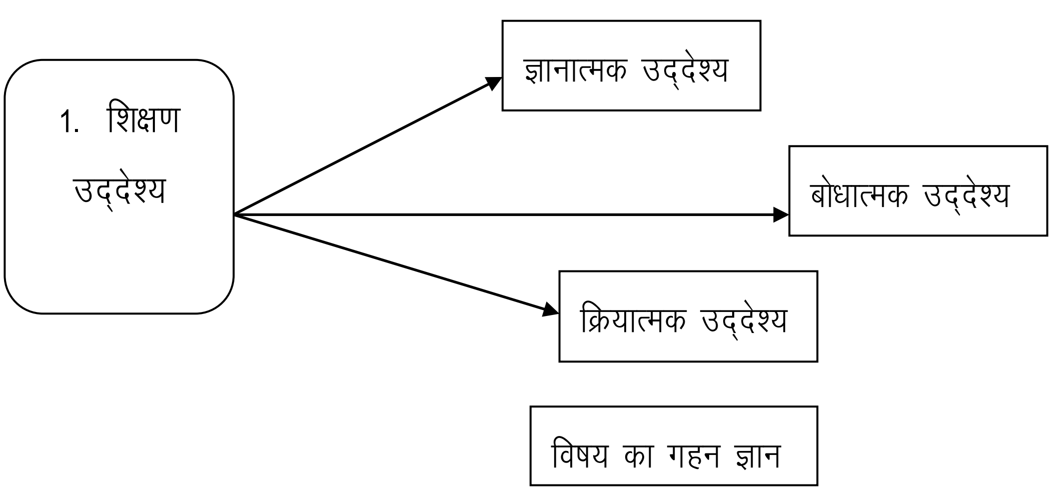

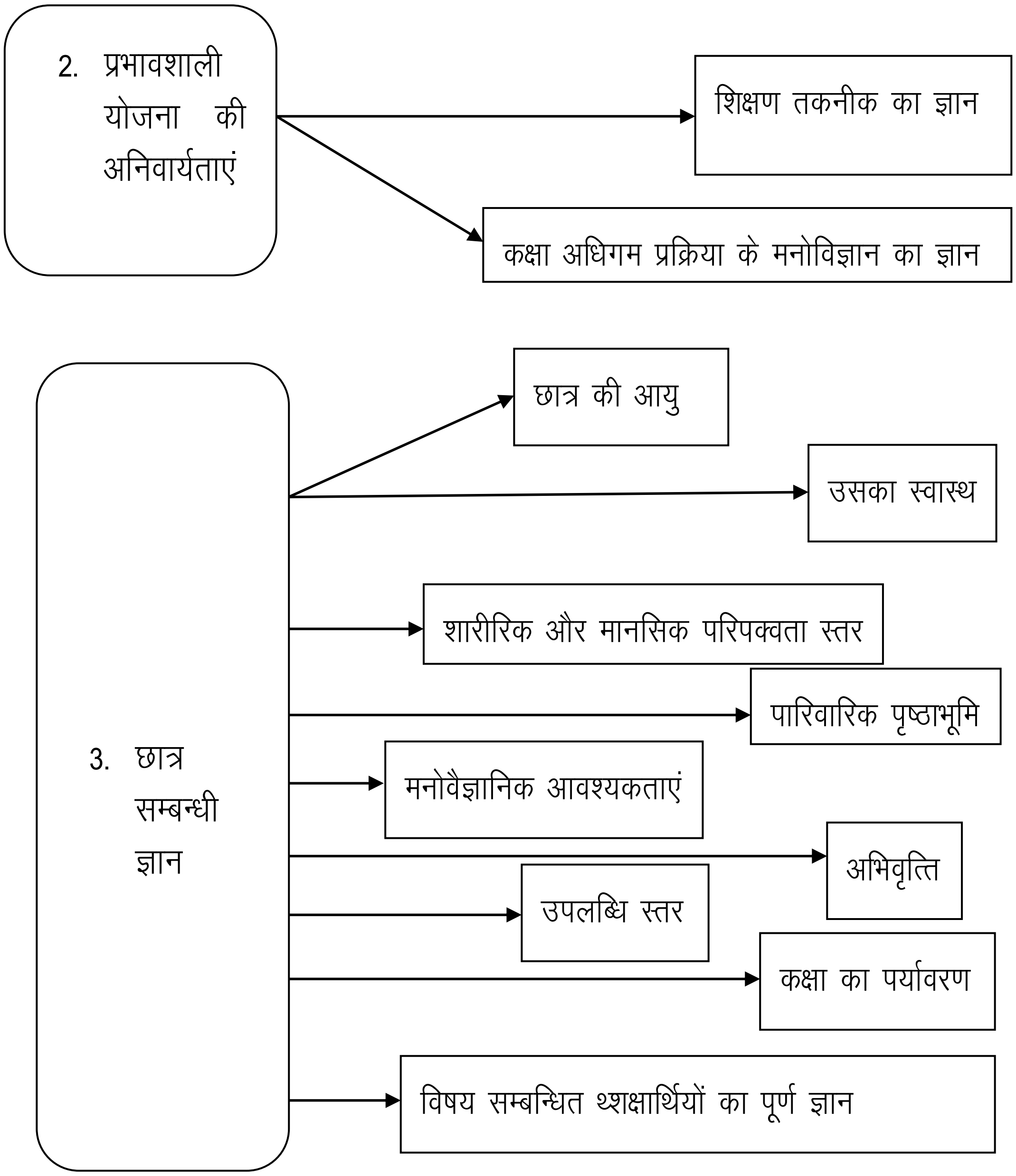

प्रभावशाली शिक्षण योजना के विविध पक्ष रेखा चित्र 2.5.3.2–1

2.5.3.5 पाठ योजना के घटक

पाठ योजना का निर्माण करते समय हम निम्नलिखित घटकों या सोपानों का अनुसरण करते हैं जिनका अध्ययन आपकों पाठ योजना को भली भांति समझने मे अवश्य सहायक होगा :–

1. परिचयात्मक सूचना:– जिसमें शिक्षण से सम्बन्धित सामान्य सूचनाएं होती हैं जैसे विषय, इकाई, प्रकरण, विद्यालय, कक्षा, कालांश, समय, दिनांक आदि।

2. सामान्य उद्देश्य:– सामान्य उद्देश्यों के कथनों से इस बात की जानकारी मिलती है कि विषय के शिक्षण से संबंधित दीर्घकालिक लक्ष्य क्या है।

3. विशिष्ट उद्देश्य:–विशिष्ट उद्देश्य छात्र की अपेक्षित उपलब्धि का वर्णन है । इसके लेखन में क्रियासूचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है जिनसे छात्रों के अपेक्षित अन्तिम व्यवहार का अनुमान होता है जो दर्शनीय एवं मापनीय होते हैं।

4. सहायक शिक्षण सामग्रीः— शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सहायक सामग्री का प्रयोग अधिगम में अभिप्रेरक का कार्य करते हुए सहज वातावरण का निर्माण करता है।

5. प्रकरण से संबंधित छात्रों का अनुमानित पूर्व ज्ञानः— छात्रों को उनके पूर्व ज्ञान से नवीन ज्ञान को जोड़ते हुए यदि पढ़ाया जाए तो अधिगम अधिक प्रभावी होता है। इसीलिए पाठ की संरचना छात्रों के अनुमानित पूर्व ज्ञान पर आधारित होनी चाहिए। इस सन्दर्भ में डेविड आसुबेल का मत है कि प्रत्येक छात्र अपने ज्ञान को संगठित करता है और उसका निर्माण करता है। इसलिए अन्ततोगत्वा छात्र नवीन ज्ञान को मस्तिष्क में स्थापित संरचनाओं से जोड़ते हैं। स्पष्ट है कि छात्रों के पूर्व ज्ञान का पता लगा कर तद्नुसार शिक्षण कार्य करना शिक्षक के लिए अनिवार्य है।

6. मुख्य शिक्षण बिन्दुः— जिसमें पढ़ाए जाने वाले पाठ को जिन बिन्दुओं में वगीकृत किया जाता है उसको सीमित शब्दों में लिखा जाता है और उन्ही बिन्दुओं का विस्तार आगे के सोपान प्रस्तुतिकरण के अन्तर्गत किया जाता है।

7. प्रस्तावना अथवा प्राक्कथनः— प्रस्तावना पिछले पाठ में प्राप्त ज्ञान तथा वर्तमान पाठ के प्राप्त होने वाले अनुभवों के मध्य एक सेतु का काम करता है इसका मुख्य कार्य :—

- छात्रों के पूर्व ज्ञान की जाँच अथवा पुनरीक्षण करना।
- छात्रों को अधिगम हेतु प्रेरित करते हुए उसे नवीन ज्ञान प्रदान करना।

पाठ की प्रस्तावना प्रश्नों को पूछते हुए, प्रदर्शन द्वारा, कहानी प्रस्तुत करते हुए अथवा रेखाचित्र के माध्यम से निकलवाई जा सकती है और अन्ततः प्रकरण निकलवाते हुए नवीन ज्ञान को छात्रों को दिया जाता है। प्रस्तावना हेतु सामान्यतया 2—3 मिनट तक का समय पर्याप्त होता है।

8. प्रस्तुतिकरण अथवा पाठ का विकासः— शिक्षण योजना के क्रियान्वयन का यह सबसे प्रमुख भाग है जिसमें सम्पूर्ण पाठ्य विषय वस्तु को शिक्षण बिन्दुओं में क्रमबद्ध किया जाता है और प्रत्येक शिक्षण बिन्दु सम्बन्धित अध्यापक क्रियाओं तथा छात्र क्रियाओं द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसे अध्यापक तथा छात्र क्रियाएँ भी कह सकते हैं। इस सोपान पर अध्यापक अपने पाठ का विस्तार करने के लिए विविध सहायक सामग्री का भी प्रयोग करता है यदि आवश्यक हुआ तब अन्यथा अन्य विधियों एवं प्रविधियों का प्रयोग करते हुए वह पाठ का विकास करता है। प्रस्तुतिकरण सोपान में अध्यापक छात्रों के अधिगम हेतु विविध क्रियाओं का प्रबन्धन करता है। वह छात्रों से अधिक से अधिक प्रश्न जैसे विकासात्मक प्रश्न, बोध प्रश्न या सहायक प्रश्न आदि पूछते हुए एक ओर जहां पाठ का विस्तार करता है वहीं दूसरी ओर छात्रों का मूल्यांकन भी करता चलता है। इस सोपान में शिक्षक अधिक से अधिक प्रश्न पूछते हुए छात्रों को क्रियाशील रखता है। छात्रों के साथ अन्तःक्रिया करता है तथा अधिगम अनुभवों को केन्द्रित करते हुए छात्र को नवीन सम्प्रत्यय की खोज हेतु प्रेरित करता है।

9. श्यामपट्ट का प्रयोगः— आदर्श पाठ योजना में पाठ के विस्तार के साथ श्यामपट्ट सारांश का भी विकास होता जाता है जिसे शिक्षक पाठ के विस्तार के साथ—साथ अथवा बोध प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करते हुए लिखता है जो संक्षिप्त तथा पूर्ण वाक्यों में होना चाहिए।

10. मूल्यांकन अथवा पुनरावृत्तिः— छात्रों की अधिगम सीमा को जानने तथा पढ़ाए गए पाठ की पुनरावृत्ति करने के लिए शिक्षक छात्रों का मूल्याकंन करता है जिससे शिक्षक को छात्रों के द्वारा अर्जित नवीन ज्ञान के स्तर के साथ — साथ अपने शिक्षण रचना कौशल का भी पता चलता है।

11. गृहकार्यः— गृहकार्य के माध्यम से छात्रों को अर्जित ज्ञान की पुनरावृत्ति के साथ — साथ पुनः अधिगम करने का अवसर प्राप्त होता है।

2.5.3.6 पाठ योजना निर्माण में अपेक्षित सावधानियाँ

पाठ योजना शिक्षण की एक रूपरेखा तथा मार्गदर्शक नक्शा होता है जो कक्षा में एक कालांश शिक्षण के लिए बनाया जाता है। अध्यापक को इसका निर्माण करते समय कुछ विशेष सावधानियों को व्यवहार में अवश्य लाना चाहिए विशेषरूप से शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें छात्र आध्यापक तथा छात्र आध्यापिकाओं के लिए इनका पालन अनिवार्य है। इन सावधानियों को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत रेंखाचित्र के माध्यम से देख सकते हैं:–

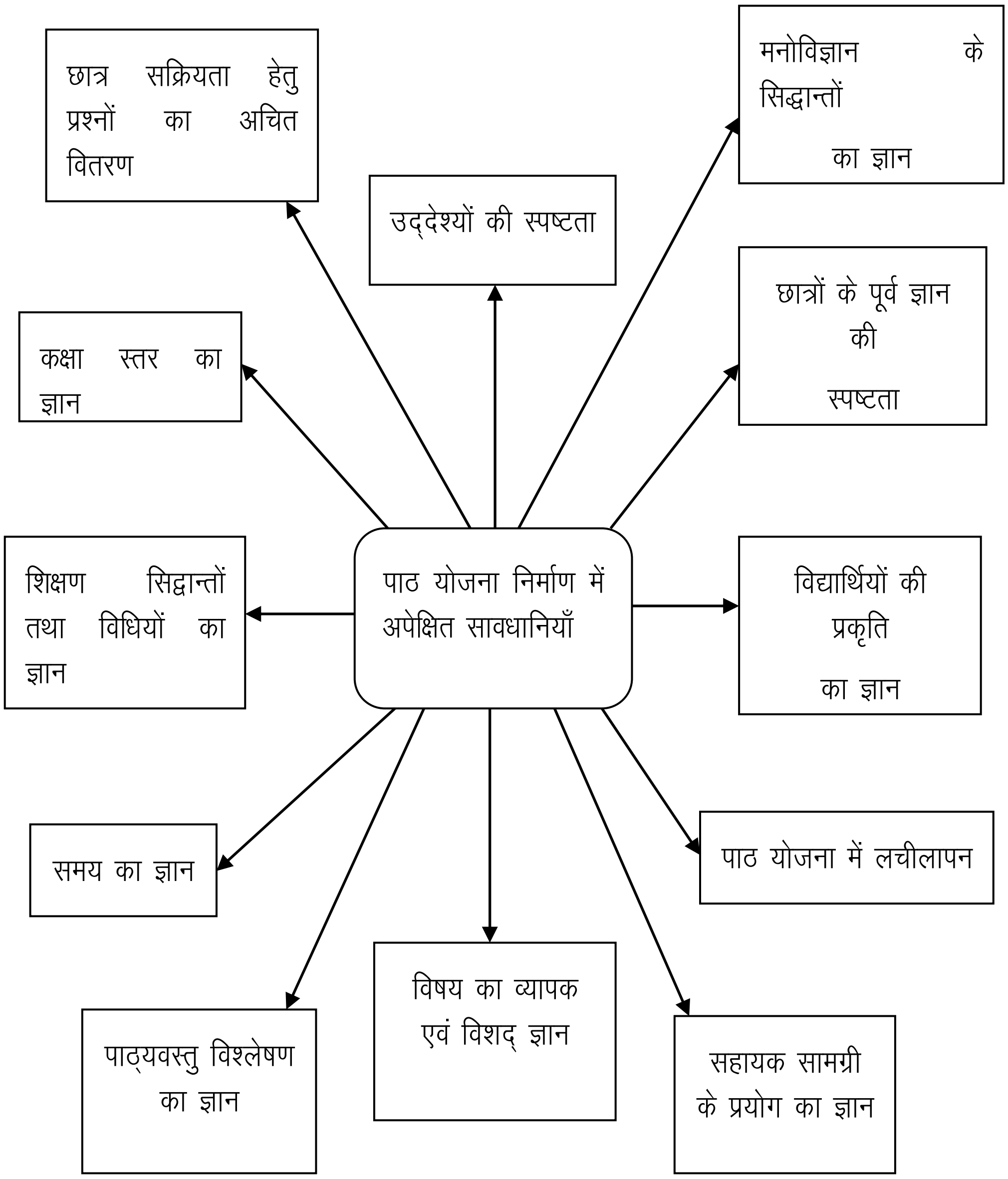

बोध प्रश्न

4. पाठ योजना बनाते समय हमे किन–किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए?

____
____
____
____

2.5.3.7 पाठयोजना का महत्व

शिक्षण की सफलता मनोवैज्ञानिक तथ्यों को ध्यान में रखते हुए सुव्यवस्थित ढ़ंग से बनाई गई पाठ योजना पर निर्भर करती है। पाठ योजना एक प्रकार से शिक्षक की मागदर्शिका होती है जो उसे कक्षा के पूरे कालांश में इधर–उधर भटकने नहीं देती, वरन पूरी तरह से शिक्षण की ओर केन्द्रित रखती है। इसके अतिशय महत्व को निम्नलिखित रेखाचित्र के माध्यम से समझा जा सकता है:–

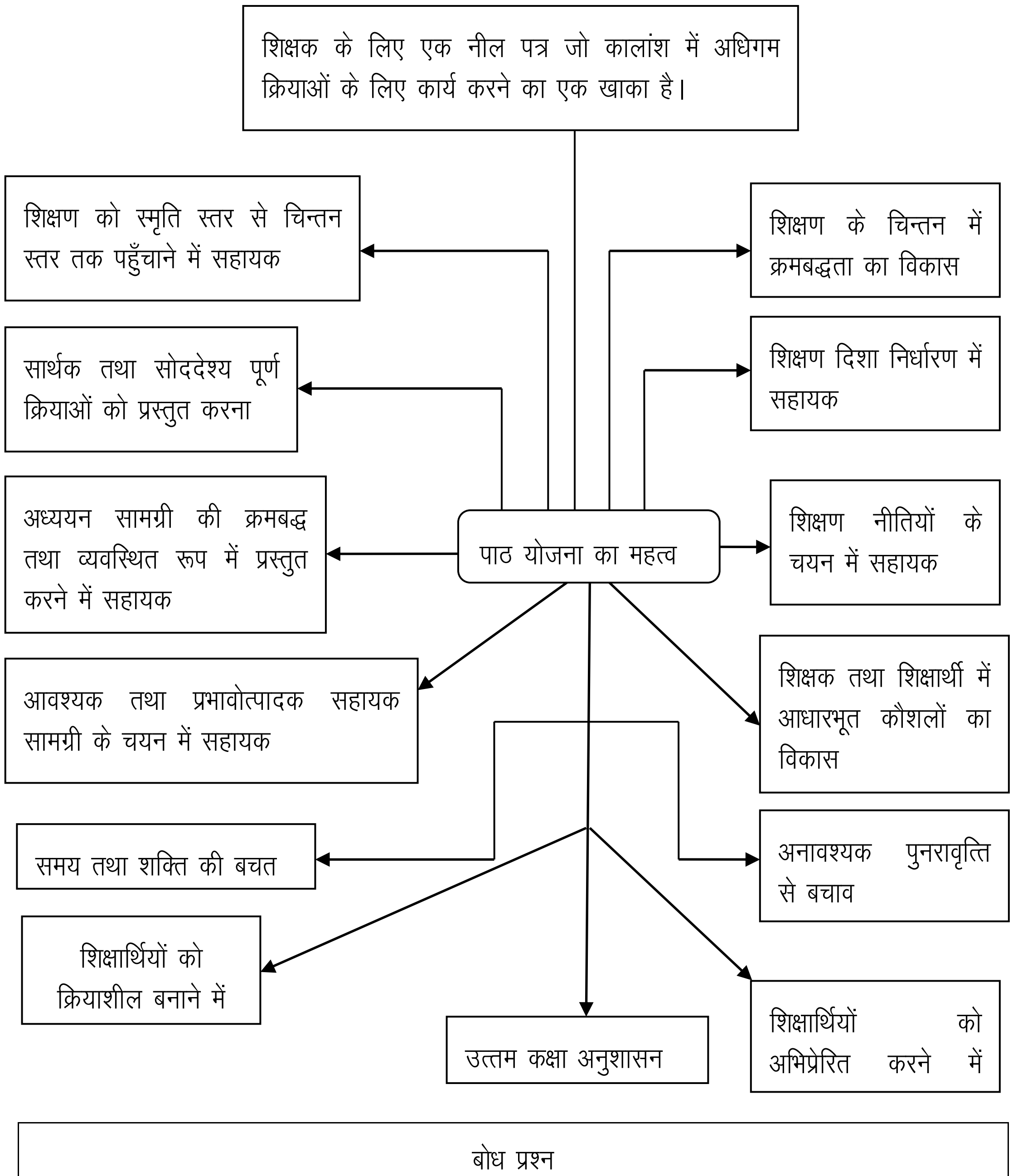

बोध प्रश्न

5. पाठ योजना के महत्व को उद्घाटित कीजिए।

____

____

____

2.5.3.8 पाठ योजना का प्रारूप

पाठ योजना कोई रिवाज अथवा दस्तूर नही है। विषय की प्रकृति, प्रकरण, शिक्षण विधि, शिक्षक की अभिवृत्ति, छात्र का स्तर तथा उपलब्ध साधन के अनुसार इसका प्रारूप अथवा संरचना हो सकती है। शिक्षक पाठ योजना का दास नहीं है कि उसे उसका अक्षरशः पालन करना है। उसे आवश्यकतानुसार अपने समझ तथा विवेक के आधार पर उसमें परिवर्तन करने का अधिकार है अतः इसके निर्माणार्थ कोई निश्चित नियम प्रस्तुत करना संभव नहीं है। परन्तु इतना अवश्य है कि एक पाठ योजना प्रभावी ढ़ंग से संरचित होनी चाहिए जिसका आधार पाठ के मूल तत्व हो तथा जिसमें क्रियाशीलता होनी चाहिए। पाठ योजना का उद्देश्य शिक्षक के लिए कोई परिपाटी तैयार करना नहीं है वरन एक अभिवृत्ति विकसित करना है। यह शिक्षक के लिए सहायिका, पथप्रदर्शिका, कक्षा क्रियाओं की निर्देशिका, कक्षा अन्तःक्रिया की विवरणिका आदि होती है। पाठ योजना का प्रारूप आपके अध्ययन हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है :–

पाठ योजना

दिनांक–	विषय–सामाजिक अध्ययन	कालांश–
कक्षा–	प्रकरण– ऊँ का मानव जीवन में महत्व	अवधि–

1. सामान्य उद्देश्यः– जिसकी चर्चा इकाई 3 के अन्तर्गत की जा चुकी है।
2. विशिष्ट उद्देश्यः–

ज्ञानात्मक उद्देश्य– 1 छात्र ऊँ के अर्थ का प्रत्यास्मरण कर सकेगा।

2. छात्र ऊँ के उच्चारण के लाभों से संबंधित तथ्यों का प्रत्याभिज्ञान कर सकेगा।

अवबोधात्मक उद्देश्य– 3. छात्र ऊँ का स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों की सूची बना सकेगा ।

4. छात्र ऊँ ध्वनि के लाभों के उदाहरण दे सकेगा।

क्रियात्मक उद्देश्य– 5. छात्र ऊँ ध्वनि के उच्चारण व ध्यान का कौशल विकसित कर सकेगा।

6. छात्र ऊँ ध्वनि के प्रभाव तथा शोध लाभों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित कर सकेगा।

3. मुख्य शिक्षण बिन्दु :–. 1ऊँ का अर्थ, 2. ऊँ का स्वास्थ्य पर प्रभाव, 3. ऊँ पर शोध कार्य, 4. ऊँ के उच्चारण से लाभ
4. सहायक सामग्री :– ऊँ के चित्र तथा उसके उच्चारण से होने वाले लाभों को दर्शाता चार्ट तथा अन्य कक्षोपयोगी सामग्री।
5. पूर्व ज्ञानः– छात्र ऊँ ध्वनि के विषय में सामान्य जानकारी रखते हैं।
6. प्रस्तावना के प्रश्नः–

शिक्षक क्रियाएँ	छात्र अनुक्रियाएँ
प्र0 आचार्य राम जी शर्मा मुख्य रूप से किस देवी के उपासक है ?	गायत्री मां के
प्र0 गायत्री मां से संबंधित प्रचलित मन्त्र कौन सा है ?	ऊँ भूर्भव स्व ....
प्र0 प्रस्तुत मन्त्र का प्रथम वर्ण क्या है ?	ऊँ
प्र0 ऊँ ध्वनि का हमारे जीवन में क्या महत्व है	सम्भावित

7. उद्देश्य कथन :– आज हम ऊँ ध्वनि का मानव जीवन में महत्व के विषय में अध्ययन करेंगे।

प्रस्तुतिकरण –

शिक्षण बिन्दु	शिक्षक क्रियाएँ	छात्र अनुक्रिया	श्यामपट्ट कार्य
ओउम् का अर्थ	विकासात्मक प्रश्न (चार्ट के माध्यम से) प्र0–01 प्रस्तुत चार्ट में क्या लिखा है? प्र0–02 ऊँ को और किस तरह से लिखा जाता है प्र0–03 ऊँ किन किन वर्णो से मिलकर बना है?	ऊँ ओउम् संभावित उत्तर	ॐ
	शिक्षण कथनः– ऊँ0 शब्द में उच्चारण की दृष्टि से तीन वर्णो को लिखते हैं– अ, उ, म। इनमे अ वर्ण आलस्य दूर करता है। उ वर्ण से मनुष्य के यकृत, पेट तथा आँतो पर अच्छा प्रभाव पड़ता है जबकि म वर्ण से शक्तियों का विकास होता है।	छात्र ध्यान पूर्वक सुनेंगे	
	बोध प्रश्न 1.ऊँ0 में कौन से तीन वर्ण होते है? 2.ऊँ0 का स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है?	ऊँ0 में अ, उ,म वर्ण होते है। 'अ' वर्ण से आलस्य दूर होता है। 'उ' वर्ण से यकृत, पेट तथा आँतो पर अच्छा प्रभाव पड़ता है तथा 'म' वर्ण से मानसिक शक्तियाँ विकसित होती है।	ऊँ0 में अ, उ,म वर्ण होते है। 'अ' वर्ण से आलस्य दूर होता है। 'उ' वर्ण से यकृत, पेट तथा आँतो पर अच्छा प्रभाव पड़ता है तथा 'म' वर्ण से मानसिक शक्तियाँ विकसित होती है।
ओउम् का स्वास्थ्य पर प्रभाव	विकासात्मक प्रश्नः– ध्यान तथा योग के समय किसका उच्चारण किया जाता है?	ऊँ0 की ध्वनि का उच्चारण किया जाता है।	

	भारत के मंत्र विज्ञान से आज पूरा विश्व आश्चर्य चकित है। विश्व भर में इस पर अनेक अनुसन्धान हुए, जिससे प्राप्त निष्कर्ष ने सभी को प्रभावित किया और ओमकार मंत्र तथा ओमकार थैरपी आज अत्यन्त लोकप्रिय हो रही है।	छात्र ध्यान पूर्वक सुनेंगे	
ऊँ0 ध्वनि पर शोध	विकासात्मक प्रश्नः– यदि हम ऊँ0 के बारे में व्यापक सूचनाएं चाहतें है, तो क्या करेंगें?	ऊँ0 का शोध करेंगे।	
	इसी प्रकार ऊँ0 के सन्दर्भ में व्यापक सूचना प्राप्त करने के लिए हावर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हार्बर्ट बेंसन विगत कई वर्षो से ऊँ0 ध्वनि पर शोध तथा अनुसंधान कर रहें हैं। आपने भारतीय योग शास्त्र की अनेक पुस्तकों का विशद् रूप से अध्ययन किया। "ओमकार मंत्र" के चमत्कार पूर्ण मनादैहिक प्रभावों के गहन अध्ययन के उपरान्त आपने "टैक्नीक्स ऑफ माइंड एंड बॉडी" नामक पुस्तक लिखी। साथ साथ ओमकार थैरेपी को व्यावहारिक, सहज एवं उपयोगी बनाने के लिए बोस्टन के 'डीकोनेस अस्पताल' में इस सन्दर्भ में परीक्षण आरम्भ किए।	छात्र ध्यानपूर्वक सुनेंगे।	
	बोध प्रश्न 1.ऊँ0 पर कौन विद्वान शोध एवं अनुसंधान कर रहे हैं? 2.इस सन्दर्भ में आपने कौन सी पुस्तक लिखी?	प्रोफेसर हार्बर्ट बेंसन "टैक्नीक्स ऑफ माइंड एंड बॉडी"	प्रोफेसर हर्बर्ट बेंसन ने ऊँ0 ध्वनि पर शोध तथा अनुसंधान किए। ओमकार मंत्र के चमत्कारपूर्ण मनोदैहिक प्रभावों का अध्ययन कर प्रोफेसर हार्बर्ट बेंसन ने "टैक्नीक्स ऑफ माइंड एंड बॉडी" नामक पुस्तक लिखी।

ऊँ0 उच्चारण से लाभ	विकासात्मक प्रश्न 1. प्रायः हम किन बातों को अपने जीवन में उतारतें है अथवा उनका अनुसरण करतें है?	जो हमारे लिए उपयोगी तथा लाभदायक है।	
	इसी प्रकार ऊँ0 पर किए गए शोध तथा अनुसंधान के परिणामस्वरूप हमे यह पता चला कि ऊँ0 के उच्चारण से अनेकों लाभ हैं। (इसके लाभों को चार्ट के माध्यम से प्रदर्शित करते हुए) जैसे–	छात्र ध्यानपूर्वक सुन रहें हैं।	
शिक्षण बिन्दु	शिक्षक क्रियाएँ	छात्र अनुक्रियाएँ	श्यामपट्ट कार्य
ऊँ0 उच्चारण से होने वाले लाभ	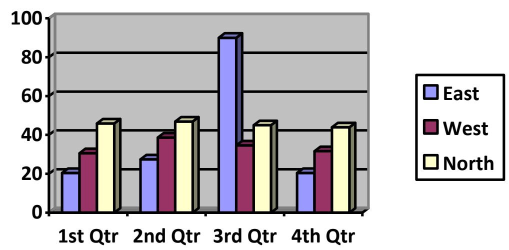		
	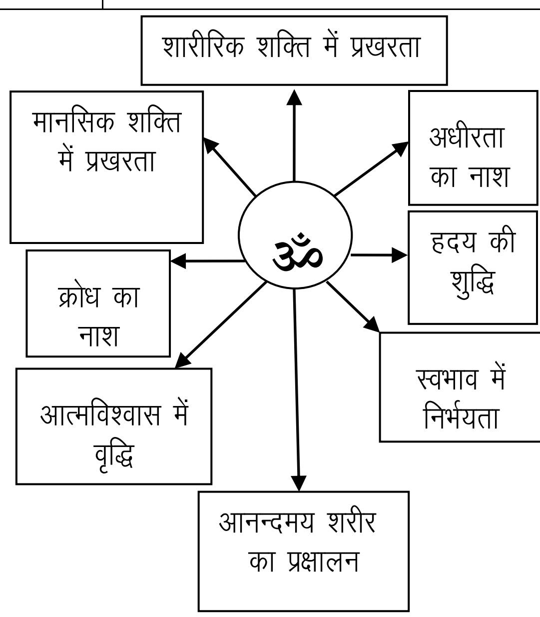	छात्र पूर्ण मनोवेग के साथ सुनेंगें।	

	1. मनुष्य का हृदय शुद्ध होता है। 2. उसकी समस्त मानसिक शक्तियाँ प्रखर होती है। 3. उसके आत्मविश्वास में वृद्धि होती है। 4. क्रोध का नाश होता है। 5. अधीरता का नाश होता है। 6. अनियन्त्रित तथा व्यर्थ इच्छाओं का दमन होता है। 7. स्वभाव में निर्भयता आती हैं। **8.** हमारे आनन्दमय शरीर का प्रक्षालन होता है परिणामतः स्वास्थ लाभ होता है।	ऊँ के उच्चारण से लाभ	
बोध प्रश्न– ऊँ उच्चारण से क्या क्या लाभ होते है?	1.	1. हदय की शुद्धि होती है। 2. मानसिक शक्तियाँ प्रखर होती है। 3. क्रोध का नाश होता है। 4. आत्मविश्वास बढ़ता है। 5. स्वभाव में निर्भरता आती है। अनियन्त्रित तथा व्यर्थ इच्छाओं का दमन होता है।	1. हदय की शुद्धि होती है। 2. मानसिक शक्तियाँ प्रखर होती है। 3. क्रोध का नाश होता है। 4. आत्म विश्वास बढ़ता है। 5. स्वभाव में निर्भरता आती है। 6. अनियन्त्रित तथा व्यर्थ इच्छाओं का दमन होता है।

मूल्यांकन के प्रश्न –

1. ऊँ वर्ण के उच्चारण से क्या लाभ है?
2. हावर्ड विश्वविद्यालय के प्रो0 ने किस पर शोध किया?
3. प्रोफेसर हरबर्ट बेंसन ने किस थेरेपी पर शोध किया?
4. प्रोफेसर हरबर्ट ने डीकोनेस अस्पताल में क्या किया?
5. आपने इस सन्दर्भ में कौन सी पुस्तक लिखी?
6. ध्यान व योग से क्या लाभ है?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर दीजिए –

1. प्रोफेसर बेंसन ने अपना शोध किया :–

   (क) मनुष्य की प्रकृति पर (ब) कैंसर पर (स) ऊँ पर

2. ऊँ शब्द तीन वर्णो का योग है ये वर्ण है?

   (क) अ उ म (ब) ओ अ म (स) अ ओ म

गृहकार्य :– ऊँ उच्चारण से होने वाले लाभों की सूची बनाइए।

क्रियाकलाप

महात्मा बुद्ध के जीवन के किसी भी पक्ष को लेकर एक पाठ योजना तैयार कीजिए।

____
____
____
____
____
____
____
____

2.6 निर्मितवाद

निर्मितवाद को 21 वीं शताब्दी की अधिगम प्रविधि के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, जिसकी उत्पत्ति संज्ञानात्मक मनोविज्ञान क्षेत्र से हुई है। यह प्रतिमान जीन पियाजे, जे0 एस0 ब्रूनर, लव बाइगोस्टकी, हारबर्ड गार्डनर तथा नेलसन गुडसेन के कार्यों (संज्ञानात्मक विकास) पर ही आधारित है। निर्मितवाद पर प्रयोजनवादी जॉन ड्यूवी के अनुभव एवं चिन्तन का महत्व तथा शिक्षा की आवश्यकताओं से संबंधित विचारों का भी प्रभाव है।

2.6.1 निर्मितवाद का अर्थ

निर्मितवाद के अनुसार प्रत्येक छात्र की सक्रियता से पूर्व ज्ञान एवं नवीन ज्ञान की अन्तःक्रिया से ही ज्ञान की संरचना होती है । यह एक ऐसा सिद्धान्त है जो यह मानता है कि ज्ञान का संज्ञानी प्राणियों के

बाहर अस्तित्व नहीं हो सकता। ज्ञान तो वास्तविकता या यर्थाथ की संरचना है। ज्ञान बाहर वस्तुगत वास्तविकता में विद्यमान नहीं है वरन यह तो सीखने वाले व्यक्ति द्वारा अन्दर अर्थात मन ही मन में संरचित किया जाता है। निर्मितवाद पूर्व अधिगम तथा नए अधिगम की अन्तःक्रिया के माध्यम से प्रत्येक छात्र के द्वारा ज्ञान की संरचना के महत्व पर बल देता है। इसके अनुसार जब सीखने वाला व्यक्ति किसी नवीन स्थिति के संपक्र में आता है तो प्राप्त ज्ञान उसके उस पूर्व ज्ञान के साथ जुड़ता है जो उसके पुराने अनुभवों पर आधारित है अर्थात नवीन ज्ञान की संरचना पूर्व ज्ञान के एकीकरण से होती है। इस प्रकार निर्मितवाद वह सिद्धान्त है जो व्यक्ति की अधिगम प्रक्रिया के तरीके को स्पष्ट करता है।

2.6.2 निर्मितवाद अनेक अधिगम परिप्रेक्ष्यों का ही संश्लेषण है

जिसमें जॉन डयूवी के सीधे अनुभव एंव चिन्तन, ब्रूनर के विशिष्ट अनुभव द्वारा निर्मित उपयुक्त मानसिक क्रियाओं को प्रोत्साहन, पियाजे का संज्ञानात्मक विकास तथा डेविड आसुबेल का मानसिक संरचनाओं पर बल देना आदि सम्मिलित है जिसे हम अग्रांकित चित्र के माध्यम से समझ सकते हैंः–

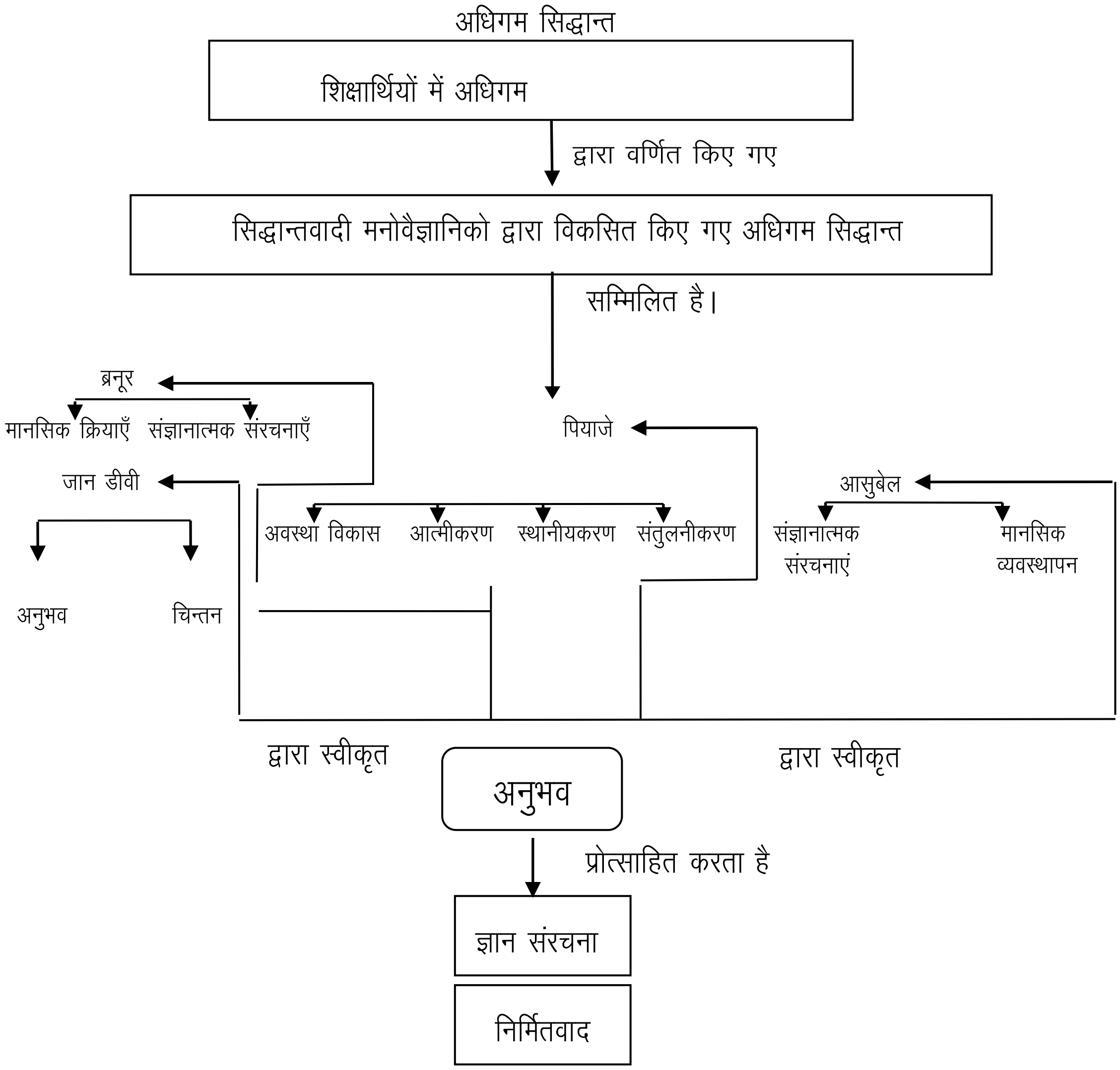

सिद्धान्तवादी मनोवैज्ञानिक द्वारा विकसित अधिगम सिद्धान्त मारटिन जू एवं बेकन द्वारा प्रस्तुत चित्र पर आधारित

2.6.3 निर्मितवाद शिक्षण एक सांस्कृतिक प्रणाली के रूप में तथा सामाजिक अध्ययन के शिक्षक की इसमें भूमिका

निर्मितवाद में शिक्षक तथा छात्र के मध्य अन्तःक्रिया होती है और वे पारस्परिक बातचीत द्वारा अधिगम करते हैं। इसलिए निर्मितवादी कक्षा को एक संस्कृति के रूप में स्वीकार किया जाता है। संस्कृति अर्थात सुन्दर कार्य जो कक्षा – कक्ष परिस्थितियों में अध्यापक तथा छात्रों के मध्य सम्पन्न होता है और जिसकी परिणित नवीन ज्ञान के संरचना के रूप में होती है।

निर्मितवादी शिक्षण में सामाजिक अध्ययन के अध्यापक निर्मितवादी सिद्धान्त के प्रयोग के लिए छात्रों को अभिप्रेरित कर सकते हैं। वे छात्रों को बोध संरचना में निम्नांकित भूमिकाओं का निर्वहन करते हुए अपना सहयोग दे सकते हैं :–

- अध्यापक द्वारा छात्रों को यह समझाना होगा कि ज्ञान उनके बाहर नहीं अन्दर विद्यमान है और वे ज्ञान का सृजन कर सकते हैं।
- अध्यापक को कक्षा में होने वाली उन परिस्थितियों को समझना होगा जिनसे ज्ञान का सृजन तथा पुनः संरचना होती है।
- अध्यापक को इस बात को स्वीकार करना होगा कि जब छात्र संसार को समझ रहे हैं तो वे नवीन ज्ञान का ही सर्जन कर रहे हैं। यदि उन्हे बौद्धिक अवसर दिया जाएगा तो वे विषय वस्तु को समझकर स्वयं ही बोधार्जन करेंगे और इस प्रक्रिया में अध्यापक एक मार्गदर्शक, प्रेरक, अवसर उपलब्ध कराने वाला तथा छात्रों के साथ अन्तःक्रिया कर उन्हे सम्प्रत्यय, शब्दावली तथा खोज रणनीतियों को प्राप्त कराने वाला सहायक होता है।
- छात्रों के लिए विषयवस्तु तथा उसे जानने की प्रविधि दोनो महत्वपूर्ण होती है। और इस बात को छात्रों के संज्ञान में भली भांति डालने का कार्य अध्यापक का ही है।
- सामाजिक विज्ञान का अध्यापक उपयुक्त प्रकरण लेकर छात्रों को अन्वेषण के लिए प्रेरित करे तथा इस सन्दर्भ में उन्हे वांछित सुविधाए उपलब्ध कराएं।
- अध्यापक छात्रों से प्रश्न पूछकर यह जानने का प्रयास करें कि वे कहां तक प्रस्तावित प्रकरण की पकड़ रखते हैं और साथ ही साथ वे छात्रों से भी अपनी जिज्ञासाओं की संतुष्टि हेतु वांछित प्रश्न पूछने के लिए प्रेरित करं।
- अध्यापक समूह के समस्त छात्रों को अधिकाधिक सक्रिय रहने के लिए प्रेरित करें।
- अध्यापक छात्रों के साथ अन्तःक्रिया करते हुए उन्हे सम्प्रत्यय संरचना हेतु प्रेरित कर उनके चिन्तन में सहयोग करें।
- अध्यापक छात्रों को अपने विचारों के विस्तार हेतु विज्ञान प्रविधियों तथा कौशलों के प्रयोग हेतु प्रेरित करें।
- छात्रों को स्वयं ही अपने ज्ञान, बोध तथा कौशल के मूल्यांकन हेतु प्रोत्साहित करे।

2.6.4 निर्मितवाद के प्रकार

शिक्षाविदों ने मनोविज्ञान, ज्ञान मीमांसा तथा दर्शन के आधार पर लगभग 12 निर्मितवाद सिद्धान्तों की व्याख्या की है। शिक्षा में निर्मितवाद सिद्धान्त के दो मूल प्रारूप है

2.6.4.1 पियाजे का संज्ञानात्मक निर्मितवाद सिद्धान्त

जीन पियाजे का कार्य संज्ञानात्मक निर्मितवाद का आधार है, जिसमें किस प्रकार छात्र वैयक्तिक रूप से

अपने संसार में बौद्धिक संरचनाओं को स्वीकार करते हैं, को स्पष्ट किया गया है।

2.6.4.2 सामाजिक निर्मितवाद का सिद्धान्त

सामाजिक निर्मितवाद, ज्ञान के दो भाग स्वीकार करता है 1–व्यक्ति और 2–सामाजिक, जिन्हें हम किसी भी अर्थपूर्ण रूप में अलग – अलग नहीं देख सकते। क्योंकि व्यक्ति सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ही ज्ञान की संरचना करता है। कुछ शिक्षाविद संज्ञानात्मक एवं सामाजिक निर्मितवाद परिप्रेक्ष्य के उपयोगी संश्लेषण पर बल देते हैं। उनके अनुसार ज्ञान की संरचना व्यक्ति रूप से होती है जो सामाजिक मध्यस्थता से स्वीकार की जाती है। सामाजिक निर्मितवाद की दो प्रविधियां हैः–

(अ) स्थिति ज्ञान निर्मितवादः– स्थिति ज्ञान निर्मितवाद यह मानते और स्वीकार करते हैं कि व्यक्ति सामाजिक पर्यावरण में ज्ञान का रूपान्तरण करते हैं और इस अन्तःक्रिया से व्यक्ति एवं पर्यावरण दोनो में परिवर्तन होता है।

(ब) सामाजिक सांस्कृतिक ज्ञानः– जो अर्थपूर्ण एकीकृत अधिगम को केन्द्रित करता है यह प्रविधि अर्थपूर्ण कार्यो के विकास पर बल देती है।

इस प्रकार ये दोनो प्रविधियां ही पर्यावरण के सन्दर्भ में अर्थपूर्ण एकीकृत अधिगम के महत्व को प्रधानता देती हैं।

2.6.5 निर्मितवाद के शैक्षिक निहितार्थ

निर्मितवाद से अनेक शैक्षिक सिद्धान्तों की व्युत्पत्ति है, जो बालक के संज्ञानात्मक विकास में अत्यन्त सहायक है यथा :–

- इसके अनुसार अनुदेशन का मुख्य उद्देश्य छात्रों में मात्र कौशल एवं व्यवहार विकास नहीं है वरन् सम्प्रत्यय विकास एवं गहन बोध है ।
- अधिगम एक निर्माणवादी प्रक्रिया है जिसे छात्रों को पूरा करना है। चूंकि छात्र एक सक्रिय प्राणी है अतएव शिक्षाविदों एवं शिक्षकों का मुख्य दायित्व छात्रों को ऐसे अवसर प्रदान करना है जिनसे छात्र ज्ञान का निर्माण कर सके।
- विषय वस्तु तथा अधिगम प्रविधि दोनो का ही चिन्तन सर्वोपरि होता है।
- छात्रों में समस्या समाधान, सम्बन्धित प्रासंगिक बोध का निर्माण तभी संभव है जब शिक्षक द्वारा छात्रों को अर्थ पूर्ण प्रमाणिक क्रियाएँ उपलब्ध कराई जाए तथा उनमें विशिष्ट समस्या सम्बन्धित बोध बढ़ाया जाए।
- यह छात्रों के पूर्व ज्ञान के अनुभव के परीक्षण पर बल देता है।
- शिक्षक द्वारा छात्रों को कक्षा में पढ़ाए जाने वाले नवीन ज्ञान को उनके (छात्रों के) पूर्व अनुभवों के साथ जोड़ना चाहिए जिससे वे नवीन ज्ञान का बोध कर सके।
- शिक्षक द्वारा छात्रों के चिन्तन को सदैव चुनौती देते रहना चाहिए जिससे वे नवीन ज्ञान की संरचना हेतु सदैव तत्पर हो सके।
- समस्त व्यक्तियों में उनका स्वंय का बोध होता है।

ऐलेन तथा बेकन (1944) के अनुसार छात्रों द्वारा नवीन ज्ञान की संरचना अथवा नूतन ज्ञान के गहन बोध हेतु शिक्षण मॉडल बनाया जा सकता है। इसे हम निम्नलिखित रेखाचित्र के माध्यम से और अधिक समझ सकते हैः–

छात्र क्रियाएँ	शिक्षक क्रियाएँ
अन्वेषण करना	शिक्षक द्वारा छात्रों को अन्वेषण हेतु वांछित सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए जिससे वे उन सामग्रियों को अपने खोज का आधार बना सके। अध्यापक स्वंय छात्रों से प्रस्तावित प्रकरण से सम्बन्धित प्रश्न पूछे और छात्रों को भी उपयोगी तथा उत्पादक प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करें। अन्वेषण में छात्रों के पूरे समूह का सहयोग वांछित है।
व्याख्या करना	छात्रों द्वारा सम्प्रत्यय संरचना हेतु अध्यापक छात्रों के साथ अन्तःक्रिया करें। उनके विचार जानकर उनके सीधे अनुभवों तथा उनके चिन्तन में सहयोग करें। तथा उन्हे उनकी व्याख्या में नवीन ज्ञान की संरचना करने हेतु प्रेरित करें।
विस्तार करना	भौतिक तथा मानसिक प्रक्रियाओं द्वारा छात्रों को अपने विचारों का विस्तार करने का अवसर प्रदान करें। छात्रों को विज्ञान प्रविधियों तथा कौशलों का प्रयोग करने हेतु प्रेरित करते हुए उन्हे अपने विचारों को व्यापकता प्रदान करने हेतु प्रोत्साहित करें।
मूल्यांकन करना	छात्रों के विज्ञान प्रविधि कौशलों के स्वामित्व तथा उनके विचारों तथा चिन्तन कौशलों के सन्दर्भ में उन्हे स्वंय ही मूल्यांकन करने दें।

अन्ततः हम कह सकते हैं कि अधिगम मात्र ज्ञान का स्थानान्तरण नही होता है। यह छात्र द्वारा उनके पूर्व ज्ञान के आधार पर नवीन ज्ञान से जुड़कर सक्रियता से नवीन ज्ञान की संरचना या सृजन करता है। इस ज्ञान संरचना के सामाजिक पक्ष है और उस छात्र के सामाजिक वातावरण में ही उस ज्ञान संरचना का अर्थ सन्निहित है। यही कारण है कि पियाजे द्वारा प्रस्तुत संज्ञानात्मक निर्मितवाद तथा जान डयूवी और अन्य शिक्षाविदों द्वारा प्रस्तुत सामाजिक निर्मितवाद वर्तमान में दोनो ही प्रयोग में आ रहे हैं। ज्ञान व्यक्ति द्वारा धारण किया जाता है जिसका सामाजिक महत्व है जिसे समाज के सभी सदस्यों में बाँटा जाता है। वस्तुतः ज्ञान व्यक्ति और समाज दोनो में ही है।

बोध प्रश्न

6. पाठ योजना के महत्व को उदघाटित कीजिए।

____

____

2.7 अभिनयवाद

अभिनयवाद निर्मितवाद तथा वातावरणीय संज्ञानात्मक सम्प्रत्यय का योग है। इस सिद्धान्त के अनुसार ज्ञान तथा पर्यावरण एक है। इसे पृथक नहीं किया जा सकता है। अधिगम की प्रक्रिया अधिगमकर्ता तथा उसके पर्यावरण के मध्य होने वाली अन्तःक्रिया के फलस्वरूप होता है। प्रस्तुत सम्प्रत्यय मरलियों पान्टी तथा बेटसन के जैविकीय परिप्रेक्ष्य में किए गए कार्य से प्रस्फुटित है। इस सिद्धान्त का मत है कि शिक्षण

अधिगम प्रक्रिया के दौरान छात्र द्वारा की गई विविध शारीरिक चेष्टाएं, भाव भंगिमा, नेत्र संचालन, सिर हिलाना आदि मात्र उसकी विषय वस्तु के समझ की ही अभिव्यक्ति नही है वरन वह स्वंय ही अवबोध है। अर्थात छात्र द्वारा की जाने वाली समस्त क्रियाएँ स्वमेव अवबोध है जो आन्तरिक प्रेरणा स्वरूप अभिव्यक्त होती है। छात्र द्वारा की जाने वाली ऐसी क्रियाएँ मानसिक प्रक्रिया से पृथक नहीं है। वरन ऐसी क्रियाएँ ही ज्ञान है। शिक्षा के सन्दर्भ में यह सिद्धान्त इस बात पर बल देता है कि वास्तविकता तथा मस्तिष्क एक दूसरे से जुड़े है। इन्हे अलग नहीं किया जा सकता। वास्तविक परिस्थितियों में छात्र द्वारा स्वतः अभिव्यक्त क्रियाएँ ही उसका अवबोध है, ज्ञान है और मस्तिष्क तथा उसकी मानसिक प्रक्रियाओं का अभिन्न अंग, जिसे पृथक नहीं किया जा सकता।

2.8 सारांश

प्रस्तुत इकाई में मैने सामाजिक अध्ययन के अधिगम तथा शिक्षण प्रक्रिया का सांगोपांग वर्णन किया है। अध्यापक शिक्षण के विविध घटकों का पालन करते हुए न केवल छात्रों के अधिगम प्रक्रिया को सफल बनाता है वरन वांछित उद्देश्यों की भी प्राप्ति करता है। चूंकि आप एक भावी अध्यापक हैं, एतदर्थ आपके लिए यह जानना आवश्यक है कि आप अपनी शिक्षण प्रक्रिया को कैसे सुनियोजित करें, पाठ योजना तथा इकाई योजना के माध्यम से आप किस प्रकार विषय वस्तु का क्रमबद्ध ज्ञान अपने छात्रों को प्रदान करें, इस प्रक्रिया में मनोविज्ञान, निर्मितवाद तथा अभिनयवाद की क्या भूमिका हैं, इन समस्त बातों का विशद् वर्णन प्रस्तुत इकाई के माध्यम से आपके अनुशीलन हेतु दिया जा रहा है जो आपके शिक्षण प्रक्रम में अवश्य सहायक होगा।

2.9 अभ्यास के कार्य

1. सामजिक अध्ययन के मनोविज्ञान को स्पष्ट कीजिए।
2. सामाजिक अध्ययन के शिक्षण प्रक्रम के स्वरूप को उद्घाटित कीजिए।
3. इकाई योजना के निर्माण के समय आप किन–किन बातों को ध्यान में रखेंगे।
4. पाठ योजना के महत्व को विस्तारित कीजिए।
5. निर्मितवाद के शैक्षिक निहितार्थ लिखिए

2.10 चर्चा के बिन्दु

1. यदि आप अपने छात्रों की अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाना चाहते हैं तो इस दिशा में क्या करेंगे?
2. पाठ योजना के निर्माण केसमय आप किन–किन सोपानों का अनुसरण करेंगे?

2.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. एक इकाई को पढ़ाने के लिये बनाई गई योजना को इकाई योजना कहते हैं। यह किसी भी प्रकरण पर आधारित दो से सात पाठों की शिक्षण योजना होती है।

2. सामाजिक अध्ययन में अनुदेशनात्मक नियोजन विषय के अधिगम को प्रभावशाली बनाने में सहायक होता है। प्रस्तुत विषय में यह मुख्य रूप से चार प्रकार की बनाई जाती है।

1) वार्षिक योजना
2) मासिक योजना

3) साप्ताहिक योजना या इकाई योजना

4) दैनिक योजना या पाठ योजना

3. किसी भी पाठ के शिक्षण हेतु शिक्षक द्वारा बनाई जाने वाली योजना को पाठ योजना कहते हैं जो इकाई योजना का ही एक भाग होता है। कोई भी पाठ योजना उस शिक्षक के कक्षा में जाने से पूर्व की तैयारी होती है।

4. पाठ योजना बनाते समय सर्वप्रथम हमे अपने उद्देश्यों को स्पष्ट करना होगा। तत्पश्चात मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के अनुरूप हमे पाठ योजना का निर्माण विषय तथा छात्र की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुये करना चाहिये।

5. पाठ योजना एक प्रकार से शिक्षक की मार्गदर्शिका होती है जो उसे कक्षा की पूरी अवधि में इधर–उधर भटकने नही देती तथा शिक्षक को पूरी तरह से उसके शिक्षण की ओर केन्द्रित रखती है।

6. निर्मितवाद को 21 वीं शताब्दी की नूतन अधिगम प्रविधि के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, जिसकी उत्पत्ति संज्ञानात्मक मनोविज्ञान क्षेत्र से हुई है। इसके अनुसार ज्ञान बाहर वस्तुगत वास्तविकता में नही वरन व्यक्ति द्वारा मन ही मन में संरचित किया जाता है।

2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

- सक्सेना, राधारानी तथा रानी इंदिरा–'विविध पाठ योजनाएं' साहित्यागार जयपुर
- ellis'a.k.(1977) Teaching and learning Elementary social studies, allyn and Bacon inc london
- http://www.academia.edu/232847/constructivitism Enbodied cognition Enactivism Theoretical and practical implications for conceptual change.

इकाई–3 पाठ्यक्रम में सुधार, सामाजिक अध्ययन के लक्ष्य तथा उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 पाठ्यक्रम का अर्थ

3.3.1 सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त

3.3.2 पाठ्यक्रम, पाठ्यवस्तु एवं पाठ्यचर्या का अर्थ

3.3.3 पाठ्यक्रम तथा पाठ्यवस्तु में अन्तर

3.3.4 पाठ्यक्रम सुधार

3.3.5 सामाजिक अध्ययन की पाठ्य सामग्री का संगठन

3.4 सामाजिक अध्ययन की पाठ्य सामग्री का संगठन

3.4.1 लक्ष्य तथा उद्देश्य में विभिन्न आधारों पर भिन्नता

3.4.2 सामाजिक अध्ययन शिक्षण के सामान्य उद्देश्य

3.4.3 शैक्षिक उद्देश्य

3.4.4 शैक्षिक उद्देश्यों के प्रकार

3.4.5 शैक्षिक उद्देश्य तथा शिक्षण उद्देश्य में अन्तर

3.4.6 शिक्षण उद्देश्यों का व्यवहारगत परिवर्तन की दृष्टि से विभाजन

3.4.6.1 ज्ञानात्मक पक्ष : वर्णन एवं वर्गीकरण

3.4.6.2 भावात्मक पक्ष : वर्णन एवं वर्गीकरण

3.4.6.3 क्रियात्मक पक्ष : वर्णन एवं वर्गीकरण

3.4.7 उद्देश्यों का व्यवहारपरक शब्दावली में लेखन

3.4.8 आर.सी.ई.एम. उपागम के उद्देश्य व मानासिक प्रक्रियाएँ

3.5 सारांश

3.6 अभ्यास काय

3.7 चर्चा के बिन्दु

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.1 प्रस्तावना

सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों को तभी प्राप्त किया जा सकता है जब उद्देश्यों के अनुरूप पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाए। पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय उसके निर्माण के सिद्वान्तों के साथ–साथ उन छात्रें की रूचियों, आवश्यकताओं तथा क्षमताओं को भी ध्यान में रखना होगा, जो विषयका अधिगम करेंगें जिससे शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को सफल बनाते हुए उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके। शिक्षण –अधिगम प्रक्रिया का उद्देश्य छात्रों को मात्र सैद्वान्तिक ज्ञान को देते हुए उन्हे मात्र रटने के लिए प्रेरित करना ही नही वरन उनके व्यवहार में वांछित परिवर्तन भी लाना है। छात्रों में यह परिवर्तन ज्ञानात्मक स्तर पर ही नही वरन भावात्मक तथा क्रियात्मक स्तर पर भी लाना है। तभी हम सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में प्राप्त कर सकेगें और छात्रों को एक समाजोपयोगी सदस्य बना सकेंगे जिससे वे वसुधैव कुटुम्बकम के भाव से ओतप्रोत होकर अपने साथ–साथ सभी का कल्याण कर सके। प्रस्तुत इकाई में आप पाठ्यक्रम, पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्वान्त, पाठ्यक्रम में अपेक्षित सुधार, उद्देश्य, लक्ष्य तथा शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण एवं उन्हे व्यावहारिक पदों में लिखने की शैली का अध्ययन करेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप

- पाठ्यक्रम, की परिभाषा का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्वान्तों का प्रत्यभिज्ञान सकेंगे।
- पाठ्यक्रम, पाठ्यवस्तु एवं पाठ्यचर्या के अर्थ को समझ सकेंगें।
- पाठ्यक्रम तथा पाठ्यवस्तु में अन्तर स्थापित कर सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन पाठ्यक्रम के मुख्य उद्देश्यों को सूचीबद्व कर सकेंगे।
- पाठ्यक्रम में व्याप्त कमियों का विश्लेषण कर उसमें अपेक्षित सुधार को बता सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन की पाठ्य सामग्री के संगठन को समझ सकेंगे।
- उद्देश्य तथा लक्ष्यों में विभेद कर सकेंगे।
- शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों का वर्णन कर सकेंगे।
- शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- शैक्षिक उद्देश्य तथा शिक्षण उद्देश्य में विभेद स्थापित कर सकेंगे।
- शिक्षण उद्देश्यों को व्यवहारगत परिवर्तन की शब्दावलियों मे लिख सकेंगें।

3.3 पाठ्यक्रम का अर्थ

पाठ्यक्रम शब्द अंग्रेजी शब्द (curriculum) का हिन्दी रूपान्तरण है। करीकूलम शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के एक शब्द 'क्यूररे' (currere) से हुई है, जिसका अर्थ है दौड़ का मैदान (Race course) अर्थात पाठ्यक्रम वह दौड़ का मैदान है, जिस पर बालक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए दौड़ता है।

शाब्दिक दृष्टिकोंण से यदि देखा जाए तो पाठ्यक्रम दो शब्दों पाठ्य+क्रम का योग है। पाठ्य का अर्थ पढ़ने योग्य तथा क्रम का आशय व्यवस्था से होता है अर्थात पढ़ने योग्य विषय वस्तु की व्यवस्था।

पाठ्यक्रम के अर्थ को और अधिक स्पष्ट अग्रांकित पंक्तियों में दी जा रही परिभाषाओं के माध्यम से भी किया जा सकता है :–

कनिंघम के अनुसार "पाठ्यक्रम कलाकार (शिक्षक) के हाथ में एक यन्त्र है जिससे वह अपनी सामग्री (विद्यार्थी) को अपने आदर्श (लक्ष्य) के अनुसार अपने कलागृह (विद्यालय) में मोड़ता है।"

माध्यामिक शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट में इसे व्यापक रूप से परिभाषित करते हुए कहा है कि "पाठ्यक्रम का अर्थ केवल उन सैद्वान्तिक विषयों से नही है जो विद्यालय में परम्परागत ढ़ंग से पढ़ाए जाते हैं, वरन इसमें अनुभवों की वह सम्पूर्णता निहित है जिसको छात्र, विद्यालय, कक्षा, पुस्तकालय, वक्रशॉप, प्रयोगशाला और खेल के मैदान तथा शिक्षकों एवं शिष्यों के अगणित अनौपचारिक सम्पर्कों से प्राप्त करता है। इस प्रकार विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठ्यक्रम हो जाता है, जो छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर सकता है और उनके सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता देता है।"

मुनरो ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "पाठ्यक्रम में वे समस्त अनुभव निहित है जिनको विद्यालय द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपयोग में लिया जाता है।"

इस प्रकार निष्कर्षतः हम सकते हैं कि :–

- सम्पूर्ण विद्यालयी वातावरण पाठ्यक्रम है।
- यह लक्ष्य प्राप्त करने का एक साधन है।
- इसमें अनुभवों की सम्पूर्णता निहित होती है।
- इसके अन्तर्गत विद्यालय के अन्दर तथा विद्यालय के बाहर के समस्त अनुभव तथा क्रियाकलाप निहित होते हैं।
- पाठ्यक्रम में निहित अनुभवों का प्रयोग शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु किया जाता है।

बोध प्रश्न

1. पाठ्यक्रम शिक्षक के हाथ में एक यन्त्र की भांति होता है। स्पष्ट कीजिए।

____

____

3.3.1 सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में पाठ्यक्रम एक महत्वपूर्ण घटक होता है। शिक्षक को क्या, कैसे और कब पढ़ाना है, इसका निर्धारण मात्र पाठ्यक्रम के ही माध्यम से सम्भव हो पाता है अर्थात पाठ्यक्रम के ही आधार पर हम समस्त शैक्षिक तथा शैक्षिकेत्तर गतिविधियों का संगठन कर उसे व्यवस्थित ढ़ग से व्यवहार रूप में लाते हैं। यह सर्वविदित है कि विद्यालय ही देश के लिये समस्त ज्ञान तथा वांछंनीय अनुभवों से युक्त भावी नागरिक तैयार करते हैं। बात यदि सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में की जाए तो यह विषयसमाज का समग्रता तथा सम्पूर्णता के साथ अध्ययन करता है, जिसका उद्देश्य व्यक्ति को सामाजिक जीवन के लिए प्रशिक्षण प्रदान करता है। अतएव सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय अध्ययन सामग्री की प्रासंगिकता तथा उसके सांस्कृतिक निहितार्थ पर अवश्य ध्यान देना चाहिए। साथ ही साथ निम्नलिखित सिद्वान्तों को भी ध्यान में रखते हुए इसके पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाना चाहिएः–

- लचीलेपन का सिद्वान्तः– सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम लचीला होना चाहिए जिससे बदलते हुए समय तथा गतिशील समाज, जिसके आदर्श, संस्कृति तथा जीवन शैली समय–समय पर परिवर्तित

होती रहती है, के अनुसार इसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन लातें हुए छात्रों को अद्यतन जानकारी दी जा सके।

- व्यापकता का सिद्वान्तः— मूलभूत तथ्यों के साथ—साथ व्यापकता के सिद्वान्त का अनुसरण सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय करना चाहिए जिससे इसमें आवश्यकतानुसार ऐसे विषयों को भी सम्मिलित किया जा सके जो छात्रों में सामुदायिक भावना के साथ —साथ अन्तर्राष्ट्रीय अवबोध को भी विकसित कर सके।

- उपयोगिता का सिद्वान्तः— यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि छात्र उन्ही बातों को सीखने में रूचि रखते हैं जो उनके लिए उपयोगी होते हैं। अतएव सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम निर्माण के समय इस सिद्वान्त को अवष्य ध्यान में रखना चाहिए जिससे छात्र अध्ययनोपरान्त अपने तथा अपने राष्ट्र और समाज के हित में उपयोगी तथ्यों को आत्मसात कर सके।

- अभिप्रेरणा का सिद्वान्तः— यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि छात्र उन्ही विषयों को पढ़ने में रूचि लेते हैं जिनकी अध्ययन सामग्री छात्रों को अधिगम के लिए अभिप्रेरित करने वाली हो। यदि विषयवस्तु छात्र की रूचि, योग्यता, क्षमता तथा उसकी प्रवृत्ति के अनुकूल नही है तो छात्र एक निश्क्रिय श्रोता की भांति पाठ को सैद्वान्तिक रूप से तो किसी तरह पढ़ लेगा परन्तु उस ज्ञान का प्रयोग वह व्यावहारिक स्तर पर नही कर सकेगा। चूंकि सामाजिक अध्ययन का मुख्य उद्देश्य छात्रों में सामाजिक कुशलता का विकास करना है इसलिए इसके पाठ्यक्रम के निर्माण में अभिप्रेरणा के सिद्वान्त को विशेष महत्व देना चाहिए।

- क्रिया का सिद्वान्तः— क्रिया द्वारा सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है क्योंकि उसमे छात्र पूर्णतः सक्रिय रहता है और उसकी समस्त मानसिक शक्तियां क्रियाशील रहती है। चूंकि सामाजिक अध्ययन का मुख्य उद्देश्य छात्र को एक कुशल लोकतान्त्रिक नागरिक बनाना है इसलिए सामाजिक अध्ययन की विषय सामग्री क्रिया केन्द्रित होनी चाहिए।

- जीवन से सम्बद्वता का सिद्वान्तः— छात्र अपने जीवन से सम्बन्धित बातों के अध्ययन में सर्वाधिक रूचि लेते हैं और सामाजिक अध्ययन की विषय सामग्री वास्तविक जीवन से ही सम्बन्धित होती है अतएव इसके पाठ्यक्रम की अध्ययन सामग्री के चयन में उन्हीं तथ्यों तथा घटनाओं के चयन में वरीयता दी जानी चाहिए जो वास्तविक हो तथा जिनका सम्बन्ध जीवन से हो। इस सन्दर्भ में शिक्षाशास्त्री रेमण्ट का कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि "जो पाठ्यक्रम वर्तमान तथा भविष्य की आवश्यकताओं को पूरा करता है, उसे वास्तविक रूप से रचनात्मक कहा जाता है।"

- मानव जाति के अनुभवों का सिद्वान्तः— यदि विषय बालक को मानव जाति के अनुभवों से परिचित कराने वाला हो, तो उसके ज्ञानार्जन के पश्चात् छात्र जातीय जीवन में भाग लेने हेतु तत्पर हो जाता हैं। अतएव सामाजिक अध्ययन की अधिगम सामग्री में मानव जाति के अनुभवों के चयन को वरीयता दी जानी चाहिए जिसस छात्र सही मायने में अपने समाज के प्रति अपेक्षित दायित्वों का निर्वहन सफलतापूर्वक कर सके।

- छात्रों के अनुभवों की प्रासंगिकता का सिद्वान्तः— सामाजिक अध्ययन की विषयसामग्री का संयोजन करते समय छात्रों के अनुभवों की प्रासंगिकता को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए। अर्थात् उसके बढ़तें हुए अनुभवों के क्रम में ही विषयसामग्री को व्यवस्थित करना चाहिए। जैसे प्राथमिक स्तर पर दिया जाने वाला ज्ञान उसके पर्यावरण, समुदाय, विभिन्न भौगोलिक धरातलों पर भ्रमण, विभिन्न राष्ट्रीय प्रतीकों की पहचान, विभिन्न ऐतिहासिक साक्ष्यों, अभिलेखों, सिक्कों तथा स्थलों के अवलोकन से सम्बन्धित होना चाहिए। उच्च कक्षाओं में, जबकि छात्रों के अनुभवों में परिपक्वता आने लगती है समाज की विभिन्न सामाजिक समस्याए, राजनैतिक समस्याएं, आर्थिक समस्याएं तथा भौगोलिक तथ्यों की आलोचनात्मक अध्ययन सामग्री सम्मिलित की जानी चाहिए जिससे छात्री उस पर अपनी राय व्यक्त करते हुए अपने अनुभवों को समग्रता दे सकें।

- समुदाय से सम्बद्धता का सिद्वान्तः– चूंकि समुदाय में रहते हुए ही बच्चे की अभिवृद्वि और विकास होता है अतएव बालक की शिक्षा का सम्बन्ध उसके सामुदायिक जीवन से अवश्य होना चाहिए। डा० एस० के० कोचर ने तो समुदाय को अधिगम की प्रयोगशाला कहा है जहां रहते हुए बालक वास्तविक रूप से विभिन्न अनुभवों का स्वयं की अर्जन करता है। इसलिए सामाजिक अध्ययन की विषय सामग्री में समुदाय के मूल्य, नैतिकता, रीति रिवाजों तथा परम्पराओं को अनिवार्य रूप से सम्मिलित किया जाना चाहिए जिससे छात्रइनको भली भांति समझते हुए उचित–अनुचित वांछनीय तथा अवांछनीय तथ्यों में भेद करते हुए समाज का एक संस्कारी नागरिक बन सके।

- सामाजिक अध्ययन विषय के उद्देश्य का सिद्वान्तः– सामाजिक अध्ययन का मुख्य उद्देश्य छात्रों में वांछनीय ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति तथा मूल्यों का विकास कर उनमे उन समस्त सामाजिक और वैयक्तिक गुणों का विकास करना है, जिनसे वे समाज के सहयोगी तथा विश्वसनीय सदस्य बन सके और उन्नतिशील समाज के निर्माण में अपनी अहम भूमिका का निर्वहन कर सके। उदाहरणार्थ यदि हमारा उद्देश्य छात्रों में अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण का विकास है तो हमें अध्ययन सामग्री में अन्य देशों की जीवन शैली, उनकी संस्कृति तथा परम्पराओं को अवश्य शामिल करना चाहिए। जिससे अध्ययन के उपरान्त छात्रों में उनके प्रति भी मानवता का दृष्टिकोण विकसित हो सके और वे लोक कल्याण हेतु तत्पर हो सकें।

- राष्ट्रीय एकता तथा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना के विकास का सिद्वान्तः– सामाजिक अध्ययन की अध्ययन सामग्री का चयन करते समय उपयफ्रक्त सिद्वान्त को अनिवार्य रूप से वरीयता दी जानी चाहिए जिससे वे संकीर्ण राष्ट्रीयता की परिधि को लांघ कर अन्तर्राष्ट्रीय सदभावना को स्वंय में विकसित कर सकें। उन्हे इस बात का अहसास कराया जाना चाहिए कि विश्व के सभी देश आज किस प्रकार एक दूसरे पर निर्भर है। इसी आधार पर विश्व संस्कृति की कल्पना की गई है जिसमें संसार के महान पुरूषों का बहुत बड़ा योगदान है। वास्तव में इन भावनाओं के साथ ही वे मानवता के रक्षार्थ तत्पर हो सकेंगे

- समय का सिद्वान्तः– चूकि सामाजिक अध्ययन इतिहास, भूगोल अर्थशास्त्र नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र का एकीकृत स्वरूप है अतएव उपयफ्रक्त सिद्वान्त का अनुसरण करते हुए उतनी ही पाठ्य सामग्री का चयन किया जाना चाहिए जो निर्धारित अवधि में पूरी की जा सके।

- समन्वय तथा केन्द्रीयकरण का सिद्वान्तः– सामाजिक अध्ययन की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए उसके विभिंन्न विषयों में यथा सम्भव अर्न्तसम्बन्ध स्थापित करना चाहिए और अध्ययन सामग्री को विस्तृत आधार पर नियोजित कर उसे जीवन से सम्बन्धित करना चाहिए।

- शैक्षिक मूल्य का सिद्वान्तः– सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य बालक को मात्र सूचनाएं देना नही वरन उनके चरित्र निर्माण में सहायता कर उसे एक उपयोगी नागरिक बनाना है तथा उसकी तक्र–शक्ति विचार शक्ति, निर्णय शक्ति तथा स्मरण शक्ति का विकास करना है। इन ध्येंयों की पूर्ति तभी सम्भव है जब हम अध्ययन सामग्री का चयन करते समय उपयफ्रक्त सिद्वान्त का अनुसरण करें। तथ्यों के उचित चयन पर ही यह विषय सही मायने में छात्रों में सामाजिक चेतना उत्पन्न कर उसे वर्तमान की विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा धार्मिक समस्याओं का स्वयं हल करने योग्य बना सकता है।

- समालोचनात्मक दृष्टिकोण के विकास का सिद्वान्तः– सामाजिक अध्ययन की विषय–वस्तु का संयोजन इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे कि छात्रों में समालोचनात्मक दृष्टिकोण का विकास हो सके। एक उत्तम शिक्षण वही माना जाता है जिसमें छात्र तथ्यों को रटते नहीं हैं वरन उसे अपने तक्र की कसौटी पर कसते हुए उसको वस्तुनिष्ठ ढ़ंग से अपनाते हैं। अतएव सामाजिक अध्ययन की िविषयवस्तु का चयन भी ऐसा होना चाहिए जिससे उनकी तक्र शक्ति, निर्णय शक्ति तथा

आलोचनात्मक शक्तियों का पर्याप्त विकास हो सके और वे किसी भी तथ्य को तक्र तथा प्रमाणों के आधार पर ही स्वीकार करना सीख जाए।

बोध प्रश्न

2. पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों का अनुसरण क्यों आवश्यक है?

____
____
____
____
____

3.3.2 पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्या तथा पाठ्यवस्तु या विषयवस्तु का अर्थ

पाठयक्रम दो शब्दों से मिलकर बना है पाठ्य़क्रम। अर्थात पाठ का क्रम अर्थात किसी कक्षा के लिये सभी विषयों, उपविषयों तथा उससे सम्बन्धित शिक्षण सामग्री का सुव्यवस्थित ढ़ंग से प्रस्तुतिकरण "पाठ्यक्रम" कहलाता है।

पाठ्यक्रम शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द "Currere" से हुई है जिसका अर्थ है – दौड़ का मैदान (Race Cource)। इस प्रकार पाठ्यक्रम बालक के लिये उस दौड़ के मैदान के समान है, जहॉ बालक शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये दौड़ में भाग लेता है। दूसरे शब्दों में करीकूलम वह क्रम है जिसे किसी व्यक्ति को अपने गन्तव्य स्थान पर पहॅुचने के लिये पार करना होता है। पाठयक्रम वह साधन है जिसके द्वारा शिक्षा व जीवन के लक्ष्यों की प्राप्ति होती है। यह अध्ययन का निश्चित एवं तक्रपूर्ण क्रम है, जिसके माध्यम से छात्र के व्यक्तित्व का विकास होता है तथा वह नवीन ज्ञान एवं अनुभव को ग्रहण करता है। विद्यालय में रहते हुये शिक्षक के संरक्षण में विद्यार्थी जो भी क्रियायें करता है, वह सभी पाठ्यक्रम के अन्तर्गत आती है। पाठ्यक्रम के आशय को हम और अधिक निम्नलिखित विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं से समझ सकते हैं:–

कनिंघम– "पाठ्यक्रम कलाकार (शिक्षक) के हाथ में एक यन्त्र है जिससे वह अपनी सामग्री (विद्यार्थी) को अपने आदर्श (लक्ष्य) के अनुसार अपने कलागृह (विद्यालय) में मोड़ता है।"

जानसन– "पाठ्यक्रम अधिगम अनुभवों के परिणामों की क्रमिक व्यवस्था है।"

मुनरो– "पाठ्यक्रम में वे समस्त अनुभव निहित है जिनको विद्यालय द्वारा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये उपयोग में लाया जाता है।"

वाल्टर एस0 मनरो के शब्द कोष के अनुसार– "पाठ्यक्रम को किसी छात्र द्वारा लिये जाने वाले विषयों के रूप में परिभाषित नही किया जाना चाहिये। पाठ्यक्रम की कार्यात्मक संकल्पना के अनुसार इसके अन्तर्गत वह सब अनुभव आ जाते हैं जो विद्यालय में शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं।"

हेनरी जे0आटो0– "पाठ्यक्रम वह साधन है जिसके द्वारा हम बच्चों को शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के योग्य बनाने की आशा करते हैं।"

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि "पाठ्यक्रम का अर्थ केवल उन सैद्धान्तिक पाठ्य विषयों से नहीं है, जो विद्यालय में परम्परागत ढंग से पढाये जाते हैं, वरन इसमें अनुभवों की वह सम्पूर्णता निहित है जिसको छात्र विद्यालय, कक्षा कक्ष, पुस्तकालय, वक्रशाप, प्रयोगशाला और खेल के मैदान तथा

शिक्षकों एवं शिष्यों के अगणित अनौपचारिक सम्पर्को से प्राप्त करता है। इस प्रकार विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठ्यक्रम हो जाता है, जो छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित कर सकता है और उनके सन्तुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता देता है।"

शिक्षा आयोग के अनुसार "विद्यालय की देखभाल में तथा बाहर अनेक प्रकार के क्रिया कलापों से छात्रों को विभिन्न अध्ययन अनुभव प्राप्त होते हैं। हम विद्यालय पाठ्यक्रम को इन अध्ययन अनुभवों की समष्टि मानते हैं।"

इस प्रकार पाठ्यक्रम में छात्र के वे समस्त अनुभव, जिन्हे वह कक्षा, प्रयोगशाला, खेल का मैदान, पुस्तकालय, पाठ्येत्तर क्रियाओं द्वारा प्राप्त करता है, समाहित होते हैं।

पाठ्यचर्या (SYLLBUS) किसी तरह की शिक्षा अथवा प्रशिक्षण के लिये निर्धारित विषयों, उपविषयों एवं सम्बन्धित सामग्री की व्यवस्थित एवं साररूप में प्रस्तुति ही पाठ्यचर्या कहलाती है। पाठ्यचर्या दो शब्दो से मिलकर बना है पाठ्य एवं चर्या। पाठ्य का अर्थ पढने योग्य तथा चर्या का अर्थ है– नियम पूर्वक अनुसरण अर्थात पाठ्यचर्या का अर्थ है पढने योग्य अथवा पढाने योग्य विषय वस्तु तथा क्रियाओं का नियम पूर्वक अनुसरण। इसे पाठ्य–विवरण भी कहते हैं जिसका अर्थ है पढने योग्य विषय–वस्तु या क्रियाओं का विवरण।

3.3.3 पाठ्यक्रम तथा पाठ्यचर्या में अन्तर

क्र0सं0	पाठ्यक्रम	पाठ्यचर्या
1	यह शिक्षण क्रिया का विस्तृत रूप है।	यह पाठ्यक्रम का संकुचित रूप है।
2	पाठ्यक्रम के जरिये छात्रों का सर्वागींण विकास किया जाता है।	पाठ्यचर्या के द्वारा छात्रों के ज्ञानात्मक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है।
3	इसका निर्माण तथा विकास समाज की आवश्यकताओं तथा देश की उन्नति को देखकर किया जाता है।	जबकि पाठ्यचर्या का निर्माण करते समय छात्रों को महत्व देते हुये उनकी रूचि, अभिक्षमता तथा उनके पूर्ण ज्ञान के आधार पर किया जाता है।
4	पाठ्यक्रम का निर्माण पुराने रीति रिवाजों के अनुसार होता है। इसमें वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में नही रखा जाता।	जबकि पाठ्यचर्या का निर्माण वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाता है और यह पाठ्यक्रम से ज्यादा व्यावहारिक होता है।
5	पाठ्यक्रम का निर्माण विद्यालय के प्रशासन एवं विद्यालय की व्यवस्था को ध्यान में रखते हुये किया जाता है।	जबकि पाठ्यचर्या का निर्माण केवल शिक्षण क्रियाओं के लिये किया जाता है अर्थात इसमें विषयवस्तु , शिक्षण विधियों एवं सहायक सामग्रियों को ध्यान में रखकर किया जाता है।
6	पाठ्यक्रम में विद्यालय में सम्पन्न होने वाले सभी कार्यो को शामिल किया जाता है।	पाठ्यचर्या में शिक्षण कार्यों की योजनाओं को ही सम्मिलित किया जाता है।
7	पाठ्यक्रम एक शरीर है।	तो पाठ्यचर्या उसका एक अंग।

अन्ततः आप दोनो के अन्तर को रॉबर्ट डोटर्न और हैनरी हैरप के शब्दों में समझ सकते हैंः– "पाठ्यचर्या या पाठ्य–विवरण शिक्षालय वर्ष के दौरान विभिन्न विषयों में शिक्षक द्वारा छात्रों को दिये जाने वाले ज्ञान की मात्रा के विषय में निश्चित जानकारी प्रस्तुत करता है, जबकि पाठ्यक्रम यह प्रदर्शित करता है कि शिक्षक किस किस प्रकार की शैक्षिक क्रियाओं द्वारा पाठ्यचर्या या पाठ्य विवरण की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।" अन्य शब्दों में पाठ्यचर्या शिक्षण की विषय वस्तु निर्धारित करता है और पाठ्यक्रम उसे देने के लिये प्रयुक्त विधि का। पाठ्यचर्या मात्र वह मुद्रित संदर्शिका है जो यह बताती है कि छात्र को क्या सीखना है। पाठ्यचर्या निर्माण पाठ्यक्रम विकास के कार्य का एक तक्र सम्मत सोपान है।

पाठ्यवस्तु या विषय वस्तु **(Course of Study or Content)**– पाठ्यवस्तु या विषयवस्तु पूरे शैक्षिक सत्र में विभिन्न विषयों में शिक्षक द्वारा छात्रों को दिये जाने वाले ज्ञान की मात्रा के विषय में निश्चित जानकारी प्रस्तुत करता है। पाठ्यवस्तु शिक्षण की ंिविषयवस्तु निर्धारित करता है।

आपने उपरोक्त पंक्तियों में पाठ्यक्रम, पाठयचर्या तथा पाठ्यवस्तु इन तीन शब्दों के सम्प्रत्यय को देखा। अध्ययन के परिणाम स्वरूप आपने स्वंय देखा होगा कि पाठ्यचर्या तथा पाठ्यवस्तु में बहुत बारीक/मामूली अन्तर है जिसके कारण अधिकांश विद्वान पाठ्यचर्या तथा पाठ्यवस्तु (Syllabus and Course of Study or Content) को समानार्थी शब्द के रूप में प्रयोग करते हैं। यहाँ आपको दो शब्दावलियों को भली भांति समझना है– पाठ्यक्रम और पाठ्यवस्तु। वास्तव में पाठ्यक्रम में पाठ्यवस्तु समाहित होती है। पाठ्यवस्तु का अर्थ है शिक्षण विषय की रूपरेखा। इसे आपको एक उदाहरण के माध्यम से समझाती हूँः– हाईस्कूल के पाठ्यक्रम में सामाजिक अध्ययन को एक विषय के रूप में सम्मिलित किया जाता है। किन्तु सामाजिक अध्ययन विषय के अन्तर्गत जिन उपविषयों–इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र आदि की एक निश्चित पाठ्य सामग्री अथवा प्रकरणों को पढ़ाने के लिये निर्धारित किया जाता है, उसे सामाजिक अध्ययन विषय की पाठ्यवस्तु या ंिविषयवस्तु कहा जाएगा। इस प्रकार पाठ्यवस्तु का सम्बन्ध बालक के ज्ञानात्मक पक्ष के विकास से होता है जबकि पाठ्यक्रम का सम्बन्ध बालक के सम्पूर्ण विकास से होता है। वास्तव में पाठ्यवस्तु की तैयारी पाठ्यक्रम विकास के कार्य का एक तक्र सम्मत सोपान है।"

क्रियाकलाप

पाठ्यक्रम और पाठ्यचर्या में व्याप्त अन्तरों की सूची बनाइए।

____
____

3.3.4 पाठ्यक्रम सुधार

पाठ्यक्रम ही वह माध्यम है जिसके द्वारा अपेक्षित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। पाठ्यक्रम मे सुधार की आवश्यकता तब महसूस होती है जब वह उद्देश्यों की प्राप्ति में असफल होता है। यह एक व्यापक और मूल परिवर्तन होता है, जिसमें उद्देश्यों में परिवर्तन, ंिविषयवस्तु में परिवर्तन तथा शैक्षिक प्रविधियों में परिवर्तन सम्मिलित है।

सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में भी सुधार वर्तमान समय की माँग हैं क्योंकि इसमें पूर्णता तथा आधुनिकता की कमी है। चूंकि छात्रों के ज्ञान का वर्धन करने वाली पाठ्यक्रम की सामग्री पुराने तथ्यों से भरी पड़ी है इसलिए इसका पठन पाठन व्यर्थ सा प्रतीत हो रहा है। सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम छात्रों के मात्र ज्ञान और स्मरण शक्ति पर ही बल दे रहा है जिसके कारण छात्र विषय वस्तु को कण्ठस्थ तो कर लेते हैं परन्तु वे सामाजिक अध्ययन के पूर्व वर्णित उद्देश्यों को प्राप्त करने में पूरी तरह सफल नही हैं। कहने का तात्पर्य है कि छात्र ज्ञानात्मक उद्देश्य की प्राप्ति में तो सफल है परन्तु उनका भाव पक्ष तथा कौशल पक्ष पूरी तरह विकसित नही हो रहा है। सामाजिक अध्ययन के एक घटक इतिहास के सन्दर्भ में तो बीती हुई घटनाओं का यथावत प्रस्तुतिकरण समझ में आता है परन्तु शेष चार घटक भूगोल, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र तथा समाजशास्त्र इन उद्देश्यों की प्राप्ति पर एक प्रश्न चिन्ह लगा रहें है। आज नए –नए अनुसन्धान हो रहे हैं। नई –नई बातों, जिनका मनुष्य के जीवन से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध है, अनुसन्धान के फलस्वरूप सामने

आ रही हैं वे सब विषय वस्तु की परिधि से बाहर प्रतीत हो रही हैं। ज्ञान के विस्फोट के परिप्रेक्ष्य में जो सामग्री पाठ्यक्रम में छात्रों को पढ़ाई जा रही है वह न तो आधुनिक है और न ही अपने आप में पूर्ण है। सन्दर्भतः यहां कोठारी कमीशन के इस वकतव्य का उल्लेख किया जाना आवश्यक है जो स्पष्ट रूप से सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में सुधार करने को विवश कर देता है, जिसके अनुसार–"पाठ्यक्रम पुराने ज्ञान तथा स्मरण शक्ति पर बल देता है, व्यावहारिक क्रियाओं का अनुपयुक्त प्रावधान करता है और शिक्षा में आन्तरिक तथा बाह्य परीक्षा की प्रधानता रहती है। फिर उपयोगी कुशलताओं के विकास, स्वस्थ अभिरूचि, अभिवृत्ति तथा मूल्यों के प्रस्थापन पर जोर न देने के कारण पाठ्यक्रम में आधुनिक ज्ञान से तालमेल का अभाव ही नही रहता वरन वह जन जीवन से भी सम्पक्र नही रख पाता "।

चूंकि सामाजिक अध्ययन विषयका प्रमुख उद्देश्य छात्रों में विभिन्न सामाजिक गुणों तथा कौशलों का विकास, लोकतान्त्रिक गुणों का विकास, नेतृत्व की कला का विकास, मानव सभ्यता के विकास के इतिहास से उन्हें परिचित कराना तथा विभिन्न ऐतिहासिक धरोहरों तथा सांस्कृतिक विरासत के प्रति श्रद्धा और सराहना का भाव विकसित करना है इसलिए निम्न –लिखित बिन्दुओं पर अमल करते हुए हम इसके पाठ्यक्रम को छात्रों के लिए अधिक प्रासंगिक, उपयोगी तथा सार्थक रूप से बोधगम्य बनाते हुए सामाजिक अध्ययन के समस्त उद्देश्यों को प्राप्त करने योग्य बना सकते हैं

• सबसे प्रमुख बात पाठ्यक्रम निर्माण के समय हमें उपयुक्त वर्णित सिद्वान्तों को अनिवार्य रूप से व्यवहार में लाना होगा।

• चूंकि बालक समाज का ही सदस्य है, अतएव समाज का स्वरूप, ढाँचा, दर्शन, समाज की आवश्यकताएं तथा उद्देश्यों के अनुरूप ही पाठ्यक्रम बनाएं जाए।

• पाठ्यक्रम के निर्माण का आधार मनोवैज्ञानिक होना चाहिए अर्थात बालक की प्रकृति, उसकी शारीरिक और मानसिक परिपक्वता का स्तर, उसकी रूचि, प्रवृत्तियों, योग्यताओं तथा आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम के बहुमुखी स्वरूप पर बल देना चाहिए जिस पर महान शिक्षाशास्त्री हरबर्ट स्पेन्सर ने भी सर्वाधिक बल दिया है।

• आदर्शवादी सिद्वान्तों को द्रष्टिगत रखतें हुए पाठ्यक्रम में ऐसे आदर्शो विचारों तथा मानव जाति के अनुभवों को स्थान देना चाहिए जिनका अनुसरण करते हुए बालक अपने जीवन को आदर्श पूर्ण बना सके। इसीलिए टी० पी० नन ने कहा है कि " पाठ्यक्रम में सभ्यता के निर्माण की प्रकिया का व्यवस्थापन होना चाहिए।

• पाठ्यक्रम में सुधार की दिशा में हमें प्रयोजनवादी सिद्वान्तों का अनुसरण करतें हुए उसमें उपयोगिता, बालक की प्राकृतिक अभिरूचियों, उसकी क्रियाओं, व्यवसाय, अनुभवों तथा विभिन्न विषयों के सहसम्बन्ध पर विषेश बल देना चाहिए।

• सामाजिक अध्ययन की पाठ्य सामग्री को इस प्रकार संगठित किया जाना चाहिए जिसका ज्ञानार्जन छात्र सरलता के साथ कर सकें तथा जो छात्रों के रूचि, दृष्टिकोण तथा उसके सामर्थ्य के अनुकूल हो तथा पाठय वस्तु के तीनों पक्ष ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक पक्ष में सन्तुलन बना रहे।

• उपयोगी पाठ्यक्रम वही होता है जो बदलते हुए समय के अनुसार छात्रों को तैयार कर सके। जो बदलती हुई सामाजिक परिस्थिति और भावना के अनुसार परिवर्तित होता रहे। इसलिए सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम का निर्माण परम्परागत प्रणाली के आधार पर न होकर समस्त मानव जाति के कार्यो, अनुभवों, रीति रिवाजों तथा संस्कृतियों के प्रमुख विचारों एवं प्रवृत्तियों से युक्त होना चाहिए। ऐसी क्रियाएँ, जिनकी समाज के लिए कोई उपयोगिता नहीं है उन्हे पाठ्यक्रम में बिल्कुल शामिल नही किया जाना चाहिए।

• बालक उन तथ्यों को ज्यादा रूचि के साथ पढ़ते हैं जिनका उनके वास्तविक जीवन से सम्बन्ध हो। अतएव पाठ्यक्रम की विषयवस्तु ऐसी हो जिनकी सहायता से बालक अपने वर्तमान जीवन के विविध आयामों को समझ सके। जो बालक को जीवन में आने वाली विभिन्न चुनौतियों का सफलता पूर्वक सामना करने के योग्य बना सकै। इसी बात को ध्यान में रखते हुए हेमिंग्स (Hemings) ने सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में निम्नलिखित बातों को सम्मिलित करने पर बल दिया : –

1. बालक का सामाजिक जीवन, उसका समुदाय गाँव, कस्बा, जिला तथा राज्य; उसकी भौगोलिक तथा ऐतिहासिक पृष्ठिभूमि; विभिन्न संस्थाएं तथा संगठन ; बच्चे का उसमें योगदान।

2. देश की सामाजिक स्थिति तथा दशा ; भारत के विभिन्न अंचलों के लोग; वैश्विक घटना के सन्दर्भ में राष्ट्रवाद तथा सांस्कृतिक धरोहर, प्राकृतिक आवास के प्रति भावनाओं का सर्वेक्षण।

3. विश्व की मुख्य संस्कृति तथा भारतीय संस्कृति और इसके पड़ोसी तथा राष्ट्रमण्डल देशों के साथ इसका तुलनात्मक अध्ययन।

4. 1957 के पश्चात् समाज आधारित औद्योगिक प्रगति का विकास ; प्रजातन्त्र का विकास, वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान ; यातायात के विभिन्न साधन ; असाध्य रोगों पर विजय प्राप्ति आदि।

5. औद्योगिक प्रगति, प्रजातन्त्र का विकास, वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान, यातायात के साधन, असाध्य रोगों पर विजय प्राप्ति, भोजन, आवास, स्वास्थ, विश्व शान्ति के सन्दर्भ मे आधुनिक भारत की समस्याएं

6. सरकार, परिवारिक स्थिति, विवाह जैसी तमाम समस्याओं के समाधान हेतु मानव निर्मित संस्थानों के योगदान का अध्ययन।

• चूंकि सामाजिक अध्ययन विषय बालक को इस जीवन को सफल ढ़ंग से जीने के लिए तैयार करता है अतएव इसके पाठ्यक्रम में उन समस्याओं को भी सम्मिलित किया जाए जो उसके वर्तमान जीवन के समक्ष एक बहुत बड़ी चुनौती के रूप में सामने आ रही हैं जैसे – पर्यावरण प्रदूषण, जनाधिक्य, बेरोजगारी की समस्या, मूल्य का क्षरण, पाश्चात्य प्रभाव से बदलती जीवन शैली तथा उसका दुष्प्रभाव आदि। जिससे इन समस्याओं से अवगत होकर बालक इनके निदान हेतु व्यक्तिगत स्तर पर सार्थक पहल कर सके।

बोध प्रश्न–3

सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में आपके दृष्टिकोण से कौन –कौन सी न्यूनताएं है।

उन न्यूनताओं को दूर करने के लिए आप क्या करेंगे ? सुझाव दीजिए।

3.3.5 सामाजिक अध्ययन की पाठ्य सामग्री का संगठन

समाजिक अध्ययन की पाठ्य सामग्री का संगठन इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे छात्र रूचि के साथ उसका ज्ञानार्जन करते हुए न केवल ज्ञानात्मक उद्देश्य वरन भावात्मक तथा बोधात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति सफलता पूर्वक कर सकें। अतएव इसकी पाठ्य सामग्री के संगठन में निम्नलिखित उपागमों को व्यवहार मे लाना चाहिए : –

1. <u>सह सम्बन्ध उपागम</u> : –

सहसम्बन्ध विचार करने का एक तरीका है जिसमें विभिन्न विषयों से सम्बन्ध स्थापित करते हुए अर्थपूर्ण तथा सार्थक ढ़ंग से अधिगम किया जाता है। अर्थात सह सम्बन्ध विषयों का पारस्परिक या अन्तः सम्बन्ध है। सह सम्बन्ध उपागम के अन्तर्गत सामाजिक अध्ययन की पाठ्यवस्तु दो प्रकार से संगठित की जाती है : –

1–1 शीर्शात्मक सहसम्बन्ध अर्थात इसमें एक कक्षा की सामग्री उससे उच्च कक्षा की सामग्री की उपलब्धि में सहायक होती है। इस प्रकार के सहसम्बन्ध को हम अग्रांकित चित्र के माध्यम से समझ सकते हैं : –

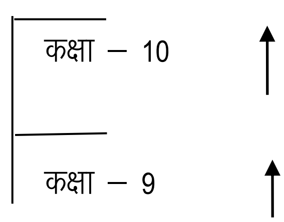

प्रत्येक स्तर की विषय सामग्री छात्र को अगली कक्षा की विषय सामग्री के ज्ञानार्जन का आधार प्रस्तुत करती है। अर्थात विषय का शीर्शात्मक ढ़ंग से सह सम्बन्ध है।

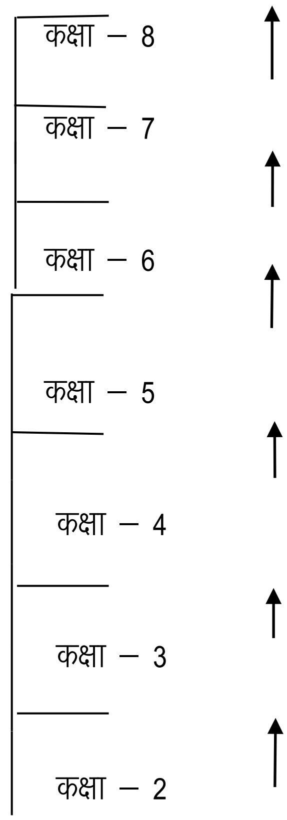

विषय सामग्री का शीर्शात्मक ढ़ंग से सह सम्बन्ध

रेखाचित्र 1.1.1

1.2 अनुप्रस्थीय सहसम्बन्ध :– अग्रलिखित ढ़ंग से संगठित सामग्री अन्य विषयों से सहसम्बन्ध स्थापित करने में सहायक होती है। इस प्रकार के सहसम्बन्ध को हम निम्नलिखित चित्र के माध्यम से समझ सकते हैं :–

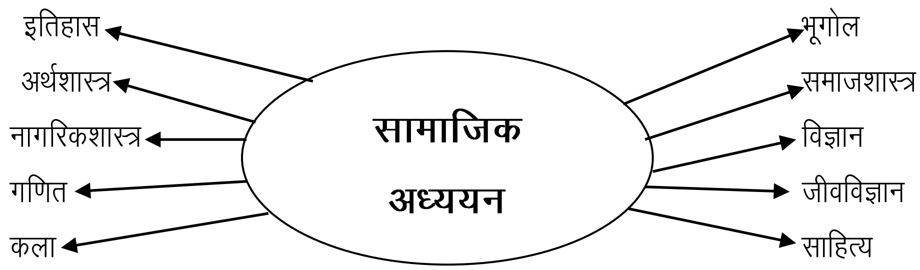

सामाजिक अध्ययन का विभिन्न विषयों के साथ अनुप्रस्थीय सहसम्बन्ध

रेखाचित्र – 1.2.2

2. इकाई उपागम :– (**unit approach**):– यह उपागम मनोविज्ञान के गेस्टाल्टवादी (अवयवीवाद) विचारधारा पर आधारित है जिसके अनुसार अधिगम की सामग्री खण्डों अथवा टुकड़ों में न देकर समग्रता या पूर्ण रूप में प्रस्तुत की जाए। इकाई किसी विषय का एक बड़ा उपविभाग होता है जिसका कोई मूल सिद्वान्त या प्रकरण होता है। छात्रों की क्रियाओं को उस सिद्वान्त या प्रकरण के अनुसार हम ऐसे ढ़ंग से नियोजित करते हैं जिससे छात्रों को विषय के आवश्यक तत्वों को पूर्ण ज्ञान हो जाए। इस उपागम के अर्न्तगत हम छात्रों की रूचियों और आवश्यकताओं के अनुसार सामाजिक अध्ययन की विषय सामग्री को व्यावहारिक तथा जीवनोपयोगी बनाकर उसे संगठित करते हैं। इसमें दैनिक योजनाओं को (पढ़ाई जाने वाली अध्ययन सामग्री

को) सुनियोजित आधार पर प्रस्तुत कर छात्रों को ज्ञानार्जन का अवसर प्रदान करते हैं तथा प्रत्येक इकाई की समाप्ति पर छात्रों का मूल्याकंन करते हैं।

सामाजिक अध्ययन के पाठ्यवस्तु के संगठन में इस उपागम के प्रयोग का सबसे बड़ा लाभ यह है वि पाठ्यक्रम का निर्माण वैयक्तिक भिन्नताओं को ध्यान में रखकर करने से छात्रों की जिज्ञासा प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिलता है तथा उनमें वांछित कौशल, योग्यता तथा रूचियों का विकास होता है।

3. समकेन्द्रिक उपागम (**concentric Approach**) :– इस उपागम के अन्तर्गत सर्वप्रथम विषयवस्तु की रूपरेखा प्रस्तुत की जाती है और तत्पश्चात् प्रत्येक कक्षा में उसकी विषयवस्तु को विस्तार दिया जाता है। इसमें विषयवस्तु की पीठिका तो समान होती है परन्तु ज्ञान के वृत्तों का आयाम कक्षानुसार बढ़ता जाता है।

इस प्रकार पाठ्यक्रम के संगठन के इस उपागम में बालक की मानसिक शक्ति को बढ़ाने का प्रयास सरल मार्ग को अपनाते हुए किया जाता है। इस उपागम से संगठित पाठ्यक्रम से छात्रों की रूचि जागृत होती हैं और सीखे गए तथ्यों की पुनरावृत्ति भी आसान होती है। इस उपागम में "सरल से जटिल की ओर " तथा" पूर्ण से अंश की ओर " बढ़ा जाता है।

4. प्रकरण उपागम (**Topical Approach**):– इसके अन्तर्गत छात्रों की रूचि, आयु और योग्यता को, दृ ष्टिगत रखते हुए विषय वस्तु को प्रकरणों की श्रृंखला में संगठित किया जाता है। इस उपागम का पाठ्यक्रम संगठन में अनुसरण करने पर विषय अन्य विद्यालयी विषयों के साथ सह सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।

5. काल क्रमिक उपागम (**Cronological Approach**):– इस उपागम के अन्तर्गत सामाजिक अध्ययन के पूरे पाठ्यक्रम को निश्चित स्तरों तथा कालों के अनुसार बाँट कर उसे प्रत्येक कक्षा के लिए निश्चित कर दिया जाता हैं। जैसे इतिहास विषय प्राचीनकाल, मध्यकाल तथा आधुनिक काल में बांटकर कक्षा 6 के लिए प्राचीन इतिहास, कक्षा 7 के लिए मध्यकालीन इतिहास तथा कक्षा 8 के लिए आधुनिक काल का इतिहास पढ़ने के लिए प्रावधान किया गया है। सी० पी० हिल ने इस उपागम की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि

" काल क्रमिक उपागम भ्रमों को समाप्त करता हैं तथा भूतकाल की घटनाओ को निरन्तरता के क्रम में प्रस्तुत करता है जिससे छात्रों के दिमाग मे निरन्तरता बनी रहती है। "

6. सम्मिश्रण उपागम (**Fusion Approach**) :– इस उपागम के अन्तर्गत कम समय में अधिक ज्ञान देने के लिए समान प्रकृति वाले विषयों की उपयोगी विषयवस्तु को सम्मिश्रण द्वारा एक नए अध्ययन विषयके रूप में संगठित कर दिया जाता है। सामाजिक अध्ययन विषयका अस्तित्व इसी उपागम के अनुसरण का परिणाम हैं जिससे विद्यालय स्तर के विषय इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र विषय मुख्य सामग्रियों को लेकर सामाजिक अध्ययन विषय प्रस्तुत किया गया।

7. चक्राकार उपागम (**spiral Approach**):– इस उपागम का प्रतिपादन मनोवैज्ञानिक ब्रूनर ने किया जिसके अनुसार विषय की अध्ययन सामग्री को इस प्रकार संगठित किया जाता है कि निम्न कक्षाओं से उच्च कक्षाओं की ओर बढ़तें हुए अध्ययन सामग्री की भी जटिलता बढ़ती जाती है और छात्र मानसिक परिपक्वता के बढ़ते हुए क्रम में अध्ययन सामग्री की बढ़ती हुई जटिलताओं को सीखता चला जाता है।

बोध प्रश्न–4 :

सामाजिक अध्ययन की पाठ्य सामग्री के संगठन हेतु प्रयोग में लाने जाने वाले किन्ही दो उपागमों का वर्णन कीजिए।

3.4 सामाजिक अध्ययन शिक्षण के लक्ष्य तथा उद्देश्य

शिक्षा में लक्ष्य तथा उद्देश्य का अत्यन्त महत्व है। शिक्षा में लक्ष्य मार्गनिर्देशन करते हैं। ये सम्भावित उपलब्धि के ध्येय होते हैं। इस सन्दर्भ में वैस्ले तथा वारनेस्की का कथन ध्यातव्य है कि "लक्ष्यों का कार्य रास्ता बताना, आदर्श निश्चित करना तथा समस्या प्रस्तुत करना है।" इस प्रकार लक्ष्य वे प्राप्ति योग्य अन्तिम बिन्दु हैं, जिनकी ओर व्यक्ति अपनी क्रियाओं तथा प्रयासों को निर्देशित करता है। वास्तव में लक्ष्य का आशय अन्तिम परिणाम से है।

शिक्षा की सम्पूर्ण व्यवस्था में उद्देश्य का केन्द्रीय महत्व है। उद्देश्य से शिक्षा को उचित दिशा में बढ़ने में मदद मिलती है। उद्देश्य एक प्रकार से पथ प्रदर्शक होते हैं जिससे शिक्षा के नियोजन, संचालन तथा मूल्याकंन में मदद मिलती है। यदि उद्देश्य निश्चित हों तो कार्य को सही ढ़ग से गति मिलती है जिससे वांछित परिणाम हस्तगत होते हैं। प्रायः लोग उद्देश्य तथा लक्ष्य को एक दूसरे का पर्यायवाची मानते हैं जबकि वस्तु स्थिति यह है कि दोनों में पर्याप्त भिन्नता है।

3.4.1 लक्ष्य तथा उद्देश्य में विभिन्न आधारों पर भिन्नता

	आधार	लक्ष्य	उद्देश्य
1.	अर्थ	लक्ष्य एक प्रकार से साध्य होता है जो किसी भी क्रिया को दिशा निर्देशित करते हुए व्यवहार को अभिप्रेरित करता है।	उद्देश्य, निर्देशन के पश्चात छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तन से सम्बन्धित कथन होते हैं।
2.	प्रकृति	लक्ष्य सामान्य, आदर्शवादी, सैद्वान्तिक, विषय प्रधान, व्यापक तथा विस्तृत होते हैं। लक्ष्य का मापन नही किया जा सकता अथवा इनका मापन करना कठिन है।	उद्देश्य विशिष्ट, व्यावहारिक, वस्तुनिष्ठ तथा सीमित होते हैं जिनका मापन किया जा सकता है।
3.	प्राप्ति	लक्ष्य की प्राप्ति दीर्घ काल में होती है। कभी –कभी इन्हें नही भी प्राप्त किया जा सकता है।	उद्देश्य समय के अल्प अन्तराल में ही प्राप्त किया जा सकता है।
4.	सम्बन्ध	लक्ष्य का सम्बन्ध शिक्षा तथा विषय से होता है।	जबकि उद्देश्य का सम्बन्ध शिक्षण या निर्देशन से होता है।
5.	स्त्रोत	लक्ष्य दार्शनिक होते हैं इसलिए इनका मुख्य स्त्रोत दर्शन है।	उद्देश्य मनोवैज्ञानिक होते हैं इसलिए इनका स्त्रोत मनोविज्ञान है।
6.	साध्य –साधन	लक्ष्य साध्य अथवा मंजिल होते हैं जहां तक पहुंचने की किसी से आशा	उद्देश्य उस साध्य अथवा मंजिल तक पहुंचने का

		की जाती है।	साधन है।
7.	क्षेत्र	लक्ष्य का क्षेत्र व्यापक तथा असीमित होता है।	उद्देश्य सीमित होता है।
8.	प्राप्ति का उत्तरदायित्व	लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सम्पूर्ण विद्यालय–कार्यक्रम, समाज तथा राष्ट्र उत्तरदायी होता है।	इनकी प्राप्ति का दायित्व शिक्षक तथा पाठ विषेश की विषय वस्तु पर होता है।
9.	छात्रों के सन्दर्भ में	यह छात्रों को स्पष्ट शिक्षा निर्देश प्रदान नही करता हैं	यह छात्रों को निश्चित एवं स्पष्ट निर्देश प्रदान करता है।

दोनों में व्याप्त अन्तरों के आधार पर हम कह सकते हैं कि लक्ष्य एक व्यापक सम्प्रत्यय है। जबकि उद्देश्य, लक्ष्य का उपांग है। लक्ष्य से ही उद्देश्य पूर्णता की प्राप्ति करता है। उद्देश्य साधन है तो लक्ष्य साध्य । जब हम किसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कार्य करते हैं तो उसके लिए हमें जिन छोटी –छोटी बातों को ध्यान में रखना पड़ता है उसे उद्देश्य कहते हैं। इसे हम निम्नाकिंत उदाहरण के माध्यम से भी समझ सकते हैं कि यदि किसी व्यक्ति को हिन्दी साहित्य का विद्वान बनना है तो इस लक्ष्य की प्राप्ति वह अचानक अथवा एक दिन में नही कर लेगा। इसके लिए उसे लक्ष्य से सम्बन्धित छोटे –छोटे उद्देश्यों की पूर्ति करना होगा जैसे – हिन्दी साहित्य का ज्ञान, साहित्य की विभिन्न विधाओं जैसे गद्य, पद्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, संस्मरण, रिपोतार्ज, डायरी, शब्द चित्र, आत्मकथा आदि के बारे में विशद् एवं व्यापक ज्ञान, कवि, लेखक, निबन्धकार, कहानीकार के व्यक्तित्व, उनकी रचना शैली, काव्यगत सौन्दर्य, रस, छन्द, अलंकार, दोहा, सोरठा, चौपाई व्याकरण तथा अन्य बातों का ज्ञान प्राप्त करना होगा, जो हिन्दी साहित्य से जुड़ी हुई हो। और इन उद्देश्यों की पूर्ति करते –करते ही वह व्यक्ति अपने लक्ष्य अर्थात हिन्दी साहित्य में विद्वता प्राप्त कर सफल हो जाता हैं। इस प्रकार लक्ष्य प्राप्ति हेतु मार्ग में आने वाली समस्त छोटी –छोटी बातें, जो उद्देश्य के रूप में होती है, के प्राप्ति के साथ ही लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव होती है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 5: लक्ष्य तथा उद्देश्यों में प्रकृति तथा सम्बन्ध के आधार पर अन्तर लिखिए।

3.4.2 सामाजिक अध्ययन शिक्षण के सामान्य उद्देश्य

- छात्रों में उत्तम नागरिकता का विकास करना ।
- सामाजिक शिक्षा द्वारा, उत्तरदायित्व की भावना विकसित करके, तथा मानवीय सम्बन्धों की जानकारी कराकर छात्रों के सामाजिक चरित्र का विकास करना

- छात्रों ऐसी कुशलताओं तथा निपुणताओं का विकास करना जो उसके सामजिक जीवन में प्रभावकारी भूमिकाओं का निर्वाह करे।
- छात्रों को उनकी सामाजिक विरासत तथा समस्याओं का ज्ञान कराना।
- छात्रों को वर्तमान की विभिन्न समस्याओं की जानकारी प्रदान कर उनमें वांछित वृत्तियों और कौशलों का विकास करना।
- छात्रों में राष्ट्रीय समाकलन तथा अर्न्तराष्ट्रीय सदभावना का विकास करना।
- छात्रों में उचित अभिवृद्वि एवं मूल्यों का विकास करना।
- छात्रों मे स्वस्थ एवं अच्छी आदतों का विकास करना।
- छात्रों में आध्यात्मिक तथा नैतिक चरित्र का विकास करना।
- छात्रों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति का विकास करना।
- छात्रों को अपने अवकाश काल का सदुपयोग करने के योग्य बनाना।
- छात्रों में व्यापक दृष्टिकोण, क्रियाशीलता, सहिष्णुता, दूसरों के प्रति आदर भाव तथा सराहना की प्रवृत्ति का विकास करना।

3.4.3 शैक्षिक उद्देश्य

प्रसिद्व विद्वान डी० के० व्हीलर ने पाठ्यक्रम संरचना के पाँच प्रमुख पद बताए हैं :–

• शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण (Formulation of educational objectives)

• निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु उपयुक्त अधिगम –अनुभवों का चयन (Selection of appropriate learning experiences to achieve the objectives)

• अधिगम अनुभवों को प्रस्तुत करने के लिए उपयुक्त अर्न्तवस्तु का चयन (Selection of suitable content to present the learning experiences)

• अध्ययन –अध्यापन प्रक्रिया की दृश्टि से चयनित अधिगम अनुभवों एवं अर्न्तवस्तु का संगठन (Organization of selected learning experiences and content in view of teaching process)

• सम्पूर्ण प्रकिया का उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से मूल्याकंन

उपरोक्त सोपानों को हम निम्नलिखित वृत्ताकार चित्र के माध्यम से भी समझ सकते हैं:–

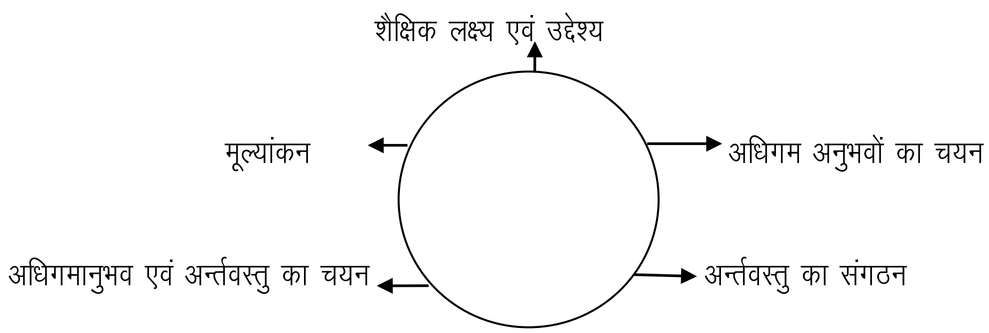

रेखाचित्र – 3.4.3.1

उपयफ्रक्त वृत्ताकार चित्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि शैक्षिक लक्ष्य एवं उद्देश्य ही शिक्षा प्रणाली की सम्पूर्ण रूपरेखा विकसित करने में दिशा प्रदान करते हैं तथा राष्ट्र की शैक्षिक, सामाजिक तथा आर्थिक नीतियों का

प्रतिनिधित्व करते हैं। वास्तव में प्रत्येक देश द्वारा शिक्षा को प्रभावपूर्ण तथा अर्थपूर्ण बनाने हेतु शैक्षिक उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं तथा शिक्षण संस्थाओ द्वारा उन्हे प्राप्त किया जाता है।

3.4.4 शैक्षिक उद्देश्यों के प्रकार :–

मूलतः शैक्षिक उद्देश्यों को हम दो भागों में विभक्त कर सकते हैं :–

1.सामान्य उद्देश्य

2.विशिष्ट उद्देश्य

1. सामान्य उद्देश्य : – ऐसे उद्देश्य, जो व्यापक तथा स्थूल प्रकृति के होते हैं तथा पाठ्यक्रम विकास के लिए दिशा–निर्देश निर्धारित करते हैं, सामान्य उद्देश्य कहलाते हैं। ऐसे उद्देश्य सम्पूर्ण समाज अथवा देश के लिए सार्थक हो सकते हैं। ऐसे उद्देश्य के कथन का मुख्य लक्ष्य शैक्षिक प्रणाली को आधार प्रदान करना होता हैं।

2. विशिष्ट उद्देश्य :–सामान्य उद्देश्यों के साथ–साथ विद्यालयी, विषयगत, कक्षागत, इकाईगत तथा पाठगत उद्देश्यों के भी निर्धारण की आवश्यकता होती हैं जो सीमित परन्तु स्पष्ट एवं निश्चित होते हैं तथा जो छात्रों के अपेक्षित व्यवहार को प्रदर्शित करता है विशिष्ट उद्देश्य कहलाते हैं। विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति को हम एक इकाई अथवा प्रकरण के अधिगम के पश्चात, छात्रों के व्यवहार परिवर्तन के रूप में देख सकते हैं। विशिष्ट उद्देश्य सामाजिक जीवन की प्रमुख स्थितियों एवं उनका समाधान करने के लिए आयोजित की गई क्रियाओं की सूचियों के रूप में होते हैं। परन्तु स्मरण रहे कि ये शैक्षिक प्रक्रिया में तब तक उपयोगी सिद्व नही होते, जब तक कि इन्हे क्रियात्मक न बनाया जाए। विशिष्ट उद्देश्य के लिए क्रियात्मक परिभाषाएं निर्धारित की जाती हैं तथा उपयुक्त परिस्थितियों में छात्र द्वारा प्रदर्शित व्यवहार के सम्बन्ध में कथन तैयार करने होते हैं।

अन्य वर्गीकरण – व्यापकता एवं शिक्षण के दृष्टिकोण से भी उद्देश्य के दो प्रकार होते हैं –

1.शैक्षिक उद्देश्य (Educational objective)

2.शिक्षण उद्देश्य (Teaching objective)

शैक्षिक उद्देश्य अधिक व्यापक होते हैं जो शिक्षण संस्थाओं के सम्बन्ध मे प्रयुक्त होते है। जबकि शिक्षण उद्देश्य संकुचित होते हैं जिनका सम्बन्ध कक्षा –शिक्षण के समस्त विषयों से होता है। इन दोनों सम्प्रत्यय को तुलनात्मक ढ़ंग से हम अग्रांकित तालिका के माध्यम से भली भांति समझ सकते हैं :–

3.4.5 शैक्षिक उद्देश्य तथा शिक्षण उद्देश्य में अन्तरः–

	शैक्षिक उद्देश्य	शिक्षण उद्देश्य
1	शैक्षिक उद्देश्य व्यापक होते हैं। इन्हे सामान्य उद्देश्य कहते हैं।	शिक्षण उद्देश्य संकुचित होते हैं। इन्हें विशिष्ट उद्देश्य कहते हैं।
2	शैक्षिक उद्देश्यों के निर्धारण का आधार दार्शनिक होता है।	शिक्षण उद्देश्यों के निर्धारण का आधार मनोविज्ञान होता है।
3	शैक्षिक उद्देश्य एक सामान्य कथन है।	शिक्षण उद्देश्य एक विशिष्ट कथन है।

4	शैक्षिक उद्देश्य का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक होता है।	शिक्षण उद्देश्य का क्षेत्र सीमित होता है।
5	समस्त शिक्षण संस्थाओं में विषयों के शैक्षिक उद्देश्य एक समान होते हैं।	प्रत्येक शिक्षण संस्था में विषय के अपने विशिष्ट शिक्षण के उद्देश्य होते हैं।
6	शैक्षिक उद्देश्य में शिक्षण उद्देश्य समाहित होते हैं।	शिक्षण उद्देश्य, शैक्षिक उद्देश्य के किसी अंग का निर्धारण करते हैं।
7	शैक्षिक उद्देश्य की प्राप्ति का उत्तरदायित्व विद्यालय समाज तथा राष्ट्र सभी का है।	शिक्षण उद्देश्य की प्राप्ति का उत्तरदायित्व शिक्षक तथा पाठ्यक्रम के ऊपर होता है।
8	इसमें आदर्शवादिता होती है। इसे पूर्ण रूप से प्राप्त करना कभी–कभी सम्भव नही हो पाता।	इसमें व्यावहारिकता होती है शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव होती है।
9	ये कक्षा–कक्ष की रणनीतियां निर्धारित करने में सहायक नही होते।	शिक्षण उद्देश्य कक्षा–कक्ष की रणनीतियों के निर्धारण में सहायता प्रदान करते हैं।
10	शैक्षिक उद्देश्य अधिगमकर्ता को स्पष्ट शिक्षा निर्देश नही प्रदान करता है।	शिक्षण उद्देश्य अधिगमकर्ता को निश्चित तथा स्पष्ट निर्देश प्रदान करता है।
11	इसकी प्राप्ति में समय की अधिकता तथा उद्देश्य प्राप्ति की अनिश्चितता रहती है। क्योंकि यह जरूरी नही हैं कि शैक्षिक उद्देश्य प्राप्त हो ही जाए। ये प्राप्त हो सकते हैं और नही भी हो सकते हैं।	इसकी प्राप्ति में कम समय तथा उद्देश्य प्राप्ति की निश्चितता रहती है।

वास्तव में शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति शिक्षण उद्देश्यों के द्वारा ही की जाती हैं। एक लम्बी अवधि तक शिक्षण में सतत प्रयत्नशील रहने के बाद ही शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव होती है।

3.4.6 शिक्षण का व्यवहारगत परिवर्तन की दृष्टि से विभाजन

शिक्षण उद्देश्यों के निर्धारण का विधिवत प्रयास उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में हरबर्ट स्पेन्सर ने किया जिन्होनें "पूर्ण जीवन की शिक्षा" के उद्देश्यों को पांच वर्गो में रखा –

1.आत्म सुरक्षा
2.जीवन की आवश्यकताएं
3.वंशवृद्धि तथा शिशु रक्षा
4.सामाजिक एवं राजनैतिक कार्य
5.अवकाश काल का सदुपयोग

इसके पश्चात् 1918 ई० में अमेरिका के प्रसिद्ध शैक्षिक संगठन "नेशनल एजुकेशन एसोसिएशन" (N.E.A) द्वारा शिक्षण के सात उद्देश्य, तथा वैज्ञानिक आन्दोलन के अर्न्तगत बोबिट द्वारा मानवीय अनुभव के व्यापक क्षेत्रों का क्रिया आधारित विश्लेशण करके दस शैक्षिक उद्देश्य निर्धारित किए गए। इसके पश्चात प्रयोजनवादी दर्शन के समर्थक जॉन डी० वी० ने तो इस सन्दर्भ में कहा कि शिक्षा प्रक्रिया का स्वयं के अतिरिक्त कोई दूसरा लक्ष्य नही हो सकता। इस प्रकार शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण के लिए अनेको प्रतिमान विकसित किए गए। परन्तु उन सबमें बी० एस० ब्लूम तथा उनके सहयोगियों द्वारा विकसित प्रतिमान सबसे अधिक उपयुक्त एवं ग्राह्य है। जिसे "ब्लूम्स टैक्सोनॉमी ऑफ एजूकेशनल आवजेक्टिब्स " का नाम दिया गया ।

ब्लूम तथा उनके सहयोगियों द्वारा शिक्षण उद्देश्यों का वर्गीकरण : –

इस वर्गीकरण के विकास का मुख्य आधार जीवन के तीन पक्ष ज्ञान, भावना तथा कर्म है जिन्हें क्रमशः ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक क्षेत्रों की संज्ञा प्रदान की गई। ब्लूम तथा उसके सहयोगियों ने शिकांगो

विश्वविद्यालय में तीनों क्षेंत्रों के उद्देश्य पर व्यापक कार्य किए। 1956 मे ब्लूम ने ज्ञानात्मक पक्ष का, 1964 में ब्लूम, क्रयवाल तथा मसीआ ने भावात्मक पक्ष का तथा 1969 में सिम्पसन ने क्रियात्मक पक्ष का वर्गीकरण प्रस्तुत किया। उनका यह वर्गीकरण आधुनिकतम मनोवैज्ञानिक खोजों पर आधारित है। इन तीनो पक्षों में पारस्पारिक सहसम्बन्ध तथा सहनिर्भरता है जिसका रेखाचित्र तथा विस्तृत विवरण अग्रांकित पंक्तियों में वर्णित है :–

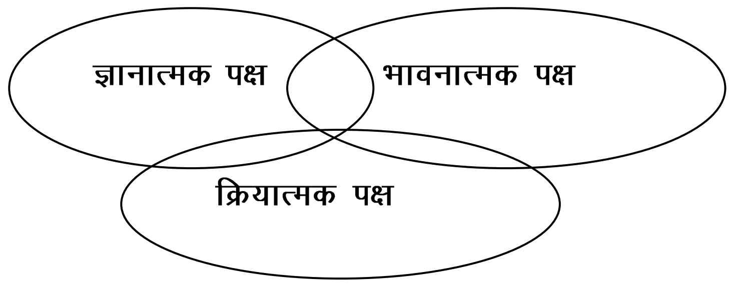

<u>रेखाचित्र.3.4.6.1</u>

3.4.6.1 ज्ञानात्मक पक्ष : वर्णन एवं वर्गीकरण (**Cognitive Domain: Description and Classificaiton**)

ज्ञानात्मक क्षेत्र के अर्न्तगत बौद्विक पक्ष आता है जिसका शैक्षिक दृष्टि से भी सर्वाधिक महत्व है। ज्ञान उन विचारों या तथ्यों का प्रत्यास्मरण या पुनः परिचय हैं जिसे छात्र पूर्व में पढ़ चुका है। ज्ञान प्राप्त करना सोचने, समझने, विचारने तथा समस्याओं के समाधान के लिए अत्यन्त उपयोगी होता हैं। छात्र जितना अधिक ज्ञानार्जन करेगा, वह उतना ही अधिक संसार की वास्तविकताओं से परिचित होगा। 1960 से अवधारणात्मक उपागम (Conceptual Approach)s को सामाजिक ज्ञान की शिक्षा में महत्व दिया जाने लगा । ज्ञान वर्धन के क्षेत्र में तथ्य, नाम, तिथि, घटना के प्रत्यास्मरण के साथ–साथ अवधारणा तथा सामान्य अनुमान की समझ छात्रों में उत्पन्न करना न्यायोचित ठहराया गया । विद्यालय में बालक क्या, क्यों, कब, कैसे, किसलिए तथा किस प्रकार ज्ञानार्जन करता है, इसे संज्ञान में लेना अति आवश्यक है। इस दृष्टि से ब्लूम ने ज्ञानात्मक क्षेत्र में समाहित समस्त प्रक्रियाओं को 6 वर्गो में विभक्त किया : –

1. <u>ज्ञान (Knowlegde)</u> :– ज्ञान, स्मरण नामक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया पर आधारित है। इसमें परम्पराओ, वर्गीकरण मानदण्डों, नियमों तथा सिद्वान्तों के प्रत्यास्मरण तथा अभिज्ञान के लिए परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती है और प्रत्यास्मरण तथा प्रत्यभिज्ञान की क्रियाओं को तथ्यों, नियमों, सिद्वान्तों, सूचनाओं, नमूनों प्रक्रियाओं आदि की सहायता से विकसित किया जाता है।

2. <u>अवबोध (Understanding, Comprehension)</u> :– अवबोध के लिए ज्ञान का होना आवश्यक होता है। इसके अर्न्तगत जिस पाठ का ज्ञान प्राप्त किया जाता है उसे अपने शब्दों में अनुवाद करना, व्याख्या करना तथा उल्लेख करने का कार्य आता है।

3. <u>अनुप्रयोग (Application)</u> :– इस उद्देश्य के लिए ज्ञान एवं अवबोध का होना अनिवार्य है तभी छात्र अनुप्रयोग स्तर की क्रियाओं में समर्थ हो सकते हैं। इसके अर्न्तगत अमूर्त संकल्पनाओं को मूर्त स्थितियों में प्रयुक्त करने तथा इस प्रकार की समस्याओं के समाधान पर पहुँचने की योग्यता सम्मिलित होती है।

4. <u>विश्लेषण (Analysis)</u> : – विश्लेषण के लिए ज्ञान, अवबोध तथा अनुप्रयोग उद्देश्यों की प्राप्ति अनिवार्य होती है जिसके अर्न्तगत प्राप्त सूचना को स्पष्ट रूप से समझने के लिए उसके निर्माणकारी तत्वों मे बाँटा जाता है। चूंकि इसमे पाठ्यवस्तु के तत्वों को अलग–अलग करके

उनमें सम्बन्ध स्थापित करना होता है इसलिए विश्लेषण उपयफ्रक्त तीनों उद्देश्यों की तुलना में उच्च स्तर का उद्देश्य होता हैं।

5. संश्लेषण (Synthesi) :– संश्लेषण भी उच्च स्तर का उद्देश्य है क्योंकि इसमें विभिन्न तत्वों तथा अंगो को एक साथ जोड़कर एक नवीन रूप में व्यवस्थित किया जाता है। संश्लेषण को सृजनात्मक उद्देश्य भी कहा जाता है क्योंकि इसमे छात्रों को अनेक स्रोत्रों से तत्वों को निकालकर उसे पुनः विभिन्न तत्वों को मिलाकर एक नवीन ढ़ाँचा तैयार करना होता है जिससे उसकी सृजनात्मक शक्तियों का विकास हो सके।

6. मूल्याकंन (Evaluation) : – इसके अर्न्तगत पाठ्यवस्तु के नियमों, सिद्वान्तों तथा तथ्यों के सम्बन्ध में आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाता है। इसे ज्ञानात्मक पक्ष का अन्तिम तथा सर्वोच्च उद्देश्य माना जाता है। मूल्यांकन को नियमों, तथ्यों, प्रत्ययों तथा सिद्वान्तों की कसौटी का स्तर माना जाता है।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से ब्लूम के ज्ञानात्मक उद्देश्य तथा उनके क्रिया पद/प्राप्य उद्देश्य को हम अग्रांकित तालिका में देख सकते हैं :–

ज्ञानात्मक पक्ष से सम्बन्धित कार्यपरक क्रियाओं की सूची

(List of associated action verbs for the cognitive domain)

दिशा (**Direction**)	ब्लूम के वर्गीकरण पर आधारित ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्य(Objective of cognitive domain based on Bloom's taxonomy)	सम्बन्धित कार्य परक क्रियाएँ (Associated Action verb)
निम्न स्तर (lower level)	1.ज्ञान (Knowledge)	परिभाषित करना (Define), सूचीबद्व करना (listing),लेबल लगाना (labeling), लिखना (write), रेखांकित करना (underline), मापन करना (Measure), नाम देना (Name), पुनः उत्पादन करना (Reproduction), प्रत्यास्मरण (Recall),प्रत्यभिज्ञान (Recognition), कथन देना (State), चुनना (Select), चिपकाना (Stick)
निम्न'स्तर (lower level)	2.अवबोध (understanding)	वर्गीकरण करना (Classify) बदलना (Change), व्याख्या करना (Explain), भेद करना (Distinguish), प्रतिपादन करना (Formulate), उदाहरण देना (Illustrate), पहचानना (Identify) अर्थापन करना (Interpret), संकेत करना (Indicate), निर्णय लेना (judge), न्याय करना (Justify), नामदेना (Name), प्रतिनिधित्व करना (Represent), सारांश देना (Summarize), चयनकरना (Select), अनुवाद करना

		(Translate),रूपांतर करना (Summarize)
मध्यम–स्तर (Medium level)	3. अनुप्रयोग (Application)	चुनना (Choose), बदलना (Change), जाँच करना (Assess), निर्माण करना (construct),संचालित करना (conduct), गणना करना (compute), खोज करना (Discover), प्रदर्शित करना (Demonstrate), स्थापित करना (Establish), व्याख्या करना (Explain), उत्पन्न करना (generate), पाना (Find), उदाहरण देना (Illustrate), पूर्व कथन देना (Predict), संशोधित करना (Modify), चयन करना (Select) परिपालन करना (Perfrom), समाधानकरना (Solve), उपयोग करना (use)
मध्यम–स्तर (Medium level)	4. विश्लेषण (Analysis)	सम्बन्धित करना (Associate), निष्कर्ष निकालना (Conclude), तुलना करना (Compare), अंतर बताना (Contrast), विभेद करना (Differentiate), आलोचना करना (Criticise), अलग करना (separate), पहचानना (Identify), चयनकरना (Select), निर्णय लेना (Resolve), इंगित करना (Point out), पुष्टि करना (Justify),
उच्च–स्तर (High level)	5.संश्लेषण (Synthesis)	मिलाना (Combine), सिद्व करना (Prove), चुनना (Choose), तक्र करना (Argue), निष्कर्श देना (Conclude), वाद–विवाद करना (Discussion), सम्बन्धित करना (Relate), समन्वित करना (Integrate), सामान्यीकरण करना (Generalize), संक्षिप्त करना (Precise), संगठित करना (Organise), सारांश देना (Summarize), संश्लेषित करना (Synthesize), पुनः कथन देना (Re.state)
उच्च–स्तर (High level)	6.मूल्याकंन (Evaluation)	निर्णय लेना (Judge), समर्थन करना (Support), मूल्याकंन करना (Evaluate), बचाव करना (Defend), निश्चित करना (Determine), चुनना (Choose), आलोचना करना (Criticise), सम्बन्धित करना (Associate), तुलना करना (Compare), निष्कर्ष देना (Conclude), पहचानना (Identify), सम्बन्ध स्थापित करना (relate), जाँच करना (Verify)

बोध प्रश्न

प्रश्न 6:–ब्लूम के वर्गीकरण पर आधारित ज्ञानात्मक पक्ष के कौन –कौन से उद्देश्य है ?

....

....

....

3.4.6.2 भावात्मक पक्ष : वर्णन एवं वर्गीकरण (Affective domain: discription and classification)

चूंकि व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन पर उसकी भावनाओं का सर्वाधिक प्रबल प्रभाव पड़ता है इसलिए पाठ्यक्रम में भावनात्मक समायोजन एवं उसके नियन्त्रण को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाना चाहिए जो उसके व्यक्तित्व के विकास तथा मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से विशेष महत्व रखते हैं। ब्लूम, क्रथवाल तथा मसीआ ने प्रस्तुत वर्गीकरण में भावनात्मक पक्ष के उद्देश्यों को पाँच वर्गो में विभाजित किया है :–

1. आग्रहण या प्राप्ति (Receiving) :– यह भावनात्मक पक्ष का निम्नतम अर्थात प्रारम्भिक वर्ग है इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए छात्रको किसी घटना या उद्दीपन के प्रति संवदेनशील होना आवश्यक है।

2. अनुक्रिया (Responding) – इसके अन्तर्गत अभिप्रेरणा एवं अवधान में अधिक सक्रियता एवं नियमितता की अपेक्षा की जाती है। इसमें सर्वप्रथम छात्र सक्रिय होकर भाग लेता है। उसमें अनुक्रिया करने की भावना उत्पन्न होती है और इस अनुक्रिया को करने से उसमें सन्तोष उत्पन्न होता हैं और वह ज्ञान प्राप्त करता है। व्यावहारिक दृष्टि से इसे अभिरूचि भी कहा जाता है।

3. अनुमूल्यन (Valuing) –इसके अन्तर्गत व्यवहार की वह अभिप्रेरणा आती है जो छात्र की किसी मूल्य के प्रति प्रतिबद्वता पर आधारित होता है। इसमें सर्वप्रथम छात्र मानव मूल्यों को आत्म सात करता है, फिर उसके लिए कार्य करता है और उन मूल्यों के प्रति वह दृढ़ संकल्पित होता है। व्यावहारिक दृष्टि से उसे अभिवृत्ति भी कहा जा सकता है।

4. व्यवस्थापन (Organising) –भावनात्मक पक्ष का यह उद्देश्य उच्च स्तरीय होता है। भावनात्मक विकास के इस स्तर पर ऐसे मूल्यों पर विचार किया जाता है जिनमें व्यक्ति की आस्था होती है और ऐसे ही मूल्यों को व्यवस्थित किया जाता है। मूल्यों के इस व्यवस्थित रूप को ही व्यवस्थापन कहा जाता है।

5. चरित्र वर्णन या चरित्रीकरण (Characterization) – भावनात्मक क्षेत्र का यह सर्वोच्च तथा अन्तिम उद्देश्य होता है। जब कोई व्यक्ति कुछ मूल्यों अथवा अभिवृत्ति के अनुसार निरन्तर व्यवहार करता है और अन्ततः ऐसे स्तर पर पहुँच जाता है जिसे उसका जीवन दर्शन कहा जाता है।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से भावनात्मक उद्देश्य तथा उनके क्रियापद/प्राप्य उद्देश्य को हम निम्नलिखित तालिका में देख सकतें हैं। :–

भावनात्मक पक्ष से सम्बन्धित कार्यपरक क्रियाओं की सूची : –

(List of associated action verbs for the affective domain)

ब्लूम के वर्गीकरण पर आधारित भावनात्मक पक्ष के उद्देश्य (Objective of affective domain based in Bloom's taxonomy)	सम्बन्धित कार्यपरक क्रियाएँ (Associated action verb)

1.आग्रहण (Receiving)	पूछना (Ask), ध्यान देना (Attend), स्वीकार करना (Accept), पकड़ना (Catch), खोजना (Discover), सावधान होना (Beware), पक्ष लेना (Favour), पहचानना (Identify), निरीक्षण करना (Observe), अनुसरण करना (Follow), प्रत्यक्षीकरण करना (Perceive), वरीयता देना (Prefer), आग्रह करना (Receive), चयन करना (Select), नाम देना (Name),
2.अनुक्रिया (Responding)	लिखना (write), उत्तर देना (Answer), कथन करना (State), मदद करना (Assist), चयन करना Select), पूरा करना (Complete), आलेखन बनाना (Record), निकालना (Derive), अभ्यास करना (Practise), वाद–विवाद करना (Discussion), विकसित करना (Develop), उपस्थित करना (Present), आज्ञा का पालन करना (Obey), नाम देना (Name), सूची देना (List), लेबल देना (Lable), सहायता करना (Help),
3.अनुमूल्यन (Valuing)	Prefer (वरीयता देना), भाग लेना (Participate), संकेत करना (Indicate), वृद्धि करना (Increse), विकसित करना (Develop), विभेद करना (Discriminate), प्रर्दशन करना (Demonstration), पहचानना (Recognise)
4.व्यवस्थापन (Organising)	जोड़ना (Add), परिवर्तित करना (Change), सम्बन्धित करना (Associated), पूरा करना (Complete), तुलना करना (Campare), सहसम्बन्ध स्थापित करना (Correlate), समन्वय करना (Coordinate), पाना (Find), सामान्यीकरण करना (generalize), बनाना (Form), निर्णय करना (Judge), समन्वित करना (Integrate), योजना बनाना (Project) वरीयता देना (Prefer) चयन करना (Select), सम्बन्ध स्थापित करना (Relate), संश्लेषित करना (Synthesize), व्यवस्थित करना (Organise),
5.चरित्र वर्णन या चरित्रीकरण (Characterization)	बदलना (Change), स्वीकार करना (Accept), चरित्रीकरण (Characterization), विभेद करना (Discriminate), निश्चय करना (Decide), विकसित करना (Develop), सामना करना (Face), प्रयोग करना (Experiment), सिद्व करना (Prove), निर्णय करना (Judge), सेवा करना (Serve), दोहराना (Revise), जाँच करना (Verify), हल करना (Solve),

3.4.6.3 क्रियात्मक पक्ष : वर्णन एवं वर्गीकरण (Psychomoter Domain: discription and classfication)

यह विभिन्न मनोगत्यात्मक कौशलों के विकास से सम्बन्धित होता है। क्रियात्मक उद्देश्यों का सम्बन्ध शारीरिक क्रियाओं के प्रशिक्षण तथा कौशल के विकास से होता हैं। चूंकि कोई भी कौशल नाड़ीतन्त्र तथा माँसपेशियों के समन्वय के बिना सम्भव नही होता इसलिए इसको साइकोमोटर (Mind+Muscle=Psychomotor) पक्ष भी कहते हैं। अभ्यास करते –करते जैसे –जैसे नाड़ी तन्त्र तथा माँसपेशियों के समन्वय का स्तर ऊपर उठता है, कार्य अधिक स्पष्ट, तीव्र, गतिमान तथा स्व–चालित होता जाता है। सामाजिक अध्ययन विषय के सन्दर्भ में यदि देखा जाए तो इस उद्देश्य के प्राप्त होने पर छात्र मानचित्र खीचनें लगता है, रेखाचित्र बनाता है, विभिन्न उपकरणों का प्रयोग करता है, तथा आवश्यकतानुसार मॉडल बनाने लगता है। इस उद्देश्य का सीधा सम्बन्ध औद्योगिक तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण से होता है। ब्लूम के वर्गीकरण में इस क्षेत्र को छह वर्गो में विभाजित किया गया है :–

1.अनुकरण (Imitation)

2.हस्तादि प्रयोग अथवा कार्य करना (Manipulation)

3.नियन्त्रण (Control)

4.सन्धियोग या सामंजस्य (Co.ordination)

5.स्वभावीकरण या नैसर्गीकरण (Naturalization)

6.आदत निर्माण या कौशल (Habit formation)

ब्लूम तथा उनके सहयोगियों द्वारा ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक उद्देश्यों के वर्गीकरण को हम निम्नलिखित तालिका के माध्यम से तुलनात्मक ढ़ंग से भी देख सकते हैं :–

ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Domain)	भावात्मक पक्ष (Affective Domain)	क्रियात्मक पक्ष (Psychomoter Domain)
वर्ग (Category)	वर्ग (Category)	वर्ग (Category)
1.ज्ञान (Knowlegde)	1.आग्रहण या प्राप्ति (Receiving)	1.अनुकरण (Imitation)
2.अवबोध (Understanding)	2.अनुक्रिया (Responding) :	2.हस्तादि प्रयोग अथवा कार्य करना (Manipulation)
3.अनुप्रयोग (Application)	3.अनुमूल्यन (Valuing)	3. नियन्त्रण (Control)
4.विश्लेषण (Analysis)	4.व्यवस्थापन (Organising)	4.सन्धियोग या सामंजस्य (Co. ordination)
5.संश्लेषण (Synthesis)	5.चरित्र वर्णन या लक्षण वर्णन (Characterization)	5.स्वभावीकरण या नैसर्गीकरण (Naturalization)
6.मूल्याकंन (Evaluation)		6.आदत निर्माण या कौशल (Habit formation)

ब्लूम टैक्सोनॉमी के अन्तर्गत उपयफ्रक्त तीनो क्षेत्रों को एक दूसरे से पूर्ण तथा पृथक नही किया जा सकता है। क्योंकि एक क्षेत्र की उपलब्धि का अन्य क्षेत्रों की उपलब्धियों पर काफी अधिक प्रभाव पड़ता है। यद्यपि हमारी कक्षा में (भारतीय परिप्रेक्ष्य में) प्रमुखतः संज्ञानात्मक (cognitive) पक्ष पर बल देकर भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों को अनदेखा किया गया है परन्तु यदि इन तीनों पक्षों में सन्तुलन बनाया जाता है तो छात्रों का निःसन्देह सर्वागींण विकास होगा।क्योंकि व्यक्ति की विकासात्मक अवस्थाओं में विशेषतः बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में बालक के शारीरिक तथा बौद्विक पक्ष में होने वाले परिवर्तनों तथा परिपक्वता का उसके भावात्मक विकास से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। इसके अतिरिक्त यह वर्गीकरण 'सरल से जटिल की ओर' सिद्वान्त पर आधारित होने के कारण बालक को उस स्तर का समुचित ज्ञान प्राप्त करने में अत्यन्त सहायक है जिस पर वह कार्य कर रहा होता है।

3.4.7 उद्देश्यों का व्यवहारपरक शब्दावली में लेखन :–

शैक्षिक उद्देश्यों को निश्चित तथ सुस्पष्ट बनाने हेतु उन्हें व्यावहारिक शब्दावली में लिखना चाहिए जिसमें यह सुनिश्चित करना चाहिए वि अनुदेशन प्रक्रिया से आप छात्र के अन्तिम व्यवहार (Terminal behaviour) में किस अधिगम उपलब्धि की प्राप्ति चाहते हैं। एक प्रभावशाली अनुदेशनात्मक उद्देश्य विशिष्ट होना चाहिए। यही विशिष्ट शब्द जो कि क्रियासूचक होता है, छात्र के अन्तिम व्यवहार को दर्शाता है। ऐसे विशिष्ट उद्देश्य को ही व्यावहारिक उद्देश्य (Behavioural objectives), अनुदेशनात्मक उद्देश्य (Instructional objectives), तथा निष्पादन उद्देश्य (Performance objectives), भी कहते हैं।

केलन एवं क्लाक्र (1990) ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "जो अनुदेशन के पूरा होने के पश्चात छात्र क्या कर सकेगा, का वर्णन करता है वह कथन ही व्यावहारिक उद्देश्य होता हैं। यह अधिगम उपलब्धि है जो अनुदेशन से विकसित होती है। यह अधिगम अन्तिम व्यवहार है जो अनुदेशन के पश्चात छात्रों से अपेक्षित किया जाता है।

परन्तु उपयफ्रक्त वर्णित ब्लूम द्वारा किए गए उद्देश्यों के वर्गीकरण की मुख्य कमी यह है वि इसमें शिक्षण अधिगम उद्देश्यों को छात्रों के अन्तिम व्यवहार के रूप में स्पष्ट नही किया गया है। अर्थात इसमें यह स्पष्ट नही होता है कि शिक्षण कार्य की समाप्ति पर छात्र किस कार्य को करने की योग्यता प्राप्त कर लेगा। उद्देश्यों को व्यवहारपरक शब्दावली में लिखने के लिए मुख्यतया तीन बातों का ध्यान में रखना पड़ता है :–

1.उद्देश्य की प्रकृति, जैसे ज्ञान, बोध, प्रयोग आदि

2.व्यवहार का पक्ष या क्षेत्र, जैसे ज्ञानात्मक, बोधात्मक, क्रियात्मक आदि

3.विषयवस्तु का वह विशिष्ट भाग, जिसके माध्यम से छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन लाने का कार्य किया जाता हैं जैसे –1857 की क्रान्ति, मुगलकालीन स्थापत्य कला आदि।

इन उद्देश्यों को व्यावहारिक शब्दावली में लिखने के लिए कई विधियां या उपागम प्रयोग में लाए जाते हैं जैसे रॉबर्ट मेगर उपागम, रार्बट मिलर उपागम, आर० सी० ई० एम० उपागम आदि। जिनमें मेगर तथा मिलर दोनों ही उपागम असफल रहे हैं। क्योंकि यदि मेगर उपागम ज्ञानात्मक तथा भावात्मक पक्ष के उद्देश्यों से सम्बन्धित है तो मिलर उपागम मनोशारीरिक उद्देश्यों से । इन दोनों उपागम में से कोई एक विधि मानव व्यवहार के सभी पक्षों के उद्देश्यों को व्यवहारपरक शब्दावली में लिखने के उद्देश्य को पूरा नही करती। परन्तु आर० सी० ई० एम० (Regional College of Education, Maesoor) उपागम इस सन्दर्भ में सर्वाधिक सफल रही है। इस उपागम में थोड़े से परिवर्तन के साथ ब्लूम द्वारा दिये गए उद्देश्यों के वर्गीकरण को अपनाया गया और उसे आर० सी० ई० एम० टैक्सोनोमी का नाम दिया। इसमें ब्लूम द्वारा दिए गए ज्ञानात्मक पक्ष के छह वर्गो के स्थान पर चार वर्ग किए गए है और अन्तिम तीन वर्ग विश्लेषण, संश्लेषण तथा मूल्यांकन को समन्वित करके सृजनात्मकता का नाम दिया गया तथा ब्लूम द्वारा दिए गए बोध वर्ग को समझ नाम दे किया गया। तथा अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को व्यवहार परक शब्दावली में लिखने के लिए कार्यपरक क्रिया पदों के स्थान पर मानसिक प्रक्रियाओं या मानसिक योग्यताओं शब्द का प्रयोग किया, जिसे निम्नलिखित तालिका में प्रदर्शित किया गया है : –

3.4.8 आर० सी० ई० एम० उपागम के उद्देश्य व मानसिक प्रक्रियाएँ (Objectives and mental processes in R.C.E.M. Approach)

उद्देश्य (Objectives)	मानसिक प्रक्रियाएँ या मानसिक योग्यताएं (Mental processes or mental abilities)
1. ज्ञान (Knowlegde)	1.पहचान करना (Recognise) 2.प्रत्यास्मरण करना (Recall)
2.समझ (understanding)	1.सम्बन्ध देखना (see relationship) 2.भेद करना (Discriminate) 3.अर्थापन करना (Interpret) 4.उदाहरण देना (Cite Example) 5.वर्गीकरण करना (Classify) 6.पुष्टि करना (Verify) 7.सामान्यीकरण (Generalize)
3.प्रयोग (Application)	1.परिकल्पना का निर्माण करना (Formulate Hypothesis) 2.परिकल्पना स्थापित करना (Establish Hypothesis) 3.कारण बताना (Reason out) 4.निष्कर्श निकालना (Infer) 5.पूर्व कथन करना (Predict)
6.सृजनात्मकता (Creativity)	1.विश्लेषण करना (Analysisद्ध 2.संश्लेषण करना (Synthesis) 3.मूल्याकंन (Evaluation)

उपरोक्त तालिका में वर्णित ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों को 17 मानसिक प्रक्रियाओं या योग्यताओं का प्रयोग करके व्यावहारिक शब्दावली में निम्नलिखित प्रकार से लिखा जा सकता है :–

1.ज्ञान उद्देश्य –

- छात्र ____________ का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
- छात्र ____________ का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।

2.समझ उद्देश्य :–

- छात्र ______ तथा ______ में सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे।
- छात्र ______ तथा______ में भेद कर सकेंगे।
- छात्र ____________ का अर्थापन कर सकेंगे।

- छात्र ____________ का उदाहरण दे सकेंगे।
- छात्र ____________ का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- छात्र ____________ की पुष्टि कर सकेंगे।
- छात्र ____________ का सामान्यीकरण कर सकेंगे।

3.<u>प्रयोग उद्देश्य</u> :–

- छात्र ____________ के बारे में परिकल्पना का निर्माण कर सकेंगे।
- छात्र ____________ के सन्दर्भ में परिकल्पना स्थापित कर सकेंगे।
- छात्र ____________ का कारण बता सकेंगे।
- छात्र ____________ के बारे में निष्कर्श निकाल सकेंगे।
- छात्र ____________ के बारे में पूर्व कथन कर सकेंगे।

4.<u>सृजनात्मक उद्देश्य</u> :–

- छात्र ____________ का विश्लेषण कर सकेंगे।
- छात्र ____________का संश्लेषण का सकेगें।
- छात्र ____________ का मूल्याकंन कर सकेंगे।

उपरोक्त कथनों के रिक्त स्थानो में छात्र द्वारा अर्जित अनुभवों को भरा जायेगा। इसे हम एक प्रकरण के माध्यम से ज्ञानात्मक पक्ष के चार बहुतायत मे प्रयुक्त उद्देश्य –ज्ञान, समझ, प्रयोग तथा सृजनात्मकता को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत कर रहे हैं –

<u>विषय : सामाजिक अध्ययन</u>

<u>प्रकरण : राष्ट्रीय ध्वज</u>

<u>विशिष्ट उद्देश्य</u>	व्यवहार परिवर्तन
<u>ज्ञानात्मक</u>	छात्र राष्ट्रीय ध्वज सम्बन्धी तथ्यों का प्रत्यास्मरण कर सकेगा।
<u>समझ अथवा बोधात्मक</u>	छात्र राष्ट्रीय ध्वज के तीनों रंगो का अर्थापन कर सकेगा।
<u>प्रयोग</u>	छात्र राष्ट्रीय ध्वज चक्र में व्याप्त 24 तीलियों का कारण बता सकेगा।
<u>सृजनात्मकता</u>	छात्र राष्ट्रीय ध्वज रेखाचित्र विभिन्न माध्यमों पर बना सकेगा।

क्रियाकलाप –

ज्ञानात्मक उद्देश्य को व्यावहारिक पदों में लिखिए जिनकी प्राप्ति आप अपने छात्रों में 'भारतीय संस्कृति ' नामक प्रकरण के शिक्षण के माध्यम से करेंगें।

3.5 सारांश

उद्देश्य प्राप्ति की सफलता पाठ्यक्रम के कुशल संरचना पर निर्भर करता है। प्रस्तुत इकाई में इसी सन्दर्भ में चर्चा करते हुए मैने पाठ्यक्रम के सम्प्रत्यय तथा उसके निर्माण के सिद्धान्तों की चर्चा की है। इसके पाठ्यक्रम को हम किस प्रकार उपयोगी बना सकते हैं, इसकी पाठ्य सामग्री का संगठन हम किस प्रकार करें कि हमें वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके, इसका ज्ञान आप प्रस्तुत इकाई के अनुशीलन के पश्चात् अवश्य प्राप्त करेंगे। शिक्षण का एक मात्र उद्देश्य छात्रों को विषय सम्बन्धित सैद्धान्तिक ज्ञान ही देना नही वरन उस ज्ञान की प्राप्ति के साथ उनके व्यावहारिक परिवर्तन को आप किस प्रकार विषय के सन्दर्भ में लिखेंगे, इसका ज्ञान भी आपको आर० सी० ई० एम० उपागम के अनुशीलन से होगा।

3.6 अभ्यास कार्य

1. पाठ्यक्रम के सन्दर्भ में ''माध्यमिक शिक्षा आयोग'' के विचार प्रस्तुत कीजिए।
2. पाठ्यक्रम निर्माण के समय हमें किन –किन बिन्दुओं पर अमल करना चाहिए।
3. आपके दृष्टिकोण से सामाजिक अध्ययन विषय में कौन –कौन सी कमियां व्याप्त है तथा उनके सुधार हेतु अपेक्षित सुझाव दीजिए।
4. उद्देश्य तथा लक्ष्य एक दूसरें से किस प्रकार भिन्न है ?

3.7 चर्चा के बिन्दु

1.सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम आपके व्यक्तित्व के विकास में सहायक है।

2.शैक्षिक उद्देश्य, शिक्षण उद्देश्य से भिन्न है।

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. पाठ्यक्रम शिक्षक के हाथ में एक यन्त्र की भाति होता है " प्रस्तुत कथन महान मनोवैज्ञानिक कनिंघम का है जिसके माध्यम से वो ये कहना चाह रहें हैं कि शिक्षक पाठ्यक्रम के माध्यम से अपने छात्रों को उनकी लक्ष्य प्राप्ति में सहायक होता है।"
2. पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों का अनुसरण करना आवश्यक है जिससे पाठ्यक्रम निर्माण का उद्देश्य सफल हो सके और छात्र अपने–अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके।
3. जब पाठ्यक्रम शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में असफल होता है, उस समय उसमें सुधार की आवश्यकता हो जाती है। सामाजिक अध्ययन विषय का भी पाठ्यक्रम आज अपने उद्देश्य छात्रों में विभिन्न सामाजिक गुणों तथा कौशलो का विकास, लोकतान्त्रिक गुणों का विकास, नेतृत्व की कला का विकास, तथा मनुष्य को उसकी ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक धरोहरों से परिचित कराने में असफल हो रहा है इसीलिये उसके पाठ्यक्रम में व्याप्त न्यूनताओं को दूर कर उसे उपयोगी,

प्रासंगिक तथा व्यावहारिक बनाना अत्यन्त आवश्यक है।

4. सामाजिक अध्ययन की पाठ्य–सामग्री के संगठन हेतु कुल सात प्रकार के उपागम होते हैं जिनका प्रयोग प्रस्तुत विषय के संगठन के दौरान आवश्यकतानुसार किया जाता है।

5. लक्ष्य की प्रकृत्ति सामान्य होती है जबकि उद्देश्य की प्रकृति विशिष्ट। सम्बन्ध के आधार पर यदि दोनो में व्याप्त अन्तर को देखा जाये तो लक्ष्य का सम्बन्ध शिक्षा तथा विषय से होता है जबकि उद्देश्य का सम्बन्ध शिक्षण या निर्देशन से होता है।

6. ब्लूम के वर्गीकरण पर आधरित ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों के अन्तर्गत ज्ञान, अवबोध, अनुप्रयोग विश्लेषण, संश्लेषण, मूल्यांकन आदि आते हैं।

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ –

• Aggarwal, J.C. –Teaching of social studies

• गुप्ता सिया राम –पाठ्यक्रम विकास

’ शरतेन्दु सत्य नारायण दुबे –सामाजिक विज्ञान शिक्षण – अनुभव पब्लिंशिग हाउस, इलाहाबाद

॥ सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.SE-41

सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

खण्ड – 2

सामाजिक अध्ययन शिक्षण की रणनीतियाँ–I

इकाई – 4

सामाजिक अध्ययन शिक्षण का सम्प्रत्यय 81–98

इकाई – 5

किसी सिद्धान्त अथवा योजना की व्याख्या द्वारा अधिगम तथा खोज द्वारा अधिगम 99–114

इकाई – 6

समूह में सामाजिक अध्ययन का अधिगम, समूह कार्य, सहकारी अथवा सहयोगात्मक शिक्षण रणनीति 115–146

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.SE-41 सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह	कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय,

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर छत्रसाल सिंह	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर के० एस० मिश्रा	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर धनन्जय यादव	विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ० जी० के० द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० शक्ति शर्मा	सह आचार्य, बी० एड० विभाग, के० पी० बी० एड० ट्रेनिंग कॉलेज, प्रयागराज

सम्पादक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर विद्या अग्रवाल	पूर्व विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशकः

कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

Year -2023

ISBN: 978-81-963573-0-6

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Social Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0

http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

खण्ड परिचय– 2

द्वितीय खण्ड के अन्तर्गत आप इकाई संख्या 04 "सामाजिक अध्ययन शिक्षण का सम्प्रत्यय"इकाई संख्या 05 "स्पष्टीकरण अथवा व्याख्या तथा खोज द्वारा अधिगम" तथा इकाई संख्या 06 "समूह में सामाजिक अध्ययन का अधिगम, समूह कार्य, सहयोगात्मक अथवा सहकारी शिक्षण" आदि के सन्दर्भ में सविस्तार अध्ययन करेंगे।

इकाई 04 के माध्यम से आप सामाजिक अध्ययन के विभिन्न घटक तथा उनके महत्व को समझ सकेंगे। साथ ही साथ सामाजिक अध्ययन के अध्यापक में कौन – 2 से गुण, विशेषताएँ एवं दक्षताएं अपेक्षित है, इसे भी जान सकेंगे।

इकाई 05 का अध्ययन करने के उपरान्त आप यह जान सकेंगे कि स्पष्टीकरण या व्याख्या तथा खोज के द्वारा हम किस प्रकार अधिगम कर सकते हैं। इन शब्दों को तो दैनिक जीवन में आपने अक्सर सुना होगा। परन्तु इस इकाई के माध्यम से आप उनके स्वरूप से भली भांति परिचित हो सकेंगे।

इकाई 06 आपको उन सामूहिक अधिगम विधियों से परिचित करायेगी जिनके माध्यम से आप सामाजिक विज्ञान अध्ययन के लक्ष्य एवं उद्देश्य को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करते हैं। अर्थात सामाजिक कुशलताओं, लोकतान्त्रिक तथा सामाजिक गुणों का विकास करने में सहायक विभिन्न सामूहिक शिक्षण विधियों से आप प्रस्तुत इकाई के माध्यम से परिचित हो सकेंगे।

इकाई–4 सामाजिक अध्ययन शिक्षण का सम्प्रत्यय

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्‌देश्य

4.3 शिक्षण और अधिगम

4.4 सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

4.5 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इसके विभिन्न घटकों का महत्व

 4.5.1 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इतिहास का महत्व

 4.5.2 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में भूगोल का महत्व

 4.5.3 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में अर्थशास्त्र का महत्व

 4.5.4 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में नागरिक शाास्त्र का महत्व

 4.5.5 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में समाज शास्त्र का महत्व

4.6 सामाजिक अध्ययन के शिक्षक में अपेक्षित गुण तथा योग्यताएं

4.7 सामाजिक अध्ययन की शैक्षणिक निविष्टियाँ

 4.7.1 अध्यापकोन्मुखी शैक्षणिक निविष्टियाँ

 4.7.2 अध्येतोन्मुखी शैक्षणिक निविष्टियाँ

4.8 साराँश

4.9 अभ्यास कार्य

4.10 चर्चा के बिन्दु

4.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.1 प्रस्तावना

शिक्षण अध्यापक तथा छात्र के मध्य की एक महत्वपूर्ण अन्तःक्रिया है जिसके माध्यम से विषय के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है। शिक्षण की काफी सफलता अध्यापक के प्रभावशाली व्यक्तित्व, उसके गुण तथा योग्यताओं, उसकी कार्य नीति, उसकी शिक्षण शैली तथा उसके द्वारा प्रयुक्त विभिन्न विधियों तथा तकनीकी पर निर्भर करती है। सामाजिक अध्ययन शिक्षण के सन्दर्भ में भी यही बात अक्षरशः लागू होती है। सामाजिक अध्ययन का सम्बन्ध छात्र के वास्तविक जीवन अर्थात उसके जीवन की वास्तविकताओं से होता है और विभिन्न शोधों से यह प्रमाणित किया जा चुका है कि छात्र वास्तविक जीवन से जुड़े तथ्यों के अधिगम में अधिक रूचि लेते हैं। इस प्रकार इस विषय के शिक्षण को सफल बनाने में शिक्षक के साथ साथ प्रस्तुत विषय के स्वरूप की भी अहम भूमिका है। प्रस्तुत इकाई में आप सामाजिक अध्ययन के विभिन्न घटकों के महत्व, अध्यापक में वांछित योग्यताएं तथा विभिन्न शैक्षणिक निविष्टियों का अध्ययन करेंगे जो आपको सामाजिक अध्ययन शिक्षण के सम्प्रत्यय को व्यापक रूप से स्पष्ट करने में अवश्य सहायक होगा।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आपः–

- सामाजिक अध्ययन शिक्षण के महत्व को समझ सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इसके विविध घटकों के सम्प्रत्यय का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इसके विभिन्न घटकों का क्या महत्व है, इसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन के अध्यापक में वांछनीय गुणों एवं योग्यताओं की सूची बना सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन की शैक्षणिक निविष्टयों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- अध्यापकोन्मुखी तथा अध्येतोन्मुखी निविष्टियो की तुलना कर सकेंगे।
- समूहोन्मुखी शैक्षणिक निविष्टि छात्रों मे किस प्रकार सामाजिक तथा लोकतान्त्रिक गुणों का विकास करती है, इसका विश्लेषण कर सकेंगे।

4.3 शिक्षण और अधिगम

किसी भी शिक्षा प्रक्रिया के शिक्षण और अधिगम दो महत्वपूर्ण पक्ष होते है। शिक्षण, अधिगम को प्रेरित करने वाली क्रियात्मक प्रणाली है। यह शिक्षक और छात्र के बीच होने वाली अन्तः क्रिया है जो सामाजिक वातावरण में सम्पन्न होती है। शिक्षण का मुख्य उद्देश्य छात्रका सर्वांगीण विकास कर उसके विकास को उन्नत तथा प्रगतिशील बनाना है । यह एक प्रकार की कला तथा अध्यापक एक परिष्कृत कलाकार है जो अपनी दक्षता तथा कुशलता से छात्र की अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करते हुए उसका वांछित दिशा में परिवर्तन तथा परिमार्जन करती है। शिक्षण ही वह माध्यम है जिसकी सहायता से छात्र पाठ्यक्रम में सम्मिलित विभिन्न विषयों का अध्ययन कर सम्बधित विषय के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करता है।

4.4 सामाजिक अध्ययन की शिक्षण

भारत में समाजिक अध्ययन का शिक्षण अभी अपनी प्रयोगवस्था में है। प्रारम्भ में शिक्षण के अन्तर्गत तीन आर (3R) अर्थात लिखना, पढ़ना और गणित को ही प्रमुख स्थान दिया जाता था जिसका उद्देश्य छात्रों को इस योग्य बनाना था कि बड़े होने पर वे अपना जीविको पार्जन कर सकें। कालान्तर में ज्ञान – विज्ञान के विस्तार के साथ–साथ पाठ्यक्रम में विभिन्न विषय सम्मिलित किये गए। परन्तु शिक्षा के सामाजिक उद्देश्य पर विशेष बल नही दिया जाता था। क्योकि व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध सीधे तथा सरल थे। मानवीय सम्बन्धों के स्पष्टीकरण के लिए किसी औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता नही थी। परन्तु कालान्तर में ज्ञान – विज्ञान के विस्फोट ने समाज की सरल प्रकृति को जटिल बना दिया। मानवीय सम्बन्धो में भी जटिलताए आई और इन जटिलताओं ने तमाम सामाजिक समस्याओं को जन्म दिया । परिणाम स्वरुप एक ऐसे विषय की आवश्यकता महसूस हुई जो मानवीय सम्बन्धों को पुनः सरल बना सके, व्यक्ति अपने समाज तथा राष्ट्र, उसके स्वरुप, उसकी प्रगति में अपनी भूमिका तथा अपने दायित्वों को समझ सके, उसमें अपने पर्यावरण से समायोजन करने का कौशल हो, सामाजिक कौशल, निपुणता तथा नेतृत्व की क्षमता हो । इन्ही लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए विद्यालयों में सामाजिक अध्ययन विषय के शिक्षण का प्रावधान प्रस्तुत किया गया जिससे छात्र प्रस्तुत विषय के अध्ययनोपरान्त समाज को सम्पूर्णता के साथ समझते हुए स्वयं में सामाजिक चेतना ला सके। इस विषय में सम्मिलित विषय – वस्तु तथा क्रिया कलापों का शिक्षण छात्रों को इस योग्य बनाता है जिससे छात्रों में समाज के सिद्धान्तो तथा मूल्यों के प्रति समर्पण

का भाव जागृत होता है, जिससे वे समाज को चलाने, उसमें वांछित सुधार लाने तथा उसकी प्रगति एवं उत्थान का मार्ग प्रशस्त करने हेतु स्वतः प्रेरित हो जाते हैं। इसलिए सामाजिक अध्ययन का शिक्षण न केवल समाज तथा राष्ट्र वरन सम्पूर्ण विश्व का प्रगति एवं उत्थान कर हमारे अतीतकालीन आदर्श "वसुधैव कुटुम्बकम " के भाव को साकार करने में सहायक है। उसके शिक्षण के महत्व को हम अग्रांकित पंक्तियों में देख सकते हैं :–

विज्ञान एवं तकनीकी के इस युग में मनुष्य ने हृदय से सम्बन्ध विच्छेद कर बुद्धि से नाता जोड़ लिया है परिणामस्वरुप लोगों के भावात्मक सम्बन्ध धूमिल से प्रतीत होने लगे हैं। इसे हम एक छोटे से उदाहरण के माध्यम से देख सकते हैं – माना की फोन या मोबाइल की उपलब्धता ने मनुष्य की तमाम मुश्किलों को हल कर दिया है आज वह मात्र कुछ सेकेण्ड में ही उसके माध्यम से अपना काम कर सकता है, परन्तु इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि इस फोन या मोबाइल ने व्यक्ति के सामाजिक पक्ष पर भी प्रहार किया है। पहले व्यक्ति आपस में मिलते जुलते थे । इससे उनका सामाजिक तथा भावनात्मक पक्ष प्रबल होता था। जबकि आज वह मोबाइल के ही माध्यम से बात करके अपना काम पूरा कर लेता है। इससे कहीं न कहीं मानवीय सम्बन्धों का भावनात्मक पक्ष उपेक्षित सा हो रहा है। ऐसी स्थिति में इस विषय का शिक्षण व्यक्ति को व्यक्ति के करीब ला कर उनके बीच के भावनात्मक सम्बन्ध को अवश्य प्रबल करेगा।

- सामाजिक अध्ययन की शिक्षा छात्रों के चरित्र निर्माण में सहायक है । इसके माध्यम से छात्रों में ऐसे गुण विकसित किए जाते हैं जो सामाजिक व्यवहार के लिए अपेक्षित होते हैं जैसे – सहयोग की भावना, सहिष्णुता की भावना, सहकारिता की भावना, निष्पक्षता आदि जो शिक्षार्थिया के सामाजिक चरित्र के निर्माण मे सहायक होते हैं।
- सामाजिक अध्ययन की शिक्षा बालक के समक्ष आने वाली विभिन्न चुनौतियों का सफलता पूर्वक सामना करने के योग्य बनाती है।
- यह बालक में सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वहन करने हेतु सामाजिक कुशलता का विकास करती है।
- यह बालक के सामाजीकरण में सहायक होती है।
- इसके माध्यम से छात्रों में लोकतान्त्रिक गुणों का विकास होता है।
- इसकी शिक्षा छात्रों में प्रजातान्त्रिक मूल्यों को विकसित करने में सहायक होती है।
- यह बालकों में अच्छी आदतों तथा धनात्मक अभिवृत्ति के विकास में सहायक है।
- छात्र में वैज्ञानिक चिन्तन, विश्लेषण की क्षमता तथा व्यापक दृष्टिकोण के विकास में यह विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।
- यह अ में राष्ट्रीय एकता तथा भावात्मक एकता के भावों को रोपित करने में सहायक है।
- सामाजिक अध्ययन की शिक्षा अ में संकीर्ण राष्ट्रीयता के भाव को दूर कर उसमें अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव का भी विकास करती है।
- इसकी शिक्षा अ में अपने देश की ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण को तत्पर करती है।
- वे इसके माध्यम से मानव पर्यावरण तथा उसके सम्बन्धों को समझते हैं तथा उनमें समायोजन की क्षमता विकसित होती है।
- सामाजिक अध्ययन की शिक्षा अें को विभिन्न बुराइयों के उन्मूलन हेतु प्रेरित करती है।
- सामाजिक अध्ययन का शिक्षण अ में अपने पर्यावरण से समायोजन की क्षमता ही विकसित नही करता वरन उसे एक समूह के एक सक्रिय सदस्य के रुप में अपने समाज की सामाजिक,

आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक स्थितियों में सुधार करने हेतु भी प्रेरित करता है।

- सामाजिक अध्ययन विषय में सम्मिलित विषय वस्तु तथा क्रियाओं को सीखने के पश्चात् छात्र न केवल मानवीय सम्बन्धों, सामाजिक मूल्यों तथा पर्यावरणीय समस्याओं को समझता है वरन देश के चतुर्दिक विकास में अपनी सक्रिय भूमिका निभाने हेतु वचनबद्ध होने को प्रेरित हो जाता है।

- इस विषय का मूलभूत उद्देश्य छात्रों को अपनी पूरी शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात् एक अच्छा मनुष्य, एक अच्छा अभियन्त्रा, एक अच्छा अध्यापक, एक अच्छा डॉक्टर, एक अच्छा कृषक, एक अच्छा कलाकार बनाना होता है अर्थात वह जिस किसी व्यवसाय में जाए, उसका मूल उद्देश्य समाज का कल्याण तथा मानवता की रक्षा करना होगा और छात्रों में इस भाव का बीजारोपण प्रस्तुत विषय के अधिगम के फलस्वरुप ही हो पाता है।

- अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग तथा शान्ति की स्थापना में संयुक्त राज्य तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की भूमिका का अवबोध छात्रों को मात्र इसी विषय के अध्ययन के स्वरुप होता है।

आज मनुष्य एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने में असफल है जिसमें आत्मीयता तथा बौद्धिक समृद्धि के साथ ताल–मेल हो सके। परन्तु सामाजिक अध्ययन का अधिगम इस ताल मेल को अवश्य बढ़ायगा। आज हृदय विहीन होकर बुद्धि के बल पर भटके हुए अहंकारी मनुष्य को उसकी अन्तः चेतना से जोड़ने का कार्य मात्र इसी विषय के शिक्षण से ही सम्भव है।

बोध प्रश्न

1. "सामाजिक अध्ययन मनुष्य को सबसे पहले एक अच्छा मनुष्य बनाता है" स्पष्ट कीजिए?

____
____

2. ''भटके हुए अंहकारी मनुष्य को उसकी अन्तः चेतना से जोड़ने का कार्य मात्र सामाजिक अध्ययन के शिक्षण–अधिगम से सम्भव है'' कथन को उद्‌घाटित कीजिए?

____
____

4.5 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इसके विभिन्न घटकों का महत्व

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इसके विभिन्न घटकों (जिनकी चर्चा इकाई एक में की जा चुकी है) का क्या महत्व है अर्थात इन घटकों का शिक्षण एकीकृत स्वरुप में सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करने में किस प्रकार सहायक है, इसका अध्ययन आप अग्रांकित पंक्तियों में करेंगेः–

4.5.1 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में इतिहास का महत्व

(1) इतिहास की परिभाषाः– भारतीय परंपरा के अनुसार इतिहास शब्द का अर्थ है "ऐसा ही हुआ"। इतिहास विस्तृत रुप में प्रत्येक घटना है जो कि कभी घटित हुई। इससे प्राचीन काल से लेकर एक क्षण पहले समाप्त हुए समय तक की समस्त घटनाओं का वर्णन निहित होता है। इन घटनाओं का सम्बन्ध मानव जीवन से ही होता है।

- डा0 राधा कृष्णन ने इसे परिभाषित करते हुए "राष्ट्र की स्मरण शक्ति" कहा है।

- ➢ .रेपसन के अनुसार "इतिहास घटनाओं या विचारों की उन्नति का एक सुसम्बद्ध विवरण है"।
- ➢ प्रो0 घाटे के अनुसार "इतिहास हमारे सम्पूर्ण भूतकाल का वैज्ञानिक अध्ययन तथा लेखा जोखा है"।

इस प्रकार इतिहास अतीत की कृति है जिसमें मनुष्य ने जो कुछ सोचा, कहा, किया, वह सभी इसके अन्तर्गत अपने वास्तविक रूप में आता है। यह मनुष्य की उन समस्त गतिविधियों से छात्र को परिचित कराता है जो कभी घटित हुई थी और जिसके अध्ययन स छात्र लाभ उठा कर अपने वर्तमान को सफल बनाता है अर्थात अतीत के अनुभवों की सहायता से वर्तमान को स्पष्ट करना ही इतिहास का प्रमुख उद्देश्य है। इस सन्दर्भ में जॉन ड्यूबी का विचार उल्लेख्नीय हैः–"हमारी इतिहास में इसलिए रुचि नही है कि वह अतीत के गौरव को बताता है बल्कि इसमे इसलिए रुचि है क्योकि इसके द्वारा वर्तमान सामाजिक जीवन के विभिन्न स्वरुपों तथा शक्तियों का स्पष्टीकरण किया जाता है। साथ ही यह हमे भविष्य के विषय में सोचने के लिए तैयार करता है।"

इस प्रकार इतिहास का अध्ययन वर्तमान में मनुष्य को उचित मार्गदर्शन देने में सहायक होता है।

(2) सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत् इतिहास के महत्व को हम अग्रांकित पंक्तियों में देख सकते हैः–

- ➢ सभ्यता और संस्कृति के प्रति सम्मान की भावना उत्पन्न करने में सहायक।
- ➢ राष्ट्र के गौरव को बढ़ाने के लिए महापुरुषों द्वारा किए गए बलिदान से प्रेरणा प्राप्त करने में सहायक।
- ➢ संकीर्ण राष्ट्रीय मनोवृत्तियों को त्याग कर अन्तर्राष्ट्रीयता के भाव को पल्लवित और पुष्पित करने के लिए।
- ➢ बालक के नैतिक तथा चारित्रिक विकास में सहायक।
- ➢ छात्रों की मानसिक शक्तियों के विकास में सहायक।
- ➢ अतीत की घटनाओं के आलोक में वर्तमान की समस्याओं के समाधान में सहायक
- ➢ छात्रों की निरीक्षण शक्ति, तक्र शक्ति तथा सत्य निर्णय लेने की शक्ति का विकास कर उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में सहायक।
- ➢ पारस्परिक फूट तथा स्वार्थ को दूर कर योग्य तथा कर्मठ नागरिकों के निर्माण में सहायक।

4.5.2 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में भूगोल का महत्व

भूगोल का अर्थः– महान शिक्षा शास्त्री कमेनियस ने कहा है कि "भूगोल का प्रारम्भ उसी समय से हो जाता है, जब बालक अपने पालने तथा अपनी माँ की गोद में अन्तर समझने लगता है।"

व्यापक अर्थ में कहा जा सकता है कि भूगोल का जन्म मानव सृष्टि के साथ ही हुआ है। भूगोल में पृथ्वी की रचनाओं का अध्ययन आता है और उस अध्ययन में जड़ और चेतन दोनो के सम्बन्धों का विश्लेषण रहता है। प्रारम्भ में भूगोल पृथ्वी का वर्णन मात्र विषय था परन्तु कालान्तर में इसमे मानवीय तत्वो का समावेश हुआ और इसके अध्यापन में मानव जीवन को भी महत्व दिया जाने लगा।

जेम्स फेयरग्रीव ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "भूगोल प्राकृतिक निर्जीव तत्वों तथा सजीव तत्वों के सिद्धान्तों और क्रियाओं के पारस्परिक सम्बन्धों का विज्ञान है।" अर्थात इस विषय के द्वारा हम वायु, वर्षा, ताप, बादल, धाराएं, ज्वारभाटा आदि जैसे निर्जीव प्राकृतिक तत्वों का प्रभाव सजीव प्राणियों, तत्वों यथा, मनुष्य, पशु – पक्षी तथा पेड़ पौधों पर ज्ञात करते है।

बाक्रर ने कहा है कि "भूगोल के अध्ययन का अर्थ विश्व मानव समुदाय को, उनके आवास स्थलों की पृष्ठभूमि में जानकारी प्राप्त कराना है।"

भूगोल का अध्ययन क्षेत्र मात्र कोई देश या जाति नही है वरन यह सम्पूर्ण विश्व को अपने में समाहित किए हुए है। वास्तव में भूगोल का मुख्य सन्देश वसुधैव कुटम्बकम, सर्व कल्याण की भावना, विश्व प्रेम, तथा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना है।

सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत भूगोल के महत्व को हम अग्रांकित पंक्तियो में देख सकते हैः–

- स्थानीय घटनाओं तथा रोज होने वाली भौगोलिक घटनाओं का ज्ञान प्रदान करने में सहायक।
- प्रकृति – सौन्दर्य का सच्चा आनन्द; प्राकृतिक दृश्यों, शक्तियों एवं जीव धारियों को समझने तथा सराहने में सहायक।
- पर्यटन की इच्छा जाग्रति में सहायक।
- छात्रों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान कर उनकी मानसिक शक्तियों के विकास में सहायक।
- स्वदेश प्रेम की उत्पत्ति में सहायक।
- भूगोल के अध्ययन से छात्रों को विभिन्न देशो के निवासियों के खानपान, रहन – सहन, वेशभूषा तथा सभ्यता की जानकारी मिलती है। वे टूंड्रा प्रदेश, भूमध्य रेखीय प्रदेश तथा पहाड़ी प्रदेशों पर निवास करने वाले लोगों को किन किन परिस्थितियों में जीवन यापन करना पड़ता है इसकी जानकारी प्राप्त कर उनके प्रति सहानुभूति रखना सीख जाते हैं। विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं के आने पर वहां के लोगो पर होने वाले संकट को वे दिल से महसूस करते हैं। इससे उनमें अन्तर्राष्ट्रीयता का भाव पनपता है। वास्तव में भूगोल मानवता की शिक्षा देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है।
- भूगोल का अध्ययन और ज्ञान आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है विभिन्न देश किस प्रकार एक दूसरे पर निर्भर है, विभिन्न देशों के मध्य आयात – निर्यात के सम्प्रत्यय का स्पष्टीकरण छात्रों को इसी विषय के अध्ययन के फलस्वरुप होता है। आयात – निर्यात के कारण संसार के देशों की एक दूसरे पर निर्भरता तथा अन्योन्याश्रय सम्बन्ध छात्रों की विश्व बन्धुत्व की भावना को जागृत करता है।
- भूगोल छात्रों को अपनी जीविका को उपार्जित करने के लिए मार्ग दर्शाता है। उन्हे विभिन्न उद्योग धन्धों का ज्ञान होता है। अपने व्यापार, वाणिज्य, कृषि तथा उद्योग धन्धों को सफल बनाने में इस विषय का ज्ञान छात्रों के लिए अत्यंन्त लाभकारी होता है। नाविकों को समुद्र तथा उसकी धाराओं, हवाओं तथा द्वीपो का ज्ञान इसी विषय के अध्ययन के फलस्वरुप होता है।
- यह विषय छात्रों को विविध प्राकृतिक संसाधनों का उचित तथा मितव्ययता से उपयोग करना सीखाता है।

इस प्रकार सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत भूगोल का शिक्षण छात्रों में संकीर्णता का भाव दूर कर उनमे व्यापक दृष्टिकोण को विकसित करता है।

4.5.3 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में अर्थशास्त्र का महत्व

(1) अर्थशास्त्र का अर्थ– अर्थशास्त्र का जन्म उसी समय से माना जाता है जब से मनुष्य ने आर्थिक क्रियाएँ आरम्भ की। अर्थशास्त्र का सम्बन्ध विभिन्न साधनों तथा मनुष्य की आवश्यकताओं से होता है। मनुष्य की आवश्यकता अनन्त तथा साधन सीमित होते है। सीमित साधनों के प्रयोग द्वारा वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन होता है, इस उत्पादन को उपभोक्ताओं तक पहुंचाने के लिए विनिमय एवं वितरण किया जाता है उसके पश्चात् उपभोक्ता उत्पादित वस्तुओं का उपभोग करके

अपनी आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करता है। इस आर्थिक क्रिया के क्रम को हम अग्रांकित चित्र के माध्यम से समझ सकते हैः–

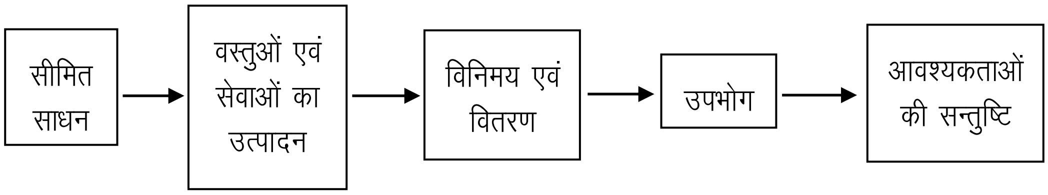

प्रो0 पीगू ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "अर्थशास्त्र आर्थिक कल्याण का अध्ययन है। आर्थिक कल्याण से हमारा अभिप्राय सामाजिक कल्याण के उस भाग से है जिसे मुद्रा के मापदण्ड से सम्बोधित किया जाता है।"

प्रो0 मिल्टन के अनुसार "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जिसमें व्यक्ति अथवा समाज अपनी आर्थिक समस्याओं का समाधान ढूंढने का प्रयास करता है।"

प्रो0 मार्शल के अनुसार "धन साध्य नही वरन साधन है जिसकी सहायता से आर्थिक कल्याण में वृद्धि करके अर्थशास्त्र को एक सामाजिक उन्नति का एक यन्त्र बनाया जा सकता है।"

इस प्रकार हम कह सकते है कि अर्थशास्त्र में मनुष्य की आवश्यकताओं तथा उनकी पूर्ति के सम्बन्ध में विचार किया जाता है। इस विषय का लक्ष्य मस्तिष्क सम्बन्धी अठखेलिया करना नही वरन मनुष्य के व्यवहार को सुधारना है। यह तो आचारशास्त्र का साथी है। भारत में आर्थिक दृष्टि से लोकतन्त्र लाने के लिए अर्थशास्त्र की अत्यंत आवश्यकता है।

(2) सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में अर्थशास्त्र के महत्व को निम्नलिखित पंक्तियों में देख सकते हैंः–

- आर्थिक तत्वों का ज्ञान प्रदान करने में सहायक।
- आर्थिक क्रियाओं का सूचनात्मक ज्ञान प्रदान करने में सहायक।
- छात्रों को आर्थिक क्षेत्र में उनके कर्तव्यों एवं अधिकारों से परिचित कराकर उनमें आार्थिक नागरिकता के विकास में सहायक।
- छात्रों को वर्तमान भारत की आर्थिक समस्याओं जैसे निर्धनता, बेरोजगारी, जनसंख्या विस्फोट, मुद्रा स्फीति, कालाबाजारी, कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्र में पिछड़ापन, चारित्रिक पतन, आर्थिक विकास में अवरोध आदि से परिचित कराकर इसे नियन्त्रित करने की भावना उत्पन्न करने में सहायक।
- छात्रों की आर्थिक चेतना तथा वैज्ञानिक दृष्टि उत्पन्न करने में सहायक।
- छात्रों में विभिन्न मानवीय गुणों यथा सहयोग, उदारता, सहिष्णुता, सदाचारिता, मितव्ययिता, समय बद्धता, ईमानदारी, आदि गुणों को उत्पन्न कर उन्हे सामाजिक कल्याण हेतु प्रेरित करने में सहायक।
- आर्थिक क्षेत्र में लोकतन्त्रीय समाजवाद की स्थापना हेतु संविधान की नीतियों से परिचित करा कर उनमें जागरूकता उत्पन्न करना।
- उन्हे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने हेतु उनमें विभिन्न व्यवसायों से सम्बन्धित भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप कौशलो को विकसित करने में सहायक।

- छात्रों को करों के नियमों से परिचित कराकर उनमे उनकी समीक्षा करने का कौशल विकसित करने में सहायक।
- छात्रों को भारतीय परिस्थिति के अनुरूप कृषि सम्बन्धी एवं ग्रामीणी कुटीर तथा लघु उद्योगों से परिचित कराना।
- विभिन्न नवीन बचत योजनाओं का ज्ञान प्रदान कर उनकी व्यक्तिगत आय में वृद्धि करने में सहायक।
- भारतीय कृषि तथा उद्योगों की नवीन प्रविधियों एवं तकनीकियों से उन्हे परिचित करने में सहायक।
- सरकार द्वारा प्रदत्त ऑकड़ो व घटनाओं की आलोचनात्मक दृष्टि से विश्वसनीयता एवं वैधता की कसौटी पर जाँचने की क्षमता के विकास में सहायक।
- छात्रों को राज्य के बजट के महत्व को समझाकर उनमे आर्थिक चेतना जागृत करने में सहायक।
- छात्रों को अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं जैसे विदेशी आयात–निर्यात खाद्यान्न संकट, वित्त व्यवस्था, डॉलर संकट, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, अस्थिर विनिमय दरें आदि का ज्ञान प्रदान करने में सहायक।

4.5.4 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में नागरिक शास्त्र का महत्व

(1) नागरिकशास्त्र का अर्थ– नागरिकशास्त्र समाज में रहने वाले व्यक्तियों के अधिकारों व कर्तव्यों का अध्ययन करने वाला शास्त्र है। यह एक सामाजिकशास्त्र है जो सामाजिक दशाओं के सर्वोत्तम रूप का अध्ययन करता है तथा उच्च सामाजिक जीवन पर बल देता है। यह नागरिकता का विज्ञान एवं दर्शन है।

इसे परिभाषित करते हुए अंग्रेज विद्वान एफ0जी0 गाउल्ड ने कहा है कि "नागरिकशास्त्र उन समस्त संस्थानो, आदतो एवं क्रिया–कलापों तथा शक्तियों का अध्ययन है जिसके द्वारा कोई भी पुरूष तथा स्त्री अपने कर्तव्यों की पूर्ति कर सके तथा राजनैतिक समुदाय की सदस्यता का लाभ उठा सके।"

डॉ0 इ0एम0 ह्वाइट ने नागरिक शास्त्र को स्पष्ट करते हुए कहा है कि "नागरिकशास्त्र अत्यधिक रूप में उपयोगी, मानव ज्ञान की वह शाखा है जो नागरिक से सम्बन्धित सभी वस्तुओं (सामाजिक, बौद्धिक, राजनैतिक तथा धार्मिक) चाहे वे भूत, वर्तमान या भविष्य से सम्बन्धित है या स्थानीय या राष्ट्रीय या मानवीय है, की विवेचना करती है।"

(2) सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में नागरिक शास्त्र के महत्व को आप अग्रलिखित पंक्तियों में देख सकते हैं–

- यह गाँव तथा नगर का ही नही वरन देश तथा संसार का अध्ययन करता है।
- वर्तमान की नींव भूत में ही पड़ जाती है और नागरिकशास्त्र भूत, वर्तमान तथा भविष्य तीनों की समस्याओं का अध्ययन करता हैं।
- यह मनुष्य के कर्तव्यों तथा अधिकारों का व्यापक अध्ययन कराने में सहायक है।
- यह छात्रों को सरकार, राज्य तथा समाज के विषय में व्यापक ज्ञान प्रदान करने में सहायक है।

- यह छात्रों में प्रेम, सहयोग, सहानुभूति, सहिष्णुता जैसे लोकतान्त्रिक गुणों का विकास करता है।
- आदर्श नेतृत्व के गुणों के विकास में सहायक है।
- इसका अध्ययन छात्रों में स्वस्थ सामाजिक जीवन के विकास में सहायक होता है।
- व्यक्ति और समाज के पारस्परिक सम्बन्धों के ज्ञान में सहायक है।
- जनसामान्य के लिए इसकी विशेष उपयोगिता है।
- इसका अध्ययन छात्रों में राजनैतिक तथा सामाजिक चेतना का विकास करता है।
- लोकतन्त्र की सफलता के लिए इसका अध्ययन अति आवश्यक है।
- राष्ट्रीयता, विश्वबन्धुत्व तथा अन्तर्राष्ट्रीय भावना के विकासार्थ भी इसका अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
- यह छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में सहायक है।

4.5.5 सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में समाज शास्त्र का महत्व

समाजशास्त्र का अभिप्राय– समाज शास्त्र समाज का वैज्ञानिक अध्ययन करता है। सामूहिक क्रिया और सांस्कृतिक उन्नति के लिए समूहो के सदस्यो और समूहो के बीच आदान – प्रदान किस प्रकार आवश्यक है यह हमें समाजशास्त्र के अध्ययन से ही पता चलता है। समाजशास्त्र का ज्ञान सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण हैः–

- व्यक्ति के विकास में संगठित समूहो तथा संस्थानों का क्या स्थान है इसका ज्ञान छात्रों को समाजशास्त्र के अध्ययन से ही होता है।
- इसका अध्ययन अ को विभिन्न सामाजिक समस्याओं का हल करने के योग्य बनाता है।
- यह मानव संस्कृति के उत्थान में सहायक होता है।
- अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओ के समाधान में इस विषय की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।
- परिवार, चर्च, विद्यालय, सरकार और व्यवसाय नामक सामाजिक संस्थाओ के द्वारा लक्ष्यों, विश्वासों, ज्ञान तथा मूल्यों को किस प्रकार हस्तान्तरित एवं परिवर्तित किया जाता है छात्रों को इसका ज्ञान इसी के अध्ययन के फलस्वरूप होता है

समाजिक अध्ययन के घटको से सम्बन्धित उपयफ्रक्त वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन सभी का एक मात्र उद्देश्य समाज की प्रगति एवं कल्याण के मार्ग को प्रशस्त करना तथा अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तान्तरित करना है। चूंकि समाज का निर्माण व्यक्ति के द्वारा, व्यक्ति के ही लिए होता है इसलिए समाज की प्रगति एवं उत्थान में वस्तुतः व्यक्ति की ही प्रगति एवं उत्थान निहित होता है। जब लक्ष्य एक है तो क्यों न इन सभी का शिक्षण सामाजिक अध्ययन विषय के अन्तर्गत एकीकृत रूप में दिया जाए जिससे अधिगमोपरान्त छात्र सामाजिक कौशल, निपुणता तथा कुशलता को आत्मसात करते हुए राष्ट्र तथा विश्व कल्याण के भाव को फलीभूत कर सके और यही सामाजिक अध्ययन शिक्षण का मूल सम्प्रत्यय है।

बोध प्रश्न

3. सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में अर्थशास्त्र का महत्व बताइए?

____
____
____

4. ''नागरिक शास्त्र एक सामाजिक शास्त्र है'' इस कथन को विस्तारित कीजिए?

____
____
____

4.6 सामाजिक अध्ययन के शिक्षक में अपेक्षित गुण तथा योग्यताएं

यह तो निर्विवाद है कि शिक्षण की प्रक्रिया में अध्यापक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। दूसरे शब्दों में शिक्षण की सफलता एक कुशल एवं योग्य अध्यापक पर ही निर्भर करती है। बात यदि सामाजिक अध्ययन के अध्यापक की हो, तो उसकी भूमिका और अधिक संवेदशील हो जाती है क्योकि प्रस्तुत विषय के शिक्षण के माध्यम से वह ऐसे उत्पाद तैयार कर रहा है जो देश के भावी कर्णधार है, जिन्हे देश को अपना नेतृत्व प्रदान करना है और उसकी प्रगति तथा उत्थान के मार्ग को प्रशस्त करना है। इसलिए सामाजिक अध्ययन के अध्यापक में निम्नलिखित गुणों तथा योग्यताओं का होना आवश्यक है:–

- स्वस्थ शरीर तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व।
- सामाजिक सक्रियता, सहयोग तथा कुशलता की भावना।
- नेतृत्व की भावना।
- विषय का व्यापक एवं विशद ज्ञान।
- प्रभावशाली सम्प्रेषण तथा अभिव्यक्ति।
- विनोदप्रिय तथा अनुशासित।
- धैर्य, साहसी, सहानुभूति तथा सहनशक्ति जैसे गुणों से ओत – प्रोत।
- आदर्श चरित्र, कर्तव्य शील, व्यवसाय के प्रति निष्ठा तथा समर्पण, सत्य आचरण, मूल्यों में आस्था, तथा वसुधैव कुटुम्बकम की भावना रखने वाला।
- बाल मनोविज्ञान का ज्ञाता।
- अधिगम के सिद्धान्तो तथा विभिन्न शिक्षण विधियों का ज्ञाता।
- तथ्यों का तक्र के आधार पर स्पष्टीकरण, क्रमबद्ध प्रस्तुतीकरण तथा अन्धविश्वासों को दूर करने में सक्षम।
- आदर्शवादी तथा धर्म और संस्कृति में आस्था रखने वाला।
- बालक के प्रति प्रेम और सहानुभूति का भाव।
- समसमायिक घटनाओं का ज्ञाता।

- आत्म विश्वासी तथा पहल करने वाला।
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं में रूचि रखने वाला।
- वस्तुनिष्ठता, मौलिकता, दूरदर्शिता, साधन सम्पन्नता तथा अनुकूलनशीलता का भाव रखने वाला।

वास्तव में अध्यापन शिक्षक की वृत्ति नही वरन पेशा है। ध्येय की स्पष्टता, कार्य करने की कुशलता, वृत्ति तथा रूचि से कार्य करने की अभिप्रेरणा, स्वाध्याय, ज्ञान पिपासा, तथा पूजा भाव से किया गया कार्य आदि ऐसे गुण भी है जो सामाजिक अध्ययन के अध्यापक को एक आदर्श अध्यापक बनाते हैं। इस सन्दर्भ में सिल्विया एशरवार्नर का यह निम्नलिखित कथन ध्यातव्य है "व्यवस्था कैसी भी हो, कहीं भी हो, कोई भी हो, अगर अध्यापक में कल्पना है, सृजन के तत्व है तो वही जगह जीवन्त हो उठेगी, वही बच्चे खिलखिला उठेंगे और सीखना एक रूढ़ि न होकर रोज का सुख और आनन्द होगा। आनन्द रहित शिक्षण एक प्रकार से दंड है।"

बोध प्रश्न

5. ''सामाजिक अध्ययन का शिक्षक देश का भावी कर्णधार तैयार करता है''?

____

____

6. सामाजिक अध्ययन विषय के अध्यापक में कौन–कौन से गुण अपेक्षित है?

____

____

4.7 सामाजिक अध्ययन की शैक्षणिक निविष्टियाँ

शिक्षण की सफलता शिक्षक के साथ साथ उसके द्वारा प्रयुक्त विभिन्न शिक्षण विधियों पर भी निर्भर करती है। अनुसंधान सम्मत साक्ष्यों के आधार पर बूलएवर तथा स्कॉट (1988) का मत है कि "सामाजिक अध्ययन पढ़ाने वाले अध्यापकों को यदि उनकी मन – मर्जी के अनुसार चलने दिया जाए तो वे केवल कुछ ही अध्यापन सम्बन्धी कार्य नीतियों का उपयोग करना चाहेंगे। ऐसा करनाअें को उर्जा देगा।"

उक्त कथन अक्षरशः सत्य है । परन्तु यदि शिक्षक अपने शिक्षण के दौरान लम्बे भाषणों तथा नीरस चर्चाओं के स्थान पर विभिन्न प्रकार की शिक्षण विधियों का प्रयोग करें तो काफी सीमा तक हम छात्रों के उबाऊपन तथा उकताहट को दूर कर सकते है। विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग करते हुए शिक्षक एक तरफ तोअ को रूचि के साथ अधिगम हेतु प्रेरित कर सकेंगे वहीं दूसरी ओर वांछित शैक्षिक उद्देश्यों की भी प्राप्ति होती रहेगी। इन शिक्षण विधियों को हम मोटे तौर पर निम्नलिखित 2 भागों में वर्गीकृत कर सकते हैः–

4.7.1 अध्यापकोन्मुखी शैक्षणिक निविष्टियाँ

इस प्रकार की शिक्षण विधि में अध्यापक की भूमिका प्रमुख होती है। वही शिक्षण क्रियाओं को निर्देशित, नियंत्रित तथा निर्धारित करता है। अध्यापकोन्मुखी शिक्षण विधियों का प्रयोग उस शिक्षण प्रक्रिया में होती है जिससे छात्रों की भागीदारी अपेक्षाकृत कम होती है। बूलएवर तथा स्कॉट के (1988) ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "अध्यापकोन्मुखी अनुदेशन/शिक्षण का अभिप्राय यह है कि एक काल – खंण्ड में पढ़ने वाले सभी छात्रों को केवल एक ही बात सिखाई जाती है तो वे एक ही प्रकार और स्तर के शिक्षण से लाभान्वित हो सकेंगे तथा उनके अधिगम/सीखने की गति भी समान होगी।"

इस विधि के अन्तर्गत निम्नलिखित विधियां सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में महत्वपूर्ण मानी जाती हैः—

1) व्याख्यान विधि— माध्यमिक स्तर पर सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में अध्यापक द्वारा यह सर्वाधिक प्रयोग की जाने वाली शिक्षण विधि है जिसमें किसी भी सूचना को अध्यापक स्वयं ही छात्रों तक पहुचाता है । इसे कथन तथा भाषण विधि भी कहते है। इसका प्रयोग प्राचीन गुरू कुलों से लेकर मठों में, मदरसों में, अंग्रेजी शिक्षा और आज भी इसका बहुतायत से किया जाता है।

2) अतिथि वक्ता— सम्बन्धित विषय के सुप्रसिद्ध विद्वानों को कक्षा में आमंत्रित करके उनके व्याख्यान करवाना सामाजिक अध्ययन विषय के शिक्षण की प्रभावशाली विधि है। ऐसे विद्वान के ज्ञान भण्डार और सुदीर्घ अनुभवों से छात्र को न केवल वास्तविक दुनियां के अनुभवों से परिचित होने का अवसर प्राप्त होता है वरन वे अधिगम में भी अभिप्रेरित और रूचि लेने लगते हैं। जैसे राष्ट्रीय एकता के सन्दर्भ में किसी आदर्श राजनेता का व्याख्यान, स्वतन्त्रता आन्दोलन के सन्दर्भ में किसी प्रसिद्ध स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी का उद्‌बोधन, देश की आर्थिक प्रगति के सन्दर्भ में किसी अर्थशास्त्री का व्याख्यान, धार्मिक आन्दोलन के सन्दर्भ मे किसी धर्म गुरू अथवा महात्मा का व्याख्यान छात्रों के लिए न केवल रूचि वर्धक होगा वरन उनका व्यक्तित्व भी छात्रों के लिए अनुकरणीय तथा आदर्श बन जाएगा और शिक्षण में जीवन्तता आ जाएगी। इसी प्रकार प्रकरण के अनुसार अन्य शिक्षाशास्त्री, सामाजिक कार्यकर्ता, राजनीतिक कार्यकर्ता, स्वयं सेवी संस्थानो के प्रतिष्ठित व्यक्ति, व्यवसायी, धर्मगुरू अथवा अभिभावक के व्याख्यान आयोजित करना निःसन्देह छात्रों के लिए लाभकारी सिद्ध होगा।

3) प्रश्न प्रेषण विधि— अपने शिक्षण को प्रश्न प्रेषण के माध्यम से विस्तार देना भी एक अद्‌भुत कला है जिसके माध्यम से न केवल छात्र सक्रिय होकर अधिगम करते है वरन इनके पूर्व ज्ञान की भी पुनरावृत्ति होते हुए अनुभवों को विस्तार मिलता है। लार्बर तथा पियर्स (1990) के विचार इस सन्दर्भ में ज्ञातब्य है कि "प्रश्न इसलिए पूछे जाते है जिससे यह जानकारी प्राप्त हो सके कि छात्रों ने सूचना के किसी खण्ड विशेष को कितनी अच्छी तरह से समझा है; ताकि एक ज्ञान बिन्दु से दूसरे ज्ञान बिन्दु की और छात्रों का ध्यान लाया जा सके; ताकि महत्वपूर्ण बिन्दुओं को अलग करके और उन पर विशेष बल देकर उनके बारे में छात्रों की धारणा शक्ति को और अधिक बढ़ाया जा सके; तथा दत्त कार्य को शुरू करने से पहले उन्हे सही दिशा की ओर बढ़ने के लिए प्रवृत्त किया जा सकें।" इस प्रविधि को अपनाकर अध्यापक छात्रों में विश्लेषण, संश्लेषण और मूल्याकंन जैसे कौशलों को विकसित कर सकता है। परन्तु प्रश्न प्रेषण भी एक कला है अतएव इसके प्रेषण में कुछ बातें विशेष ध्यान में रखनी चाहिए यथाः—

- ➢ प्रश्न निश्चित, सरल तथा संक्षिप्त होने चाहिए।
- ➢ प्रश्न करने के बाद थोड़ा रूकें और उसे छात्रों के मस्तिष्क में भली भाति बैठ जाने दें।
- ➢ प्रश्नो की भाषा सरल तथा छात्रों के मस्तिष्क के अनुकूल हो।
- ➢ प्रश्न हां अथवा नही वाले, प्रतिध्वन्यात्मक तथा अनिर्दिष्टात्मक नही होने चाहिए।
- ➢ प्रश्न सजीवता, स्फूर्ति, तारतम्यता तथा आत्मविश्वास के साथ किए जाने चाहिए।
- ➢ शिक्षक सर्वप्रथम प्रश्न पूरी कक्षा के समस्त रखे और तत्पश्चात किसी छात्र को उत्तर देने के लिए सम्बोधित करें।
- ➢ उत्तर प्राप्त करने के पश्चात उसकी प्रतिपुष्टि करना आवश्यक है।

- ➢ प्रश्न समस्त छात्रों को चिन्तन करने के लिए प्रोत्साहित करे, चाहे वह एक ही छात्र से क्यो न पूछा जाए।
- ➢ प्रश्नों का वितरण कक्षा में समान होना चाहिए।

5) निदर्शन– किसी भी कार्य को अध्यापक द्वारा प्रत्यक्ष रूप से करके दिखाने अथवा बताने की विधि ही निदर्शन तकनीक होती है जिसका सामाजिक अध्ययन विषय के शिक्षण में बहुतायत से प्रयोग किया जाता है। इसके अन्तर्गत किसी भी कार्य को पहले अध्यापक स्वयं करता है तत्पश्चात तुरन्त वह छात्रों को करने के लिए कहता है अथवा अध्यापक के साथ साथ छात्र भी अनुवर्ती क्रिया के रूप में करता जाता है। उदाहरण स्वरूप मानचित्र की रूपरेखा प्रस्तुत करते समय अध्यापक के साथ साथ छात्र भी तद्नुसार प्रस्तुत करता जाता है। इसी प्रकार अर्थ व्यवस्था में धन के प्रवाह, नागरिकशास्त्र में राष्ट्रीय ध्वज, भगोल में नक्शे में अंकित किन्ही दो स्थानों की दूरी आदि को करने का कौशल अध्यापक छात्रों को निदर्शन अथवा प्रदर्शन के माध्यम से भली भाति सिखा सकता है निदर्शन का प्रयोग करते हुए अध्यापक छात्रों के समक्ष प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण और संश्लेषण का आदर्श तरीका छात्रों के सम्मुख रखता है और छात्र इन कौशलों को सीखते हुए मुख्य बिन्दुओं को आवश्यक्तानुसार लिख भी सकता है। तदनन्तर वह अभ्यास के माध्यम से विषय वस्तु के प्रकरण में (कौशल आधारित प्रकरण) निपुणता हासिल करता जाता है। निदर्शन तकनीक का प्रयोग करते समय अध्यापक को कुछ बातों को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए यथा

- ➢ अध्यापक द्वारा ऐसे निदर्शन की योजना तैयार की जानी चाहिए जो छात्र में रूचि उत्पन्न कर सके।
- ➢ निदर्शन सरल भाषा में धीरे धीरे किया जाए जिससे सभी छात्र भली भाति समझ सके।
- ➢ निदर्शन तकनीक का प्रयोग इस प्रकार किया जाए कि सभी छात्र उसे भली भांति समझ सके और आवश्यकतानुसार अध्यापक द्वारा उन्हे निर्देशित किया जा सके।
- ➢ निदर्शन कार्य बहुत अधिक समय तक नही किया जाना चाहिए अन्यथा छात्रों का ध्यान इधर उधर भटक सकता है।
- ➢ निदर्शन के साथ साथ अध्यापक द्वारा स्पष्टीकरण भी अपेक्षित है।
- ➢ निदर्शन कार्य से सम्बन्धित लिखित सामाग्री अन्त में छात्रों के मध्य वितरित कर देनी चाहिए जिससे छात्रउसका अभ्यास करते रहे।

4.7.2 अध्येतोन्मुखी (छात्र केन्द्रित) शैक्षणिक निविष्टियाँ

बुल एवर और स्काट (1988) ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है कि "वह क्रिया (कलाप) अध्येतोन्मुखी (या स्वतंत्र) कहलाता है जिसमें प्रत्येक छात्र को स्वतन्त्र रूप से या कुछ अन्य छात्रों के साथ मिलकर कार्य करने की छूट रहती है। इस तरह के कार्यो में अध्यापक का मार्गदर्शन या हस्तक्षेप न के बराबर होता है।"

उपयुक्त वक्तव्य से ही स्पष्ट हो जाता है कि इस तकनीक में शैक्षिक पर्यावरण की सृष्टि का श्रेय छात्रो को जाता है जिसमें अध्यापक की भूमिका बहुत कम होती है। यह एक प्रकार से छात्र केन्द्रित उपागम होता है। अध्यापक का कार्य मात्र शैक्षणिक क्रियाओं की योजना और रचना तैयार करना है। इसके सम्प्रत्यय को हम बाल बगर्स (1979) के निम्नलिखित कथन से समझ सकते है जिसके अनुसार "छात्र केन्द्रित उपागम या पद्धति का सम्बन्ध छात्र की सर्जनात्मक शक्ति, आत्म धारणा, विद्यालय के प्रति अभिवृत्ति और कौतुहल/जिज्ञासा से भी है।"

छात्र केन्द्रित शैक्षणिक निविष्टियों को हम मूलतः दो श्रेणियों में रख सकते हैः–

1) व्यक्ति मूलक शिक्षण– जिसमे ं छात्र अपनी आयु, रूचि–रूझान, योग्यताओं तथा आवश्यकतानुसार अधिगम करता है। इसके अन्तर्गत निम्न लिखित शिक्षण विधियां आती हैंः–

(1) योजनाबद्ध शिक्षण– इस शिक्षण विधि का जन्म प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक बी0 एफ0 स्कीनर के क्रिया प्रसूत अनुकूलन सम्बन्धी अनुसन्धान कार्य से हुआ जिसके अनुसार छात्र द्वारा अर्थ व्यवहार का अधिगम तत्काल पुनर्बलन अथवा प्रतिपुष्टि देने पर होता है। इसलिए अध्यापक द्वारा छात्रको उसकी प्रतिक्रिया के आधार पर तुरन्त पुनर्बलन दिया जाना चाहिए।

(2) कम्प्यूटर चालित शिक्षण– कम्प्यूटर के महत्व से आज बच्चा – बच्चा परिचित है। कम्प्यूटर चालित शिक्षण में यह छात्र को सीधे अनुदेश देता है उसमें निहित विषय सामाग्री का सीधे उपयोग कर छात्र अन्तः क्रिया करता है और अधिगम करता जाता है।

(3) अभ्यास पद्धति– जिसमें सामाजिक अध्ययन के विभिन्न प्रकरणों पर एक पैकेज (शिक्षण सम्बन्धी सामग्री) तैयार कर कम्प्यूटर में स्टोर कर लिया जाता है। छात्र इनकी अभ्यास प्रश्नावलियों में से किसी भी प्रश्न को चुन कर उसका उत्तर कुंजी पटल पर टाइप करता है। यदि उत्तर सही है तो प्रतिपुष्टि के रूप में बधाई सूचक संदेश कम्प्यूटर से प्राप्त होता है और गलत होने पर उसमे वांछित सुधार का निर्देश प्राप्त हो जाता है।

(4) अनुशिक्षण पद्धति– इसके अन्तर्गत प्रकरण से सम्बन्धित सूचनाएं छोटे छोटे चरण में प्रस्तुत की जाती है और प्रत्येक चरण के अन्त में उसी से सम्बन्धित प्रश्न होते है। प्रत्येक प्रश्न पर छात्र द्वारा दिए गए उत्तर का विश्लेषण और उसकी प्रतिपुष्टि कम्प्यूटर के ही माध्यम से छात्र को मिल जाता है। अनुशिक्षण पद्धति वाले कम्प्यूटर चालित सामाजिक अध्ययन के कार्यक्रम का प्रयोग व्यक्तिगत शिक्षण हेतु किया जाता है।

(5) अनुरूपण अथवा छद्म रूपण पद्धति– इसमें वास्तविक जीवन में घटित होने वाली घटनाओं पर आधारित कार्यक्रम विकसित करके कम्प्यूटर के माध्यम से छद्म रूप में छात्रों को दिखाया जा सकता है। सामाजिक अध्ययन के कुछ प्रकरण यथा नदियों का विस्तार, स्वतन्त्रता आन्दोलन, राज्य सभा, लोक सभा तथा विधान मण्डलों की गतिविधियाँ आदि अनेको कार्यक्रमों का शिक्षण इस पद्धति के माध्यम से छात्र को दिया जाता है।

(6) खोज पद्धति– इस पद्धति में छात्रों के समक्ष विभिन्न समस्याएं प्रस्तुत की जाती हैं और छात्र प्रयास और त्रुटि के माध्यम से तथा इन्टरनेट की मदद लेते हुए उनका समाधान प्रस्तुत करता है।

(7) क्रीड़ा पद्धति– क्रीड़ा पद्धति अथवा खेल पद्धति छात्रों के लिए अधिगम का सर्वोत्तम तरीका होता है। इसमें सामाजिक अध्ययन के शिक्षण हेतु अनेक प्रकरणों को खेल के माध्यम से प्रस्तुत कर छात्रों को अधिगम हेतु प्रेरित किया जा सकता है।

(8) परियोजना कार्य– इस शिक्षण विशिष्ट के अन्तर्गत छात्र प्रदत्त कार्यो को पूरा करने के लिए उत्तरदायी होता है जिससे उसमें आलोचनात्मक चिन्तन तथा सर्जनात्मक चिन्तन जैसी उच्च मानसिक योग्यताओं का विकास होता है। परियोजना कार्य के दौरान छात्र द्धारा किए जाने वाले विभिन्न प्रकार के क्रिया कलापों से उनके सम्प्रेषण कौशलों में वृद्धि होती है तथा उनमे कार्य करने की आदत विकसित होती है।

(9) क्षेत्र कार्य– क्षेत्र कार्य का अभिप्राय वास्तविक परिस्थितियों में किए जाने वाले शिक्षण से होता है। सामाजिक अध्ययन विषय में अनेक ऐसे प्रकरण है जिनका शिक्षण यदि वास्तविक परिस्थितियों में दिया जाए तो छात्र अधिक प्रभावशाली ढ़ंग से शिक्षण करेंगे। जैसे 'उत्पादन के साधन' प्रकरण पर अध्यापक छात्रों को कारखाने, मिल अथवा उद्योग में ले

जाकर उन्हे वास्तविक परिस्थितियों में अधिगम करने का अवसर प्रदान कर सकता है जहां छात्र स्वयं से विभिन्न आधार सामग्री को एकत्रित करेगा और उनका विश्लेषण करते हुए किसी अन्तिम निष्कर्ष पर पहुचेगा। वास्तविक परिस्थितियों में रहते हुए छात्र यह अनुभव कर सकेगा कि वस्तु विशेष के निर्माण में किन किन कौशलों की आवश्यकता होती है, कौन कौन सी प्रक्रियाओं से गुजरने के पश्चात् कोई भी वस्तु अपने अस्तित्व को प्राप्त करती है आदि।

2) समून्होमुखी शैक्षणिक निविष्टियाँ– जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि समूह में किया गया अधिगम ही समून्होमुखी शैक्षणिक निविष्टियाँ के अन्तर्गत आति है जो छात्रों में उच्चत्तर संज्ञात्मक योग्यताओं के विकास में सहायक होती है। इसके अन्तर्गत चर्चा परिचर्चा, वाद विवाद, परिसंवाद, नामिका परिचर्चा तथा विचारवेश आदि निविष्टियाँ आती है जिनकी चर्चा इकाई संख्या 6 में विस्तार से की जा रही है।

क्रियाकलाप

सामाजिक अध्ययन के किसी प्रकरण को लेते हुए एक परियोजना कार्य की रूपरेखा तैयार कीजिए?

____

____

बोध प्रश्न

7. प्रश्न पोषण के दौरान ध्यान देने योग्य बातों का बिन्दुवार लिखिए?

____

____

8. अध्यापकोन्मुखी शैक्षणिक निविष्टियाँ की सूची बनाइए?

____

____

4.8 सारांश

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का सम्प्रत्यय अत्यन्त व्यापक है क्योकि इसमें विभिन्न मानवीय विषयों को समेकित किया गया है जिनके शिक्षण और अधिगम के माध्यम से हम न केवल छात्र को समाज का उपयोगी सदस्य बनाते हैं वरन उसमें अपने जीवन को भी सफलता पूर्वक जीने की योग्यता तथा सामर्थ्य विकसित करते हैं। प्रस्तुत इकाई में आपने सामाजिक अध्ययन के विभिन्न घटकों के रूप में इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिकशास्त्र तथा समाजशास्त्र शिक्षण के महत्व को समझा। साथ ही साथ इस विषय के शिक्षक के व्यक्तित्व में किन किन योग्यताओं तथा गुणों का होना आवश्यक है, ये भी जाना। शिक्षक अपने विषय के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को तभी प्राप्त कर सकता है जब वह प्रभावशाली ढ़ंग से विभिन्न विधियों तथा प्रविधियों का प्रयोग करें। इसलिए सन्दर्भतः आपने विभिन्न शैक्षणिक निविष्टियों का भी अध्ययन किया। शिक्षक में यदि उपरोक्त वर्णित योग्यताएं एवं क्षमताएं है, तो वह उपरिअंकित शैक्षणिक निविष्टियों का प्रयोग करते हुए सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त कर न केवल समाज वरन् राष्ट्र के सन्तुलित विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है।

4.9 अभ्यास कार्य

1) आपने सामाजिक अध्ययन का विषय क्यों लिया है? इस पर चिंतन करते हुए इसके कारणों की एक सूची तैयार करें।

2) इतिहास का सम्बन्ध जीवन में घटित घटनाओं से होता है फिर यह आपको वर्तमान जीवन सफल बनाने में किस प्रकार सहायक है?

3) अपनी कक्षा के छात्रों के साथ किसी क्षेत्र–कार्य का आयोजन करें और वहां प्राप्त अनुभवों पर आधारित एक प्रतिवेदन तैयार करें।

4) छात्रौ में वसुधैव कुटुम्बकम के भाव को विकसित करने के लिए एक शिक्षक के रूप में अपनी भूमिका को निर्धारित करते हुए उसे लिपिबद्ध कीजिए।

5) अध्येतोन्मुखी शैक्षणिक निविष्टियों के प्रयोग के दौरान एक अध्यापक के रूप में आपकी क्या भूमिका है विवेचना कीजिए।

4.10 चर्चा के बिन्दु

1) यदि आपको सामाजिक अध्ययन में किसी प्रकरण के शिक्षण हेतु अतिथि वक्ता को आमन्त्रित करना है तो आप किन किन बिन्दुओं पर अमल करेंगे।

2) "भारत के आर्थिक विकास में कृषि का योगदान" नामक प्रकरण पर परियोजना कार्य किस प्रकार सहायक है।

3) कम्प्यूटर चालित शिक्षण वर्तमान कक्षा परिस्थितियों में कहां तक सफल है। इस पर अपने साथी अध्यापकों से चर्चा करते हुए प्रतिवेदन तैयार करे।

4.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सामाजिक अध्ययन विषय का अध्ययन प्रत्येक बालक को "वसुधैव कुटुम्बकम" का अर्थ समझाकर उसमे विभिन्न सामाजिक कौशलों तथा मानबता के गुणों का संचार कर उसे एक अच्छा मनुष्य बनाता है जिससे वह अपने समाज तथा राष्ट्र की प्रगति एवं उत्थान में अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वहन कर सके।

2. विज्ञान एवं तकनीकी के युग में मनुष्य ने हृदय से सम्बन्ध विच्छेद कर बुद्धि से नाता जोड़ लिया है जिसके कारण आज हर व्यक्ति स्वार्थी तथा भावनाओं से परे सम्बन्धों को जी रहा है। परन्तु सामाजिक अध्ययन का अधिगम व्यक्ति – व्यक्ति को भावनाओं के साथ जोड़ेगा। उन्हे आत्मीयता तथा बौद्धिक समृद्धि के साथ तालमेल करना सिखायेगा। स्वंय में भटके हुये मनुष्य को सही मार्ग पर ले जायेगा।

3. अर्थशास्त्र का अध्ययन छात्रों को सीमित संसाधनो, उत्पादन तथा मनुष्य की अनन्त आवश्यकताओं का ज्ञान करायेगा। जब छात्र अपने देश तथा समाज की आर्थिक समस्याओं को देखेगे तो वे इसे दूर करने में अपनी भूमिका को समझेंगे तथा तदनुसार कार्य करेंगे।

4. नागरिकशास्त्र एक सामाजिकशास्त्र है इसमे तनिक भी सन्देह नहीं। यदि नागरिकशास्त्र शब्द पर ही हम ध्यान दे तो इसका अर्थ है नागरिक अर्थात नागरिक/जनता तथा शास्त्र का अभिप्राय सुनाने वाला जो कि संस्कृत के "शंस्" धातु से उदघृत है। इस प्रकार नागरिकशास्त्र उस नागरिक के समस्त क्रियाकलापों तथा शक्तियों की गाथा है, जो समाज में रहता है और अपने

समाज के प्रगति एवं उत्थान की दिशा में अपने कर्तव्यों का पालन करता है। यह एक समाजशास्त्र है जो सामाजिक दशाओं के सर्वोत्तम रूप का अध्ययन करता है।

5. शिक्षण की सफलता सुयोग्य अध्यापक पर निर्भर करती है। यदि अध्यापक कर्तव्यनिष्ठ, संवेदनशील तथा राष्ट्रीयता के भाव से ओत प्रोत है तभी वह देश के लिये सुयोग्य भावी कर्णधार तैयार कर सकेगा जो उसके सानिध्य में अध्ययनरत है। बात यदि सामाजिक अध्ययन के अध्यापक की हो, तो उसकी भूमिका और अधिक संवेदनशील हो जाती है क्योकि प्रस्तुत विषय के माध्यम से सामाजिक, नागरिक तथा मानवीय गुणों से ओतप्रोत देश के भावी कर्णधारों को तैयार करने का महत्वपूर्ण कार्य वही कर सकता है।

6. सामाजिक अध्ययन विषय के शिक्षक को सामाजिक, लोकतान्त्रिक, मानवीय तथा वसुधैव कुटुम्बकम के भाव से ओतप्रोत होना चाहिये। चूंकि वह देश को नेतृत्व प्रदान करने वाले उन भावी कर्णधारों को तैयार कर रहा है जो भविष्य में अपने राष्ट्र को प्रगति एवं उत्थान के मार्ग पर अग्रसर करेंगे, इसलिये उसे राष्ट्रीयता के भाव तथा दूरदर्शिता का साकार प्रतिबिम्ब होना चाहिये।

7. प्रश्न प्रेषण वह कला है जिसके माध्यम से छात्रों के पूर्ण ज्ञान को विस्तार मिलता है तथा छात्र सक्रिय होकर अधिगम करते है। प्रश्न प्रेषण कक्षा में समान रूप से होना चाहिये जिससे सभीछात्रों की एकाग्रता, उसकी धारण शक्ति तथा उनकी उत्तर देने की प्रवृत्ति को तीक्ष्ण किया जा सके।

8. अध्यापकोन्मुखी शैक्षणिक निविष्टयॉ मूलतः अध्यापक केन्द्रित होती है। क्योकि इसमे अध्यापक ही शिक्षण क्रियाओं को नियन्त्रित, निर्देशित तथा निर्धारित करता है। इसके अनतर्गत व्याख्यान विधि, अतिथि वक्ता विधि, प्रश्न प्रेषण विधि, निदर्शन विधि आदि सम्मिलित है।

4.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

i. N.C.E.R.T. – " Teaching social studies" N.C.E.R.T..

ii. Bhattacharya S. and D.R. Darji "Teaching social studies in Indian Schools". Acharya Book Dept. Baroda, 1966.

इकाई–5 स्पष्टीकरण अथवा व्याख्या तथा खोज द्वारा अधिगम

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 स्पष्टीकरण या व्याख्या द्वारा अधिगम

5.3.1 स्पष्टीकरण या व्याख्या का अभिप्राय

5.3.2 व्याख्या प्रविधि के उद्देश्य

5.3.3 व्याख्या करते समय अपेक्षित सावधानियाँ

5.3.4 व्याख्या के प्रकार

5.3.5 व्याख्या को प्रभावित करने वाले कारक

5.3.6 व्याख्या प्रविधि की सीमांए

5 .4 खोज विधि

5.4.1 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

5.4.2 खोज विधि का शाब्दिक अभिप्राय

5.4.3 खोज विधि का प्रबन्धन

5.4.4 खोज विधि के सिद्धान्त

5.4.5 खोज विधि में अध्यापक की भूमिका

5.4.6 खोज विधि के गुण

5.4.7 खोज विधि के दोष

5.4.8 खोज विधि को प्रभावशाली बनाने हेतु अपेक्षित सुझाव

5.5 सारांश

5.6 अभ्यास कार्य

5.7 चर्चा के बिन्दु

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.9 सन्दर्भ पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

कोई भी शिक्षण तभी सफल माना जाता है जब छात्र अध्यापक द्वारा सम्प्रेषित तथ्यों को भली – भांति आत्मसात कर ले। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में रोचकता, सजीवता, नवीनता तथा बोधगम्यता बनी रहे, इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक ऐसी शिक्षण विधियों और प्रविधियों का चयन करे जो छात्रों की रूचि, योग्यता, तथा क्षमता के अनुकूल हो और साथ ही साथ जो छात्रों को अधिगम हेतु प्रेरित करे। यही कारण है कि शिक्षक विविध शिक्षण विधियों एवं प्रविधियों के माध्यम से अपने शिक्षण कार्य में जीवन्तता लाने का प्रयास करता है। स्पष्टीकरण तथा खोज विधि भी इसी दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो रही है। स्पष्टीकरण प्रविधि से जहां शिक्षक विषय वस्तु की कठिनता तथा दुरहता को सरल कर उसे छात्रों के लिए बोधगम्य बनाता है वही दूसरी ओर खोज विधि से छात्रों को नवीन तथ्यों की खोज करने तथा मान्यताओं को उजागर करने के लिए प्रेरित करता है। प्रस्तुत इकाई में आप इन दोनो शिक्षण रणनीतियों का अध्ययन विस्तार से करेंगे।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आपः–

- व्याख्या प्रविधि के सम्प्रत्यय का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- खोज विधि की परिभाषाओं का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
- व्याख्या प्रविधि के उद्देश्यों की सूची बना सकेंगे।
- व्याख्या के प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- खोज विधि को प्रभावशाली तरीके से अपने शिक्षण में प्रयोग कर सकेंगे।
- व्याख्या तथा खोज विधि के शैक्षिक निहितार्थ का आत्मबोध कर सकेंगे।

5.3 स्पष्टीकरण या व्याख्या द्वारा अधिगम **(Learning by Exposition)**

व्याख्या तथा स्पष्टीकरण शब्द के लिए अंग्रेजी में Explanation तथा Exposition शब्द का प्रयोग किया जाता है। सामान्यतया Exposition के अन्तर्गत अध्यापन के दौरान आने वाले कठिन शब्दों तथा तथ्यों की व्याख्या करके उसे बोधगम्य बनाया जाता है इसीलिए इस शब्द का प्रयोग साहित्य में कठिन शब्दों की व्याख्या के सन्दर्भ में अर्थात काठिन्य निवारण के सन्दर्भ में किया जाता है। परन्तु सामाजिक अध्ययन विषय में भी जटिल प्रसंगों, तकनीकी सम्प्रत्ययों (Concept) तथा परिभाषाओं की विस्तृत व्याख्या कर उन्हे बोधगम्य बनाने के सन्दर्भ में एक्सपोजिशन अर्थात स्पष्टीकरण शब्द का प्रयोग किया जाता है। व्याख्या, शिक्षण की एक रीति अथवा प्रविधि है जिसका उद्देश्य विषय वस्तु के सरल तथा सुगम तत्वों को संक्षेप में और जटिल एवं दुरह तत्वों को व्यापक रूप में छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करना है। इस प्रविधि के माध्यम से छात्र उस विषय वस्तु को सरलतापूर्वक समझ लेते हैं जो साधारणतया समझने में मुश्किल होते हैं। व्याख्या को स्पष्टीकरण भी कहते है क्योकि शिक्षक इसके माध्यम से अपने छात्रों को विभिन्न प्रकरणों को समझाने के लिए सरल से सरल भाव, विचार तथा उदाहरणों के माध्यम से क्रमिक एवं ताक्रिक रूप से स्पष्ट करता है। व्याख्या अथवा स्पष्टीकरण एक प्रकार से कौशल होता है। इसे स्पष्ट करते हुए ए0एच0 गार्लिक ने अपनी पुस्तक "ए न्यू मैनुअल ऑफ मैथेड" **(A new mannul of method)** के पृष्ठ संख्या 63 – 64 में लिखा है किः–

"स्पष्टीकरण यर्थाथ में वर्णन का एक रूप है। स्पष्टीकरण से भाव अथवा अर्थ को स्पष्ट किया जाता है। इसे हम विचारों अथवा तथ्यों को स्पष्ट रूप में प्रकट करने की कला कह सकतें हैं।" व्याख्या छात्र तथा

नवीन ज्ञान के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने का एक संक्षिप्त तथा प्रभावी साधन है। इसका मुख्य आधार मानव सूचना प्रविधि है अर्थात इसे हम निम्नांकित संकेत के माध्यम से स्पष्ट कर सकते हैंः–

अभिप्राय सम्प्रेषण सूचना ग्रहण करना ⟶ ⟶

शिक्षण के दौरान आए जटिल प्रसंगो, तकनीकी सम्प्रत्ययों, परिभाषाओं से सम्बन्धित	अध्यापक द्वारा जटिल प्रसंगो, तकनीकी सम्प्रत्ययों, परिभाषाओं को बोधगम्य बनाने हेतु व्याख्या प्रविधि का प्रयोग करते हुए उसे सरल ढ़गं से छात्रों तक	शिक्षक द्वारा व्याख्या प्रविधि का प्रयोग करते हुए जटिल प्रसंगो, तकनीकी सम्प्रत्ययों तथा विशिष्ट शब्दावलियों को बोधगम्य बनाकर छात्रों तक सम्प्रेषित करना

व्याख्या रीति का प्रयोग करते हुए अध्यापक सामाजिक अध्ययन विषय के अन्तर्गत विभिन्न प्रकरणों यथा ईसा पूर्व, ईसवी, उपनिवेश, औद्योगिकीकरण, सन्धि का अभिप्राय, विभिन्न शासन प्रणालियों के क्लिष्ट सिद्धान्तों की व्याख्या, संविधान, गणतन्त्र, प्रभुसत्तात्मक, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, आयात, निर्यात, मुद्रा स्फीति, विपणन, उपभोक्ता, कटिबन्ध, जलवायु तथा इसी प्रकार के अन्य सम्प्रत्ययों की परिभाषा, सन्दर्भतः तकनीकी शब्द तथा प्रसंगो को सरल, सुबोध और बोधगम्य बनाता है।

इस प्रकार व्याख्या का अभिप्राय अध्ययन सामग्री को अधिक सरल, स्पष्ट, पारदर्शी तथा सुग्राहय बनाना है। सामाजिक अध्ययन शिक्षण की अनेक महत्वपूर्ण विधियों में व्याख्या विधि भी है जिसकी सहायता से अध्यापक तथ्यों को स्पष्ट कर छात्रों तक सम्प्रेषित कर उसे समझने में छात्रों की मदद करता है। शिक्षक छात्र की अपेक्षा अधिक ज्ञानी तथा अनुभवी होता है। वह, छात्रों को विषय वस्तु उन्ही के स्तर से विभिन्न दृष्टान्तों के माध्यम से समझाता है जिससे छात्र उसे भली भांति समझ कर उसे आत्मसात कर सके। इसलिए व्याख्या को एक प्रकार से कौशल माना गया है जिसमें अध्यापक की निपुणता तथा कुशलता नितान्त अपेक्षित होती है।

व्याख्या अथवा स्पष्टीकरण के सम्प्रत्यय को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से और अधिक स्पष्ट किया जा सकता हैः–

- यह एक प्रकार का वर्णन है जिसके द्वारा अर्थ या भाव को स्पष्ट किया जा सकता है।
- यह जटिल तथा दुरूह विचारों को स्पष्ट करने की कला है।
- इसमें पाठ के सभी तथ्यों को क्रमबद्ध एवं ताक्रिक रूप में बालको के सम्मुख स्पष्ट, सरल एवं बोधनीय रीति से इस प्रकार रखा जाता है जिससे कठिन से कठिन प्रत्यय को आसानी से समझा जा सके।
- इसका केन्द्र बिन्दु नवीन ज्ञान को सरल, स्पष्ट तथा बोधगम्य रूप में प्रस्तुत करना है।
- इसका प्रयोग नई सूचनाओं तथा तथ्यों को छात्रों के सम्मुख रखने के लिए किया जाता है।
- व्याख्या स्पष्टीकरण तथा काठिन्य निवारण एक दूसरे के पर्यायवाची है।
- विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण क्रमबद्ध एवं विस्तृत रूप में किया जाता है।
- यह अपने आप में पूर्ण तथा विस्तृत कथन होता है।

- इसके द्वारा विषय की भूमिका एवं सागोपांग विवेचन अभीष्ट हैं।

5.3.2 व्याख्या प्रविधि के उद्देश्य

- विषय वस्तु को बोधगम्य बनाना।
- विषय सामग्री का गहन विश्लेषण करना।
- संयुक्त तथा कठिन विषय सामग्री को समझने के लिए सरल बनाना।
- छात्रों के ध्यान को अध्ययन सामग्री को ग्रहण करने के योग्य बनाना।
- सामाजिक अध्ययन की विभिन्न घटनाओं को सरल ढ़ंग से सम्प्रेषित करते हुए छात्रों को आत्मसात कराना।

5.3.3 व्याख्या करते समय अपेक्षित सावधानियां

उर्पयुक्त उद्देश्यों को हम तभी प्राप्त कर सकते हैं जब अध्यापक व्याख्या करते समय निम्न लिखित बातों को घ्यान में रखे

- व्याख्या करते समय उसकी भाषा सरल होनी चाहिए जिससे छात्रों को समझने में आसानी हो सके।
- व्याख्या के दौरान अध्यापक को अनावश्यक बातों से बचना चाहिए अन्यथा छात्रों का ध्यान दूसरी तरफ जा सकता है।
- व्याख्या सपाट न होकर आवश्यकता तथा प्रसंगानुसार उसमें उदाहरण, दृष्टान्त तथा दृश्य अथवा श्रव्य अथवा श्रव्य – दृश्य सामग्री का प्रयोग करना चाहिए जिससे व्याख्या को प्रभावशाली बनाया जा सके तथा छात्रों को पाठ की ओर बांधा जा सके।
- व्याख्या के दौरान अध्यापकों का यह पूरा प्रयास होना चाहिए कि वो छात्रों को भी सक्रिय करे। बीच बीच में उनसे प्रश्न पूछ कर अध्यापक को यह पता लगाते रहना चाहिए कि छात्र उसकी बात सुन रहा है अथवा निष्क्रिय हो कर कक्षा में समय व्यतीत कर रहा है। अध्यापक द्वारा छात्रों को भी अपनी जिज्ञासा प्रस्तुत करने को प्ररित किया जाना चाहिए तथा अध्यापक को उनकी जिज्ञासा को भली भांति संतुष्ट करने का प्रयास करना चाहिए।
- छात्रों को आवश्यकतानुसार अध्यापक द्वारा कुछ क्रियात्मक कार्य करने के लिए भी प्रेरित किया जा सकता है जिसकी व्याख्या के दौरान प्रासंगिकता सिद्ध हो।
- वही अध्यापक प्रभावशाली व्याख्या कर सकता है जिसका विषय पर स्वामित्व हो। विषय पर स्वामित्व होने पर ही अध्यापक व्याख्या में पारदर्शिता ला सकता है
- व्याख्या तभी की जानी चाहिए जब इसकी आवश्यकता हो अन्यथा छात्र ऊब भी सकते हैं।
- व्याख्या अमूर्त ढ्गग से नही वरन मूर्त ढ़ंग से देनी चाहिए जिससे छात्रों के लिए वह बोधगम्य हो सके।
- अध्यापक में इतना सामर्थ्य होना चाहिए कि वह कठिन सम्प्रत्यय को सरल ढ़ंग से व्याख्यायित कर सके जिसके लिए उसे आवश्यकतानुसार विभिन्न साधनों का प्रयोग करना चाहिए।

- व्याख्या छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए अन्यथा छात्र तथ्यों को नहीं समझ पाएंगे।
- व्याख्या के दौरान अध्यापक में पूर्ण आत्मविश्वास होना चाहिए।
- व्याख्या ऐसी होनी चाहिए जो छात्रों के समस्त भ्रम तथा शंकाओं का निवारण कर सके।
- व्याख्या न बहुत अधिक छोटी होनी चाहिए न बहुत अधिक लम्बी।
- व्याख्या रूचिकर, प्रभावशाली तथा अध्ययन सामग्री को सुबोध बनााने वाली होनी चाहिए।
- व्याख्या में धारा प्रवाहित तथा निरन्तरता होनी चाहिए।
- व्याख्या में उपयुक्त शब्दों का अर्थ अध्यापक द्वारा अवश्य स्पष्ट करना चाहिए।
- व्याख्या में सम्बद्ध कथनो का प्रयोग करना चाहिए।
- व्याख्या में मुख्य बिन्दुओं का समावेश होना चाहिए।
- छात्रों की ग्रहणशीलता का पता लगाने के लिए व्याख्या के दौरान अध्यापक द्वारा प्रासंगिक बोध प्रश्न अवश्य पूछना चाहिए।
- व्याख्या करते समय श्यामपट्ट का भी आवश्यकतानुसार प्रयोग करना चाहिए। किसी भी काल अथवा वंश के शिक्षण के दौरान इसे हम श्यामपट्ट पर दर्शा सकते है जैसेः–

<u>दिल्ली सल्तनत</u>

गुलाम वंश
↓
खिलजी वंश
↓
सैयद वंश
↓
लोदी वंश

अथवा

<u>मुगल काल</u>

बाबर → हुमाँयु → अकबर → जहाँगीर → शाहजहाँ →
औरंगजेब → बहादुर शाह जफर

- एक समय में एक ही प्रकरण पर व्याख्या देना अधिक मनोवैज्ञानिक होगा।
- एक व्याख्या को समाप्त करने के उपरान्त ही दूसरी प्रारम्भ करनी चाहिए।
- व्याख्या द्रुत गति से नही करनी चाहिए। इसकी गति उतनी ही रखनी चाहिए जिससे छात्र उसे भली भांति समझ सके।
- स्पष्टीकरण में उपयुक्त शब्दों, मुहावरों तथा उदाहरणों को भी यथोचित स्थान देना चाहिए जिससे छात्र व्याख्या में रूचि ले सके।

- व्याख्यान की समाप्ति के पश्चात् छात्रों को कुछ प्रश्न भी पूछने चाहिए जिससे यह पता चल सके कि उन्होने कितनी व्याख्या समझी है अथवा आत्मसात की है।
- व्याख्या अथवा स्पष्टीकरण में छात्र की शंकाओ के निवारण हेतु प्रावधान होना चाहिए।
- व्याख्या के दौरान कुछ प्रसंग ऐसे भी होते है जिनमें समानताएँ अथवा विषमताएँ होती है। यदि अध्यापक ऐसे प्रसंगो की तुलनात्मक व्याख्या दें तो छात्र एक साथ कई पहलुओं को आसानी से समझ सकते हैं जैसे :– धर्म पढ़ाते समय अध्यापक अपनी व्याख्या के दौरान सैन्धव धर्म, वैदिक कालीन धर्म, महाकाव्य काल, शैव धर्म, वैष्णव धर्म, शाक्त धर्म, बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म का आवश्यकतानुसार समानता अथवा विषमता के सन्दर्भ में उदाहरण दे सकता है। परन्तु स्मरण रहे यह तुलना किसी एक बिन्दु के सन्दर्भ में होनी चाहिए अन्यथा छात्र मुख्य बिन्दु से हट सकता है अथवा व्याख्या बोझिल हो सकती है।
- व्याख्या के अन्त में स्पष्ट उपसंहारात्मक कथन देना चाहिए।

5.3.4 व्याख्या के प्रकारः–

अध्यापक द्वारा प्रयोग की जाने वाली व्याख्या प्रविधि को उसके स्वरूप के आधार पर तीन भागों में बांटा जाता हैः–

1) कथनात्मक व्याख्याः– इस प्रकार की व्याख्या वो होती है जिसके अन्तर्गत अध्यापक विषय वस्तु के प्रकरण से सम्बन्धित प्रक्रिया, उसकी संरचना तथा पद्धति को उद्घाटित करता है अथवा स्पष्ट करता है।

2) व्याख्यात्मक व्याख्याः– इसका अभिप्राय है पढ़ाए जाने वाले प्रकरण अथवा समस्या को स्पष्ट करना। इसमें अध्यापक शब्द या वाक्य का केन्द्रीय अर्थ अथवा मूल भाव अपने छात्रों को सरल तथा बोधगम्य तरीके से सम्प्रेषित करता है।

3) निष्कर्षात्मक व्याख्याः– इसमें अध्यापक किसी परिणाम अथवा निष्कर्ष तक पहुचने के समस्त कारणों या प्रक्रिया के विभिन्न चरणों को भली भांति स्पष्ट करता है। दूसरे शब्दों में घटनाओं के स्पष्टीकरण करने के पश्चात् निष्कर्षात्मक व्याख्या करता है।

5.3.5 व्याख्या को प्रभावित करने वाले कारकः–

शिक्षक द्वारा व्याख्या करते समय अनेक ऐसे कारक हैं जो छात्रों के अधिगम को प्रभावित करते हैः–

- छात्रों की आयु तथा उनका मानसिक स्तरः– अर्थात छात्रों की आयु तथा उनका मानसिक स्तर व्याख्या के दौरान उनके अधिगम को बहुत अधिक प्रभावित करता है। यदि अध्यापक द्वारा की जाने वाली व्याख्या इसके प्रतिकूल है अथवा छात्रों के मानसिक स्तर से बहुत अधिक ऊँची अथवा कम है तो छात्र स्पष्ट किए गए तथ्यों को आत्मसात नही कर पाएंगे। अतएव व्याख्या करते समय अध्यापक को बालक का आयु तथा उसकी विविध मानसिक शक्तियों तथा योग्यताओं को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।
- छात्रों के पूर्व ज्ञानः– एक प्रभावी व्याख्या तभी मानी जाती है जो छात्रों के पूर्व ज्ञान पर आधारित होती है। जैसे यदि अध्यापक अकबर के विषय में पढ़ा रहा है तो छात्रों को यह स्पष्ट होना चाहिए कि अकबर मुगल शासक बाबर का पौत्र तथा हुमायूँ का पुत्र था। किन परिस्थितियों में उसने गद्दी संभाली। उसे विरासत में प्राप्त साम्राज्य कैसे बना या मुगल शासक वंश को पूर्व में किन – 2 शत्रुओं का सामना करना पड़ा तथा वर्तमान में उनके साथ कैसे सम्बन्ध है। यदि व्याख्या छात्रों के पूर्व ज्ञान पर आधारित है तो वे रूचि लेंगे अन्यथा छात्रों का अधिगम भली भांति न हो सकेगा।

- छात्रों की पारिवारिक पृष्ठभूमिः— छात्रों की परिवारिक पृष्ठभूमि यथा घर का वातावरण माता पिता की शिक्षा का स्तर, परिवार में छात्रों की सन्तुष्टि का स्तर, घर का माहौल आदि भी छात्रों के व्याख्या अधिगम को प्रभावित करता है। यदि छात्र अपने पारिवारिक वातावरण से असंतुष्ट है अथवा उसके परिवार का माहौल तनावपूर्ण है तो अध्यापक चाहे कितनी अच्छी व्याख्या क्यों न करें,छात्र उस पर एकाग्र नही हो सकेगा क्योकि उसके मस्तिष्क में तो घर के उथल – पुथल का प्रतिबिम्ब अंकित है जिससे वह परेशानी का अनुभव करता है।

- भौगोलिक परिस्थितियाँः— अर्थात कक्षा का भौतिक वातावरण मौसम के अनुकूल है कि नहीं। छात्रों की बैठने की उचित व्यवस्था है कि नहीं। उसे पर्याप्त प्रकाश एवं हवा मिल रहा है कि नही, आदि बातें निःसन्देह छात्रों के अधिगम को प्रभावित करती है।

- छात्रों का शारीरिक स्वास्थः— यदि छात्र में किसी भी प्रकार का शारीरिक विकार है जैसे जुकाम, बुखार, किसी भी प्रकार का अंगो में दर्द आदि, तो भी छात्र अपनी पढ़ाई की ओर एकाग्र नहीं हो सकेगा। तथा अध्यापक के द्वारा की गई व्याख्या उसे उबाऊ लगेगी। अतएव यदि बालक शारिरिक रूप से अस्वथ्य है तो इसका तत्काल इलाज करवाकर उसे स्वस्थ्य करना चाहिए।

5.3.6 व्याख्या प्रविधि का गुणः—

- व्याख्या करते समय अध्यापक के हाव–भाव, उसकी भाषा तथा उच्चारण भी छात्रों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

- सारगर्भित ढ़ंग से की गई व्याख्या छात्रों में विषयवस्तु के प्रति रूचि उत्पन्न करता है और वह उसे भली भांति समझ लेता है।

- व्याख्या से विषयवस्तु सरल तथा बोधगम्य हो जाती है।

- शिक्षक के साथ साथ छात्र भी सक्रिय रहता है जिससे अध्यापक द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर वह सही सही दे सकें।

- छात्रों को जहां कठिनाई महसूस होती है वह अध्यापक से उसे सरलीकरण के लिए कह सकता है।

- अध्यापक एक समय में कई छात्रों तक ंविषयवस्तु को क्रमबद्ध तथा सरल तरीके से सम्प्रेषित करता है इससे समय तथा श्रम दोनो की बचत होती है।

- अध्यापक द्वारा किये गए स्पष्टीकरण को छा़त्र बाद में भी अभ्यास करता है। इससे उनमें स्वध्याय की आदत विकसित होती है।

- यह प्रविधि छात्रमें अवधान केन्द्रीयकरण की आदत को विकसित करती है।

5.3.7 व्याख्या प्रविधि की सीमांएः—

- याख्या की सफलता प्रशिक्षित, योग्य तथा विद्वान अध्यापकों पर निर्भर करती है। इसके अभाव में व्याख्या प्रभावशाली नहीं हो सकती।

- यह विधि छोटे बच्चों के लिए अधिक उपयोगी नही है।

- विषय के समस्त प्रकरणों का शिक्षण इसके माध्यम से सम्भव नही है।

- कभी कभी पूरी कक्षा इस प्रविधि से लाभान्वित नहीं हो पाती, विशेष रूप से कक्षा के कमजोर छात्रों के लिए यह उपयोगी नहीं है।
- इससे श्रवण तथा स्मृति शक्ति तो बढ़ती है परन्तु अन्य ज्ञानेन्द्रियों का समुचित विकास नहीं हो पाता।
- व्याख्या के दौरान बताई गई बातों को कभी कभी छात्र भूल जाते हैं।
- अरूचिकर व्याख्या होने पर वह बोझिल और उबाऊ हो जाती है।
- वाणी की अस्पष्टता तथा द्रुत गति से की गई व्याख्या की समझ से परे हो जाती है।
- फिर भी हम व्याख्या या स्पष्टीकरण प्रविधि के महत्व को कम नहीं आंक सकते। क्योकि व्याख्या प्रविधि का प्रयोग प्राचीन काल से ही किया जाता रहा है। यह विधि अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा उपयोगी है। परन्तु सामाजिक अध्ययन के सभी प्रकरणों को मात्र हम व्याख्या विधि से नही स्पष्ट कर सकते। यदि व्याख्या प्रविधि के साथ हम सामाजिक अध्ययन की अन्य विधियों का भी प्रयोग करें तो निःसन्देह यह प्रविधि अत्यन्त फलदायी साबित होगी। साथ ही साथ प्रस्तावित प्रकरण के अनुसार यदि शिक्षक इसमें विभिन्न शिक्षण सामग्रियों यथा मानचित्र, चित्र या फोटोग्राफ, ग्राफ, समय रेखा चित्र, प्रतिरूप, रेखा चित्र, स्लाइड्स तथा सिक्कों आदि विभिन्न प्रतीकों का प्रदर्शन आदि का भी प्रयोग करें तो व्याख्या अथवा स्पष्टीकरण न केवल बोधगम्य होगी वरन छात्र भी रूचि के साथ अधिगम करेंगे।

बोध प्रश्न

1. ए0 एच0 गार्लिक ने स्पष्टीकरण के सन्दर्भ में क्या कहा?

....

....

2. व्याख्या प्रविधि को उसके स्वरूप के आधार पर कितने भागो में बांटा जाता है

....

....

5.4 खोज विधिः

5.4.1 ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः–

खोज विधि पर महान दार्शनिक तथा शिक्षा शास्त्री सुकरात, रूसो तथा जॉन ड्यूवी ने सर्वाधिक बल दिया। सुकरात ने खोज विधि को "प्रश्न पूछकर" प्रयोग में लाने पर बल दिया तो रूसो ने खोज विधि को व्यावहारिक समस्याओं का हल करके सीखने पर बल दिया। जबकि जॉन ड्यूवी ने अनुभव तथा सहभागिता के साथ ज्ञान की खोज पर बल दिया। जॉन ड्यूवी के अनुसार "खोज विधि की उपलब्धि ज्ञान है और आगे खोज का साधन है" उन्होने व्याख्यान की निष्क्रियता के लिए खोज विधि को एक महत्वपूर्ण विकल्प माना है। ब्रिटेन में प्रोफेसर एच0 ई0 आर्मस्ट्रांग ने खोज द्वारा अधिगम को विधि का मुख्य बिन्दु माना है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि खोज विधि कोई नवीन शिक्षण विधि नही है। विगत कई दशकों से इसका प्रयोग भिन्न – 2 तरीके से करते हुए छात्र को एक खोजकर्ता के रूप में अधिगम कराया जाता था। कालान्तर में इसे एक मान्य शिक्षण विधि के रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय जे0 एस0 ब्रूनर को जाता है।

5.4.2 खोज विधि का शाब्दिक अभिप्रायः–

आमतौर पर अन्वेषण, समस्या समाधान तथा ह्यूरिस्टिक विधि को खोज विधि का पर्याय के रूप में लिया जाता है जिसके मूल में नए तथ्यों का उद्घाटन तथा प्राचीन तथ्यों से नवीन तथ्यो की स्थापना निहित है। इसे अंग्रेजी भाषा में "**Discover**" (डिस्कवर) तथा ग्रीक भाषा में "**Heurisco**" (ह्यूरिस्को) कहां जाता है। "**Discover**" (डिस्कवर) का अभिप्राय "परत को खोलना अथवा किसी चीज को उघारना" तथा "**Heurisco**" (ह्यूरिस्को) का अर्थ "मै खोजता हूँ"। शाब्दिक तौर पर दोनो ही शब्द खोज की ओर ही संकेत करते हैं। यह विधि बालक को अन्वेषक की दशा में रखती है। बालक प्रत्येक बात की खोज करता चलता है और इस खोज से प्राप्त परिणामों पर नए सिद्धान्त अथवा नियम को प्रस्तुत करता चलता है।

जे0 एस0 ब्रूनर द्वारा प्रस्तावित खोज विधि में छात्रों द्वारा स्वयं तथ्यों अथवा सत्य की खोज करने की प्रेरणा निहित होती है। एक अच्छा शिक्षक वही माना जाता है जो विषय वस्तु को हलवे की भांति छात्रों के समक्ष नही प्रस्तुत करता है और न ही चम्मच से दूध पिलाने (Spoon feeding) का प्रयास करता है। वरन अपने शिक्षण के माध्यम से वह ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करता है कि छात्र स्वतः ही क्रिया करने हेतु प्रेरित होते हैं तथा साथ ही साथ नवीन तथ्यों, नियमों एवं सम्बन्धो की खोज करते हैं। वैसे भी समाजिक अध्ययन एक व्यावहारिक विषय है इसलिए इसे मात्र चाक एण्ड टॉक विधि से नही पढ़ाया जा सकता। सामाजिक अध्ययन को पढ़ाने का सबसे उत्तम तरीका यह है कि इसमें देखने, सुनने के साथ साथ स्पर्श करने की क्षमता भी पूर्णतया प्रयुक्त एवं विकसित होनी चाहिए। अधिगम के सन्दर्भ में कहा जाता है कि यह मस्तिष्क से हाथ तक होनी चाहिए परन्तु हमारे विद्यालयों में सामाजिक अध्ययन की शिक्षा मस्तिष्क तक सीमित है और हाथ की उपेक्षा होती है। दूसरे शब्दों में इसका शिक्षण बालक के ज्ञानात्मक पक्ष को तो विकसित करता है पर कौशलात्मक पक्ष की उपेक्षा करता है।

परन्तु खोज विधि एक ऐसी विधि है जिसमें अधिगम की यात्रा मस्तिष्क से शुरू हो हाथ तक चलती है, जिसमें छात्र एक खोजकर्ता के रूप में अधिगम करता है। इस विधि का मुख्य उद्देश्य छात्र को निरन्तर एक खोजकर्ता अथवा शोधकर्ता के रूप में रखना है। इससे अधिगम प्रणाली अधिक सुरूचिपूर्ण हो जाती है क्योकि यह विधि उत्सुकता, रूचि और प्रयोग पर आधारित होती है और छात्र इसमें आने वाली समस्याओं का समाधान स्वयं ही करता है। इस विधि में छात्रों को तथ्य नही बताएं जाते हैं परन्तु अध्यापक उनमे खोज की अभिवृत्ति विकसित कर उन्हे खुद से प्रयासों के माध्यम से तथ्यों को खोज निकालने को प्रेरित करता है और छात्र पूरे स्फूर्ति तथा उत्साह के साथ नवीन तथ्यों की खोज कर ज्ञानार्जन करता है और आवश्यकतानुसार अपने अध्यापक से निर्देशन भी प्राप्त करता है। इस सन्दर्भ में कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं इसके सम्प्रत्यय को और अधिक स्पष्ट करेंगी जैसे–

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने छात्र केन्द्रित तथा क्रिया आधारित अधिगम प्रविधि पर सर्वाधिक बल देते हुए खोज विधि को महत्वपूर्ण बताया जिसके अनुसार खोज विधि वह प्रविधि है जिससे छात्र स्वयं नवीन संप्रत्यय ढूढ़ते हैं। उसमें अध्यापक अधिगम प्रविधि का सरलीकरण करते हुए अधिगम परिस्थितियों का प्रबलन करता है।

आमतौर पर अन्वेषण, समस्या समाधान तथा हयूरिस्टिक विधि को खोज विधि के पर्याय के रूप में लिया जाता है।

वेबेस्टर शब्द कोश के अनुसार "खोज का अर्थ है पता लगाना, ढूढ़ना अथवा उघारना"।

केरिन एवं सूँड (1984) ने इस विधि को स्पष्ट करते हुए कहा कि "जब कोई छात्र नवीन सम्प्रत्यय अथवा सिद्धान्त की खोज में मानसिक प्रविधियों को प्रयोग में लाता है, उस समय खोज विधि प्रारम्भ हो जाती है। खोज संज्ञानात्मक प्रविधियाँ जैसे – अवलोकन, वर्गीकरण, वर्णन तथा निष्कर्ष निकालना आदि है।"

प्रो0 एच0 ई0 आर्मस्ट्रांग के अनुसार "यह एक ऐसी शिक्षण नीति है जिसमे हम विद्यार्थियों को यथा सम्भव एक खोजकर्ता या खोज करने वाले की स्थिति में रखते हैं। वस्तुओं के विषय में कहे जाने की अपेक्षा उनकी खोज को आवश्यक माना जाता है।"

इस विधि का समर्थन करते हुए हरबर्ट स्पेन्सर ने भी कहा है कि "विद्यार्थियों को अधिक से अधिक खोजने

के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।"

प्रो0 वैधा के अनुसार "इस विधि में छात्रों को एक कागज दिया जाता है, जिसमे आदेश लिखे होते हैं। उनके अनुसार उसे प्रयोग करना होता है अथवा अवलोकन करना होता है। छात्र अपनी नोटबुक में इस अवलोकन के आधार पर निष्कर्ष निकालता है और चिन्तन करता है।"

ब्रूनर का इस विधि के सन्दर्भ में मानना है कि "यह नीति विद्यार्थियों को उनके मानसिक स्तर, आयु, कक्षा तथा अन्य सम्बन्धित कारकों के अनुसार उन्हे मौलिक रूप से नवीन ज्ञान की खोज कराती है। इसमे तथ्यों की व्याख्या इस प्रकार की जाती है कि जिससे नवीन तथ्यों का बोध होता है।"

5.4.3 खोज विधि का प्रबन्धन–

इस विधि मे किसी भी समस्या को छात्र के सम्मुख रखा जाता है। अध्यापक उससे सम्बन्धित कुछ सामान्य निर्देशों की एक शीट उसे देता है। इसके पश्चात छात्र अपने स्तर से अवलोकन के आधार पर तथा विभिन्न सन्दर्भ पुस्तकों के अनुशीलन के आधार पर सम्बन्धित तथ्यों की खोज करता जाता है और मुख्य बिन्दुओं को अपने नोटबुक में लिखता है और इस आधार पर उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह समग्रता के साथ तथ्यों को प्रस्तुत कर उसका निष्कर्ष निकाले। इस प्रकार वह अपने बल पर खोज करते हुए सीखता चला जाता है।

उपयफ्रक्त प्रक्रिया को हम निम्नलिखित सोपान के अन्तर्गत देख सकतें हैः–

- सर्वप्रथम छात्र खोज प्रक्रिया की एक रूपरेखा बनाता है।
- आवश्यक सामग्री एकत्रित करता है। सामग्री एकत्रीकरण का आधार, अवलोकन, विभिन्न सम्बन्धित पुस्तकों का अध्ययन, विचार विमर्श आदि हो सकता है।
- तथ्यों को एकत्रित करता है।
- उपलब्ध तथ्यों का विश्लेषण करता है।
- विश्लेषण के आधार पर निष्कर्ष निकालता है।
- और अन्त में प्राप्त विवरण का व्यवस्थित ढ़ंग से एक प्रतिवेदन तैयार करता है।

5.4.4 खोज विधि के सिद्धान्तः–

- स्वशिक्षा या स्वअनुभव का सिद्धान्त।
- क्रियाशीलता अथवा करके अधिगम करने का सिद्धान्त।
- प्रेरणा का सिद्धान्त।
- स्वतन्त्रता का सिद्धान्त।
- रूचि का सिद्धान्त।

5.4.5 खोज विधि में अध्यापक की भूमिकाः–

इस विधि का शिक्षण – अधिगम परिस्थितियों में सफलता पूर्वक प्रयोग तभी सम्भव है जब अध्यापक अपने बहुआयामी उत्तर दायित्वों का निर्वहन करे जैसेः–

- छात्रों को प्रस्तावित समस्या के स्वरूप से भली भांति परिचित कराएं तथा उस सन्दर्भ में खोज हेतु कुछ संकेत भी प्रदान करे।

- खोज हेतु उपयुक्त परिस्थितियां तथा वांछित सामग्रियों को सुलभ कराए।

- शिक्षक छात्रों की कार्यनीति का अप्रत्यक्ष रूप से अवलोकन करते हुए आवश्यकतानुसार छात्रों को मार्गदर्शन भी दे।

- छात्रों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति तथा मूल्यों के विकास में सहयोग प्रदान करे।

5.4.6 खोज विधि के गुणः—

- यह विधि छात्रों की बौद्धिक क्षमता में वृद्धि करती है।

- इस विधि से छात्रों की जिज्ञासा तथा खोज अभिवृत्ति का विकास होता है।

- उनमें अवलोकन का कौशल विकसित होता है। इससे वे सदैव कुछ जानने एवं पाने को तत्पर रहते है।

- किसी भी कार्य को धैर्य से करने की क्षमता विकसित होती है।

- इस विधि से छात्रों की शारीरिक व मानसिक क्रियाओं का समन्वय हो जाता है।

- इस विधि से प्राप्त अधिगम स्थायी होता है क्योकि छात्र स्वंय के प्रयासों द्वारा तथ्यों को संयोजित करता है।

- छा़त्र पूरी रूचि के साथ व्यक्तिगत रूप से कार्य करते हुए अधिगम करता है।

- यह विधि मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के अनुरूप है क्योकि इस विधि के माध्यम से छात्रों में जिज्ञासा की प्रवृत्ति, कठोर परिश्रम करने की आदत, साहस, धैर्य, मितव्ययता, वस्तुनिष्ठता तथा रचनात्मक कल्पना जैसे गुणों का विकास होता है।

- चूकि इस विधि मे छात्र प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से अध्यापक के सम्पक्र में होते हैं इसलिए यह छात्रों के व्यक्तिगत समस्याओं एवं कठिनाइयों के निवारण में अत्यंत सहायक है।

- यह विधि छात्रों में आत्मनिर्भरता के भाव को विकसित करने में सहायक है।

- इस विधि से छात्रों के समक्ष गृहकार्य की कोई समस्या नही होती।

- यह विधि छात्रों को विषय वस्तु के प्रति गहन निरीक्षण करने, स्वाध्याय करने, चिन्तन एवं अन्तर्दृष्टि का प्रयोग करने हेतु प्ररित करती है।

- खोज विधि रटन्त स्मृति की आदत को त्यागकर विषयवस्तु के गहन अध्ययन तथा विश्लेषण करने की प्रवृत्ति का विकास करती है।

- खोज विधि से िविषयवस्तु में निपुणता का गुण विकसित होता है।

- यह विधि छात्रों को किसी भी चीज के बारीक विश्लेषण तथा ताक्रिक क्षमता के आधार पर उनकी आपसी सम्बन्धों के बारे में जानने — समझने के योग्य बनाती है।

- इस विधि के दौरान छात्र की समस्त मानसिक शक्तियां सक्रिय रहती है।

- उसमें निर्णय लेने की क्षमता आ जाती है

- छात्र पूरी स्फूर्ति तथा उत्साह के साथ अधिगम करता है।

- खोज विधि से छात्रों में वैज्ञानिक तथा खोज की अभिवृत्ति और मूल्यों का विकास होता है।

5.4.7 खोज विधि के दोषः—

- इस विधि का सबसे बड़ा दोष यह है कि हर एक विषय के शिक्षण में इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता।

- इस विधि में समय बहुत अधिक लगता है जबकि एक अध्यापक पर सत्रान्त तक विषय वस्तु को समाप्त करवाने का उत्तरदायित्व रहता है।

- इस विधि की सफलता खोज विधि में पारंगत तथा प्रशिक्षित अध्यापकों पर ही निर्भर करती है।

- खोज विधि के माध्यम से कक्षा के हर एक छात्र को पढ़ाना सम्भव नहीं हो पाता है प्रतिभावान छात्रतो इसमें सक्रियता से भाग लेतें है परन्तु कमजोर छात्र इस विधि से लाभान्वित नहीं हो पाते हैं।

- निम्न माध्यमिक स्तर पर इस विधि का सफलता पूर्वक प्रयोग नहीं किया जा सकता क्योकि इस स्तर पर छात्र मानसिक रूप से परिपक्व नहीं हो पाते। अतएव यह विधि उच्च कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी है।

- इस विधि से छात्रों में अभिव्यक्ति क्षमता तथा विषयवस्तु को ताक्रिक रूप से प्रकट करने की क्षमता को ठीक प्रकार से नही विकसित किया जा सकता।

- इस विधि मे छात्र तथा अध्यापक दोनो की ही शिक्षण – अधिगम की प्रक्रिया में विशिष्ट तैयारी तथा सक्रिय सहभागिता की आवश्यकता होती है अन्यथा परिणामों में त्रुटि की सम्भावना आ जाती है।

- इस विधि में छात्रों से एक शोधकर्ता के रूप में अपेक्षा की जाती है जो छोटे छात्रों के लिए अत्यन्त अमनोवैज्ञानिक है।

- प्रयोग पर आधारित होने के कारण इसमे विभिन्न सामग्रियों की आवश्यकता होती है क्षेत्रीय भ्रमण सें विभिन्न साक्ष्यों के संग्रह की आवश्यकता होती जिसके आधार पर ही छात्र इस विधि का प्रयोग करते हुए प्रस्तावित प्रकरण के सन्दर्भ में एक निष्कर्ष निकाल सकता है और ये सभी बातें माध्यमिक स्तर पर अत्यन्त अव्यावहारिक प्रतीत होती है। यही कारण है कि शिक्षक खोज विधि के झमेले में न पड़ कर परम्परागत शिक्षण विधियों को ही वरीयता देते हैं।

उपयफ्रक्त दोषों के बावजूद भी सामाजिक अध्ययन के अधिगम के लिए यह विधि अत्यन्त उपयोगी है। इसमे अनेक ऐसे प्रकरण है जिस पर खोज के लिए छात्र को प्रेरित किया जा सकता है जैसे – विभिन्न मुद्राओं या अभिलेखों की खोज अथवा उपलब्ध मुद्राओं की अवलोकन के आधार पर एक वृत्तान्त प्रस्तुत करना, अभिलखों को पहचानना तथा उससे सम्बन्धित ब्यौरा स्वयं प्रस्तुत करना, विभिन्न राष्ट्रीय ध्वज, करेन्सी या धरातल या विभिन्न प्रकार की मिट्टियों के बारे में खोज करना आदि। यह विधि पूर्णतया छात्रकेन्द्रित होने के कारण मनोवैज्ञानिक रूप से भी अत्यन्त उपयोगी है। परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सामाजिक अध्ययन के समस्त प्रकरणों के शिक्षण हेतु इस विधि का अकेले प्रयोग नही किया जा सकता है क्योकि मात्र इस विधि से सामाजिक अध्ययन का पाठयक्रम निर्धारित समय में पूरा कर पाना असम्भव सा प्रतीत होता है। यदि खोज विधि का प्रयोग अन्य शिक्षण विधियों की सहयोगी विधि के रूप में किया जाए, तो निस्सन्देह इस विधि का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।

इस विधि को और अधिक सफल बनाने के लिए डा0 सीता राम जायसवाल का इस सन्दर्भ में सुझाव है कि " इस विधि को स्वीकार कर लेने पर कक्षा में बालकों के सम्मुख कार्य करने के लिए एक समस्या रख दी जाए और हर बालक को स्वतंत्र रूप से तक्र वितक्र करने के लिए प्रेरित किया जाए। वाद – विवाद और प्रश्न पूछने का अवसर प्रदान किया जाए और उत्तर भी छात्र स्वयं ढूढ़े। अध्यापकों को कुछ ऐसे प्रश्न पूछने चाहिए, जो छात्रों में उत्सुकता जागृत करें, उनकी बुद्धि को सक्रिय करें। प्रश्न ऐसे हों कि छात्रों में विषय के प्रति रूचि जागृत करें।"

5.4.8 खोज विधि को प्रभावशाली बनाने हेतु अपेक्षित सुझावः–

खोज विधि को शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया हेतु और अधिक प्रभावशाली बनाने हेतु डा0 सीता राम जायसवाल के उपरोक्त सुझाव के साथ – 2 हम निम्नलिखित सुझाव को भी अंगीकृत कर सकतें हैः–

- इस विधि का प्रयोग करने हेतु सर्वप्रथम अध्यापकों को भली भांति प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- शिक्षक द्वारा सर्वप्रथम किसी भी प्रकरण के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करके उसके आधार पर ही समस्या को प्रस्तुत करना चाहिए। तत्पश्चात उसे प्रस्तावित समस्या पर खोज करके तथ्यों और मान्यताओं को प्रस्तुत करते हुए उसका समाधान प्रस्तुत करने हेतु प्रेरित करना चाहिए।
- छात्रों के समक्ष प्रस्तुत समस्या रोचक, प्रभावी तथा उपयोगी होनी चाहिए।
- सम्पूर्ण पाठ्यक्रम से चयनित अंशो को ही इस विधि से अधिगम हेतु प्रस्तुत किया जाना चाहिए।
- खोज विधि के निर्धारित सोपानों को ध्यान में रखने हुए शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया का संचालन करना चाहिए।
- इस विधि का प्रयोग करते समय शिक्षक द्वारा बार–बार अवरोध उत्पन्न नही करना चाहिए। जहां आवश्यक हो, वही पर छात्रों को निर्देशित करना चाहिए।
- खोज हेतु उपयुक्त कक्षा वातावरण अथवा वातावरण देना चाहिए।
- छात्रों को पूर्ण स्वतन्त्रता दी जाए।
- छात्र खुद को सुरक्षित तथा मान्य महसूस करें।
- आवश्यकता अनुसार समय समय पर अध्यापक का पर्याप्त मार्गदर्शन मिलता रहना चाहिए।
- इस विधि द्वारा अधिगम हेतु उसे निरन्तर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- यदि खोज विधि का अनुसरण छात्रों के समूह के सन्दर्भ में किया जा रहा है तो समूह के प्रत्येक सदस्य में पारस्परिक सद्भावना तथा स्वस्थ्य अन्तःक्रिया होनी चाहिए तथा इसमें समूह के प्रत्येक सदस्य की सक्रिय भागीदारिता अनिवार्य होनी चाहिए।
- यदि छात्र इस विधि के तहत किसी चुनौती को स्वीकार कर रहा है तो अध्यापक को हस्तक्षेप कदापि नहीं करना चाहिए।
- स्वयं अध्यापक को भी स्वाध्याय प्रिय होना चाहिए। साथ ही साथ उसमें जिज्ञासा, निरीक्षण की प्रवृत्ति, रूचि तथा वैज्ञानिक खोज के प्रति लगन एवं स्फूर्ति होना चाहिए। जिससे अध्यापक के ऐसे व्यक्तित्व से छात्र स्वतः खोज हेतु प्रेरित हो सके। प्रायः देखा गया है कि अध्यापक को

विद्यालय के पुस्तकालय में आवश्यक सन्दर्भ ग्रन्थ, पुस्तकें, मानचित्र, विश्वकोष, एटलस की उपलब्धता के विषय में ज्ञान नहीं होता। वह मात्र एक दो पुस्तक की अध्ययन सामग्री छात्रों को लिखा कर अपने कर्तव्यों की इतिश्री मान लेता है। ऐसी स्थिति में वह अपने छात्रों को इस सन्दर्भ में कैसे खोज हेतु प्रेरित कर सकता है ? अतएव सर्वप्रथम अध्यापक को इस सन्दर्भ में अपना आदर्श प्रस्तुत करना होगा।

- खोज विधि का प्रयोग छात्रों के सृजनात्मक क्षमता के उन्नयन में ही होना चाहिए।
- उपरोक्त सुझावों को ध्यान में रखते हुए ही हम खोज विधि को एक सफल शिक्षण – अधिगम विधि के रूप में अंगीकृत कर सकते हैं।

बोध प्रश्न

3. खोज विधि को एक शिक्षण विधि के रूप में किस प्रकार अस्तित्व प्रदान किया गया ?

____
____
____

4. डा0 सीता राम जायसवाल ने खोज विधि के सन्दर्भ में क्या सुझाव दिए ?

____
____
____

5. खोज विधि द्वारा शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया में अध्यापक को छात्रों के कार्य में बार बार अवरोध क्यो नही उत्पन्न करना चाहिए ?

____
____
____

5.5 सारांशः–

प्रस्तुत इकाई में आपने सामाजिक अध्ययन में खोज तथा स्पष्टीकरण अथवा व्याख्या प्रविधि द्वारा अधिगम को पढ़ा जिसके अन्तर्गत आपने इनके सम्प्रत्यय, विधि तथा महत्व का अध्ययन किया। इसके अनुशीलन से आप इतना तो अवश्य समझ गए होंगे कि इनका सामाजिक अध्ययन के शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया में बहुत अधिक महत्व है तथापि हम मात्र इनके आश्रय अथवा माध्यम से सामाजिक अध्ययन के प्रत्येक प्रकरण का शिक्षण नहीं कर सकते। वरन अन्य शिक्षण विधियों की सहायक विधि के रूप में इनका प्रयोग सफलता पूर्वक किया जा सकता है।

5.6 अभ्यास कार्यः–

- सामाजिक अध्ययन के किसी भी प्रकरण पर अपने साथी अध्यापकों के मध्य एक व्याख्या दें। व्याख्या के दौरान महसूस किये जाने वाली व्यावहारिक समस्याओं को लिखिए तथा उन समस्याओं को आप कैसे दूर करेंगे, इसका सुझाव भी दीजिए ?

- अपने छात्रों को यदि आप खोज विधि से अधिगम कराना चाहते हैं तो सर्वप्रथम उन प्रकरणों की सूची बनाइए जिनके शिक्षण में इस विधि का प्रयोग किया जा सकता है तथा अपनी शिक्षण रणनीतियों को एक क्रम में लिखिए ?

5.7 चर्चा के बिन्दुः–

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में स्पष्टीकरण विधि एक प्रभावशाली प्रविधि है।

- खोज विधि छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में सहायक है।
- व्याख्या छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए।
- खोज विधि द्वारा शिक्षण – अधिगम की प्रक्रिया में कुछ व्यावहारिक समस्याएं आती है।

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तरः–

1. ए0एच0 गार्लिक ने अपनी पुस्तक "ए न्यू मैनुअल ऑफ मैथेड" में स्पष्टीकरण के सन्दर्भ में कहा है कि " स्पष्टीकरण यर्थाथ में वर्णन का एक रूप है। स्पष्टीकरण से भाव अथवा अर्थ को स्पष्ट किया जाता है। इसे हम विचारों अथवा तथ्यों को स्पष्ट रूप में प्रकट करने की कला कह सकते है"।
2. व्याख्या प्रविधि को उसके स्वरूप के आधार पर तीन भागों में बांटा जाता हैः–
   1) कथनात्मक व्याख्या
   2) व्याख्यात्मक व्याख्या
   3) निष्कर्षात्मक व्याख्या
3. एक अच्छा शिक्षक वही माना जाता है जो छात्रों के समक्ष ज्ञान को परोसने अथवा स्पून फीडिंग का काम नही कराता, वरन बालकों को अन्वेषक की दशा में रखता है। वह अपने शिक्षण के माध्यम से ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करता है कि छात्र स्वतः ही क्रिया करने हेतु प्रेरित होते है तथा साथ ही साथ नवीन तथ्यों, नियमों एवं सम्बन्धों की खोज करते हैं। इस प्रकार इसकी उपयोगिता एवं महत्व को दृष्टिगत रखते हुये इसे शिक्षण की खोज विधि के रूप में परिकल्पित किया गया।
4. डा0 सिया राम जायसवाल ने खोज विधि के सन्दर्भ में सुझाव देते हुये कहा कि "इस विधि को स्वीकार कर लेने पर कक्षा में बालको के सम्मुख कार्य करने के लिये एक समस्या रख दी जाये और हर बालक को स्वतन्त्र रूप से तक्र वितक्र करने के लिये प्रेरित किया जायें। वाद – विवाद और प्रश्न पूछने के अवसर दिये जाये और उत्तर भी छात्र स्वंय ढूंढ़े। अध्यापकों को कुछ ऐसे प्रश्न पूछने चाहिये, जो छात्रों में उत्सुकता जागृत करे, उनकी बुद्धि को सक्रिय करे। प्रश्न ऐसे हो कि छात्रों में विषय के प्रति रूचि जागृत करें।"
5. खोज विधि द्वारा शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया में अध्यापको को छात्रों के कार्य में बार–बार अवरोध उत्पन्न नही करना चाहियें क्योकि बार–बार अध्यापक के रोकने टोकने पर उससे ज्यादा गलतियॉ होने की संभावना बढ़ जायगी, वह स्वंय को असफल समझने लग सकता है तथा स्वतन्त्रता बाधित होने के कारण वह मौलिक तथा स्वाभाविक रूप से सोचने में असमर्थ हो सकता है। इसलिये जहां आवश्यक हो, वहीं पर छात्रों को निर्देशित करना चाहिये।

5.9 सन्दर्भ पुस्तके :–

Burner, Jerome,s.–Towards A Theory of Instruction’ 1971’ Cambridge’ Harvard University Press.

मिश्रा, आर0 एम0 – शिक्षण तकनीक एवं मूल्यांकन, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, 2013

इकाई –6 समूह में सामाजिक अध्ययन का अधिगम, समूह कार्य, सहयोगात्मक अथवा सहकारी शिक्षण

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 समूह में सामाजिक अध्ययन का अधिगम

6.3.1 वाद विवाद अथवा विवेचन विधि

6.3.2 नामिका परिचर्चा विधि

6.3.3 चर्चा – परिचर्चा विधि

6.3.4 विचारावेश

6.3.5 परिसंवाद विधि

6.3.6 समाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति

6.3.7 निरीक्षित अध्ययन विधि

6.4 समूह कार्य

6.5 सहयोगात्मक अथवा सहकारी शिक्षण

6.5.1 दल शिक्षण

6.5.2 शिक्षण विधिः एक सिन्हावलोकन

6.6 सारांश

6.7 अभ्यास कार्य

6.8 चर्चा के बिन्दु

6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.1 प्रस्तावना

हमारे वर्तमान विद्यालयों में आम तौर पर अध्यापक प्रश्न पूछते है और शिक्षार्थी उनका उत्तर देते है। उत्तर देने वाले शिक्षार्थी भी वही होते हैं जिन्हे अध्यापक कहता है। छात्रों को परस्पर एक दूसरे से प्रश्न करने तथा उत्तर देने की आदत नहीं विकसित की जाती। चूंकि वे आपस में विचार विमर्श नहीं करते, इसलिए उनमे सामूहिक क्रियाओं अथवा किसी कार्य को मिल जुल कर करने की प्रवृत्ति का विकास नही हो पाता और उनमे सामाजिक कुशलताओं तथा सामाजिक गुणों का नितान्त अभाव हो जाता है। जैसा कि हम सभी जानते है कि हमारा देश एक लोकतान्त्रिक देश है जिसके मूल में सर्व जन हिताय निहित है तथा

इसका मुख्य सन्देश मिल जुल कर रहना तथा कार्य करना है आज के शिक्षार्थी ही देश के भावी कर्णधार है जिन्हे देश की प्रगति एवं उत्थान के मार्ग को प्रशस्त करना है परन्तु यह तभी सम्भव होगा जब उनमे समूहिक कार्य की प्रवृत्ति, सामाजिक कौशल तथा पारस्परिक सहयोग का भाव होगा। निःसन्देह इन भावों का विकास छात्रों में किया जा सकता है, बशर्ते हमारे विद्यालयों में सामूहिक ढ़ंग से कार्य करने के कौशल को विकसित किया जाए। प्रस्तुत इकाई में समूह आधारित शिक्षण विधियों अथवा निविष्टियों की चर्चा की जा रही है जिनके माध्यम से हम सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त करते हुए समाज में ऐसे उत्पाद तैयार करेंगे जो हमारी लोकतान्त्रिक व्यवस्था को निःसन्देह फलीभूत करेंगे।

6.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप–

- समूह शिक्षण विधियों के अन्तर्गत आने वाली विधियों के नाम का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- वाद – विवाद विधि के सोपानों की सूची बना सकेंगे।
- नामिका – परिचर्चा तथा चर्चा परिचर्चा में विभेद कर सकेंगे।
- दल शिक्षण का आयोजन कर सकेंगे।
- सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति का मूल्याकंन कर सकेंगे।
- विभिन्न शिक्षण विधियों का विश्लेषण कर सकेंगे।

6.3 समूह में सामाजिक अध्ययन का अधिगम

छात्रों में सामाजिक कुशलताओं और सामाजिक गुणों के विकास हेतु सामूहिक शैक्षिणिक निविष्टियां अत्यन्त महत्वपूर्ण है। एक प्रजातन्त्रीय शिक्षक वही होता है जो अपनी कक्षाओं में विविध प्रकार की सामूहिक क्रियाओं को करवाते हुए शिक्षण करते हैं तथा कक्षा के प्रत्येक शिक्षार्थी को ज्ञानार्जन के उपयुक्त अवसर प्रदान करते हुए उनमे सामाजिक तथा लोकतान्त्रिक गुणों का विकास करते है। सुप्रसिद्ध शिक्षार्थी शास्त्री कार्ल मैनहीम **(Karl Mannheim)** ने शिक्षण के दौरान ऐसी क्रियाओं के आयोजन पर विशेष बल दिया है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि ऐसी शिक्षण विधियां जिनमे अधिगम समूह में होता है समूह शिक्षण विधियॉ कहलाती हैं अर्थात जब शिक्षार्थी व्यक्तिगत रूप से नही वरन् समूह में अधिगम करते हैं तो इसे ही समूह में अधिगम करना कहते हैं। इसके अन्तर्गत वाद–विवाद अथवा विवेचन विधि, नामिका परिचर्चा विधि, चर्चा परिचर्चा विधि, विचारावेश विधि, परिसंवाद विधि, सामाजीकृत अभिव्यक्ति, निरीक्षित अध्ययन विधि आदि जिनका विवरण निम्नलिखित पंक्तियों में ध्यातव्य हैः–

6.3.1 वाद विवाद अथवा विवेचन विधि

यह विधि मुख्यतया विवादास्पद मुद्दों के सन्दर्भ में सर्वाधिक उपयुक्त होती है जिसमें शिक्षार्थी अपनी पूर्ण सक्रियता तथा सहभागिता प्रस्तुत करता है। वाद विवाद, शिक्षण की एक ऐसी विधि है जिसमें शिक्षक तथा शिक्षार्थी मिलजुल कर किसी प्रकरण, प्रश्न अथवा समस्या के सम्बन्ध में सामूहिक वातावरण में स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचारों का आदान प्रदान करते हैं। इसे और अधिक हम निम्नलिखित विद्वान के कथन से समझ सकते है

सैटलर तथा मिलर के अनुसार "वाद–विवाद दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा विचारशील चिन्तन है जिससे वे

किसी समस्या के समाधान या उसकी अच्छी जानकारी प्राप्त करने के लिए किए गए प्रयास में सहयोगी रूप से विचारों एवं सूचनाओं का आदान प्रदान करते हैं।"

जेम्स एस0 ली0 ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है कि "वाद विवाद एक शैक्षिक सामूहिक क्रिया है जिसमें शिक्षक तथा शिक्षार्थी सहयोगी रूप से किसी समस्या या प्रकरण पर बातचीत करते हैं।"

योखम तथा सिम्पसन के अनुसार "वाद – विवाद बातचीत का एक विशिष्ट स्वरूप है। इसमें सामान्य बातचीत की अपेक्षा अधिक विस्तृत एवं विवेक युक्त विचारों का आदान प्रदान होता है। सामान्यतया वाद – विवाद में महत्वपूर्ण विचारों को शामिल किया जाता है।"

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विवेचन अथवा वाद–विवाद शिक्षण की एक विधि है जिसमें विचारों का आदान प्रदान होता है, विवेचनात्मक चिन्तन होता है, ताक्रिक चिन्तन होता है जिसके फलस्वरूप किसी प्रकरण का बोध होता है और अन्ततः समस्या का समाधान प्राप्त किया जाता है। यह एक विचारों के पारस्परिक आदान प्रदान की विधि है।

1) वाद विवाद का संचालन अथवा इसके सोपानः– वाद–विवाद का आयोजन एक कला है। यदि इसका नियोजन सतक्रता के साथ करते हुए इसे कार्यान्वित किया जाए तो यह एक प्रभावी अनुदेशात्मक विधि साबित होती है। इसके सोपास निम्नलिखित है :–

- सर्वप्रथम अध्यापक किसी प्रकरण को वाद – विवाद के लिए चुनता है।
- उसके पश्चात् जो शिक्षार्थी इसमें हिस्सा लेना चाहते है उन्हे दो भागों में बाँटा जाता है। एक भाग प्रस्ताव के पक्ष में बोलेगा और दूसरा भाग विपक्ष में, शेष शिक्षर्थी श्रोता वर्ग में रहेंगे।
- उसके पश्चात् चयनित प्रकरण पर समस्त शिक्षार्थी अपने अपने विचार व्यक्त करते हैं।
- उनका यह विचार तथ्यों पर आधारित होगा।
- समस्त प्रतिभागी छात्रों द्वारा अपने अपने विचार व्यक्त करने के पश्चात् श्रोतावर्ग वाले शिक्षार्थी प्रस्तुत विषय पर तथा प्रतिभागी छात्रों के प्रस्तुतीकरण पर परस्पर संक्षिप्त टीका टिप्पणी कर सकते है।
- अध्यापक समस्त बिन्दुओं को ध्यान से सुनेंगे तथा आवश्यकता अनुसार उसे लिखेंगे।
- अन्ततः प्रस्तावित समस्या का प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर एक समाधान निकालेंगे।

इस प्रकार वाद – विवाद के संचालन में मुख्यतया चार बिन्दु निहित है–

(1) प्रारम्भ (3) व्याख्या

(2) विश्लेषण (4) निष्कर्ष

2) वाद विवाद का स्वरूपः– वाद विवाद में चार प्रकार की भूमिकाएं अपेक्षित होती है–

(1) अनुदेशक (Instructor) की भूमिका शैक्षिक वाद–विवाद में अध्यापक को निभानी पड़ती है जो सम्पूर्ण व्यवस्था करता है तथा आवश्यकता अनुसार वह छात्रों से इसका पूर्वाभ्यास भी कराता है।

(2) अध्यक्ष (Moderator) अध्यापक किसी भी प्रतिष्ठित व्यक्ति को अध्यक्ष के पद पर सुशोभित करता है जो वाद –विवाद की प्रक्रिया का संचालन करता है। प्रायः अध्यक्ष वही चुना जाता है जो प्रस्तावित प्रकरण का विशेषज्ञ होता है जिसमें वह अपनी राय निष्कर्ष के रूप में व्यक्त कर

प्रकरण को और अधिक बोधगम्य बना सके।

(2) समूह के सदस्य (Panelists) 4 से 10 की संख्या में समूह के सदस्य अर्द्ध – गोलाकार स्थिति में वाद – विवाद हेतु बैठते हैं जो प्रस्तावित पहलुओं पर अपने विचार व्यक्त करते हैं। अर्द्ध – गोलाकार स्थिति में बैठे हुए सदस्यों के सम्मुख तथा मध्य में अध्यक्ष का स्थान होता है।

(3) श्रोतागण (Audience) वाद विवाद को ध्यान से सुनते हुए श्रोतागण आनन्द लेते हैं और समाप्ति पर अपनी प्रतिक्रिया भी व्यक्त करते हैं। यदि वे प्रश्न पूछते हैं तो सदस्य गण उनके प्रश्नो के उत्तर भी देते हैं।

3) वाद – विवाद को प्रभावशाली बनाने के उपाय –

- समस्या अथवा प्रकरण का चयन ऐसा होना चाहिए जिसके पक्ष तथा विपक्ष में अधिक से अधिक बिन्दु रखे जा सके।
- यह प्रक्रिया आरम्भ होने से पूर्व प्रतिभागी छात्रों को विषय वस्तु से सम्बन्धित पुस्तकों तथा पत्रिकाओं का भलीभांति अनुशीलन कर पूरी तैयारी कर लेनी चाहिए।
- यह प्रक्रिया अध्यापक द्वारा निर्देशित होनी चाहिए।
- वाद – विवाद के दौरान निरर्थक बातों को कोई स्थान नही देना चाहिए।
- प्रतिभागियों को अपने विचार पूर्ण स्वतन्त्रता के साथ रखने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।
- अपने विचारों को मयार्दित ढ़ग से रखने का पूर्ण निर्देशन अध्यापक द्वारा दे दिया जाना चाहिए क्योकि यहां पर अपने अपने मत रखने का उद्देश्य विचारों का मंथन कर एक सारगर्भित निष्कर्ष निकालना है न कि अपनी श्रेष्ठता को साबित करना।
- प्रत्येक प्रतिभागी को वह चाहे पक्ष का हो अथवा विपक्ष का, एक दूसरे के विचार के मर्म को समझते हुए सहयोगात्मक प्रवृत्ति के साथ इससे भाग लेना चाहिए।
- ऐसे छात्रों को भी इसमे भाग लेने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए जो शर्मीले प्रकृति के होते हैं।
- समस्या का स्तर छात्रों के स्तरानुकूल होना चाहिए।
- अध्यापक द्वारा मूल्याकंन कार्य में पूर्ण पारदर्शिता अपनानी चाहिए।
- बिना किसी लिंग, जाति, धर्म तथा सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि के भेद भाव के आधार पर प्रत्येक इच्छुक शिक्षार्थी को इसमे भाग लेने का पूर्ण अवसर प्रदान किया जाना चाहिए।
- पूर्ण प्रक्रिया प्रकरण केन्द्रित ही रहनी चाहिए।
- छात्रों के सहयोग को अध्यापक द्वारा सराहा जाना चाहिए।
- समय समय पर अध्यापक द्वारा निष्कर्ष प्रस्तुत करते रहना चाहिए।

- इस प्रक्रिया में समरसता की गति बनाएं रखा जाना चाहिए।
- जब छात्रों की रूचि कम होती हो, तो इसे निष्कर्ष निकालते हुए समाप्त कर देना चाहिए।

4) वाद – विवाद के उद्देश्य– इसके उद्देश्य– मुख्य रूप से निम्नलिखित है–

(1) विभिन्न सूचनाओं तथा तथ्यों को प्रदान करना।

(2) किसी समस्या अथवा प्रकरण का विश्लेषण करना।

(3) आयोजित प्रकरण में निहित मूल्यों का निर्धारण करना।

(4) स्वस्थ मनोरंजन का आयोजन करना।

5) वाद विवाद के प्रकार–वाद विवाद की प्रकृति के आधार पर इसे दो भागों में विभक्त कर सकतें है–

I. सार्वजनिक वाद–विवाद –जिसमे वाद–विवाद जन साधारण को प्रभावित करने वाली समस्याओं पर केन्द्रित होता हैं। इस प्रकार के वाद–विवाद को हम प्रायः दूरदर्शन पर देख सकते हैं जिसमे समाज के बुद्धिजीवी वर्ग किसी भी समसामयिक समस्या के मुद्दे अथवा घटना पर अपने अपने विचार व्यक्त करते हैं जैसे– पर्यावरण समस्या, बेरोजगारी, मॅहगाई, भ्रष्ट राजनीति आदि।

सार्वजनिक वाद विवाद का मुख्य उद्देश्य–

- लोगो को सूचनाएं तथा तथ्यों का ज्ञान प्रदान करना।
- लोगो को समसामयिक घटनाओं से परिचित कराना।
- विभिन्न सामाजिक मूल्यों का निर्धारण करना।
- वाद विवाद के माध्यम से किसी भी समस्या का हल निकालना।
- जनसाधारण का मनोरंजन करना।

II. शैक्षिक वाद विवाद– छात्रों को विभिन्न सूचनाओं तथा तथ्यों को बोधगम्य कराने हेतु शैक्षिक वाद विवाद आयोजित किये जाते हैं जिनका मुख्य उद्देश्य–

- छात्रों को विभिन्न सूचनाओं तथा तथ्यों का ज्ञान प्रदान करते हुए उनके ज्ञान का संवर्धन करना।
- विभिन्न सिद्धान्तों तथा अवधारणाओं से उन्हे परिचित कराना।
- समस्या के समाधान हेतु उन्हे तत्पर करना।

6) वाद विवाद विधि के गुण–

- इसमे सामाजिक अधिगम को अधिक प्रोत्साहन मिलता है।
- यह विधि क्रिया के सिद्धान्त पर आधारित होती है।
- इस विधि द्वारा छात्रों को यथार्थ ज्ञान की प्रप्ति होती है।

- चूंकि इस विधि में शिक्षार्थी स्व अभिप्रेरित होकर अपनी सहभागिता प्रस्तुत करता है इसलिए यह विधि मनोविज्ञान से सिद्धान्त के अनुरूप है जिसमे शिक्षार्थी अपनी रूचि तथा योग्यता के अनुरूप ही भाग लेता है।
- यह विधि छात्रों में स्व अध्ययन की आदत को विकसित करती है।
- यह विधि छात्रों में सामूहिक निर्णय लेने की प्रवृत्ति का विकास करती है।
- वाद विवाद विधि की प्रक्रिया छात्रों में विभिन्न सामाजिक गुणों यथा सहयोग, सदभावना, सहिष्णुता तथा एक दूसरे की भावना के सम्मान की आदत विकसित करने में सहायक है।
- छात्रों की वाद विवाद की योग्यता के आधार पर अध्यापक उनमें निहित नेतृत्व की क्षमता का पता लगाने में सफल होता है।
- यह विधि छात्रों की भागीदारिता को प्रोत्साहित करती हैं।
- छात्रों में आलोचनात्मक चिन्तन का विकास होता है।
- प्रायः यह विधि मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित होती है इसलिए इसमे शिक्षार्थी भाग लेते हुए अधिगम करने हेतु सदैव तत्पर रहता हैं।
- यह विधि छात्रों में स्वस्थ्य प्रतियोगिता की अभिवृत्ति का विकास करती हैं।
- यह विधि शर्मीले प्रकृति के व़िद्यार्थी में भी आत्मविश्वास उत्पन्न करने में सहायक हैं।
- इस विधि द्वारा छोटे तथा बड़े सभी कक्षाओं के शिक्षार्थी अधिगम कर सकते हैं क्योकि वाद–विवाद प्रतियोगिता का आयोजन सभी कक्षाओं में किया जाता है।
- यह विधि शिक्षार्थी को स्वतन्त्र विचारक बनाती है।
- यह विधि शिक्षार्थी को प्रश्न पूछने, सूचनाओं का विश्लेषण करने तथा आत्मसात के लिए प्रेरित करती है।
- यह छात्रों में समस्या – समाधान करने की क्षमता का विकास करती है।
- इसके द्वारा छात्रों में दूसरों के विचारों के प्रति सम्मान की प्रवृत्ति का विकास किया जाता है।
- इस विधि में वैचारिक मन्थन करते हुए किसी भी समस्या का समाधान प्रस्तुत किया जा सकता है।
- यह विधि छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान का मूल्याकंन करने में सहायक होती है।
- यह विधि छात्रों को यह अहसास कराती है कि राय अथवा विचारों की भिन्नता किसी समस्या का कारण नही होती वरन् उन सबके निचोड़ से कुछ नया तथ्य सामने आता है।
- यह विधि छात्रों में समूह भावना (Team spirit) का विकास करती है।
- इस विधि में सूचना–संग्रहण, सूचना–प्रक्रमण तथा श्रोताओं के समक्ष उनके प्रस्तुतीकरण में छात्रों की सक्रिय भागीदारिता तथा प्रस्तावित प्रकरण के पक्ष और विपक्ष में बोलने, तक्र वितक्र करने तथा पूर्व वक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्को के खण्डन – मण्डन में अपनी प्रतिभा का जो प्रदर्शन वाद–विवाद विधि में होता हैं वह अन्य विधि के माध्यम से सम्भव नही होता है।

7) वाद – विवाद पद्धति के दोष–

- इस विधि का सबसे बड़ा दोष यह है इसके माध्यम से सामाजिक अध्ययन का पूरा पाठ्यक्रम नही पढ़ाया जा सकता। इस विषय में कुछ प्रकरण तो है जिन पर यह विधि अन्यन्त सफलता पूर्वक लागू की जा सकती है। जैसे
  - "भारत के लिए पूँजीवादी अर्थव्यवस्था हितकर सिद्ध होगी।"
  - "देश की आर्थिक उन्नति के लिए उदारीकरण आवश्यक है।"
  - "संसदीय शासन प्रणाली की तुलना में राष्ट्रपति शासन प्रणाली अधिक प्रभावी होगी।"
  - "भारतीय जनता के लिए ब्रिटिश शासन "वरदान सिद्ध हुआ है।"

ऐसे ही कुछ अन्य प्रकरण जिनके पक्ष तथा विपक्ष में बोलते हुए शिक्षार्थी भली–भांति अध्ययन कर सकते हैं। परन्तु मुगल शासक, सल्तनत कालीन शासक, भारत के विविध धरातल तथा इसी प्रकार के अन्य प्रकरण को हम वाद – विवाद विधि से नही पढ़ा सकते।

- यह विधि उच्च कक्षाओं में सामाजिक अध्ययन के शिक्षण एवं अधिगम के लिए उपयुक्त हो सकती है।
- इस विधि के आयोजन हेतु सतक्रता के साथ नियोजन की अत्यन्त आवश्यकता होती है जिसके लिए कुशल शिक्षकों की आवश्यकता होती है। प्रत्येक शिक्षक के लिए सफलता पूर्वक इसका नियोजन करना सम्भव नहीं हो पाता।
- इस विधि के नियोजन हेतु पर्याप्त समय की आवश्यकता पड़ती है परिणामतः निर्धारित अवधि में सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम पूरा नही हो पाता है।
- यदि शिक्षार्थी भली भांति प्रस्तावित प्रकरण का ज्ञान नही रखते हैं तो वाद – विवाद सार्थक होने के स्थान पर निरर्थक भी हो सकता है।
- समस्त छात्रों को इस विधि से अधिगम नही कराया जा सकता है। इस विधि से अधिगम का लाभ केवल प्रतिभागी शिक्षार्थी ही ले सकते हैं।
- कभी कभी ऐसा भी होता है कि जो शिक्षार्थी अत्यधिक क्रियाशील है वे अन्य छात्रों को अवसर नही देते जिससे उनमें कुण्ठा की भावना उत्पन्न हो जाती है।
- इस विधि से क्रियाकलाप का मूल्यांकन पूरी तरह वस्तुनिष्ठ नही होता है।

क्रिया कलाप

सामाजिक अध्ययन में अपने मनपसन्द किसी प्रकरण को लेकर अपनी कक्षा में एक वाद– विवाद प्रतियोगिता का आयोजन कीजिए तथा अपने अनुभवों को लिपिबद्ध कीजिए ।

<u>बोध प्रश्न</u>

1.वाद–विवाद अथवा विवेचन विधि से आप क्या समझते हैं?

....
....
....

6.3.2 नामिका परिचर्चा विधि

सामाजिक अध्ययन में बहुत से प्रकरण ऐसे हैं जो संश्लिष्ट या विवादास्पद होते हैं, उनके शिक्षण – अधिगम हेतु नामिका परिचर्चा विधि अत्यन्त उपयोगी होती है जिसमें विषय विशेषज्ञों को एक साथ बैठा कर परिचर्चा करने का विकल्प अपनाया जाता है। परिचर्चा करने वाली नामिका के सदस्य के रूप में शिक्षार्थियों या अध्यापकों अथवा छात्रों और अध्यापकों में से कुछ लोगो का चयन किया जाता है। जो व्यक्ति जिस विषय का या उस विषय के किसी पक्ष विशेष का विशेषज्ञ हो, उसे प्रश्न परिचर्चा शुरू होने पूर्व ही दे दिया जाता है जिन्हे छात्रों से पूर्व में ही प्राप्त कर लिया जाता है। कहने का तात्पर्य है कि शिक्षार्थियों की जो भी जिज्ञासाएं अथवा प्रश्न हो उन्हे पूर्व में ही संकलित कर नामिका के सदस्यों को (विषय क्षेत्र के अनुसार) दे दी जाती है जिसमें वे भी विषय की तैयारी कर क्षेत्रों के समस्त प्रश्नों को उत्तरित कर सके। नामिका परिचर्चा शुरू होने से पूर्व परिनियामक (मॉडरेटर) परिचर्चा का प्रवर्तन करते हुए उस परिचर्चा के उद्देश्य या प्रयोजन और विषय क्षेत्र को स्पष्ट करता है। तत्पश्चात् पूर्व निर्धारित क्रमानुसार एक–एक प्रश्न का उल्लेख करते हुए नामिका–सदस्यों को बोलने अथवा अपना वक्तव्य प्रस्तुत करने के लिए आमन्त्रित किया जाता है और वे एक–एक करके उन विषय अथवा उसके किसी भी पक्ष पर अपने विचार पूर्व में संकलित शिक्षार्थियों के प्रश्नों को उत्तरित करने के सन्दर्भ में प्रस्तुत करते जातें है। अपनी मूल बात कहने के पश्चात् हर वक्ता को अपने पूर्व के वक्ता द्वारा कही जाने वाली बात पर टिप्पणी करने का भी थोड़ा समय प्रदान किया जाता है। सभी नामिका – सदस्यो के बोलने के पश्चत परिचर्चा का परिनियामक समस्त बिन्दुओं तथा विचार विमर्श के सभी मुद्दों का संश्लेषण कर संक्षेप में अपने विचार प्रस्तुत कर परिचर्चा का समापन करता है।

(1) नामिका परिचर्चा के गुणः– इस विधि के माध्यम से सभी विवादास्पद तथा बहुआयामी विषयों पर विषय विशेषज्ञों के स्पष्टीकरण अनसुलझे पहलुओं तथा प्रश्नों का समाधान सम्भव हो पाता है जैसे

- साम्यवाद तथा उसका पराभव।
- यदि हिटलर समस्त विश्व पर अपनी विजय पताका फहराने में सफल हो गया होता तब।
- संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) का भविष्य।
- इस विधि के माध्यम से विषय के किसी भी पक्ष को अत्यन्त सरल और सृजनात्मक रूप में सबके समक्ष विषय – विशेषज्ञों द्वारा लाया जाता है।

(2) नामिका परिचर्चा के दोषः– इसका सबसे बड़ा दोष यह है कि सामाजिक अध्ययन के प्रत्येक प्रकरण के शिक्षण – अधिगम हेतु इस विधि का प्रयोग नही कर सकते।

- ➢ इसमें अधिकांश शिक्षार्थी निष्क्रिय श्रोता बन कर बैठे रहते हैं।
- ➢ शिक्षण के ज्ञानात्मक उद्देश्य की प्राप्ति कुछ सीमा तक इस विधि से तो सम्भव हो जाती है परन्तु भावनात्मक एवं क्रियात्मक पक्ष उपेक्षित हो जाता है।

6.3.3 चर्चा – परिचर्चा विधि

यह समूह आधारित शिक्षण अधिगम का सबसे सरल तरीका है जिसका अभिप्राय है विचार – विनिमय करना। सेरोलिमेक (1986) के अनुसार यह एक ऐसा सामूहिक बौद्धिक कार्य है जो यह मान कर चलता है कि एक व्यक्ति विशेष की तुलना में कई लोगों से प्राप्त जानकारियों, विचारों एवं भावनाओं का संग्रह अधिक उपयोगी या लाभप्रद होता है।

इसमें अध्यापक चर्चा परिचर्चा शुरू होने से पूर्व ही छात्रों को विषय के किसी विशिष्ट प्रकरण

(जिस पर चर्चा–परिचर्चा होनी है) तथा उसकी पृष्ठभूमि से सम्बन्धित विस्तृत जानकारी शक्षातियों को दे देता है जिससे शिक्षार्थी उक्त प्रक्रिया के दौरान संचित सूचनाओं का भरपूर उपयोग कर सके। चर्चा – परिचर्चा प्रारम्भ होते ही सभी छात्र प्रस्तावित विषय के प्रत्येक मुद्दे पर अपनी अपनी राय अथवा विचार व्यक्त करते हैं। अन्त में अध्यापक सभी छात्रों के विचारों का सारांश प्रस्तुत कर अपना निर्णय बताते हैं।

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में यह विधि तभी उपयोगी सिद्ध हो सकती है जब छात्रों में चर्चा – परिचर्चा सम्बन्धी कौशल विकसित किया जाए। संक्षिप्त में यहां पर सार रूप में हम सेरोलिमेक (1986) द्वारा संस्तुत उन कौशलों को प्रस्तुत करेंगे जो सामाजिक अध्ययन के अध्यापक द्वारा अपने छात्रों में विकसित किए जाने चाहिए जो निम्न लिखित है

- जोर से तथा स्पष्ट बोलना चाहिए जिससे कही गई बातों को सभी लोग सुन सके।
- जब दूसरे लोग बोल रहे हो उस समय उनकी बातों को ध्यान से सुना जाए।
- सदैव दिमाग की खिड़कियां खुली रखनी चाहिए अर्थात अपनी हठधर्मिता छोड़ कर दूसरों की बात सदैव ध्यान से सुननी चाहिए। अन्य लोगों के विचारों का आदर करते हुए उसकी प्रशंसाा करनी चाहिये। परन्तु स्वयं दूसरों से प्रभावित हुए बिना सोचना विचारना चाहिए।
- अपने उत्तरदायित्व का वहन करें जिससे चर्चा – परिचर्चा में भाग लेने वाले सभी लोग वांछित लक्ष्य की प्राप्ति की ओर अग्रसर होते रहें।
- आपके द्वारा प्रस्तुत विचार तथ्यात्मक साक्ष्य से समर्थित होने चाहिए।
- चर्चा – परिचर्चा के दौरान दूसरों पर हावी न हों। आप जो भी विचार रखे, वे सोच समझ कर तथा संक्षेप में रखें। अर्थात् बिना विचारे कुछ न कहे और जो भी कहे उसमें अनावश्यक विस्तार न हों।
- दूसरे के विचार यदि आपको समझ में नही आ रहें हैं तो उन्हे स्पष्ट करने को कहें तथा उनके वक्तव्यों की पुष्टि हेतु प्रमाण देने की माँग करें।
- समस्या का सन्तोषप्रद हल निकालने के लिए समूह के सभी व्यक्तियों की योग्यता में विश्वास बनाएं रखें। अंत में पूरा समूह जो भी निर्णय करें, उसे अपना समर्थन देते हुए मानना चाहिए।

6.3.4 विचारावेश

विचारावेश, समूह आधारित अधिगम – शिक्षण की एक विधि है जिसका प्रयोग किसी भी समस्या का सर्जनात्मक या नवीन प्रक्रिया परक समाधान प्राप्त करने के लिए किया जाता है। यह विधि छात्रों की सर्जनात्मक योग्यताओं के विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

इस विधि में अध्यापक शिक्षार्थियों के समक्ष सर्वप्रथम कोई समस्या प्रधान प्रकरण रखता है। तत्पश्चात् वह शिक्षार्थियों को उस प्रकरण पर अपने विचार प्रस्तुत करने के लिए कहता है। इस सन्दर्भ में अध्यापक कक्षा के समस्त शिक्षार्थियों को खुल कर अपने विचार एक एक करके व्यक्त करने के लिए कहता है और शिक्षार्थियों को आश्वासन देता है कि उनके द्वारा व्यक्त विचारों पर किसी प्रकार भी उन्हे निरूत्साहित नही किया जायेगा अर्थात उन्हे सही अथवा गलत नही ठहराया जायेगा। शिक्षार्थियों के प्रत्येक विचार को अध्यापक सार बिन्दु के रूप में श्यामपट्ट पर लिखता जाता है। उसके पश्चात् शिक्षार्थियों द्वारा व्यक्त विचारों की उपयोगिता अथवा यर्थाथता के बारे में अध्यापक अपना निर्णय शिक्षार्थियों को बताय बगैर शिक्षार्थियों से ही श्यामपट्ट पर सूचीबद्ध बिन्दुओं में से उन बिन्दुओं को चुनने के लिए कहता है जो प्रस्तावित समस्या के समाधान हेतु सर्वाधिक उपयुक्त हो। और अन्त में शिक्षार्थी ने जो अपने विचार रखे

उनका मूल्यांकन करते हुए उनका संवर्धन विशदीकरण या विस्तारण कर उन्हे समाकलित करते हुए सारांश रूप में अपनी बात कहे जिससे नए–नए आयामो को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षार्थी उस प्रकरण तथा उसके विविध पक्षों पर पुनः नए रूप से चिन्तन हेतु अभिप्रेरित हो सके।

सामाजिक अध्ययन में उक्त विधि की उपयोगिता उन प्रकरणों के सन्दर्भ में अधिक दृष्टिगोचर होती है जो समस्या मूलक होती है। इस विधि को हम विभिन्न श्रव्य–दृश्य सामग्री के प्रयोग के माध्यम से और अधिक बोधगम्य बना सकतें है। जैसा कि यह सर्वविदित है कि आज विद्यालयों में शिक्षार्थी को दूरदर्शन के माध्यम से विभिन्न सम–सामयिक समस्या से सम्बन्धित वृत्त चित्र भी दिखाएं जाते हैं जिन्हे शिक्षार्थी अत्यन्त रूचि के साथ देखता, सुनता और समझता है और जब देखने के पश्चात उनसे प्रश्न पूछे जातें हैं तो वह अपने स्तर से उसका जवाब देता है। उदाहरण स्वरूप सर्वप्रथम शिक्षार्थियों को "पर्यावरण प्रदूषण विषयक समस्या" से सम्बन्धित कार्यक्रम शिक्षार्थियों को दिखाया जाये। कार्यक्रम समाप्त होने के पश्चात शिक्षार्थियों जब अपनी मूल कक्षा में आए, तो अध्यापक उनसे प्रश्न पूछते हुए विचारावेश विधि का प्रयोग करते हुए उक्त समस्या का अपेक्षित समाधान प्रस्तुत कर सकता है। चूंकि शिक्षण की यह विधा शिक्षार्थियों को सर्जनात्मक रूप से सोचने को प्रेरित करती है इसलिए यह न केवल सामाजिक अध्ययन वरन समस्त समस्या प्रधान विषयों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होती हैं।

6.3.5 परिसंवाद विधि

सामाजिक अध्ययन में परिसंवाद विधि के माध्यम से विभिन्न आयामों वाले प्रकरणों का शिक्षण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है इसमे चयनित शिक्षार्थी तथा विभिन्न विषयों के अध्यापक प्रस्तावित प्रकरण पर अपने अपने विचार प्रस्तुत करते हैं। परन्तु इन सभी के विचार प्रकरण के विभिन्न आयामों से सम्बन्धित होते है जैसे प्रकरण यदि महात्मा बुद्ध हुआ अथवा महावीर स्वामी, तो इसके विविध आयाम हो जायेंगे, जैसे– छठी शताब्दी ई0पू0 में अस्तित्व में आए धर्म, महावीर स्वामी का जीवन परिचय, उनकी शिक्षाएं, सिद्धान्त, सम्प्रदाय, वर्तमान सन्दर्भ में उनकी शिक्षाओं अथवा सिद्धान्तों की प्रासंगिकता आदि। जिस पर सभी लोग अपनी अपनी बात कहेंगे। सभी वक्ता अपने अपने विचार पूर्व निर्धारित क्रम में एक–एक करके व्यक्त करेंगे। इसके पश्चात प्रस्तावित प्रकरण पर यदि श्रोता वर्ग चाहें तो वे भी संक्षेप में अपने अपने विचार रख सकतें हैं। अन्त में परिसंवाद गोष्ठी का अध्यक्ष, जो कि गोष्ठी की समस्त गतिविधियों का संचालन करता है, एक सारांश प्रस्तुत कर परिसंवाद गोष्ठी का समापन करता हैं।

(1) परिसंवाद विधि के गुण–

- इस विधि का सबसे बड़ा गुण यह है कि शिक्षार्थी बिना किसी अधिगम बोझ के विषय–वस्तु को भली भांति सीख जाता हैं।
- यह विधि शिक्षार्थी में स्व–अध्ययन की आदत को विकसित करती है क्योकि गोष्ठी में भाग लेने से पूर्व शिक्षाथी भली भांति प्रकरण से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं का अध्ययन कर लेता है।
- शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास की भावना उत्पन्न होती है।
- उनमे सुव्यवस्थित ढंग से स्वाभिव्यक्ति की आदत विकसित होती हैं।
- यह विधि भी शिक्षार्थियों में विभिन्न सामाजिक तथा लोकतान्त्रिक गुणों यथा सहयोग, सहिण्णुता तथा दूसरों के विचारों के सम्मान आदि का विकास करती है।
- यह विधि शिक्षार्थियों को विभिन्न मानसिक शक्तियों के विकास में सहायक होती है।
- यह विधि शिक्षार्थियों में एकाग्रता पूर्वक श्रवण करने की आदत विकसित करती है।

- इस विधि द्वारा शिक्षार्थियों को प्रस्तावित प्रकरण से सम्बन्धित कई प्रकार के दृष्टिकोण या उसके विभिन्न पहलुओं को जानने का सुअवसर प्राप्त होता है।

(2) परिसंवाद विधि के दोष–

- सामाजिक अध्ययन के समस्त पहलुओं को हम इस विधि द्वारा नही सीख सकते क्योकि इस विधि में भी समय बहुत अधिक लगता है।
- यह विधि उच्च कक्षाओं के शिक्षार्थी के लिए अधिक उपयुक्त है।
- कक्षा के सभी शिक्षार्थी इस विधि से लाभान्वित नही हो पातें हैं।
- शर्मीले प्रकृति के शिक्षार्थी इस विधि से अधिगम करने में पीछे ही रहतें हैं।

बोध प्रश्न

2.नामिका परिचर्चा का क्या अभिप्राय है ?

____

3.चर्चा – परिचर्चा विधि का प्रयोग करते समय किन किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

____

4.विचारावेश विधि शिक्षार्थियों के लिए किस प्रकार उपयोगी है ?

____

6.3.6 सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धतिः–

वर्तमान शिक्षा पद्धति में समाजीकृत प्रक्रियाओं को कक्षा – कक्ष में प्रमुख स्थान देने की मॉग बढ़ रही है। फलस्वरूप शिक्षण में एक नवीन तथा गत्यात्मक पद्धति को स्थान दिया गया जिसे हम सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति के नाम से जानते हैं जिसमें विषय के स्थान पर शिक्षार्थी को शिक्षण की प्रक्रिया में प्रमुख स्थान दिया जाता है। शिक्षा में वैयक्तिकता को समाप्त कर शिक्षार्थियों को यह अनुभव करने के योग्य बनाना कि वे एक समूह के सदस्य है, यही मूल तथ्य इस प्रविधि में निहित है । जिसमें उनमें समूह भावना का विकास तथा सामाजिक सहभागिता के लिए उनमें वांछित कौशलों, योग्यताओं तथा अभिवृत्ति का विकास किया जाता है। इस सम्प्रत्यय को और अधिक हम निम्नलिखित विद्वानों के विचारों से स्पष्ट कर सकते हैंः–

1) सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति की परिभाषा– नेस्ले के अनुसार सामाजीकृत अभिव्यक्ति एक आदेश है

जो शिक्षण में इस प्रकार के प्रयोग की परिकल्पना करता है जिससे कि कक्षा के सभी शिक्षार्थी सहयोग तथा सद्भावना के साथ ज्ञानार्जन कर सकें। इसके द्वारा कक्षा के पर्यावरण की औपचारिकता को समाप्त कर उसके स्थान पर स्वाभाविकता उत्पन्न की जाती है जिससे बालक अपनी रूचि, प्रकृति, सहयोग के साथ ज्ञान की प्राप्ति कर सकें। बाइंनिग तथा बाइंनिग के अनुसार "सामाजीकृत अभिव्यक्ति को सामाजिक विचार विमर्श कहा जा सकता है। कोई भी कक्षा सत्र जो एक वर्ग के रूप में सामूहिक चेतना तथा वैयक्तिक प्रवृत्ति का प्रदर्शन करें, सामाजीकृत अभिव्यक्ति है।" योकम तथा सिम्पसन के अनुसार "सामाजीकृत कक्षा का एक मुख्य उद्देश्य शिक्षार्थियों को अधिक से अधिक क्रियाशील बनाना तथा उन्हे सहयोगात्मक तथा मैत्रीभाव से आपस में रहने, कार्य करने तथा खेलने का शिक्षण देना हैं।

उपयफ्रक्त विद्वानों के विचार सामाजीकृत अभिव्यक्ति के व्यापक स्वरूप को स्पष्ट करते हैं। जबकि कुछ विद्वान सामाजीकृत अभिव्यक्ति को संकुचित अर्थ में ही ग्रहण करते हैं जिसके अनुसार यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें शिक्षक अपना समस्त भार कक्षा अथवा शिक्षार्थियों की समिति को सौपकर स्वयं को कक्षा के क्रियाकलापों से मुक्त कर लेता है।

2) सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति का प्रयोग– इस प्रविधि का प्रयोग कई तरीको से किया जाता है जिनमें से बाइंनिग तथा बाइंनिग द्वारा बताए गए तरीकों का वर्णन अग्रांकित पंक्तियों में किया जा रहा है–

(1) औपचारिक वर्ग योजना– जिसके अन्तर्गत शिक्षार्थी अपने को औपचारिक रूप से व्यवस्थित करके निर्धारित नियमों के अनुसार कोई कार्य करते हैं। वे अध्यक्ष की आज्ञा से ही कोई प्रस्ताव तथा विचार समस्या समाधान हेतु अपेक्षित सुझाव रखते हैं।

(2) अनौपचारिक वर्ग योजना–जिसके अन्तर्गत बिना किसी पूर्व व्यवस्था तथा किसी प्रकार के नियमों के पालन बिना स्वतन्त्र रूप से विचार विमर्श होता है और शिक्षार्थी पूर्ण स्वतन्त्रता के साथ खुल कर अपने विचार दूसरों के सम्मुख रखते हैं।

(3) आत्म निर्देशन वर्ग योजना– यह पद्धति उच्च कक्षाओं के लिए ही उपयोगी होती है, जब शिक्षार्थी मानसिक रूप से परिपक्व हो जातें हैं। इस पद्धति में शिक्षार्थी समस्या के चयन तथा सम्पादन के लिए विचार विमर्श करता है तथा शिक्षक एक मार्गदर्शक की भांति आवश्यकतानुसार उन्हे मार्ग निर्देर्शित करता है।

(4) सेमिनार वर्ग योजना– जिसके अन्तर्गत कक्षा को विभिन्न वर्गो में बांटा जाता है तथा प्रत्येक वर्ग किसी प्रस्तावित प्रकरण पर पारस्परिक विचार विमर्श करते हैं और अन्त में अपनी अपनी रिपोर्ट प्रत्येक वर्ग सम्पूर्ण कक्षा के सामने प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात् कक्षा उनके द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर विचार विमर्श करके एक सामूहिक सारांश रिपोर्ट तैयार करती है।

सामाजीकृत अभिव्यक्ति का एक अन्य तरीका यह है कि इसके लिए हम दो समूह बनाते हैं–

(i) औपचारिक समूह तकनीक।

(ii) अनौपचारिक समूह तकनीक।

औपचारिक समूह तकनीक को हम पुनः अग्रांकित चार शीर्षको के अन्तर्गत विभक्त करते हैः–

(i) पैनल वाद – विवाद

(ii) संगोष्ठी तथा अध्ययनवृत

(iii) सेमिनार योजना

(iv) कार्यशाला तकनीक

प्रो0 एस0 के0 कोचर ने अपनी पुस्तक " टीचिंग ऑफ सोशल साइन्स" में इस विधि के मुख्य पाँच तरीके बताएं है–

(i) सेमिनार

(ii) कार्यशाला

(iii) संगोष्ठी

(iv) पैनल वाद – विवाद

(v) ब्रेन टेस्ट

उन्होने इस पद्धति के प्रयोग के निम्नलिखित तरीके भी बताएं हैं–

- इस पद्धति का प्रयोग एक सम्मेलन की भांति किया जा सकता है जिसमें सभी सदस्य किसी एक प्रकरण का चयन करें, उस पर अपने अपने विचारों को व्यक्त करें और अन्ततोगत्वा उस प्रस्तावित समस्या के सन्दर्भ में कुछ निष्कर्ष निकालें।

- अध्यापक को एक वाद – विवाद नेता के रूप में चयनित कर कक्षा के पूरे शिक्षार्थी वाद – विवाद में अपनी सहभागिता प्रस्तुत करें।

- कक्षा अपना एक अध्यक्ष मनोनीत करें और सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति के तहत एक वाद – विवाद कार्यक्रम का आयोजन किया जाए जिसमें अध्यक्ष ही वाद – विवाद कार्यक्रम को दिशा निर्देशित करेगा।

- कक्षा को एक संसदीय समूह बना कर एक राष्ट्रपति, एक उप राष्ट्रपति तथा अन्य विशेष व्यक्तियों (अध्यापक) के नेतृत्व में इस पद्धति का प्रयोग किया जाए।

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि इस प्रविधि का प्रयोजन शिक्षार्थी को समूह में रखते हुए वाद – विवाद अथवा किसी समस्या के अपेक्षित समाधान प्रस्तुत करने की दिशा में स्व अभिव्यक्ति है। इसमें किसी भी समस्या के समाधान हेतु एक सामूहिक प्रयास किया जाता है। अध्यापक प्रस्तावित समस्या पर अपने कुछ विचार व्यक्त करके, शेष शिक्षार्थी समूह को अपने विचार अभिव्यक्त करने हेतु प्रेरित करता है। प्रत्येक शिक्षार्थी अपनी योग्यता, बुद्धि, सामाजिक कुशलता तथा सम्बन्धित प्रकरण पर संचित ज्ञान के आधार पर समस्या समाधान का प्रयास करता है। वे अपने अनुभवों को रखते हैं। सुझावों की प्रस्तुति तथा उसका शोधन किया जाता है। तक्र – वितक्र किया जाता है। प्रस्तुत विचारों का खण्डन किया जाता है। और इस प्रकार व्यापक बौद्धिक मंथन के पश्चात् प्रस्तावित समस्या का सारगर्भित समाधान प्रस्तुत किया जाता है। जो सामूहिक प्रयत्नों का ही प्रतिफल होता है।

3) सामाजीकृत अभिव्यक्ति के उद्देश्य–हैरोल्ड बेन्जामिन ने इस पद्धति के निम्नलिखित उद्देश्य बताए हैं–

- ऐसी प्रणालियों को विकसित करना जो समूह कार्य के लिए उपयोगी हो।

- शिक्षार्थियों की चिन्तन शक्ति को उत्प्रेरित करना।

- शिक्षार्थियों के पूर्व ज्ञान में वृद्धि करना।

- सृजनात्मक अभिव्यक्ति के लिए उन्हे उत्साहित करना।

- विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों के माध्यम से शिक्षार्थियों में सामाजिक दृष्टिकोण तथा अभिवृत्ति का विकास करना।

- शिक्षार्थियों में सहयोगात्मक चिन्तन का विकास करना।

- शिक्षार्थियों को क्रियाओं के लिए प्रेरित करते हुए उन्हे वास्तविक सहभागिता तथा करके

सीखने के अवसर प्रदान करना।

- शिक्षार्थियों में सामाजिक चेतना के विकास हेतु मैत्री भाव तथा सहयोगात्मक तरीके से एक साथ मिलकर कार्य करने का शिक्षण देना।
- शिक्षार्थियों में उत्तरदायित्व के भाव का विकास करना।
- शिक्षार्थी को परम्परागत कक्षा प्रणाली की औपचारिकताओं से बाहर निकाल कर अध्यापक के साथ मैत्री पूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना।
- शर्मीले प्रकृति के शिक्षार्थी में आत्मविश्वास के भाव को उत्पन्न करना।
- शिक्षार्थी को एक दूसरे के समझने के योग्य बनाना।
- प्रत्येक शिक्षार्थी में स्पष्ट तथा उत्तरदायित्व पूर्ण विचार तथा योजना बनाने और रिपोर्ट लेखन की क्षमता का विकास करना।
- शिक्षार्थी को वयस्क जीवन के लिए तैयार करना जिससे कि वे राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक तथ्यों तथा उनकी जटिलताओं को भली भांति समझ सकें।
- शिक्षार्थी में स्वाभाविक रूचि का विकास करना जिससे वे सामाजिक अध्ययन विषय के अर्जित ज्ञान को उपयोगी बना सकें।

4) सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति के लाभ

- यह विधि शिक्षार्थियों में सामाजिक संचेतना तथा समूह सहभागिता का विकास कर उनमे सामाजिक उत्तरदायित्व के भाव को विकसित करती है।
- शिक्षार्थी में क्रियाओं की योजना बनाने की कुशलता का विकास होता है।
- शिक्षार्थी में स्वयं निर्णय लेने की शक्ति का विकास होता है।
- यह विधि विभिन्न शिक्षाथी के मध्य की सामाजिक दूरी तथा औपचारिकताओं को कम करके उन्हे सहयोगात्मक सामूहिक क्रियाओं को करने के लिए प्रेरित करती है।
- यह विधि शिक्षाथीं में नेतृत्व की भावना तथा किसी भी क्रिया के सन्दर्भ में पहल करने का प्रशिक्षण प्रदान करती है।
- इसमें शिक्षाथी को आत्माभिव्यक्ति का पर्याप्त अवसर प्राप्त होता है।
- यह विधि अधिगम को अधिक स्वाभाविक, वास्तविक, तथा रूचिपूर्ण बनाने में सहायक होती है।
- शिक्षार्थी में दूसरों के प्रति आदर एवं सम्मान का भाव जागृत करने में यह विधि अत्यन्त सहायक है।
- सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में यह पद्धति शिक्षार्थियों में सभा के संचालन, नियोजन तथा अपने विचारों एवं निर्णयों को क्रमबद्ध तथा लिखित रूप में प्रस्तुत करने की कला का विकास करती है।
- शिक्षाथी में विभिन्न सामाजिक गुणों का विकास होता है।

- शिक्षार्थी अधिगम हेतु सक्रियता से भाग लेने के लिए तत्पर हो जाते हैं।
- शिक्षार्थी में प्रशंसात्मक दृष्टिकोण का विकास होता है।
- अध्यापक और शिक्षाथी एक दूसरे के बहुत करीब रहते हैं जिससे उनके सम्बन्धों में आत्मीयता तथा मधुरता आती है।
- शिक्षार्थियों में वाद–विवाद करने की कला आती है।
- शिक्षार्थियों में रिपोर्ट लेखन की कला आती है।
- ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक तीनो ही शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में यह विधि सहायक है।

5) सामाजीकृत अभिव्यक्ति के दोषः–

- सामाजिक अध्ययन का विषय इतना वृहद है कि इस पद्धति के माध्यम से हम विषय वस्तु को पूरा नही पढ़ा सकते।
- इस विधि में समय का बहुत अधिक अपव्यय होता है।
- इस पद्धति में केवल जिज्ञासु शिक्षार्थी ही लाभान्वित हो पाते हैं जबकि शेष शिक्षार्थी तटस्थ भाव से समय व्यतीत करते हैं जिससे उन्हे कोई लाभ नही होता है।
- इस पद्धति में कभी–कभी शिक्षार्थी अपने मूल विषय से हटकर दूसरी तरफ चले जाते हैं।
- शिक्षार्थी में कभी–कभी अस्वस्थ्य प्रतिस्पर्धा विकसित होने लगती है।

6) सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति को प्रभावशाली बनाने हेतु कुछ महत्वपूर्ण सुझाव यद्यपि यह पद्धति भी दोषों से अछूती नही है तथापि कुछ बातों को ध्यान में रखते हुए इस पद्धति के प्रयोग से हम लाभान्वित हो सकतें हैं जैसे–

- समूह का निर्माण करते समय हमे यह बात विशेष रूप से ध्यान में रखना चाहिए कि शिक्षार्थी का मानसिक स्तर, उनकी सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि तथा उनकी रूचि, योग्यता, क्षमता एक जैसी हो।
- कक्षा कार्य में अपनी सहभागिता प्रस्तुत करने का अवसर प्रत्येक शिक्षार्थी को बराबर से दिया जाना चाहिए।
- कमजोर, पिछड़े तथा शर्मीले शिक्षार्थियों को विशेष सुविधाएं देते हुए वाद – विवाद में अपनी सहभागिता प्रस्तुत करने हेतु उन्हे प्रोत्साहित अवश्य किया जाना चाहिए।
- वाद – विवाद में अनर्गल अथवा व्यर्थ की बातों को स्थान नही देना चाहिए।
- इस पद्धति का प्रयोग केवल कुशल एवं अनुभवी अध्यापकों द्वारा ही किया जाना चाहिए।
- शिक्षार्थी के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण प्रकरण ही चयनित किया जाना चाहिए।
- अध्यापक द्वारा बनाई गई योजना लचीली होनी चाहिए जिससे आवश्यकतानुसार उसमे परिवर्तन किया जा सके।
- इस पद्धति के प्रयोग में वातावरण सौहार्द्रपूर्ण होना चाहिए जिससे शिक्षार्थी अपने विचारों को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त कर सकें।

- अध्यापक द्वारा ऐसा सहज वातावरण उत्पन्न करना चाहिए जिससे शिक्षार्थी सहयोगिता तथा मैत्री भाव के साथ कार्य कर सकें।
- यदि इस पद्धति क़ा प्रयोग अध्यापक किसी समस्या के समाधान अथवा पढ़ाए गए पाठ की पुनरावृत्ति हेतु करे तो ज्यादा सार्थक परिणाम हस्तगत होंगे।
- अन्य विधियों के साथ सहायक विधि के रूप में इस विधि का प्रयोग अधिक लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

बोध प्रश्न

5.समाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति का मुख्य उद्देश्य क्या होता है ?

____
____
____

6- समाजीकृत अभिव्यक्ति शिक्षार्थियों में सामाजिक गुणों का विकास करती है, इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

____
____
____

6.3.7 निरीक्षित अध्ययन विधि–

इसके अन्तर्गत शिक्षार्थी दिए गए कार्य को पूरा करते हैं और अध्यापक उन्हे वांछित निर्देशन देते हुए उनके कार्यो का निरीक्षण करते हैं। इसे परिभाषित करते हुए बिनिंग तथा बिनिंग ने कहा है कि "निरीक्षित अध्ययन विधि से हमारा आशय शिक्षक द्वारा शिक्षार्थियों अथवा विद्यार्थियों के समूह का उस समय निरीक्षण करने से है जबकि वे अपने मेजों अथवा डेस्कों पर कार्य करने में संलग्न होते हैं।

क्लाक्र तथा स्टार के अनुसार "निरीक्षत अध्ययन शिक्षार्थी को अध्यापक के मार्गदर्शन में कार्य करने तथा अध्यापक को शिक्षार्थियों द्वारा किए गए अध्ययन कार्य को परीवीक्षित करने का समान रूप से अवसर प्रदान करता है।"

1) निरीक्षित अध्ययन पद्धति के गुण–

- यह पद्धति करके सीखने पर बल देती है।
- इसमे व्यक्तिगत संलग्नता के सिद्धान्त का अनुसरण किया जाता है अर्थात समूह में रहते हुए भी हर शिक्षार्थी को व्यस्त रखने का प्रावधान है।
- मन्द बुद्धि केशिक्षाथी इससे सर्वाधिक लाभान्वित होते हैं।
- प्रत्येक शिक्षार्थी काम में व्यस्त होने के कारण अनुशासित रहता है।

2) निरीक्षित अध्ययन पद्धति के दोष–

- इसमे व्यय बहुत अधिक होता है अर्थात यह पद्धति बहुत खर्चीली होती है।

- इस पद्धति की सफलता कुशल अध्यापकों पर ही निर्भर करती है।
- इस विधि में समय बहुत अधिक लगता है जिससे सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम को समय से समाप्त नही किया जा सकता।

बोध प्रश्न

7.निरीक्षित अध्ययन विधि के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए ।

____
____
____

6.4 समूह कार्य समूह कार्य अथवा अधिगम के लाभ

- समूह में अधिगम करने के कई लाभ हैं यथा अध्येता अथवा शिक्षार्थी में आत्मविश्वास का भाव विकसित होता है क्योकि वह इस अध्यापन – अध्ययन वाले प्रक्रम में अपनी सक्रिय भागीदारिता प्रस्तुत करता है।
- इस विधि में, ऐस शिक्षार्थी, जो भय अथवा संकोच करते हैं, उनमे भी धीरे धीरे खुलकर कार्य करने की प्रवृत्ति का विकास होता है।
- शिक्षाथियों में भावाभिव्यक्ति की क्षमता का विकास होता हैं।
- 'हम' की भावना के साथ शिक्षार्थी अधिगम रूचिकर ढंग से करते हैं।
- शिक्षार्थियों के उच्च संज्ञानात्मक योग्यताओं के साथ – साथ उनके भावनात्मक पक्षों का भी विकास होता है जो सामाजिक अध्ययन का एक प्रमुख उद्देश्य है।
- इस विधि में विधार्थी एक ओर न केवल अपने व्यक्तित्व से अपने समूह साथियों को प्रभावित करता है वरन उनके व्यक्तित्व से वह स्वंय भी प्रभावित होता है।
- समूह में काम करने से विधार्थी में सहयोग, मैत्रीभाव, सुरक्षा की भावना, मिलजुल कर कार्य करने का भाव, एक दूसरे की भावना का आदर भाव, नेतृत्व के गुण तथा एक दूसरे को समझने की प्रवृत्ति विकसित होती है।
- समूह अधिगम के माध्यम से समय, श्रम तथा धन की बचत होती हैं।
- यह विधि शिक्षार्थियों को अपने कर्तब्यों के प्रति जवाबदेही रखने के लिए तैयार करती है।
- सामूहिक ढंग से किए गए कार्यो का परिणाम अधिक सार्थक तथा लाभप्रद होता है क्योकि सभी शिक्षार्थी अपनी– अपनी मानसिक शक्तियों को सक्रिय रखते हुए बेहतर से बेहतर उत्पाद प्रस्तुत करते हैं।

6.5 सहयोगात्मक अथवा सहकारी शिक्षण

6.5.1 दल शिक्षण

हर शिक्षक प्रत्येक विषय का ज्ञाता नही होता। इसलिए विषय विशेष को स्पष्ट करने के लिए उन

सभी विषयों के विषय विशेषज्ञों की सहायता ली जाती है जो पारस्परिक सहयोगिक विधि के द्वारा समस्त तथ्यों का भली–भांति स्पष्टीकरण कर देते हैं। चूंकि अध्यापकों के समूह द्वारा शिक्षण किया जाता है इसलिए इसे समूह या दल शिक्षण कहा जाता है। इस शिक्षण का सम्प्रत्यय 1950 के अन्तिम चरण में आया और इस शिक्षण का प्रारम्भ 1956 में अमेरिका में हुआ। इसे और अधिक स्पष्ट करने के लिए अग्रांकित पंक्तियों में इसकी परिभाषाएं दी जा रही हैं

1. दल शिक्षण की परिभाषाः–

शिक्षा ज्ञान कोष में इसकी परिभाषा कुछ इस प्रकार दी गई है "शिक्षण का कोई भी रूप जिसमे दो या दो से अधिक शिक्षक निरन्तर और किसी उद्देश्य की दृष्टि से किसी एक शिक्षार्थी समूह के लिए पाठों का आयोजन, प्रस्तुतीकरण तथा मूल्यांकन के उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हैं, वह समूह अथवा दल – शिक्षण कहलाता है।"

शेपलिन के अनुसार "दल शिक्षण एक अनुदेशात्मक व्यवस्था है जिसमें शिक्षण दल तथा शिक्षार्थी एक साथ कार्य करते हैं। इसमें दो अथवा दो से अधिक शिक्षक उत्तरदायित्व के साथ अनुदेशन करते हैं।"

डेविड वारविक के अनुसार "दल, शिक्षण व्यवस्था का एक स्वरूप है जिसमें कई शिक्षक अपने स्रोतों, अभिरूचियों और दक्षताओं को एकत्रित करते हैं और जिन्हे शिक्षार्थी की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षकों की एक टोली द्वारा प्रस्तुत किया जाता है, वे विद्यालय की सुविधाओं का समुचित उपयोग करते हैं।"

इस प्रकार यह एक सहयोगात्मक प्रविधि है जिसमें शिक्षक भिन्न–भिन्न कार्य अथवा भूमिका निभाते हुए व्यवस्थित ढंग से अधिक से अधिक कार्य करते हैं। इसमें शिक्षकों का अधिकतम उपयोग करते हुए उनकी विशेषताओं का अधिक से अधिक लाभ उठाया जाता है जिससे उत्पादन में सुधार होता है और शिक्षार्थियों को व्यक्तिगत रूप से शिक्षा देने का प्रयास किया जाता है। इस विधि में शिक्षार्थी का पुनः समूह तथा पुनः समय सारणी बनायी जाती है तथा शिक्षण स्थान को भी पुनः व्यवस्थित किया जाता है। उनके शिक्षक मिलकर अपनी – अपनी विशिष्ट योग्यताओं से शिक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाते हैं। सहयोगात्मक प्रवृत्ति पर आधारित इस प्रविधि के मूल में यह धारणा एवं विश्वास है कि अकेले काम करने की अपेक्षा अन्य अध्यापक समूह में कार्य करने से अधिक कार्य होता है। इस प्रविधि का प्रयोग अमेरिका के अलावा अन्य देशों में भी किया जा रहा है।

2. दल शिक्षण की विशेषताएँ–

- टोली शिक्षण अथवा दल शिक्षण एक रूचिकर, लचीली तथा प्रभावकारी शिक्षण का संगठनात्मक प्रारूप है जिसे सहकारी शिक्षण भी कहते हैं।
- इसमें शिक्षण का दायित्व सामूहिक होता है जिसमें कई शिक्षक एक साथ शिक्षण प्रक्रिया को अन्जाम देते हैं।
- इस शिक्षण में विभिन्न शिक्षक एक दूसरे के ज्ञान अनुभवों से परिचित होते हैं तथा उनमें सन्निकटता आती है।
- शिक्षार्थी को भी कई शिक्षकों के ज्ञान, अभिरूचियों तथा दक्षताओं से परिचित होने का लाभ मिलता है।
- शिक्षण की योजना शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं तथा रूचियों को ध्यान में रखते हुए बनाई जाती है।
- इसमें विद्यालय में उपलब्ध सभी भौतिक संसाधनों का प्रयोग आवश्कतानुसार किया जाता है
- यह शिक्षण पारस्परिक सहयोग विधि पर आधारित होता है।

- इसमें शिक्षार्थी को भी स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का अवसर तथा स्वतः अध्ययन की प्रवृत्ति के विकास का अवसर होता है।

- इस शिक्षण में अध्यापक, शिक्षार्थी के मार्गदर्शन में सदैव व्यस्त रहतें हैं। उन्हे अपने अध्यापकों का सानिध्य प्राप्त होता है। फलस्वरूप यह शिक्षण शिक्षार्थी को अनुशासन हीन होने का अवसर ही नही प्रदान करती। अर्थात काम में सदैव व्यस्त रखने के कारण यह विधि शिक्षार्थियों को अनुशासन में रखने में सहायक है।

- इस शिक्षण से धन, समय तथा श्रम तीनों की बचत होती है।

- इसमें विविध विषयों तथा प्रसंगों को एक साथ पढ़ाने तथा पढ़ने की प्रवृत्ति का विकास होता है। इससे एक विषय का ज्ञान दूसरे विषय के ज्ञान की प्राप्ति में सहायता करता है।

3. दल शिक्षण के आधारभूत सिद्धान्त–

- दायित्व वितरण का सिद्धान्त।

- लचीलेपन का सिद्धान्त।

- उचित वातावरण के निर्माण का सिद्धान्त।

- अधिगम समूह के निर्माण का सिद्धान्त।

- शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं, शिक्षकों के योगदान तथा विद्यालयी सुविधाओं की उपयुक्ता का सिद्धान्त।

4. समूह शिक्षण अथवा दल समूह के रूप–

दल समूह का निर्माण अब कई प्रकार से होने लगा है जिनमें दो रूप मुख्य है–

(1) सोपान क्रमिक–जिसमें अध्यापन दल का नेता शीर्ष स्थान पर रहता है। उसके नीचे विशेष योग्यता के अध्यापक होते हैं तथा उसके नीचे प्रतिदिन अध्यापन करने वाले शिक्षक होते हैं।

(2) सहयोगिक– जिसमे कोई शिक्षक छोटा अथवा बड़ा नही होता वरन सभी बराबर के सम्मान के हकदार होते हैं। अध्यापक का नेतृत्व उनकी योग्यता, आवश्यकता, अनुभव तथा रूचि के अनुसार बदलता रहता है।

5. दल का आयोजन– दल का आयोजन श्रेणीबद्ध होता है जिसकी आधारभूत इकाई शिक्षक होती है। शिक्षक का दल में सम्मिलित होने का आधार उसका अनुभव तथा विषय विशेषज्ञता होती है। सामान्यतया 3 से 8 शिक्षक 75 से 240 शिक्षार्थियों के शिक्षण को आयोजित करतें हैं। अनुदेशन का कार्य साझा होता है। इसमें ऑफिस का कार्य ऑफिस स्टाफ करते हैं।

दल श्रेणी में एक शिक्षक दल नेता के रूप में होता है जो किसी विषय का विशेषज्ञ होता है। दल नेता का मुख्य कार्य–

- दल का समन्वय तथा प्रशासन देखना।

- शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना।

- शिक्षकों के कार्यो का समन्वय, उनके लिए आवश्यक प्रशिक्षण तथा उनके कार्यो का पर्यवेक्षण करना।

शिक्षकों के दल में वरिष्ठ तथा सहायक शिक्षक भी होते है। कुल मिलाकर दल नेता, वरिष्ठ शिक्षक, सहायक शिक्षक तथा ऑफिस स्टाफ चयनित शिक्षार्थियों के साथ एक दल का निर्माण करते हैं जिसमे शिक्षार्थी भाषण, स्व अध्ययन तथा वाद–विवाद और विचार विमर्श के द्वारा अधिगम करते हैं। दल शिक्षण में

कार्यक्रम इस प्रकार आयोजित किए जाते हैं कि प्रत्येक दल सदस्य श्रव्य–दृश्य सामग्री का उपयोग करते हुए शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया सम्पन्न करते हैं। इस समूह शिक्षण में चूंकि एक विषय के किसी एक प्रकरण के विभिन्न पक्षों को दो या दो से अधिक शिक्षक प्रस्तुत करते हैं तथा शिक्षकों को साझा उत्तर दायित्व स्वीकार करना पड़ता है इसलिए इस शिक्षण को सहयोगात्मक अथवा सहकारी शिक्षण भी कहते हैं।

6. दल शिक्षण की क्रिया विधि– दल शिक्षण में मुख्य रूप से तीन सोपानों का अनुसरण किया जाता हैः–

प्रथम सोपानः– योजना बनाना– जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य किए जाते हैंः–

- शिक्षण के उद्देश्यो को निश्चित करना।
- व्यवहारगत परिवर्तन के रूप में उद्देश्यों को लिखना।
- शिक्षार्थियों के प्रारम्भिक व्यवहार (Entry behavior) की पहचान करना।
- शिक्षण हेतु प्रकरण निश्चित करना।
- शिक्षण की प्रारम्भिक रूपरेखा तैयार करना

  जैसे– अनुदेशन का स्तर निर्धारित करना, शिक्षण सामग्री तथा अन्य साधनों के उपयोग को सुनिश्चित करना तथा मूल्यांकन प्रविधियों का चयन करना आदि।

दूसरा सोपान– दल शिक्षण की व्यवस्थाः– जिसके अन्तर्गत शिक्षण से सम्बन्धित कार्य किए जातें हैंः–

- शिक्षार्थियों से उनके पूर्व ज्ञान पर आधारित प्रश्न पूछते हुए उनके स्तर को ज्ञात करना।
- प्रभावशाली ढ़ग से शिक्षार्थियों को ज्ञान सम्प्रेषित करना।
- दल के वरिष्ठ अध्यापक द्वारा नेतृत्व भाषण।
- समूह के शेष अध्यापकों द्वारा शिक्षार्थियों की दृष्टि से कठिन बिन्दुओं को चिन्हित करना।
- दल के अन्य अध्यापक द्वारा उन बिन्दुओं को पुनः स्पष्ट करना जो शिक्षार्थियों की दृष्टि से भ्रामक अथवा कठिन है।
- शिक्षार्थी को आवश्यकतानुसार वांछित पुनर्बलन देना।
- शिक्षार्थी को पढ़ाए गए पाठ के आधार पर कुछ कार्य देना तथा अध्यापक द्वारा उनका निरीक्षण करना।

तीसरा सोपान – दल शिक्षण कार्य का मूल्यांकनः– मूल्यांकन का कार्य लघु सभा सत्र में होता है जिसमे हर शिक्षार्थी को विषय के स्पष्टीकरण तथा अपने विचार को अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है तथा उन्हे लिखने और प्रयोग करने का अवसर प्रदान किया जाता है।शिक्षाथी छोटे – छोटे दलों में बँटकर यह सब कार्य करते हैं तथा प्रत्येक दल एक अध्यापक के पर्यवेक्षण में कार्य करता है। उसके पश्चात मूल्यांकन के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों को व्यवहार में लाया जाता है–

- अध्यापक विभिन्न मूल्यांकन प्रविधियों का प्रयोग कर शिक्षार्थियों का मूल्यांकन करते हैं।
- शिक्षार्थी की उपलब्धि के आधार पर उद्देश्यों की पूर्ण प्राप्ति का निर्णय लिया जाता है।
- शिक्षार्थी की कमजोरियों का निदान करके उन्हे उपचारात्मक शिक्षण दिया जाता है।

- मूल्याकंन के पश्चात योजना तथा व्यवस्था सोपानों में पुनः परिवर्तन किया जाता है।

7. समूह शिक्षण के लाभ–

- प्रत्येक शिक्षक शिक्षण के लिए अपना सहयोग तथा अर्थपूर्ण योगदान देते हैं।
- शिक्षक की दक्षताओं तथा अपने विषय पर उनके स्वामित्व का उपयोग एक प्रभावशाली शिक्षण को प्रस्तुत करता है।
- शिक्षार्थी पर ऐसे विशेषज्ञों का पूर्ण प्रभाव पड़ता है जो उनके व्यापक ज्ञानार्जन में सहायक होता है।
- सहयोग तथा सहकारिता पर आधारित होने के कारण इन सामाजिक गुणों को बढ़ावा मिलता है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव शिक्षार्थियों पर भी पड़ता है जिसकी सामाजिक अध्ययन में अत्यन्त आवश्यकता है।
- यह विधि समय तथा शक्ति की दृष्टि से भी लाभकारी है क्योकि इसमें दोनो की बचत होती है।
- यह विधि मानवीय सम्बन्धों के विकास के विस्तार में अत्यन्त सहायक है।
- इस विधि में सभी को (अध्यापक और शिक्षार्थियों) अवसरानुसार अपने भावों को अभिव्यक्त करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है।
- इस विधि की समस्त गतिविधियों में लचीलापन होने से शिक्षार्थियों बोझरहित अधिगम करते हैं।
- इससे शिक्षक के व्यावसायिक स्तर का विकास होता है।
- यह विधि अनुदेशन की गुणवत्ता को सुधारने में सहायक है।
- प्रत्येक शिक्षक को एक दूसरे के कार्यो का मूल्यांकन करने का अवसर प्राप्त होता है।
- अध्यापक स्वयं भी इस विधि के माध्यम से अपने ज्ञान का और अधिक विस्तार कर सकते हैं।
- शिक्षण के तीनों उद्देश्य ज्ञानात्मक, भावात्मक, तथा क्रियात्मक तीनों की प्राप्ति समूह शिक्षण से सम्भव हो पाती है।

8. समूह शिक्षण के दोष–

- कभी – कभी अप्रभावी नियोजन समूह शिक्षण को निष्प्रभावी कर देता है।
- इस विधि में शिक्षार्थियों का बड़ा समूह होता है जिसके कारण वैयक्तिक अधिगम की संभावना कम हो जाती है।
- दल शिक्षण हेतु अनेक कमरों की आवश्यकता पड़ती है। फलस्वरूप ऐसे विद्यालय जहां पर इनका आभाव है वहां यह विधि प्रयोग में नही लाई जा सकती।
- प्रत्येक शिक्षक में वैचारिक भिन्नताएं होती है फलस्वरूप वे स्वयं को दूसरों से श्रेष्ठ समझने लगते हैं।
- शिक्षक इस विधि की तुलना में परम्परागत विधियों को अधिक महत्व देतें हैं फलस्वरूप उनकी यह धारणा और विश्वास इस विधि की सफलता पर एक प्रश्न चिन्ह लगाता है।
- कभी–कभी शिक्षक समूह शिक्षण में प्रदत्त भूमिकाओं के साथ सामन्जस्य नही बैठा पाते।

- इसमें शिक्षक कभी–कभी अपने मौलिक विचारों को अभिव्यक्त कर पाने में असहज महसूस करते हैं।
- ज्यादातर शिक्षक परम्परागत शिक्षण विधियों को ही वरीयता देते हैं । क्योंकि वे नवीन विधियों से उपजने वाली चुनौतियों एवं पुनः अध्ययन करने की प्रवृत्ति से नही जुड़ना चाहतें। यही कारण है कि वे टोली शिक्षण को अंगीकार नही कर पाते।
- सामाजिक अध्ययन का पाठ्यक्रम इस विधि के माध्यम से निर्धारित सत्र् में पूरा कर पाना मुश्किल सा प्रतीत होता है। उपरोक्त दोषों को दूर कर हम इस विधि को एक प्रभावशाली विधि बना सकते हैं जिसके सन्दर्भ में हमे निम्नलिखित बिन्दुओं पर अमल करना होगा–
- दल शिक्षण का प्रयोग अनुभवी तथा परिपक्व अध्यापकों द्वारा ही होना चाहिए।
- जो अध्यापक इस प्रकार के शिक्षण में रूचि लेते हो, उन्हे ही यह कार्य दिया जाना चाहिए।
- शिक्षकों को विषय वस्तु तथा क्रियाओं के चयन में पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए।
- यह विधि प्रशिक्षण संस्थाओ के लिए अत्यन्त उपयोगी है अतएव इसका प्रयोग वहीं पर करना चाहिए।
- इस विधि की सफलता के लिए सहयोग, सहकारिता तथा एक दूसरे में अन्तर्ग्रस्तता (Involvement) की नितान्त आवश्यकता होती है। बिना इन भावों के इस विधि की सफलता सम्भव नही है।अतएव अध्यापकों में इन गुणों के होने पर ही इस विधि का आयोजन प्रभावशाली परिणाम हस्तगत करा सकता है।

बोध प्रश्न

8.दल शिक्षण के सम्प्रत्यय को परिभाषित कीजिए।

____

____

____

9.दल शिक्षण को सहकारी शिक्षण क्यों कहतें है ?

____

____

____

6.5.2 शिक्षण विधिः एक सिहांवलोकन

खण्ड दो की तीनो ईकाइ (चार, पाँच, तथा छह) में आपने अपनी पाठ्यचर्या में सम्मिलित विभिन्न शिक्षण विधियों या निविष्टियों, युक्तियों तथा प्रविधियों का अध्ययन किया। सामान्य तौर पर शिक्षण विधि अध्यापक के कार्य की वह सामान्य योजना है जिसका निर्धारण वह वांछित शैक्षिक परिणाम अथवा उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए करता है। इस प्रकार शिक्षण विधि का सम्बन्ध शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति से होता है। शिक्षण विधि, शिक्षण प्रविधि से भिन्न होती है। शिक्षण विधि का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व होता है जबकि प्रविधि का स्वतन्त्र अस्तित्व नही होता। शिक्षण प्रविधि "शिक्षक क्या करता है" को बताती है, अर्थात शिक्षक द्वारा किसी भी मुख्य शिक्षण विधि के साथ सहायक के रूप में जो युक्तियां प्रयोग में लाई जाती है उन्हे ही

शिक्षण प्रविधि कहते हैं। शाब्दिक तौर पर इनमें भिन्नता है परन्तु इनका उद्देश्य एक है और वह है विषय वस्तु पर शिक्षार्थी को स्वामित्व प्राप्त करवाना। विद्यालय स्तर पर सामाजिक अध्ययन में अनेक शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाता है जो निम्नलिखित है–

- इकाई विधि (Unit Method).
- प्रसंग विधि (Topic Method).
- विचार विमर्श विधि (Discussion Method).
- योजना विधि (Project Method).
- समस्या समाधान विधि (Problom Solving Method).
- प्रयोग शाला विधि (Laboratory Method).
- व्याख्यान/भाषण विधि (Lecture Method).
- कहानी विधि (Story Method).
- प्रश्न उत्तर विधि (Question Answer Method).
- खोज विधि (Discovery Method).
- पाठ्य पुस्तक विधि (Text Book Method).
- पुनर्वीक्षण विधि (Reviewing Method).
- गृहकार्य विधि (Assignment Method).
- समवाय (Correlation Method).
- सर्वेक्षण विधि (Survey Method).
- क्षेत्रीय भ्रमण विधि (Field Trip Method).

उपयफ्रक्त विधियों के साथ प्रयुक्त प्रविधियां निम्नलिखित है –

- प्रश्न प्रविधि (Question Technique).
- अभ्यास प्रविधि (Drill Technique).
- कार्य निर्धारण प्रविधि (Assignment Technique).
- कथन प्रविधि (Narration Technique).
- अवलोकन प्रविधि (Observation).
- नाटकीय प्रविधि (Dramatization Technique).
- कहानी कथन प्रविधि (Story Telling Technique).
- परीक्षा प्रविधि (Examination Technique).
- उदाहरण प्रविधि (Illustration Technique).
- समीक्षा प्रविधि (Review Technique).
- सेमिनार (Seminar).

- सिम्पोजियम (Symposium).
- सम्मेलन (Conference).
- कार्यशाला (Workshop).

चूंकि शिक्षण का मुख्य उद्देश्य शिक्षार्थी में अधिगम एवं बोध का विकास करना होता है इसलिए शिक्षण विधियों एवं अधिगम में सुस्पष्ट सम्बन्ध होना आवश्यक है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण हेतु अध्यापक जिस शिक्षण विधि का भी चयन करें, उसे यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि शिक्षण विधि चयन अनेक कारकों से प्रभावित होता है जैसे कक्षा में शिक्षार्थी की संख्या, विद्यालय की प्रकृति, विषय की प्रकृति, प्रकरण की प्रकृति संसाधनों की उपलब्धता तथा शिक्षक के स्वयं का शिक्षा दर्शन। विद्वानों ने उपरोक्त कारकों के आधार पर शिक्षण विधियों के चयन की बात कही है जैसे–

गेज तथा बरलाइनर ने शिक्षार्थियों की संख्या को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षण विधि के चयन को मान्यता प्रदान करतें हैं। उनके अनुसार एकशिक्षार्थी होने पर वैयक्तिक अनुदेशन विधि का प्रयोग सर्वोत्तम होता है जैसे अभिक्रमित अनुदेशन, प्रोजेक्ट विधि आदि। यदि शिक्षार्थियों की संख्या 2 से 20 तक की है तब खोज विधि, विवेचन विधि, समस्या समाधान विधि, क्षेत्रीय भ्रमण विधि तथा समूह विधियों का प्रयोग किया जा सकता है जबकि शिक्षार्थियों की संख्या 40 या इससे अधिक होने पर व्याख्या विधि या समूह विधियों का प्रयोग किया जा सकता है।

प्रो ब्रूनर के अनुसार उन शिक्षण विधियों को प्रयोग में लाना चाहिए जो शिक्षार्थी के ज्ञान निर्माण में सहायक हों। उनके इस सुझाव में प्रो0 पियाजे द्वारा संस्तुत बौद्धिक विकास की संज्ञानात्मक विकास की विभिन्न अवस्थाओं को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।

डोबोरस के अनुसार ऐसी शिक्षण विधियों का चयन किया जाना चाहिए जो थ्शक्षार्थियों के बौद्धिक विकास में सहायक हो जैसे– खोज विधि, वैयक्तिक अधिगम विधि तथा स्वतन्त्र अधिगम विधि।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में स्पष्ट कहा गया है कि शिक्षण विधि शिक्षार्थी केन्द्रित तथा क्रिया आधरित होनी चाहिए। और इन विधियों में शिक्षक की भूमिका थ्शक्षार्थियों के अधिगम को सरल एवं उपयोगी बनाने की होनी चाहिए।

विषय की प्रकृति के दृष्टिकोण से देखा जाए, तो सामाजिक अध्ययन के शिक्षण हेतु ऐसी विधि उपयुक्त हो सकती है जिससे शिक्षार्थियों में सामाजिक कुशलता तथा लोकतान्त्रिक गुणों का विकास हो, जिसके लिए खोज विधि, समस्या समाधान विधि के साथ – साथ समूह विधियां अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकती है। वास्तव में शिक्षण विधियों का चयन काफी कुछ अध्यापक के शिक्षा दर्शन पर भी निर्भर करता है जिसमे वह विषय के अध्ययन उद्देश्य को पूर्ण करने वाली विधि का चयन करके ज्ञानात्मक, बोधात्मक तथा कौशलात्मक उद्देश्य को प्राप्त कर सकता है। अन्ततः हम कह सकतें है कि अध्यापक जब शिक्षण विधि का चयन करे तो यह ध्यान में अवश्य रखे कि–

- वह विषय की प्रकृति के अनुकूल हो।
- शिक्षार्थियों के बौद्धिक स्तर के अनुकूल हो।
- क्रिया आधारित तथा शिक्षार्थी केन्द्रित हो।
- शिक्षार्थियों की अधिगम आवश्यकताओं के अनुकूल हो।
- शिक्षार्थियों का संज्ञानात्मक, बोधात्मक तथा कौशलात्मक विकास हो।
- विषय के अधिगम उद्देश्य की प्राप्ति हो।

- उन विधियों में शिक्षक की कल्पना शक्ति तथा अन्तदृष्टि निहित हो:–
- जिसमे शिक्षार्थियों की रूचि हो।
- जिसमे शिक्षार्थिया सक्रिय रह सके।
- उनमें चिन्तन की प्रवृत्ति का विकास हो सके।
- शिक्षार्थिया को स्वयं करके अधिगम करने का अवसर प्राप्त हो सके।
- जिनमें शिक्षार्थियों की श्रव्येन्द्रियाँ तथा दृश्एन्द्रियाँ क्रियाशील हो।
- जो मनोवैज्ञानिकता तथा सामाजिकता पर आधारित हो जिससे शिक्षार्थिया के जीवन की गुणवत्ता को उन्नतशील बनाया जा सके।
- जिनसे शिक्षार्थियों में उचित अभिवृत्ति तथा वांछित मूल्यों का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से विकास हो सके।

6.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने प्रयोग की जाने वाली समूह निविष्टियों अथवा समूह शिक्षण विधियों का अध्ययन किया और साथ ही साथ मैने अति संक्षिप्त उन शिक्षण विधियों एवं तकनीकी को भी प्रस्तुत किया जिनका प्रयोग शिक्षक इस विषय के शिक्षण के दौरान आवश्यकतानुसार करता है। विषय के शिक्षण के दौरान शिक्षक ऐसी शिक्षण विधि एवं तकनीकी का प्रयोग करता है तो शिक्षार्थियो की आयु रूचि क्षमता, ज्ञान का स्तर, विषय की मांग के अनुकूल हो। आज उत्तम शिक्षण वही माना जाता है जिसमे शिक्षार्थियो को समूह में सक्रिय रूप से ज्ञानार्जन करने वाला व्यक्ति बनने दिया जाता है, न कि उसे निष्क्रिय श्रोता बनने दिया जाए। उसे स्वयं से सीखने की प्रेरणा व अवसर मिले तथा सामूहिक क्रियाओं के माध्यम से उसका ज्ञानवर्धत हो और समाज की वास्तविक परिस्थितियों की जानकारी उसे मिल सके। समूह शिक्षण विधियां, समूह कार्य तथा दल शिक्षण इन कसौटियों पर पूरा खरा उतरता है जिनका अध्ययन आपने प्रस्तुत इकाई में किया।

6.7 अभ्यास कार्य

1) अपने साथी अध्यापकों के मध्य सामाजिक अध्ययन के किसी प्रकरण पर विचारोंवेश शिक्षण का आयोजन करें तथा उस दौरान आप किन किन समस्याओं को महसूस करतें है उन्हे बिन्दुवार लिखिए।
2) वाद – विवाद के गुण तथा दोषों का दूर करने के लिए अपने सुझाव प्रस्तुत कीजिए।
3) शर्मीले प्रकृति के शिक्षार्थियों के लिए समूह शिक्षण विधियां किस प्रकार उपयोगी है ?
4) सामाजिक अध्ययन में सहकारी या सहयोगात्मक शिक्षण के महत्व को स्पष्ट कीजिए।
5) परिसंवाद विधि के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।

6.8 चर्चा के बिन्दु

1) वाद विवाद एक प्रभावशाली अनुदेशनात्मक विधि है।
2) सामूहिक शिक्षण विधियों के प्रयोग के दौरान कक्षा के कुछ शिक्षार्थी निष्क्रिय रहतें हैं।

3) दल शिक्षण पारस्परिक सहयोग विधि पर आधारित हैं।

4) आपके दृष्टिकोण से सामाजिक अध्ययन की सर्वोत्तम शिक्षण विधि कौन सी हो सकती है ? कारण दीजिए।

6.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. वाद विवाद अथवा विवेचन विधि शिक्षण की वह विधि है जिसमें शिक्षक तथा शिक्षाथी मिल जुलकर किसी प्रकरण प्रश्न या समस्या के सम्बन्ध में सामूहिक वातावरण में स्वतन्त्रता पूर्वक अपने विचारो का आदान प्रदान करते हैं। यह विधि मुख्य रूप से विवादास्पद मुद्दों के सन्दर्भ में सर्वाधिक उपयुक्त होती है। इस विधि में ताक्रिक तथा विवेचनात्मक चिन्तन के आधार पर ही किसी समस्या का समाधान प्राप्त किया जाता है।

2. सामाजिक अध्ययन के संश्लिष्ट या विवादास्पद प्रकरण के शिक्षण हेतु नामिका परिचर्चा विधि अत्यन्त उपयोगी होती है जिसमें विषय विशेषज्ञों को एक साथ बैठाकर परिचर्चा करने का विकल्प अपनाया जाता है। इसमे शिक्षार्थी द्वारा अपने प्रश्न परिचर्चा शुरू होने के पूर्व ही विषय विशेषज्ञ को दे दिया जाता है जिससे वे पूर्व तैयारी कर शिक्षार्थियों के प्रश्नों का सही ढ़ंग से उत्तर दे सके। इस प्रकार इस विधि के माध्यम से सभी विवादास्पद पहलुओं पर विषय विशेषज्ञ का स्पष्टीकरण प्राप्त हो जाता है।

3. चर्चा परिचर्चा विधि का प्रयोग करते समय जोर से बोलना, दूसरो की बातें सुनना, साक्ष्य से समर्थित विचार प्रस्तुत करना, अपनी बात को सोच समझ कर रखना, अन्ततः दिये गये निर्णय पर अपना समर्थन देना आदि बातों पर विशेष ध्यान देना अपेक्षित है।

4. विचारोवेश शिक्षण विधि शिक्षार्थियों की सर्जनात्मक योग्यताओं के विकास के लिये अत्यन्त उपयोगी है। यह समूह आधारित अधिगम – शिक्षण की एक विधि है जिसका प्रयोग किसी भी समस्या का सर्जनात्मक या नवीन प्रक्रिया परक समाधान प्राप्त करने के लिये किया जाता है। इस विधि में अध्यापक द्वारा शिक्षार्थियों के समक्ष कोई समस्या रखी जाती है और फिर उनसे खुलकर अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के लिये कहा जाता है। यहां शिक्षार्थियों को इस बात के लिये आश्वस्त किया जाता है कि उनके किसी भी जवाब को निरूत्साहित नही किया जायेगा, जिससे वे खुल कर अपने को अभिव्यक्त कर सकें। इस प्रकार यह विधि शिक्षार्थी के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

5. सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति का मुख्य उद्देश्य शिक्षार्थियों की चिन्तन शक्ति को उत्प्रेरित करना, सृजनात्मक अभिव्यक्ति के लिये उत्साहित करना, उनके पूर्व ज्ञान में वृद्धि करना, सहयोगात्मक चिन्तन का विकास करना, उत्तरदायित्व की भावना का विकास करना, शर्मीले प्रकृति के शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास का भाव उत्पन्न करना, शिक्षार्थियों में एक दूसरे के प्रति मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना आदि होता है।

6. "सामाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति शिक्षार्थियों में सामाजिक गुणों का विकास करती है" यह कथन अक्षरशः सत्य हैं। यह एक ऐसी पद्धति है जिसमें सभी शिक्षाथी एक साथ मिल जुलकर कार्य करते हैं जिससे उनमें सामाजिक संचेतना, समूह सहभागिता, आत्मीयता, सह–अस्तित्व में निर्णय लेने की क्षमता, एक दूसरे के विचारो और भावनाओं के प्रति सम्मान, नेतृत्व की भावना जैसे सामाजिक गुणों तथा कौशलों का विकास होता है।

7. निरीक्षित अध्ययन विधि वह विधि है जिसमें अध्यापक द्वारा दिये गये वांछित निर्देशन में शिक्षार्थियों किसी भी दिये गये कार्य को पूरा करते हैं और अध्यापक उनके कार्यो का निरीक्षण करते हैं। इस विधि में शिक्षार्थी सतत रूप से काम में व्यस्त रहते हैं इसलिये वे स्वतः अनुशासन में रहना सीख लेते हैं।

8. जैसा कि आप सभी जानते हैं कि हर शिक्षक प्रत्येक विषय का ज्ञाता नही हो सकता, इसलिये विषय विशेष को स्पष्ट करने के लिये उन सभी विषयों के विषय विशेषज्ञों की सहायता ली जाती है। जब कई अध्यापकों के एक समूह द्वारा शिक्षण किया जाता है तो उसे समूह अथवा दल शिक्षण कहा जाता है। इस प्रकार यह एक सहयोगात्मक विधि है जिसमें शिक्षक भिन्न भिन्न कार्य अथवा भूमिका निभाते हुये व्यवस्थित ढ़ंग से अधिक से अधिक कार्य करते हैं।

9. दल शिक्षण को सहकारी शिक्षण भी कहते हैं क्योकि इसमें दो या दो से अधिक शिक्षक, जो अपने – अपने विषय के विशेषज्ञ होते हैं, मिल जुल कर सहयोगात्मक प्रवृत्ति के साथ कार्य करते हैं इसलिये इसे सहकारी शिक्षण भी कहते हैं। चूंकि इसमें पारस्परिक सहयोगिक विधि के द्वारा समस्त तथ्यों का भली भांति स्पष्टीकरण किया जाता है इसलिये इसे सहयोगिक शिक्षण भी कहते हैं।

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1) **Kochhar, S.K.** – The Teaching of Social Studies 1963, Delhi, University Publishers.

2) त्यागी, गुरूसरन दास – सामाजिक अध्ययन का शिक्षण, विनोद पुस्तक कन्दिर, आगरा।

Tara Chand – A History of Indian People Aligarh, P.C. Dwadesh & Co..

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.SE-41

सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

खण्ड – 3

सामाजिक अध्ययन शिक्षण की रणनीतियाँ– II

इकाई – 7

सामाजिक अध्ययन की अधिगम में पाठय सहगामी क्रियाए तथा अनौपचारिक उपागम 147–166

इकाई – 8

सामाजिक अध्ययन अधिगम में अभिक्रमित अनुदेशन 167–180

इकाई – 9

सामाजिक अध्ययन षिक्षण के नवीन उपागम 181–214

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
B.Ed.SE-41 सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह	कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर छत्रसाल सिंह	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर के० एस० मिश्रा	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर धनन्जय यादव	विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ० जी० के० द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० शक्ति शर्मा	सह आचार्य, बी० एड० विभाग, के० पी० बी० एड० ट्रेनिंग कॉलेज, प्रयागराज

सम्पादक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर विद्या अग्रवाल	पूर्व विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशकः

कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

Year -2023

ISBN: 978-81-963573-0-6

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Social Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

Printed by: Chandrakala Universal Pvt.Ltd, 42/7 JLN Road, Prayagraj

खण्ड परिचय–3

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण की रणनीतिया (Strategies for teaching social study)

प्रस्तुत खण्ड के अन्तर्गत इकाई संख्या 7 "सामाजिक अध्ययन के अधिगम में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ तथा अनौपचारिक उपागम, इकाई संख्या 8 "सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अभिक्रमित अनुदेशन" तथा इकाई संख्या 9 "सामाजिक अध्ययन शिक्षण के नवीन उपागम" का विश्द एवं स्पष्ट वर्णन किया गया है।

इकाई संख्या 7 के अन्तर्गत प्रस्तुत विषय के अध्ययन में पाठ्य सहगामी क्रियाओं का क्या महत्व है, आप एक शिक्षक के रूप में इसका किस प्रकार आयोजन करेंगे तथा किस प्रकार इन क्रियाओं को आप उद्देश्यपूर्ण बना सकते हैं इसका आप अध्ययन करेंगे और अध्यनोपरान्त आप न केवल सफलतापूर्वक इन क्रियाओं का आयोजन कर सकेंगे वरन सामाजिक अध्ययन के अधिगम में विभिन्न अनौपचारिक उपागमों का प्रयोग करते हुए उनसे आप अपने शिक्षार्थियों को लाभान्वित करा सकेंगे।

इकाई संख्या 8 के माध्यम से आप अभिक्रमित अनुदेशन के व्यापक सम्प्रत्यय एवं उसकी उपयोगिता को समझ सकेंगे। साथ ही साथ आप सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के दौरान सफलतापूर्वक इसका प्रयोग करते हुए अपने शिक्षार्थियों को शिक्षण के इस नवाचार से परिचित कराते हुए उन्हे अधिकाधिक अधिगम हेतु प्रेरित कर सकेंगे।

इकाई संख्या 9 के अन्तर्गत सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के विभिन्न नवीन उपागमों की चर्चा की गई है। जिनके अध्ययनोपरान्त आप इन नवीन उपागमों को भली भांति समझ कर इसके महत्व को भली भांति आत्मसात कर सकेंगे। साथ ही साथ शिक्षण के परम्परागत रूप "चॉक एण्ड टॉक" से हटकर अपने शिक्षण में तकनीकी के प्रयोग के माध्यम से अपने शिक्षार्थियों को अधिगम हेतु अभिप्रेरित कर सकेंगे और शिक्षण के परम्परागत स्वरूप की नीरसता को कम करते हुए अपने शिक्षार्थियों को इस नवीन विधा के माध्यम से ज्ञानार्जन हेतु उत्साहित कर सकेंगे।

इकाई – 7 सामाजिक अध्ययन के अधिगम में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ तथा अनौपचारिक उपागम

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 सामाजिक अध्ययन के अधिगम में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ

- 7.3.1 पाठ्य सहगामी क्रियाओं का अर्थ
- 7.3.2 पाठ्य सहगामी क्रियाओं के उद्देश्य
- 7.3.3 पाठ्य सहगामी क्रियाओं की आवश्यकता
- 7.3.4 पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रकार
- 7.3.5 पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन, प्रशासन एवं प्रबन्धन
- 7.3.6 पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संगंठन के सिद्धान्त
- 7.3.7 पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रबन्धन में कतिपय व्यावहारिक समस्याएं
- 7.3.8 प्रबन्धन सन्दर्भित समस्याओं के निदान हेतु अपेक्षित सुझाव

7.4 सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अनौपचारिक उपागम की भूमिका

- 7.4.1 सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अनौपचारिक उपागमों की भूमिका
- 7.4.2 नेशनल कैडिट कोर
- 7.4.3 स्काउट एवं गाइड
- 7.4.4 रेड क्रॉस
- 7.4.5 शैक्षिक भ्रमण
- 7.4.6 सामाजिक अध्ययन क्लब
- 7.4.7 सामाजिक अध्ययन परिषद
- 7.4.8 ऐतिहासिक सांस्कृतिक पर्यटन

7.5 पाठ्य सहगामी क्रियाओं तथा अनौपचारिक उपागमों का सामाजिक अध्ययन शिक्षण में महत्व

7.6 सारांश

7.7 अभ्यास कार्य

7.8 चर्चा के बिन्दु

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

7 .1 प्रस्तावना

सामाजिक अध्ययन सिद्धान्त के साथ–साथ व्यवहार का भी विषय है। यही कारण है कि इसके शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया में विषय वस्तु के औपचारिक शिक्षण के साथ साथ पाठ्य सहगामी क्रियाएँ तथा अनौपचारिक उपागमों की भी अतिशय महत्ता है। वास्तव में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ सामाजिक अध्ययन के अधिगम हेतु स्वमेव एक अनौपचारिक उपागम है जिनके माध्यम से हम शिक्षार्थियों में वांछनीय सामाजिक गुणो, कौशलों तथा क्षमताओं को विकसित कर उसे समाज का उपयोगी सदस्य बना सकते हैं तथा उसमें लोकतान्त्रिक गुणों एवं नेतृत्व की क्षमता का विकास कर उसमे अपने राष्ट्र की प्रगति एवं उत्थान के मार्ग को प्रशस्त करने का उत्साह एवं ज़ज्बा विकसित कर सकते हैं। प्रस्तुत इकाई में आप पाठ्य सहगामी क्रियाओं तथा अनौपचारिक उपागमों की सामाजिक अध्ययन के शिक्षण –अधिगम में महत्ता तथा उपयोगिता का अध्ययन करेंगे। साथ ही साथ इनके सम्प्रत्यय, उद्देश्य, आवश्यकता, सहायक संस्थाओं, उनकी उपयोगिता आदि को भी वृहद एवं स्पष्ट रुप से समझने में प्रस्तुत इकाई अत्यन्त सहायक सिद्ध होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

7.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप–

- पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अर्थ का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- सामाजिक अध्ययन के अधिगम में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करने वाली विविध संस्थाओं के नाम का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं की आवश्यकताओं को सूचीबद्ध कर सकेंगें
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- अपने विद्यालय में पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन कर सकेंगे।
- पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन के दौरान आने वाली व्यावहारिक समस्याओं के समाधान हेतु अपेक्षित कौशलों का विकास स्वयं में कर सकेंगे।
- शिक्षार्थियों में सामाजिक गुणों तथा कौशलों के विकास हेतु विभिन्न अनौपचारिक उपागमों का प्रयोग कर सकेंगे।

7.3 सामाजिक अध्ययन के अधिगम में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ

शिक्षा का मुख्य लक्ष्य शिक्षार्थी का सर्वांगीण विकास करना है और इस लक्ष्य की प्राप्ति में जितना महत्व विभिन्न विषयो का है उतना ही महत्व पाठ्य सहगामी क्रियाओं का। प्रारम्भ में इन क्रियाओं का विशेष महत्व नही था। शिक्षार्थी अवकाश समय में खुद ही विभिन्न प्रकार के खेल खेला करते थे। अध्यापक की इस सन्दर्भ में कोई महत्वपूर्ण भूमिका नही होती थी। उसकी भूमिका तो मात्र 3R अर्थात लिखना (Writing) पढ़ना (Reading) तथा गणित (Arithmatic) के कुशल क्रियान्वयन एवं सम्पादन तक ही सीमित थी। कालान्तर में मनोविज्ञान के शिक्षा में प्रवेश से ही लोगों के दृष्टिकोण बदले तथा शिक्षा की प्रक्रिया में शिक्षार्थी को केन्द्र में रखते हुए उसके सर्वांगीण विकास पर बल दिया जाने लगा। फलस्वरुप

पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन की अनिवार्यता घोषित की गई और अतीत के 3R को बदल कर 7R को महत्व दिया जाने लगा। अर्थात Reading, Writing तथा Arithmatic के साथ–साथ Right (अधिकार), Responsibility (उत्तरदायित्व), Relationship (सम्बन्ध) तथा Recreation (मनोरंजन) को ही शिक्षा माना गया।

सामाजिक अध्ययन अधिगम में पाठ्य सहगामी तथा अनौपचारिक उपागम की अतिशय महत्ता है। ये ऐसी क्रियाएँ है जो शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया में बिना कोई व्यवधान डाले साथ – साथ चलती है। इन क्रियाओं में शिक्षार्थी द्वारा सहभागिता करने से न केवल उनमें व्यावहारिकता का संचार होता है वरन उनका शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक, चारित्रिक, सांस्कृतिक विकास के साथ साथ कलात्मक तथा सृजनात्मक शक्ति का भी विकास होता है। सुविधा की दृष्टिकोण से हम इनका विशद् विवेचन पृथक पृथक कर रहे है

7.3.1 पाठ्य सहगामी क्रियाओं का अर्थ

पाठ्य सहगामी क्रियाएँ वे क्रियाएँ होती है जो कक्षाध्यापन के साथ साथ चलती है। यद्यपि ये कक्षाध्यापन से सम्बन्धित नहीं होती परन्तु इनका सम्बन्ध कक्षा के अनुभवों से होता है जो पाठ्यक्रम के साथ–साथ गतिशील हो कर शिक्षार्थी के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करती है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–1953) के अनुसार "पाठ्य सहगामी क्रियाएँ विद्यालय की पाठ्यक्रम क्रियाओं का एक अभिन्न अंग है और इनकी समुचित ढ़ंग से व्यवस्था करना और अधिक आवश्यक है। अगर इनका आयोजन समुचित ढ़ंग से किया जाता है तो ये महत्वपूर्ण गुणों एवं दृष्टिकोणों को विकसित करने में सहायक होती है।"

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पाठ्य सहगामी क्रियाओं से तात्पर्य उन क्रियाओं से है जिन्हे विद्यालय या विद्यालय से बाहर सम्पादित किया जाता है, जिसमें अध्यापकों द्वारा शिक्षार्थियों को पर्याप्त निर्देशन एवं सहायता प्रदान की जाती है जिसका मुख्य उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है। यही कारण है कि इन क्रियाओं को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग माना जाता है।

7.3.2 पाठ्य सहगामी क्रियाओं के उद्देश्य

- शिक्षार्थियों को सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ – साथ व्यावहारिक पहलुओं में दक्ष बनाना।
- सामाजिक एवं सामुदायिक जीवन की विविध गतिविधियों का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना।
- शिक्षार्थी को वांछित दिशा में सामाजिक समायोजन का ज्ञान प्रदान करना।
- सामुदायिक जीवन के विस्तृत क्षेत्रों में शिक्षार्थी की रूचि उत्पन्न करना।
- शिक्षार्थियों के व्यवहार के उच्चतम मानों को विकसित करना।
- उनमें स्वशासन तथा स्व नियन्त्रण के गुणों का विकास करना।
- शिक्षार्थी में लोकतान्त्रिक तथा नागरिकता के गुणों का विकास करते हुए उनमे कुशल नेतृत्व की क्षमता का विकास करना।
- शिक्षार्थी में अपनी ऐतिहासिक धरोहरों के प्रति सम्मान एवं प्रशसा की अभिवृत्ति का विकास करना।
- शिक्षार्थी मे विभिन्न मूल्यों तथा परम्पराओं के प्रति श्रद्धा भाव उत्पन्न करना।
- शिक्षार्थी को स्वस्थ्य मनोरंजन का अवसर प्रदान करना।
- अवकाश काल का सदुपयोग करवाना।

- विभिन्न समाजों से आए शिक्षार्थी में "सहयोग एवं सहअस्तित्व (Co-operation and Co-existence)" की भावना का विकास करना और उन्हे राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बढ़ने हेतु भावात्मक रूप से एक बनाना।
- विद्यालय, समुदाय तथा समाज के सम्प्रत्यय का शिक्षार्थियों को बोध कराना।
- शिक्षार्थियों की अन्तर्निहित सम्भावनाओं तथा क्षमताओं का पता लगा कर उनके विशिष्ट कौशलों का विकास करना।
- विद्यालय के स्तर को ऊंचा उठाना।

7.3.3 पाठ्य सहगामी क्रियाओं की आवश्यकता

उपयफ्रक्त वर्णित समस्त उद्देश्य सामाजिक अध्ययन के अधिगम के व्यावहारिक पहलू हैं अर्थात शिक्षार्थी सैद्धान्तिक रूप से जो भी ज्ञानार्जन करता है। उसका व्यावहारिक पक्ष उपयफ्रक्त उद्देश्यों से सम्बन्धित होता है। वास्तव में सामाजिक अध्ययन के सैद्धान्तिक ज्ञान से शिक्षार्थी के नैतिक, चारित्रिक, सामाजिक, लोकतान्त्रिक तथा सौन्दर्यात्मक विकास को तब तक मूर्त रूप नही दिया जा सकता जबतक पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन न किया जाए। इसके महत्व को हम निम्नलिखित पंक्तियों में देख सकते है–

- सामाजिक अध्ययन में बहुत से ऐसे तथ्य तथा प्रसंग होते हैं जिन्हे मात्र सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से नही समझा जा सकता यथा नेतृत्व, इमानदारी, सहयोग, निष्पक्षता, भ्रातृत्व भाव, स्वाभाविक रूप से विभिन्न प्रत्ययों का निरीक्षण आदि। इनका अनुभव शिक्षार्थियों को तभी होगा जब वे इनसे सम्बन्धित क्रियाओं का सम्पादन करेगा। इस दृष्टिकोण से पाठ्य सहगामी क्रियाओं की अतिशय आवश्यकता है।
- विषयवस्तु के अध्ययन के साथ–साथ खेल– कूद, व्यायाम, दौड़, योगा, नाटक, जैसी पाठ्यसहगामी क्रियाएँ शिक्षार्थी को शारीरिक सुदृढ़ता प्रदान करती है।
- पाठ्यसहगामी क्रियाएँ शिक्षार्थी में विभिन्न सामाजिक मूल्यों, गुणों तथा आदर्शो यथा सहानुभूति, परोपकार, दया, मैत्रीभाव, परमार्थ, नेतृत्व का भाव, वसुधैवकुटुम्बकम, आदि का अनुंकरण एवं बीजारोपण करते हैं।
- बालकों को कुंठा, तनाव, कुसमायोजन तथा हीनता जनित ग्रन्थियों को दूर कर उनकी मूल प्रवृत्तियों के विकास एवं उसकी संतुष्टि में पाठ्यसहगामी क्रियाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
- ये क्रियाएँ शिक्षार्थी में सद्भावना, मैत्री, सच्चाई, ईमानदारी, सफाई, शुद्धता से रहने की आदत विकसित कर उनका चारित्रिक तथा नैतिक विकास करती है।

<u>बोध प्रश्न</u>

1.मूल प्रवृत्ति के विकास एवं उसकी संतुष्टि में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ किस प्रकार सहायक है ?

____
____
____

7.3.4 पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रकार

पाठ्य सहगामी क्रियाओं की एक लम्बी फेहरिश्त है जिनकी सूची बना पाना एक दुरूह तथा मुश्किल कार्य है तथापि कुछ प्रमुख ऐसी क्रियाओं को यहां सूचीबद्ध कर रहे हैं जिनका आयोजन लगभग सभी विद्यालय अपने यहां करते हैं–

1) शरीरिक विकास सम्बन्धी क्रियाएँ– जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के खेल यथा खो – खो, कबड्डी, कुश्ती, हॉकी, बॉलीबाल, फुटबॉल, क्रिकेट, बास्केट बाल, ऊँची कूद, जेबिनल थ्रो, डिस्कस थ्रो, विभिन्न प्रकार की दौड़, तैरना, सामूहिक व्यायाम, परेड, एन0सी0सी0 आदि आती हैं।

2) शैक्षिक क्रियाएँ– जिसके अन्तर्गत विभिन्न विषयों से सम्बन्धित परिषदें जैसे, हिन्दी परिषद, विज्ञान परिषद, सामाजिक अध्ययन परिषद, कला परिषद, बना ली जाती है जो विद्यालय में विभिन्न प्रकार की प्रासंगिक तथा अर्थ पूर्ण पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन हेतु उत्तरदायी होती हैं।

3) साहित्यिक क्रियाएँ– इसके अन्तर्गत सामाजिक अध्ययन के किसी भी प्रकरण को लेकर निम्नलिखित आयोजित की जाने वाली क्रियाएँ आती हैं जैसेः– भाषण प्रतियोगिता, वाद – विवाद प्रतियोगिता, अन्त्याक्षरी (विभिन्न स्थलों अथवा शासक के नाम पर आधारित), विभिन्न ऐतिहासिक अथवा राजनैतिक घटनाओं का रंग मंचन, विद्यालय की पत्रिका में किसी भी प्रकरण को लेकर उसका विश्लेषणात्मक लेख आदि।

4) भ्रमण सम्बन्धी क्रियाएँ अथवा क्षेत्रीय भ्रमण– विभिन्न ऐतिहासिक स्थलों पर शैक्षिक भ्रमण, प्रतिष्ठित शैक्षिक संस्थाओं का भ्रमण, संग्रहालय, चिड़ियाघर, वन–विहार, अभ्यारण्य, विभिन्न कारखानों व उद्योगों का भ्रमण आदि भी पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अन्तर्गत ही आता है जहां शिक्षार्थियों को अपने अध्यापकों के मार्ग निर्देशन में बहुत कुछ अतीत, वर्तमान तथा भविष्य के विषय में देखने और विचार मंथन करने को मिलता है।

5) सामाजिक शिक्षा सम्बन्धी क्रियाएँ– इन क्रियाओं का मुख्य उद्देश्य समाज का कल्याण करना है अथवा समाज कल्याण हेतु शिक्षार्थियों को प्रेरित करना है जिसके अन्तर्गत स्काउंटिग – गाइंडिग, श्रमदान, रेडक्रास,एन0 एस0 एस0, एन0सी0सी0, स्वच्छता सप्ताह, प्राथमिक चिकित्सा, सहकारी समिति, सामूहिक प्रार्थना, प्रभात फेरी, विभिन्न कल्याण समितियों के साथ मिलकर उनके कार्य में सहयोग प्रदान करना, ग्राम पर्यवेक्षण, विभिन्न प्रकार की जागरूकता सम्बन्धित रैलियाँ जैसे पर्यावरण, परिवार नियोजन, तम्बाकू निषेध, मद्यपान निषेद्य, एड्स आदि का आयोजन कर लोगों का सहयोग किया जाता है।

6) नागरिकता के प्रशिक्षण से सम्बन्धित क्रियाएँ– विभिन्न राष्ट्रीय, सामाजिक तथा सांस्कृतिक पर्वो एवं उत्सवों में भाग लेना, महापुरूषों की जयन्ती का आयोजन, शिक्षार्थियों की स्वायत्ता शासन समिति, विभिन्न जन संस्थाओं यथा ग्राम पंचायत, नगर पंचायत आदि का भ्रमण, संसद विधान मण्डल पर शिक्षार्थियों को भ्रमण पर ले जाकर उन्हे इसके कार्यो एवं उत्तरदायित्वों से अवगत कराना, पुराशिक्षार्थी सम्मेलन का आयोजन आदि ऐसी पाठ्य सहगामी क्रियाएँ हैं जिसके माध्यम से हम शिक्षार्थियों को उनके कर्तब्यों एवं उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक करते हुए उन्हे नागरिकता का प्रशिक्षण देते हैं।

7) कलात्मक विकास सम्बन्धी क्रियाएँ– शिक्षार्थियों के विकास हेतु पाठ्यसहगामी क्रियाओं के अन्तर्गत चित्रकला, रेखाचित्र, व्यंग्यात्मक चित्र, मूर्ति कला, चार्ट एवं मॉडल, प्रदर्शनी, विद्यालय सौन्दर्यीकरण हेतु की जाने वाली विविध क्रियाएँ, रंगोली, सांस्कृतिक कार्यक्रम, फैन्सी ड्रेस, लाकगीत, लोक नृत्य तथा संगीत आदि क्रियाएँ अत्यन्त सहायक होती हैं।

8) अभिरूचि विकास सम्बन्धी– इन क्रियाओं के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के सिक्कों एवं टिकटों का संग्रह, चित्रों का एकत्रीकरण, छायांकन (Photography) कर एलबम तैयार करना, पुष्प सज्जा, संगीत तथा साहित्यिक लेखन एवं महापुरूषों के जीवन चरित्र तथा उनके कृत्यों का अनुशीलन आदि के माध्यम से शिक्षार्थियों की अभिरूचियों का विकास कर उन्हे प्रोत्साहन दिया जा सकता है।

अध्यापक उपयफ्रक्त पाठ्यसहगामी क्रियाओं का आयोजन कर शिक्षार्थियों के सर्वतोभावेन विकास को सफलतापूर्वक मूर्त रूप प्रदान कर सकता है।

बोध प्रश्न

2.शारीरिक विकास संबन्धित क्रियाओं की सूची बनाइये।

....
....
....

7.3.5 पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन, प्रशासन एवं प्रबन्धन

पाठ्य सहगामी क्रियाओं की अतिशय महत्ता को देखते हुए प्रायः सभी विद्यालय इनका आयोजन करते हैं परन्तु इनका आयोजन विद्यालय के उपलब्ध साधनों तथा संसाधनों पर निर्भर करता है। जहां इनकी प्रचुरता एवं पर्याप्तता है, वहां तो इन क्रियाओं के आयोजन एवं प्रबन्धन में कोई समस्या नही आती। परन्तु जिन विद्यालयों के पास सीमित साधन और संसाधन है, उनके लिए इस सन्दर्भ में अनेक व्यावहारिक समस्याएं आती हैं। परन्तु हम इनके आयोजन, प्रबन्धन तथा प्रशासन से सम्बन्धित समस्याओं पर विजय प्राप्त कर सकते हैं जैसे–

- प्रत्येक विद्यालय को केवल उन्ही क्रियाओं को प्रारम्भ करना चाहिए जो उनके विद्यालय की परिस्थिति, आकार, भवन, उपलब्ध साधन और संसाधन तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप हो तथा जिसका प्रबन्धन विद्यालय की वित्तीय क्षमता के अनुरूप हो।
- उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए ही इन क्रियाओं का आयोजन किया जाना चाहिए क्योकि सोद्देश्यपूर्ण क्रियाओं से ही शिक्षार्थी लाभान्वित हो पाते हैं।
- क्रियाओं में शिक्षार्थियों की अधिक से अधिक सहभागिता सुनिश्चित हो सके, इसलिए यह आवश्यक है कि इन क्रियाओं का चयन शिक्षार्थियों की रूचि, क्षमता, योग्यता तथा उनकी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ही किया जाए।
- ये क्रियाएँ शिक्षार्थी के आयु स्तर, कक्षा स्तर तथा उनकी शारीरिक क्षमता के अनुकूल होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में क्रियाओं का स्तर कक्षा के स्तरानुकूल होना चाहिए। जैसे – प्राथमिक स्तर के शिक्षार्थी की क्रियाओं में खेल आधारित तथा मनोरंजन केन्द्रित क्रियाओं को सम्मिलित किया जाना चाहिए जबकि माध्यमिक स्तर की क्रियाएँ शारीरिक तथा बौद्धिक होनी चाहिए।
- इन क्रियाओं तथा सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम में सामंजस्य अवश्य होना चाहिए जिससे विषय के सामान्य लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को भी प्राप्त किया जा सके।

- क्रियाओं का चयन प्रबन्धक, प्राचार्य, शिक्षक, शिक्षार्थी तथा अभिभावकों के सहमति के आधार पर होना चाहिए जिससे यदि कोई व्यावहारिक समस्या आए, तो उसका सफलतापूर्वक निदान किया जा सके।

- इन क्रियाओं के क्रियान्वयन स्थिति, उसका स्थल तथा तिथि पूर्व निर्धारित होना चाहिए जिससे शिक्षण कार्य में किसी भी प्रकार का व्यवधान न आ सके साथ ही साथ इनका क्रियान्वयन सफलतापूर्वक किया जा सके।

- इन क्रियाओं के आयोजन तथा संचालन हेतु अध्यापक तथा प्रत्येक शिक्षार्थी को अपना–अपना उत्तरदायित्व समझना होगा तथा उसमे ईमानदारी के साथ अपनी जवाबदेही सुनिश्चित करनी होगी।

7.3.6 पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संगंठन के सिद्धान्तः–

पाठ्य सहगामी क्रियाओं से हम तभी लाभान्वित हो सकतें है जब इनके संगठन तथा संचालन में निम्नलिखित सिद्धान्तों को ध्यान में रखें यथा–

- शिक्षार्थियों के सहयोग का सिद्धान्तः– अर्थात इन क्रियाओं के संचालन शिक्षार्थियों के ही माध्यम से होना चाहिए।

- शिक्षार्थियों की रूचि का सिद्धान्तः–चूंकि ये क्रियाएँ शिक्षार्थियों के विकास हेतु आयोजित की जाती हैं अतएव उन्ही क्रियाओं के आयोजन को प्राथमिकता देनी चाहिए जिनमें उनकी रूचि हो। ऐसा कार्य व्यर्थ होता है जिसे शिक्षाथी अरूचि के साथ करते हैं।

- अध्यापकों की रूचि का सिद्धान्तः– क्रियाओं के संचालन तथा मार्गदर्शन का उत्तरदायित्व उन्ही अध्यापकों को दिया जाना चाहिए जो उसमें रूचि लें और जो उस क्रिया में निपुण हों।

- शिक्षक के पथ प्रदर्शन का सिद्धान्त– शिक्षकों को अपने शिक्षार्थियों की रूचि और योग्यता पर विश्वास करते हुए वांछित मार्गदर्शन करना चाहिए न कि किसी भी प्रकार से तानाशाही का रूख अपनाते हुए उनके कार्य में व्यवधान डालें।

- अनिवार्यता का सिद्धान्त– पाठ्य सहगामी क्रियाएँ पाठ्यक्रम का एकीकृत और अनिवार्य अंग है अतएव इसके महत्व को कम समझते हुए इसे बोझ न समझा जाए, वरन इसका पालन अधिगम की सहक्रियाओं के रूप में किया जाए।

- उचित समय का सिद्धान्त– इन क्रियाओं का आयोजन विद्यालयी अवधि में ही किया जाना चाहिए जिससे समस्त थ्शक्षार्थियों की सहभागिता हो सके।

- उद्देश्यों का सिद्धान्तः– आयोजित की जाने वाली ये क्रियाएँ शिक्षा तथा विद्यालय के उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होनी चाहिए। उद्देश्य विहीन क्रियाएँ श्रम, समय तथा धन तीनों की अपव्यय करती हैं।

- शनैः शनैः क्रियान्वयन का सिद्धान्त– इन क्रियाओं का विस्तार सम्पूर्ण शैक्षिक सत्र में करते हुए ही इनका आयोजन करना चाहिए न कि समस्त क्रियाओं को एक साथ ही करके तब शिक्षण कार्य किया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि इस सन्दर्भ में उचित योजना का निर्माण सत्र प्रारम्भ होने पर ही कर लेना चाहिए तत्पश्चात उचित समय पर इनका क्रियान्वयन शनैः शनैः किया जाना चाहिए।

- शिक्षार्थियों के सर्वांगीण विकास का सिद्धान्त– अर्थात ये क्रियाएँ शिक्षार्थियों के शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक या कुल मिलाकर उसके सर्वांगीण विकास में सहायक होनी चाहिए। इनके आयोजन का एक मात्र उद्देश्य मनोरंजन ही नही होना चाहिए।

- समाज सेवा का सिद्धान्त– महात्मा गांधी जी ने शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य समाज सेवा माना है। हमारे शिक्षाविदों तथा शैक्षिक प्रशासकों ने भी इसे अनिवार्य बताते हुए उस पर विशेष बल दिया है। अतएव इन क्रियाओं के माध्यम से शिक्षार्थियों में समाज सेवा के भाव को अनिवार्य रुप से अंकुरित किया जाना चाहिए। कई विद्यालयों में समाज सेवा क्लब का गठन का यही उद्देश्य है जो विशेष परिस्थिति में अपनी सेवाएं देते हैं जैसे बाढ़ पीड़ितों की सहायता हेतु चन्दा एकत्रित कर उनके भोजन तथा वस्त्र की व्यवस्था करना, प्रौढ़ों को साक्षर बनाना, किसी मेले अथवा पर्व, उत्सव पर भीड़ को नियन्त्रित करना तथा आवश्यकतानुसार उनकी मदद करना, लोगों को विभिन्न सरकारी योजनाओं से परिचित करा कर लाभान्वित करना तथा उसी प्रकार के अन्य समाज सेवा सम्बन्धित कार्य।

बोध प्रश्न

3.पाठ्य सहगामी क्रियाओं के संगठन एवं आयोजन के समय आप किन किन सिद्धान्तो का पालन करेंगे लिखिए ।

____
____
____
______

7.3.7 पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रबन्धन में कतिपय व्यावहारिक समस्याएं

- संकुचित दृष्टिकोण– कुछ अभिभावक इन क्रियाओं के आयोजन को समय की बर्बादी तथा धन उगाही का स्रोत मानते हुए इसके प्रति कोई रुचि नहीं रखते और न ही इन क्रियाओं में सहभागिता प्रस्तुत करने के लिए अपने बच्चों को प्रेरित करते हैं। जिससे इन क्रियाओं के आयोजन में विद्यालय को अभिभावकों का कोई सहयोग नहीं मिल पाता।

- प्रशिक्षित अध्यापकों का अभाव– पाठ्य सहगामी क्रियाओं की सफलता उनके उचित संचालन और प्रबन्धन पर निर्भर करती है। जबकि वस्तु स्थिति यह है इस सन्दर्भ में हमारे प्रशिक्षण संस्थानों में प्रशिक्षणार्थियों को अलग से कोई प्रशिक्षण देने का प्रावधान नही हैं जिससे इन भावी शिक्षकों को न ही इसके आयोजन में कोई रुचि परिलक्षित होती है और न ही उनमें इन क्रियाओं के उचित संचालन एवं प्रबन्धन का कोई कौशल विकसित हो पाता है।

- समय – सारणी में उचित स्थान न मिल पाना– इन क्रियाओं के आयोजन हेतु समय – सारणी में कोई विशेष स्थान निर्धारित नही होता। प्रायः किसी शिक्षक के अनुपस्थिति में ही इनका आयोजन कालांश को व्यस्त करने हेतु किया जाता है जिसके कारण इनका आयोजन किसी निर्धारित समय में नियमित रूप से नही हो पाता।

- शिक्षकों पर कार्यभार की अधिकता– वर्तमान विद्यालयी पाठ्यक्रम इतना बोझिल है कि उसे पूरा करने में ही पूरा सत्र व्यतीत हो जाता है और अध्यापक के पास भी इनके आयोजन हेतु पर्याप्त समय उपलब्ध नही हो पाता।

- वांछित संसाधनों का अभाव– इन क्रियाओं के प्रबन्धन हेतु अपेक्षित सामग्रियों एवं संसाधनों की अनुपलब्धता भी एक बहुत बड़ी समस्या है। प्रायः विद्यालय में धन की कमी के कारण सम्बन्धित संसाधन की उपलब्धता संभव नही हो पाती।

- सहयोग एवं समन्वय का अभाव– इन क्रियाओं के क्रियान्वयन हेतु विद्यालय के प्रबन्धतन्त्र, प्रधानाचार्य, शिक्षक तथा शिक्षार्थियों में पारस्परिक सहयोग एवं समन्वय का अभाव भी इसके प्रबन्धन में बहुत बड़ी रूकावट है जिसका संभवतः बहुत बड़ा कारण पूर्व नियोजन का अभाव भी है।

- सैद्धान्तिक ज्ञान पर विशेष बल– आज की शिक्षा प्रणाली में रटने पर अधिक बल दिया जाता है जिसमे व्यावहारिक ज्ञान को उपेक्षित कर दिया जाता है। तथ्यों एवं विषय वस्तु के कण्ठस्थीकरण को प्राथमिकता तथा पाठ्य सहगामी क्रियाओं को उपेक्षित दृष्टिकोण से देखना वर्तमान शिक्षा पद्धति की विशेषता है।

7.3.8 प्रबन्धन सन्दर्भित समस्याओं के निदान हेतु अपेक्षित सुझाव

यदि उपयफ्रक्त वर्णित समस्याओं के निदान हेतु व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हुए निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखा जाए तो पाठ्य सहगामी क्रियाओं को हम उद्देश्यपूर्ण, महत्वपूर्ण तथा उपयोगी बना सकते हैं–

- इन क्रियाओं के सन्दर्भ में अभिभावकों का ओरियन्टेशन या विस्तृत चर्चा करके हम उनके दृष्टिकोण को बदल सकते हैं। उन्हे इसके महत्व, उपयोगिता तथा उनके बच्चें के सर्वागींण विकास में इन क्रियाओं की भूमिका से अवगत कराकर उनके सोच को सकारात्मक रूप दे सकते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि अभिभावक (जो इन क्रियाओं के महत्व और उपयोगिता से परिचित हैं) तथा प्रबन्धतन्त्र भी इन क्रियाओं के प्रति संकुचित दृष्टिकोण रखने वाले अभिभावकों को समझाएं।

- समस्त प्रशिक्षण संस्थाओं में इन क्रियाओं के प्रशिक्षण पर बल देते हुए इसे अनिवार्य करें और समस्त प्रशिक्षणार्थियों को इन क्रियाओं में सहभागिता हेतु प्रेरित करें जिससे ये प्रशिक्षणार्थी भावी अध्यापक के रूप में इनका आयोजन एवं प्रबन्धन पूर्ण रूचि के साथ भविष्य में कर सकें।

- विद्यालय की समय–सारणी में इन क्रियाओं के क्रियान्वयन हेतु एक कालांश निर्धारित किया जाए जिससे इनके आयोजन में एक नियमितता लाई जा सके।

- शिक्षक अपने समय का प्रबन्धन भली भांति करें। सत्रारम्भ में ही उन्हे अपने कार्य की रूपरेखा बना लेनी चाहिए जिससे पाठयक्रम तथा सहगामी क्रियाओं दोनो का ही सुचारू एवं सुव्यवस्थित ढ़ग से सम्पादन हो सके।

- विद्यालय के प्राचार्य तथा प्रबन्धतन्त्र भी इस दिशा में वांछनीय संसाधनों तथा सामग्रियों की उपलब्धता हेतु सजग रहे। आवश्यकतानुसार इस सन्दर्भ में शिक्षार्थी कोष (Student fund) का प्रयोग भी किया जा सकता है क्योंकि इन क्रियाओं का उद्देश्य शिक्षार्थी का सर्वागीण विकास है, अतएव उनके हित में इस फण्ड का प्रयोग किया जा सकता है।

- विधालय के प्रबन्ध तन्त्र, प्राचार्य, तथा शिक्षार्थियों का सहयोग एव समन्वय इस सन्दर्भ में नितान्त आवश्यक है।

- सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ–साथ व्यावहारिक ज्ञान भी आवश्यक है। बात यदि सामाजिक अध्ययन की हो तो इसके उद्देश्यों की प्राप्ति इन क्रियाओं के आयोजन बिना नही हो सकती। शिक्षार्थी में सहयोग, सदभावना, सह अस्तित्व, कल्याण, परउपकार, लोकतान्त्रिक तथा सामाजिक गुणों का

विकास मात्र इन्ही क्रियाओं के आयोजन से ही सम्भव है।

7.4 सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अनौपचारिक उपागम की भूमिका

शिक्षा के तीन रूप माने जाते हैंः–

1) औपचारिक शिक्षा– जिसमे बालक पूर्व निर्धारित समय, स्थान तथा लक्ष्य के तहत नियमित तथा निश्चित अवधि तक शिक्षा प्राप्त करता है जैसे– विद्यालयी शिक्षा।

2) अनौपचारिक शिक्षा– इस प्रकार की शिक्षा पूर्व नियोजित नही होती।शिक्षाथी कहीं भी, कुछ भी, किसी से भी सीख सकता है। यह शिक्षा जीवन पर्यन्त चलती रहती है। जैसे – घर, समुदाय तथा समाज क्रियाए, खेल आदि।

3) नि–रौपचारिक– इसमे लक्ष्य तथा नियम तो निर्धारित होते हैं परन्तु शिक्षाथी अपनी सुविधा के अनुसार अधिगम करता है जैसे –पत्राचार शिक्षा, दूरस्थ शिक्षा।

7.4.1 सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अनौपचारिक उपागमों की भूमिका

अधिगम की प्रक्रिया में अनौपचारिक शिक्षा की महत्ता सर्वविदित तथा सर्वमान्य है। सामाजिक अध्ययन की औपचारिक शिक्षा तो शिक्षार्थी को सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करती है जबकि अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से वह व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करता है। दूसरे शब्दों में वह अर्जित सैद्धान्तिक ज्ञान का व्यावहारिक तथा मूर्त रूप अनौपचारिक शिक्षा से प्राप्त करता है चूंकि इस शिक्षा के नियमों में लचीलापन होता है इसलिए शिक्षार्थी इसमे बहुत अधिक रूचि लेकर अपनी सहभागिता प्रस्तुत करते हैं। पाठ्य सहगामी क्रियाएँ भी अनौपचारिक शिक्षा का ही अंग है जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित संस्थाओं के माध्यम से शिक्षार्थी अनौपचारिक रूप से सामाजिक अध्ययन की व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त करता है–

राष्ट्रीय सेवा योजना (**National Service Scheme**):– सामाजिक अध्ययन का एक प्रमुख उद्देश्य शिक्षार्थी में सामाजिकता तथा सामुदायिकता की भावना का विकास करना है जिसकी प्राप्ति में एन0 एस0 एस0 की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह एक स्वैच्छिक कार्यक्रम है जो शिक्षार्थियों के व्यक्तित्व का बहुमुखी विकास सामुदायिक सेवा के माध्यम से करता है।

a) राष्ट्रीय सेवा योजना के प्रमुख कार्यक्रमः– इसके अन्तर्गत निम्नलिखित कार्यो को शिक्षार्थियों के माध्यम से कराकर उनमे सामुदायिक सेवा के भावों को रोपित किया जाता है–

स्वच्छता, वृक्षारोपण, पर्यावरण संरक्षण, परिवार कल्याण कार्यक्रम, पुष्टाहार कार्यक्रम, श्रमदान, समाज सेवा के कार्य, प्रौढ़ एवं सतत शिक्षा, जनसंख्या नियंत्रण सम्बन्धित कार्यक्रम, सड़क निर्माण एवं मरम्मत कार्य, समाज के कमजोर वर्गो के कल्याण से सम्बन्धित कार्यक्रम, सरकारी योजनाओ के प्रति लोगो में जागरूकता उत्पन्न करना, कुष्ठ रोगियों की सेवा से सम्बन्धित कार्यक्रम, सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन में सक्रियता, तालाब एवं पोखरों का निर्माण तथा उनकी मरम्मत, जन संचार माध्यमों के उपयोग की जानकारी प्रदान करना, मनोरंजन से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रम, विद्यालय, पाक्र तथा ऐतिहासिक धरोहरों का सौन्दर्यीकरण एवं संरक्षण आदि।

b) राष्ट्रीय सेवा योजना का मुख्य उद्देश्य

- शिक्षार्थियों में राष्ट्रीय चेतना का विकास करना।
- सामाजिक कार्यो में सहभागिता।
- विभिन्न रचनात्मक कार्य से सामाजिक शैक्षिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक स्थलों का

सौन्दर्यीकरण।

- सामाजिक सहयोग, सहभागिता, सहअस्तित्व तथा मैत्री भाव का शिक्षार्थियों में विकास करना।
- पारस्परिक सम्बन्धों को सुदृढ़ता प्रदान करना।

7.4.2 नेशनल कैडिट कोर (**National Cadet Core**)

16 जुलाई 1948 को रक्षा मन्त्रालय के अधीन नेशनल कैडिट कोर की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य शिक्षार्थियों को शारीरिक एवं मानसिक रूप से सक्रिय रखते हुए उनमे सहयोग, प्रेम तथा सेवा की भावना का विकास करना है जिससे उनका उत्तम चारित्रिक विकास हो सके। एन0सी0सी0 शिक्षार्थी में कुशल नेतृत्व की भावना का विकास कर देश की सुरक्षा एवं संरक्षा हेतु अपने प्राणोंत्सर्ग की भावना को मुखरित करता है। यह शिक्षार्थी को सैन्य गतिविधियों से परिचित कराकर देश की रक्षार्थ आवश्यकतानुसार युद्ध कार्य हेतु तत्पर करता है। इस प्रकार यह शिक्षार्थी को राष्ट्र के रक्षार्थ हर प्रकार से तैयार करता है। एन0सी0सी0 का मुख्यालय दिल्ली में है। सम्पूर्ण देश में निदेशालय की स्थापना कर समस्त राज्यों में एन0सी0सी0 को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया गया है। एन0सी0सी0 में शिक्षकों, शिक्षार्थियों तथा अधिकारियों के प्रशिक्षणार्थ प्रशिक्षण संस्थाओं की भी स्थापना की गई है।

नेशनल कैडिट कोर के प्रमुख कार्य– इसके कार्यो को मुख्यतया 6 श्रेणियों या प्रकार में बांटा जा सकता है यथाः शिविर प्रशिक्षण

a) संस्थागत प्रशिक्षण

b) सामुदायिक विकास प्रशिक्षण

c) साहसिक कार्य प्रशिक्षण

d) युवा विनिमय कार्यक्रम

e) खेल

नेशनल कैडिट कोर के मुख्य उद्देश्य–एन0सी0सी0 निदेशालय ने इसके निम्नलिखित उद्देश्य बताए–

- सशस्त्र सेना में जीवन वृत्ति (कैरियर) बनाने के लिए युवाओं को प्रेरित करना।
- शक्ति से परिपूर्ण एक ऐसे युवा वर्ग का सृजन करना जो संगठित, प्रशिक्षित एवं अभिप्रेरित होकर राष्ट्र की सेवा हेतु सदैव तत्पर रहे।
- जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपना कुशल नेतृत्व प्रदान करना।
- राष्ट्र की युवा शक्ति में नैतिक चरित्र, अनुशासन, आत्म नियन्त्रण, नेतृत्व के गुण, धर्म निरपेक्षता तथा निः स्वार्थ सेवा के भाव को विकसित करना।
- विभिन्न राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों में अपनी सहभागिता प्रस्तुत करने के लिए शिक्षार्थियों को प्रेरित करना।
- इसका मुख्य उद्देश्य एकता और अनुशासन की भावनाओं से ओत प्रोत युवा शक्ति तैयार करना।

7.4.3 स्काउट एवं गाइड (**Scout and Guide**)

इस संगठन की स्थापना का श्रेय सर राबर्ट बेडन पावेल को जाता है। कालान्तर में इसे राष्ट्रीय स्तर का एक संगठन बनाया गया जिसका मुख्यालय दिल्ली में स्थापित किया गया। इसके महत्व के सन्दर्भ

में 1952–53 के माध्यमिक शिक्षा आयोग ने कहा है कि "स्काउंटिग उत्तम नागरिकता के लिए जरूरी गुणों और चरित्र के प्रशिक्षण के लिए अत्यधिक प्रभावपूर्ण साधनों में से एक है। इसमें अनेक गुण है जो सभी आयु वर्ग के विद्यार्थियों को आकर्षित करता है। इसके विविध खेलों, क्रियाओं और तकनीकी दक्षताओं के माध्यम से समाज सेवा, उत्तम व्यवहार, नेतृत्व के लिए आदर, राज्य के प्रति शक्ति और किसी भी स्थिति से निपटने के लिए तत्परता के आदर्श की बुनियाद रखा जाना सम्भव है।"

(क) <u>स्काउट – गाइड का मुख्य कार्य</u>–

- प्रौढ़ साक्षरता के अभियान में सहभागिता।
- समाज तथा सामुदायिक सेवा।
- आरोग्य को बढ़ावा देना।
- स्वच्छता पर बल।
- पर्यावरण संरक्षण की दिशा में अधिक से अधिक वृक्षारोपण हेतु प्रेरित करना।
- लोगो में चेतना एवं जागरुकता लाना।

(ख) <u>स्काउट – गाइड का मुख्य उद्देश्य</u> –

बालका एवं बालिकाओं को –

- अनुशासित जीवन जीने हेतु प्रशिक्षित करना।
- परोपकार तथा परमार्थ हेतु प्रेरित करना।
- राष्ट्र तथा समाज सेवा हेतु तत्पर करना।
- देश सेवा की अभिवृत्ति का विकास करना।
- विश्व बन्धुत्व की भावना का विकास करना।
- ईश्वर के प्रति प्रेम एवं आस्था को जागृत करना।
- सतत् प्रयत्नशील रहने का भाव विकसित करना।
- सतत् समाज की सेवा का भाव जागृत करना।

7.4.4 रेड क्रास **(Red Cross)**

रेडक्रास 1863 ई0 में स्थापित की गई एक अन्तर्राष्ट्रीय समाज सेवा समिति है। भारत में इस संस्था की स्थापना 1920 ई0 में की गई जिसका मुख्यालय रेड क्रास रोड, नई दिल्ली में है। रेड क्रास समिति प्रत्येक जिले में होती है जिसका अध्यक्ष जिलाधिकारी तथा सचिव मुख्य चिकित्सा अधिकारी होता है। यह समिति अपने जनपद में रेड क्रास से सम्बन्धित क्रियाकलापों का संचालन करती है।

(क) रेड क्रास समिति के मुख्य कार्यक्रम –

के इस समिति का मुख्य कार्य सार्वजनिक स्थानों, मेलों तथा उत्सवों में आवश्यकतानुसार स्वैच्छिक रुप से लोगों की सहायतार्थ विद्यालयी शिक्षार्थियों को तैयार करना है। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक

आपदाओं, सूखा, बाढ़, आगजनी, दंगो आदि के समय भी शिक्षार्थियों द्वारा पीड़ितों की सहायतार्थ प्रशिक्षण देने का दायित्व भी इसी समिति की है। किसी भी युद्ध में घायलों की सेवा हेतु भी यह समिति शिक्षार्थियों को तैयार करती है।

(ख) रेड क्रास समिति के मुख्य उद्देश्य–

- विभिन्न मानवीय अथवा प्रकृतिक घटना से पीड़ित व्यक्तियों की सेवा करके मानवीय मूल्यों की शिक्षार्थियों को शिक्षा देना।
- शिक्षार्थियों को स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा देकर जीवन की रक्षा हेतु तत्पर करना।
- समाज तथा राष्ट्र की सेवा हेतु शिक्षार्थियों में जोश, उत्साह, तथा तत्परता की भावना को विकसित करना।
- शिक्षार्थियों को मैत्री भाव, सहयोग तथा परहित के लिए तैयार करना।
- शिक्षार्थियों को वैश्विक मूल्यों, विश्व शान्ति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना का विकास करना।

7.4.5 शैक्षिक भ्रमण **(Educational Tour or Excurssion)**

अनौपचारिक उपागम के अन्तर्गत शैक्षिक भ्रमण का सर्वाधिक महत्व है। यह न केवल शिक्षार्थी में अधिगम हेतु प्रेरित करती है वरन कक्षागत परिस्थितियों में दिए गए ऐतिहासिक, धार्मिक, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक स्थलों, भवनों एवं स्थापत्य सम्बन्धित ज्ञान का भी उन्हे वास्तविक बोध कराती है। इसके माध्यम से उनका अमूर्त चिन्तन मूर्त एवं वास्तविक हो जाता है और उनमें तुलना एवं विश्लेषण करने की क्षमता जागृत होती है। फलस्वरुप अधिगमित विषय वस्तु का बोध व्यापक तथा वृहद रुप से कर पाते हैं। उनकी विभिन्न जिज्ञासाओं की संतुष्टि भी इसके माध्यम से होती है। यही कारण है कि रुसो, पेस्तालॉजी तथा रविन्द्र नाथ टैगोर जैसे शिक्षाशास्त्री तथा दार्शनिकों में शैक्षिक भ्रमण को शिक्षार्थियों के बौद्धिक तथा रचनात्मक विकास हेतु सर्वोत्तम माना है। सामाजिक अध्ययन के अधिगम की समस्त शैक्षिक सामग्रियों में इसका स्थान सर्वोपरि तथा उपयोगी है। इसलिए के0 एस0 याजनिक ने इस सन्दर्भ में कहा है कि "यह सत्य है कि कोई भी शिक्षक तथा सहायक सामग्री शैक्षिक भ्रमण का स्थान नही ले सकती क्योकि यह शिक्षार्थियों को प्रत्यक्ष अनुभव कराती है।"

शैक्षिक भ्रमण के उद्देश्य– शैक्षिक भ्रमण के उद्देश्य को आप मुख्य रुप से तीन क्षेत्रों के अन्तर्गत देख सकते हैं

शैक्षिक उद्देश्य – जिसके अन्तर्गत शिक्षार्थियों को –

- वस्तुओं एवं विभिन्न प्रक्रियाओ को प्रत्यक्ष रुप से देखने का अवसर प्राप्त होता है।
- नए अनुभवों की प्रप्ति होती है।
- विषय के प्रति रुचि में वृद्धि होती है।
- प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है।
- प्रोजेक्ट चुनने का अवसर होता है।
- निरीक्षण शक्ति का विकास होता है।
- उपयोगी सामग्रियो के संग्रह की प्रवृत्ति का विकास होता है।

- प्राप्त ज्ञान वास्तविक तथा पूर्ण होता है।
- कई विषयों का ज्ञान एक साथ प्राप्त होता है।
- शिक्षण के सभी उद्देश्यों की प्राप्ति हो जाती है।

2) सामाजिक उद्देश्य–शिक्षार्थियों को–

- सामाजिक समस्याओं का वास्तविक अवलोकन हो जाता है।
- सामाजिक तथा सहयोग की भावना का बोध एवं विकास होता है।
- मानवीय सम्बन्धों का बोध होता है।
- विभिन्न मूल्यों के विकास का अवसर प्राप्त होता है।
- समुदाय को करीब से जानने का अवसर प्राप्त होता है।
- मनोरंजन होता है।

3) मनोवैज्ञानिक उद्देश्य –शिक्षार्थियों को–

- अपनी रुचि, क्षमता तथा आवश्कतानुसार अधिगम करने का अवसर प्राप्त होता है।
- उनकी विभिन्न मानसिक शक्तियों यथा कल्पना, चिन्तन, तक्र आदि का विकास होता है।
- उनके संवेगो को स्वाभाविक रुप से प्रशिक्षण मिलता है।
- मौलिकता एवं नवीनता के साथ ज्ञानार्जन का अवसर प्राप्त होता है।
- परम्परागत शिक्षण की एकरसता समाप्त हो जाती है।

7.4.6 सामाजिक अध्ययन क्लब

सामाजिक क्लब भी रोटरी क्लब, खेल क्लब, रॉयल क्लब, क्रिकेट क्लब तथा विज्ञान क्लब की ही भांति होता है जिसमें किसी भी सामाजिक समस्या पर गहन विचार विमर्श हेतु लोग एकत्रित होते हैं और उस समस्या का अपेक्षित समाधान ढूड़ते हैं। इस क्लब में शिक्षार्थियों की सहभागिता उन्हे विभिन्न सम सामयिक प्रसंगो एवं मुद्दों से परिचित कराकर उन्हे जागरुक बनाती है।

a) सामाजिक अध्ययन क्लब का कार्य क्षेत्र

- विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक उत्सवों का सुचारु एवं व्यवस्थित ढ़ंग से आयोजन करना।
- अतिथि वक्ताओं को बुलाकर उनके व्याख्यान से शिक्षार्थियों को लाभान्वित करना।
- सेमिनार तथा संगोष्ठी का आयोजन कर विभिन्न प्रकरणों पर विचार विमर्श कर वांछित निष्कर्ष निकालना जैसे ऐतिहासिक स्मारकों का संरक्षण, जनसंख्या नियन्त्रण, पर्यावरण संरक्षण आदि।
- निबन्ध पाठ तथा वाद – विवाद प्रतियोगिता का आयोजन करना।
- बुलेटिन बोर्ड का आयोजन करना।
- पर्यटन का आयोजन करना।

- सामाजिक अध्ययन संग्रहालय बनाना।
- आशुभाषण भाषण तथा कहानी लेखन प्रतियोगिता का आयोजन करना।
- कार्टून चित्रों को बनाना जिसमे अव्यवस्था पर व्यंगात्मक रुप से प्रहार किया गया हो।
- समाचार पत्र का प्रकाशन।
- विभिन्न दिवसों का आयोजन तथा उससे सम्बन्धित चर्चा–परिचर्चा।
- विभिन्न पर्वो तथा जयन्तियों का आयोजन।
- प्रदर्शनियों का आयोजनं।
- पोस्टर प्रतियोगिता का आयोजन।
- श्रमदान करना।
- रक्तदान करना।
- वृक्षारोपण करना तथा दूसरो को भी प्रोत्साहित करना।
- चेतना रैली का आयोजन।

b) सामाजिक अध्ययन क्लब का उद्देश्य –

- शिक्षार्थी को विभिन्न सम सामायिक घटनाओं की जानकारी देना
- अनौपचारिक वातावरण में सामाजिक अध्ययन से सम्बन्ध रखने वाली विभिन्न क्रियाओं का आयोजन करना
- शिक्षार्थी की विभिन्न मानसिक शक्तियों यथा तक्र, चिन्तन, विश्लेषण तथा सृजनात्मक आदि को क्रियाशील बनाना
- उनमें विभिन्न सामाजिक गुणों का विकास करना
- समस्या समाधान हेतु शिक्षार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना
- शिक्षार्थी को समाज का एक उपयोगी सदस्य बनाना

7.4.7 सामाजिक अध्ययन परिषद

सामाजिक अध्ययन की शिक्षा द्वारा शिक्षार्थियों में सामाजिक चेतना लाने के लिए यह एक महत्वपूर्ण अनौपचारिक उपागम है।

सामाजिक अध्ययन परिषद के उद्देश्य :–

- शिक्षार्थी में अपनी संस्कृति तथा सभ्यता के संरक्षण हेतु चेतना उत्पन्न करना।
- विभिन्न साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक क्रियाओं का विद्यालयी स्तर पर आयोजन करना।
- विभिन्न विद्यालयों, समाजिक क्लबों तथा परिषदों के मध्य वैचारिक आदान – प्रदान तथा सहभागिता करना।
- शिक्षार्थी को सामाजिक सहयोग का पाठ पढ़ाते हुए उनमें विभिन्न मूल्यों का विकास करना।

7.4.8 ऐतिहासिक सांस्कृतिक पर्यटन

सामाजिक अध्ययन के अनौपचारिक शिक्षण में ऐतिहासिक सांस्कृतिक पर्यटन का विशेष महत्व है। इस सन्दर्भ में वी0डी0 घाटे का सुझाव है कि "यह बहुत उपयोगी होगा यदि विद्यालय, रेलवे अधिकारियों के सहयोग से ऐतिहासिक पर्यटन आयोजित करें। हमारे नवयुवकों को भारत के विभिन्न स्थानों का भ्रमण करना चाहिए और वहां के लोगों तथा उनके इतिहास के सम्बन्ध में जानना चाहिए।" वास्तव में जब विदेशों से शिक्षार्थी भारत की विभिन्न ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक धरोहरों के अवलोकनार्थ आ सकते हैं तो भारत के एक प्रान्त के लोग दूसरे प्रान्त में क्यों नही आ सकते अतएव इस पयर्टन का आयोजन कर हमारे शिक्षार्थियों को विभिन्न ऐतिहासिक इमारतों, भवनों, स्मारकों, संस्कृति तथा कला से अवश्य परिचित कराना चाहिए जिससे वे अपने भारतवासी होने का गर्व वास्तविक रूप से कर सके तथा अतीत की सभ्यता और संस्कृति को मूर्त रूप में इन धरोहरों के माध्यम से देख सकें।

<u>बोध प्रश्न</u>

4. पाठ्य सहगामी क्रियाओं के प्रबन्धन में किस प्रकार की व्यवहारिक समस्यायें आती है?

....
....
....
....

5. उन संस्थाओं की सूची बनाइये, जो अनौपचारिक रूप से सामाजिक अध्ययन की व्यवहारिक शिक्षा प्रदान करते हैं।

....
....
....
....

6. शैक्षिक भ्रमण का महत्व उद्घाटित कीजिये।

....
....
....
....

7.5 पाठ्य सहगामी क्रियाओं तथा अनौपचारिक उपागमों का सामाजिक अध्ययन शिक्षण में महत्व

- पाठ्य सहगामी क्रियाए शिक्षार्थियों को सामाजिक प्रशिक्षण प्रदान करती है जिससे शिक्षार्थियों में प्रेम, ईमानदारी, धैर्य, आत्म – नियंत्रण, सहनशीलता, सहकारिता, सद्भावना, पारस्परिक सहयोग, परउपकार तथा हम भावना का विकास होता है और ये समस्त गुण बालक के सामाजिक विकास के लिए आवश्यक है। इस प्रकार ये क्रियाएँ शिक्षार्थियों में विभिन्न सामाजिक गुणों का विकास कर सामाजिक अध्ययन के अधिगम उद्देश्य को सफलतापूर्वक प्राप्त करने में सहायक है।

- इन क्रियाओं से शिक्षार्थियों में सच्चाई, धैर्य, आत्म–नियन्त्रण, दृढ़ता, आत्म विश्वास, तथा सहनशीलता का विकास होता है और ये सभी गुण शिक्षार्थी के नैतिक तथा चारित्रिक विकास के लिए आवश्यक है।

- इन क्रियाओं के माध्यम से शिक्षार्थी अपने कर्तब्यों एवं अधिकारों को भली भाति समझने लगते हैं। उन्हे शासन सम्बन्धित कार्यो का प्रशिक्षण प्राप्त होता है। स्वायत्त शासन, स्कूल पंचायत संगठन और उत्सवों में शिक्षार्थियों की सहभागिता उनमे लोकतन्त्रीय नागरिकता के गुणों के विकास में सहायक होती है। शिक्षार्थी संघ के चुनाव में भाग लेकर अपने मतो के सदुपयोग का ज्ञान उन्हे प्राप्त होता है।

- इन क्रियाओं के माध्यम से उनमे अपने अवकाश काल के सदुपयोग का ज्ञान प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में इन क्रियाओं के माध्यम से एक तरफ तो उनकी विभिन्न रूचियों एवं अभिरूचियों का विकास किया जाता है दूसरी तरफ उनमें अपने खाली समय को व्यर्थ न गवांने की आदत का विकास होता है।

- ये क्रियाएँ शिक्षार्थी को शारीरिक और मानसिक श्रम करने की प्रेरणा देती हैं जिससे उनका शरीर और मन दोनों ही चुस्त तथा दुरूस्त बनता है। अपने मन पसन्द की क्रियाओं में भाग लेकर उनमें आत्मसन्तोष तथा अपने भावों और योग्यताओं को व्यक्त करने का अवसर प्राप्त होता है।

- माध्यमिक स्तर के शिक्षार्थियों में अत्यन्त ऊर्जा एवं स्फूर्ति पाई जाती है जिनको यदि उचित दिशा में नही लगाया गया तो शिक्षार्थियों के पथ भ्रष्ट होने की संभावना रहती है जिसकी पुष्टि मनोविज्ञान ने भी की । ऐसी स्थिति में ये क्रियाएँ वरदान साबित हो सकती है यदि शिक्षार्थियों को इनमें तल्लीन रखा जाए तो। क्योकि इनके माध्यम से न केवल उनकी मूल प्रवृत्तियों को संतुष्ट करने का अवसर प्राप्त होगा वरन उनका मार्गान्तिकरण तथा शोधन भी वांछित दिशा में किया जा सकेगा।

- ये क्रियाएँ बहुत सीमा तक विद्यालय की अनुशासन हीनता की समस्या को भी कम करती हैं क्योकि विभिन्न क्रियाओं में उनकी व्यस्तता शिक्षार्थियों को व्यर्थ के तनावों तथा खुराफात से बचाकर उन्हे आज्ञाकारी तथा अनुशासित शिक्षार्थी बनाती है।

- शिक्षार्थियों में सौन्दर्यानुभूति का विकास शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य होता है और ये क्रियाएँ शिक्षार्थियों में विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से सौन्दर्य बोध तथा रसात्मकता का विकास करने में सहायक होती हैं।

- पाठ्य सहगामी क्रियाएँ शिक्षार्थियों में उनके संस्कृति एवं परम्पराओं के प्रति संरक्षण, संवर्धन तथा हस्तान्तरण के भाव को रोपित करने में सहायक होती हैं क्योकि इन्ही क्रियाओं में हमारी संस्कृति तथा परम्परा निहित होती है जो शिक्षार्थियों में उनके प्रति अनुराग उत्पन्न कर उन्हे अक्षुण्ण रखने

को प्रेरित करती है।

- इन क्रियाओं के माध्यम से शिक्षार्थियों में अपनी सांस्कृतिक विरासत के साथ –2 दूसरे लोगों की सांस्कृतिक विरासत के तत्वों तथा मान्यताओं को जानने एवं समझने का सामर्थ्य विकसित होता है।

- पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन करने से शिक्षार्थियों में नेतृत्व करने की कला, उत्तरदायित्व की भावना तथा अपने कर्तब्यों के प्रति जवाबदेही की प्रवृत्ति का विकास होता है और सामाजिक अध्ययन का यही मुख्य लक्ष्य है।

- ये क्रियाएँ शिक्षार्थियों की अन्तर्निहित सृजनात्मक शक्तियों का प्राकट्य करती है।

- ये क्रियाएँ थ्शक्षार्थियों को आत्माभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करती है।

- शिक्षार्थियों ं में अनुशासन का भाव, आत्म–नियंत्रण तथा आत्म–संयम का भाव विकसित करने में इन क्रियाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

- इन क्रियाओं को करने से शिक्षार्थियों में अपने अवकाश काल के सदुपयोग का भाव विकसित होता है।

- ये क्रियाएँ शिक्षार्थियों में न केवल अपने विद्यालय के प्रति वरन वहां के विभिन्न कार्यो के प्रति रूचि जागृत करती है। उदाहरण के लिए यदि शिक्षार्थियों से बागवानी करवाया जाए तो निःसन्देह विद्यालय का सौन्दर्यीकरण होगा जिससे शिक्षार्थियों में अपने विद्यालय के प्रति अनुराग उत्पन्न होगा और वे उसे और अधिक सुन्दर बनाने हेतु प्रयासरत रहेंगे। इस बात की पुष्टि एस0के0 कोचर जी के निम्नलिखित कथन से भी होती है– "पाठ्यक्रमोत्तर क्रिया विद्यालय की दृष्टि से भी बहुत लाभपूर्ण प्रयोजन पूर्ण करती है। वे विद्यालय भवन के विकास में सहायक होती है, यह शिक्षकों प्रधानाचार्यो तथा प्रशासकों का एक सार्वभौमिक प्रमाण है। यह वास्तव में मनोविज्ञान के इस सिद्धान्त का स्वयं प्रमाण है कि जिसकी कोई सेवा करता है, उसे वह प्रेम भी करता है।

- शिक्षार्थियों में नेतृत्व की भावना तथा भावी जीवन को सन्तुलित ढ़ंग से जीने का ज्ञान शिक्षार्थियों को पुस्तकीय ज्ञान से अधिक इन पाठ्य सहगामी क्रियाओं के माध्यम से दिया जा सकता है क्योकि इनके माध्यम से शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास, कार्य के प्रति अनुराग, तत्परता, धैर्य, निःस्वार्थपरकता, साहस, उत्तरदायित्व की भावना, अपने कर्तब्यों के प्रति जवाबदेही, समायोजन आदि गुणों का विकास होता है जो बालक को उसके भावी जीवन के लिए भी तैयार करता है।

गोर्डम मेल्विन तथा सोरोकीन के वक्तब्य भी सामाजिक अध्ययन के शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में पाठ्य सहगामी क्रियाओं तथा अनौपचारिक उपागमों की भूमिका की अतिशय महत्ता को सिद्ध करते हैं जिनका मैं उल्लेख करना चाहूँगी–

गोर्डम मेल्विनः– "समूह में रहकर कार्य करने की प्रवृत्ति आज के सामाजिक विकास में अत्यन्त आवश्यक है। समूह में और समूह के बाहर कैसे जीवन जिया जाए, वह सीखना आवश्यक है और यह बताना शिक्षक का कार्य है।"

सोरोकीन के अनुसार "विद्यार्थियों के विभिन्न आचरणों को सन्मार्ग पर ले जाने के लिए सामुदायिक प्रवृत्तियों पर बल दिया जाना चाहिए जिससे परस्पर दृढ़ स्नेह, सहानुभूति और मुक्त सहयोग की भावना का विकास हो सके।"

7.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने सामाजिक अध्ययन के अधिगम में पाठ्य सहगामी तथा अनौपचारिक उपागमों की भूमिका का अध्ययन किया। सन्दर्भतः आपने दोनों के सम्प्रत्यय तथा उनके स्वरूप का व्यापक अध्ययन किया। जिसके अनुशीलन के पश्चात आपने इन क्रियाओं तथा अनौपचारिक उपागमों का प्रस्तुत विषय के शिक्षण तथा अधिगम प्रक्रिया में व्यावहारिक महत्व को भली भांति समझ लिया होगा।

7.7 अभ्यास कार्य–

1) पाठ्य सहगामी क्रियाओं के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।

2) सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ किस प्रकार सहायक है।

3) "ऐतिहासिक सांस्कृतिक पर्यटन शिक्षार्थियों को भारतवासी होने का गर्व कराता है" इस कथन की पुष्टि कीजिए।

7.8 चर्चा के बिन्दु

- पाठ्य सहगामी क्रियाएँ शिक्षार्थियों में व्यवहार के उच्चतम मानों को विकसित करती हैं।
- अपने साथी शिक्षाथी आध्यापकों के साथ किसी नजदीकी ऐतिहासिक स्थल का भ्रमण कीजिए तथा उन वृतान्तों को लिपिबद्ध कीजिए जिनसे आपने सामाजिक अध्ययन के किसी भी प्रकरण को मूर्त रूप में अनुभव किया।
- विभिन्न अनौपचारिक उपागम शिक्षार्थियों में विभिन्न सामाजिक कौशलों के विकास में सहायक है।

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. पाठ्यसहगामी क्रियाएँ दोनों के व्यवहार के उच्चतम मानों को विकसित कर उनमे स्वशासन तथा स्व–नियन्त्रण के गुणों को विकसित करती हैं। उन्हे स्वस्थ मनोरंजन का अवसर प्रदानकर उनमें विभिन्न मूल्यों, गुणों तथा आदर्शो का अंकुरण करती है जिससे उनकी मूल प्रवृत्तियों का शोधन होता है। इस प्रकार उनकी मूल प्रवृत्तियों के विकास एवं उसकी संतुष्टि में पाठ्यसहगामी क्रियायें अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

2. प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री अरस्तू का कथन है कि "स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन का निमार्ण होता है"। इसे दृष्टिगत रखते हुये पाठ्यसहगामी क्रियाओं के अन्तर्गत शारिरिक विकास सम्बन्धी क्रियायें भी सम्मिलित की गई है। जैसे– व्यायाम, विभिन्न प्रकार के खेलकूद यथा खो–खो, कबड्डी, कुश्ती, हॉकी, बॉलीबाल, फुटबाल, क्रिकेट, बास्केट–बॉल, ऊँची कूद, जेविनल थ्रो, डिस्कस थ्रो, विभिन्न प्रकार की दौड़, तैरना, सामूहिक व्यायाम, परेड, एन0सी0सी0 आदि।

3. पाठ्य सहगामी क्रियाओं से बच्चे तभी लाभान्वित हो सकते हैं जब इनके संगठन तथा संचालन में विभिन्न सिद्धन्तों का पालन किया जाये जैसे– शिक्षार्थियों के सहयोग तथा रूचि का सिद्धान्त, अध्यापक की रूचि का सिद्धान्त, शिक्षक के पथ प्रदर्शन का सिद्धान्त, अनिवार्यता का सिद्धान्त, उचित समय का सिद्धान्त, उद्देश्यों का सिद्धान्त, शनै– शनै क्रियान्वयन का सिद्धान्त, शिक्षार्थियों के सर्वागींण विकास का सिद्धान्त, समाज सेवा का सिद्धान्त आदि।

4. पाठ्यसहगामी क्रियाओं के प्रति संकुचित दृष्टिकोण, प्रशिक्षित शिक्षकों का अभाव, इन क्रियाओं को समय सारणी में उपयुक्त स्थान न मिल पाना, शिक्षकों पर अत्यधिक कार्यभार, वांछित संसाधनों का अभाव, सहयोग एवं समन्वय का अभाव, व्यावहारिक ज्ञान के स्थान पर सैद्धान्तिक ज्ञान पर बल आदि ऐसी व्यावहारिक समस्यायें हैं जो पाठ्यसहगामी क्रियाओं के प्रबन्धन में बाधा बन जाती हैं।

5. अनौपचारिक रूप से सामाजिक अध्ययन की व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाओं में राष्ट्रीय सेवा योजना, नैशनल कैडिट कोर, स्काउट एवं गाइड, रेड क्रास, शैक्षिक भ्रमण, सामाजिक अध्ययन क्लब, सामाजिक अध्ययन परिषद, ऐतिहासिक सांस्कृतिक पर्यटन, आदि का उल्लेख किया जा सकता है।

6. शैक्षिक भ्रमण शिक्षार्थियों को प्रत्यक्ष अनुभव कराती है। इसमे को विभिन्न वस्तुओं, स्थानों तथा प्रक्रियाओं को प्रत्यक्ष रूप से देखने का अवसर प्राप्त होता है। कुल मिलाकर यह शिक्षार्थियों के बौद्धिक तथा रचनात्मक विकास का महत्वपूर्ण साधन है। वास्तव में सामाजिक अध्ययन के अधिगम की समस्त शैक्षिक सामग्रियों में शैक्षिक भ्रमण का महत्व तथा उपयोगिता सर्वोपरि है।

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1) Murthy, I.V. Radhakrishnan & Jeeintha B. Mary: Methods of Teaching Social Studies. Neelkamal Publication Pvt. Ltd. New Delhi.

2) Sharma R.L._ Teaching of social Studies, Vinod Pustak Mansir, Agra – 2.

3) मालवीय राजीव– शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्ध, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

इकाई – 8 सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अभिक्रमित अनुदेशन

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 अभिक्रमित अनुदेशन या अधिगम

8.3.1 अभिक्रमित अनुदेशन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

8.3.2 अभिक्रमित अनुदेशन का अर्थ

8.3.3 अभिक्रमित अनुदेशन के उद्देश्य

8.3.4 अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएँ

8.3.5 अभिक्रमित अनुदेशन की आवश्यकता

8.3.6 अभिक्रमित अनुदेशन का क्षेत्र

8.3.7 अभिक्रमित अनुदेशन के मूल मनौवैज्ञानिक सिद्धान्त

8.3.8 अभिक्रमित अनुदेशन की सफलता हेतु अपेक्षित सावधानियां

8.3.9 अभिक्रमित अनुदेशन की रचना

8.3.10 अभिक्रम के प्रकार

8.3.11 अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धान्त

8.3.12 अभिक्रमित अनुदेशन के गुण अथवा लाभ

8.3.13 अभिक्रमित अनुदेशन के दोष

8.4 सारांश

8.5 अभ्यास कार्य

8.6 चर्चा के बिन्दु

8.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.1 प्रस्तावना

वास्तव में यदि देखा जाए तो अभिक्रमित अनुदेशन का सम्प्रत्यय कोई नवीन नही है। इसकी जड़े अतीत कालीन शैक्षिक इतिहास में निहित है। लगभग 470 ई0पू0 से ही हम इसका शैशव रूप यूनानी दार्शनिक एवं शिक्षाशास्त्री सुकरात तथा प्लेटों के प्रश्न उत्तर विधि में देखते हैं। कालान्तर में उनके इसी शिक्षण विधि को वैज्ञानिकता से परिपूर्ण करके अभिक्रमित अनुदेशन के नाम से एक नवाचार रूप में प्रकट

किया गया। यह स्वचालित एवं वैयक्तिकता पर आधारित होता है। इसमें शिक्षार्थी अपनी क्षमता तथा गति के अनुसार अधिगम करते हैं। शिक्षा में मनोविज्ञान के प्रवेश ने बाल केन्द्रित शिक्षा पर सर्वाधिक बल दिया और अभिक्रमित अनुदेशन भी बाल केन्द्रित शैक्षिक उपागम है जिसमें ज्ञान की सम्पूर्ण इकाई को अनेक सूक्ष्म भागों में विभक्त करके शिक्षार्थियों को उनकी सुविधा, योग्यता तथा आवश्यकतानुसार अधिगम करने का अवसर प्रदान किया गया है। प्रस्तुत इकाई में आप अभिक्रमित अनुदेशन का सामाजिक अध्ययन के संन्दर्भ में व्यापक एवं बृहद् रूप से अनुशीलन करेंगे।

8.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप शिक्षार्थी–

- अभिक्रमित अनुदेशन के अर्थ का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन के उद्देश्य का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताओं की सूची बना सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन के क्षेत्रों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन की आवश्यकताओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन के मनौवैज्ञानिक सिद्धान्तों की व्याख्या कर सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन की रचना कर सकेंगे।
- अभिक्रमित अनुदेशन के लाभों को उठा सकेंगे।

8.3 अभिक्रमित अनुदेशन या अधिगम (Programmed Instruction or Learning)

अभिक्रमित अनुदेशन शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के क्षेत्र में एक प्रभावशाली नवाचार (Innovation) और प्रयोग का परिणाम है। यह प्रविधि अधिगम सिद्धान्तों पर आधारित है जिसमें व्यक्ति स्वयं तथा प्रोग्राम में अन्तक्रिया के फलस्वरुप अधिगम करता है। एक पूर्णरुप से व्यवस्थित तथा वैयक्तिक (Individualized) अनुदेशन प्रविधि के रुप में यह न केवल प्रभावशाली कक्षा शिक्षण के लिए लोकप्रिय हुआ है वरन स्वाध्याय, स्वशिक्षण, तथा पत्राचार पद्धति से भली भांति पढ़ना और पढ़ाना भी अत्यन्त सहज हो गया है। यहां तक कि शिक्षण मशीन तथा कम्प्यूटर के प्रयोग को भी इसी नवाचार अनुदेशन से बल मिला है।

8.3.1 अभिक्रमित अनुदेशन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

अभिक्रमित अनुदेशन का प्रारम्भ सिडनी एल0 प्रेसी द्वारा विकसित एक मशीन से हुआ जिसे उन्होने 1924 में ओहाइयो स्टेट यूनिवर्सिटी, कोलम्बस में अधिगम के लिए प्रदर्शित किया। यद्यपि उनका यह प्रयास बहुत सफल नही हुआ। परन्तु इतना स्पष्ट अवश्य हुआ कि मशीन द्वारा अधिगम सामग्री से शिक्षार्थी स्व–अध्ययन कर सकता है।

1954 में प्रो0 बी0 एफ0 स्किनर ने "अधिगम का विज्ञान एवं शिक्षण की कला" नामक अपने शोध पत्र में अभिक्रमित अधिगम के मूलाधार एवं योजना प्रस्तुत किया। जिसमें आपने उत्तर एवं तुरन्त प्रबलन के सिद्धान्तों पर इस प्रविधि के प्रयोग करने की बात कही। यहां पर प्रबलन की आवश्यकता सही उत्तर के

ज्ञान प्राप्त करने के लिए स्पष्ट किया। उनके इस शोधपत्र को सर्वसम्मति के साथ सभी मनोवैज्ञानिकों ने स्वीकार किया तथा प्रो0 स्किनर को अभिक्रमित अधिगम का जनक माना जाने लगा। इस प्रकार अभिक्रमित अनुदेशन स्व शिक्षण की एक सफल प्रविधि बन गई।

8.3.2 अभिक्रमित अनुदेशन का अर्थ

सूसन माक्रले **(Susan Markle)** के अनुसार "अभिक्रमित अनुदेशन पुनः प्रस्तुत की जा सकने वाली क्रियाओं की श्रृंखला को संरचित करने की वह विधि है जिसकी सहायता से व्यक्तिगत रुप से प्रत्येक शिक्षार्थी के व्यवहार में मापनीय तथा विश्वसनीय परिवर्तन लाया जा सकता है।"

स्मिथ एवं मुरे **(Smith and Moore)** ने इसे पारिभाषित करते हुए लिखा है कि "अभिक्रमित अनुदेशन किसी अधिगम सामग्री को क्रमिक पदों की श्रृंखला में व्यवस्थित करने वाली एक प्रक्रिया है और प्रायः इसके द्वारा किसी शिक्षार्थी को उसकी परिचित पृष्ठभूमि से संप्रत्ययों, प्रनियमों और बोध के एक जटिल और नवीन स्तर पर लाया जाता है।"

एस्पिच एवं विलियम्स **(Espich and Williams)** के अनुसार "अभिक्रमित अनुदेशन से अभिप्राय अनुभवों की उस नियोजित श्रृंखला से है जो उद्दीपन–अनुक्रिया सम्बन्ध के सन्दर्भ में प्रभावशील माने जाने वाली दक्षता की ओर अग्रसर करती है"

एन0 एस0 मावी **(N. S. Mavi)** के अनुसार "अभिक्रमित अनुदेशन प्राणवान **(Live)** अनुदेशनात्मक प्रक्रिया को स्व अधिगम अथवा स्व अनुदेशन में परिवर्तित करने की वह तकनीक है जिसमें विषय वस्तु को छोटी छोटी श्रृंखलाओं में विभाजित किया जाता हैं। अधिगम कर्ता को इन्हे पढ़कर सही अथवा गलत कैसी भी अनुक्रिया करनी होती है। अपनी गलत अनुक्रियाओं को इसे ठीक करना होता है अथवा सही अनुक्रियाओं को प्रतिपुष्टि देनी होती है और इस तरह किसी सूक्ष्म श्रृंखला से सम्बन्धित सम्प्रत्यय में पारंगत होने का प्रयास करना पड़ता है।"

उपयफ्रक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि अभिक्रमित अनुदेशन द्वारा वैयक्तिक अनुदेशन में शिक्षार्थी सक्रिय रहते हुएं स्वगति के साथ स्व–अध्ययन करता है, जिसमें वह अपनी उपलब्धि का ज्ञान प्राप्त करता है।

बोध प्रश्न

1. अभिक्रमित अनुदेशन के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।

8.3.3 अभिक्रमित अनुदेशन के उद्देश्य

शिक्षार्थियों को अधिगम करने में मदद करना।

- शिक्षार्थियों को बिना अध्यापक के दबाव के सीखने में मदद करना।
- विषय वस्तु को क्रमिक तथा ताक्रिकता के साथ छोटे छोटे पदों में प्रस्तुत करना।
- शिक्षार्थियों को स्व अधिगम हेतु प्रेरित करना।
- शिक्षार्थियों को खुद की अनुक्रिया को उत्तर पत्रक में दिए गए उत्तरों से तुलना करते हुए स्व का मूल्यांकन करने के योग्य बनाना।

8.3.4 अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएँ

- अभिक्रमित अनुदेशन वैयक्तिक रूप से शिक्षण प्रदान करने की एक तकनीक है जिसमे विभिन्न

स्रोतों या साधनों यथा अभिक्रमित पाठ्य–पुस्तक, शिक्षण मशीन कम्प्यूटर आदि के द्वारा शिक्षण की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति में शिक्षण दिया जा सकता है।

- इस प्रविधि में अनुदेशनात्मक सामग्री को पहले ताक्रिक क्रम में व्यवस्थित कर इसे छोटे–छोटे उचित पदों में बाँट दिया जाता है। इन पदों को फ्रेम कहते हैं।
- इस पदों को व्यवस्थित एवं श्रृंखलाबद्ध करने के लिए शिक्षार्थियों के प्रविष्टि व्यवहार (Entry behaviour) तथा अन्तिम व्यवहार (Terminal behaviour) को ध्यान में रखा जाता है।
- अनुदेशन कार्य विषय वस्तु के फ्रेम अथवा सूक्ष्म पद को शिक्षार्थी के समक्ष प्रस्तुत करने से प्रारम्भ हो जाता है। यह फ्रेम अपने आप में पूर्ण और सार्थक होता है। शिक्षार्थी से यह अपेक्षा की जाती है कि वह इसे भली भाति सुनें अथवा पढ़े और उसके प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करे।
- चूंकि अभिक्रमित अनुदेशनात्मक प्रणाली में पुनर्बलन के सिद्धान्तों के आधार पर तत्काल प्रतिपुष्टि प्रदान करने की व्यवस्था होती है इसलिए शिक्षार्थी द्वारा किसी एक फ्रेम के प्रति अनुक्रिया व्यक्त करने पर उसे उसके सही अथवा गलत होने के बारे में बता दिया जाता है। सही अनुक्रिया का ज्ञान होने पर उसकी अनुक्रिया को पुनर्बलन मिल जाता है और यदि गलत है तो अपनी गलती को ठीक कर पुनर्बलन प्राप्त कर आगे बढ़ता जाता है।
- इस अनुदेशन में शिक्षार्थी निरन्तर सक्रिय रहता है जिसमे शिक्षार्थी तथा प्रस्तुत विषय सामग्री के मध्य होने वाली पारस्परिक अन्तःक्रिया पर सर्वाधिक बल दिया जाता है।
- शिक्षार्थी अपनी गति अर्थात अपनी योग्यता तथा क्षमता के अनुरूप आगे बढ़ता जाता है और उसे उसके परिणामों का ज्ञान तत्काल ही प्रदान किया जाता है।
- इस अनुदेशन में शिक्षार्थी को निरन्तर बाह्य अनुक्रिया (Overt response) करना होता है जिसका भलीभांति निरीक्षण और मापन किया जा सकता है।
- चूंकि अनुदेशन प्रक्रिया का उपयुक्त सतत् मूल्यांकन होता रहता है इसलिए शिक्षार्थियों के उपलब्धि स्तर और अभिक्रमित सामग्री आदि में वांछित सुधार लाने में पर्याप्त सहायता मिलती है।

उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर हम कह सकते है कि अभिक्रमित अनुदेशन शिक्षा के क्षेत्र में एक नवाचार है जो स्वाध्याय में मदद देता है। यह अनुदेशन स्वानुभव पर आधारित होता है। इसमे शिक्षार्थियों में अभ्यास एवं पुनरावृत्ति करने की आदत का विकास होता है।

बोध प्रश्न

2. अभिक्रमित अनुदेशन शिक्षार्थियों के लिये किस प्रकार उपयोगी है?

....

....

....

8.3.5 अभिक्रमित अनुदेशन की आवश्यकता

- अभिक्रमित अनुदेशन द्वारा शिक्षार्थियों को वैयक्तिक रूप से अधिगम करने की स्वतन्त्रता रहती है जिसके कारण उनमे आत्मनिर्भरता तथा आत्माभिव्यक्ति की भावना आती है।
- कम समय में अधिक से अधिक ज्ञानार्जन तथा विषय वस्तु पर स्वामित्व रखने की चाह हर

विद्यार्थी की होती है जिसके लिए यह अनुदेशन अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हो सकता है क्योकि इसके माध्यम से थ्शक्षार्थी कम समय में विषय वस्तु का गहनता के साथ अध्ययन करने में सफल होते हैं और उनकी समस्याओं का भी निदान हो जाता है।

- शिक्षार्थियों में स्वाध्याय की आदत के विकास हेतु इस अनुदेशन की अत्यन्त आवश्यकता है।
- यह अनुदेशन शिक्षार्थियों की नकल की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने में कारगर है।
- इस अनुदेशन से शिक्षार्थी स्वतः अभिप्रेरित होकर अधिगम करतें हैं।
- चूंकि इसके माध्यम से शिक्षण से सम्बन्धित अनेक व्यावहारिक समस्याओं का निदान सम्भव है इसलिए कोठारी कपीशन ने भी अपने प्रतिवेदन में इस अनुदेशन की सिफारिश की है।

8.3.6 अभिक्रमित अनुदेशन का क्षेत्र

इसकी अतिशय महत्ता के कारण वर्तमान समय में इस अनुदेशन का प्रयोग निम्नलिखित क्षेत्रों में हो रहा हैः–

- पत्राचार शिक्षा, खुली शिक्षा और प्रौढ़ शिक्षा में।
- औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा में।
- प्रतिभाशाली, मानसिक रुप से मन्द तथा विकलांग बालकों की शिक्षा में।
- प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा के क्षेत्र में।
- अध्यापकों को शैक्षिक कौशल अर्जित करने में।
- व्यवसायिक तथा औद्योगिक प्रतिष्ठानों में।
- प्रतिरक्षा तथा सैन्यबल के क्षेत्र में।
- जनसंचार माध्यमों से पाठ को सम्प्रेषित करने में।

8.3.7 अभिक्रमित अनुदेशन के मूल मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त

रार्बट एम0 गाने (1958) बी0 एफ0 स्किनर (1954) तथा गिलबर्ट (1958) ने उन सिद्धान्तों को बताया है जो शिक्षण साधनों को कक्षा में प्रयोग के समय सरल बना कर प्रभावी अधिगम में सहायक होतें हैं। उनमे से अभिक्रमित अनुदेशन से सम्बन्धित अधिगम सिद्धान्त निम्नलिखित है जो शिक्षार्थी के अधिगम को प्रभावशाली बनाते है–

- शिक्षार्थी द्वारा पूरी सक्रियता के साथ विषय वस्तु में कार्यरत रहने से अधिगम द्रुत गति से होता है।
- अर्जित ज्ञान वास्तविक जीवन परिस्थितियों से सम्बन्धित होने पर अधिगम प्रभावशाली होता है।
- प्रत्येक उत्तर का परिणाम तुरन्त जानने से शिक्षार्थी उत्साहित होकर अधिगम करता है जो प्रभावशाली होता है।
- विषय वस्तु को छोटे–छोटे पदों में क्रमानुसार व्यवस्थित कर देने से शिक्षार्थी अधिगम द्रुत गति से करता है।
- यह अनुदेशन वैयक्तिक होता है जिसमें शिक्षार्थी अपनी गति के साथ सीखते हुए अपने अधिगम को प्रभावपूर्ण बनाता है।

8.3.8 अभिक्रमित अनुदेशन की सफलता हेतु अपेक्षित सावधानियां

- चूंकि अभिक्रमित अनुदेशनात्मक विधि है जिसमें शिक्षार्थी तथा प्रोग्राम में अन्तःक्रिया के कारण अधिगम होता है अर्थात प्रोग्राम एक शिक्षक का स्थान लेता हैं। इसलिए प्रोगाम को नियोजित, ताक्रिक, प्रमाणित, प्रभावपूर्ण तथा श्रेणीबद्ध प्रारूप में व्यवस्थित किया जाना चाहिए।
- अभिक्रमित अनुदेशन का सार फ्रेम होता है जिसका उपयुक्त क्रम में आयोजन ही इसका प्रारूप बनाता है। प्रत्येक फ्रेम में स्पष्ट करने वाली विषय सामग्री, एक प्रश्न, शिक्षार्थी के उत्तर देने का स्थान तथा लेखक का उत्तर होता है जिसे शिक्षार्थियों को खोलकर दिखाकर ही शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया होती है। अतएव इस अनुदेशन का पूरी सफलता फ्रेम के सुव्यवस्थित प्रारूप पर निर्भर करती है जिस ओर विशेष ध्यान दिया जाना अपेक्षित है।
- फ्रेम लेखन में भी विशेष प्रवीणता तथा कौशल अपेक्षित है जिससे शिक्षार्थियों को यथार्थ सूचनाएं सार रूप में दी जा सके।

8.3.9 अभिक्रमित अनुदेशन की रचनाः–

अभिक्रमित अनुदेशन की विशिष्टता तथा कार्योपयुक्तता बनी रहे, इसलिए निम्नलिखित आठ सोपानों का अनुसरण अभिक्रमित अनुदेशन के विकास हेतु किया जाता हैः–

1) प्रकरण का चयनः–चयनित प्रकरण अपने वांछित उद्देश्य सें की प्राप्ति में सहायक तथा ताक्रिक रूप से विभाजित होने वाला होना चाहिए।

2) शिक्षार्थियों के पूर्व ज्ञान तथा अनुभवों को व्यावहारिक रूप में लिखनाः– अर्थात बनाये जाने वाला कार्यक्रम किस आयु वर्ग के शिक्षार्थियों के लिए है; उनका सामाजिक – शैक्षिक – आर्थिक तथा मानसिक स्तर कैसा है तथा उनकी रूचि, योग्यता तथा पूर्व ज्ञान के सन्दर्भ में समस्त वांछनीय व्यावहारिक सूचनाएं आवश्यकता के अनुरूप लिख देना चाहिए।

3) शैक्षिक उद्देश्यों को व्यावहारिक शब्दावलियों में लिखना– कार्यक्रम के उद्देश्यों का निर्धारण करके उन्हे ब्लूम टेक्सनॉमी के अनुसार ज्ञानात्मक, बोधात्मक तथा क्रियात्मक रूप में लिख देना चाहिए। साथ– साथ कार्य वर्णन तथा कार्य विश्लेषण दोनों को सम्मिलित किया जाना चाहिए। कार्य वर्णन में उन अन्तिम उद्देश्यों को स्पष्ट किया जाता है जिसे प्रस्तुत कार्यक्रम द्वारा प्राप्त करने का प्रयास किया जा रहा है तथा कार्य विश्लेषण में पूर्ण व्यवहार से अन्तिम व्यवहार तक पहुचने के लिए प्रयुक्त प्रश्नों के माध्यम का विश्लेषण किया जाता है। इससे वस्तुनिष्ठ मानदण्ड परीक्षाओं का निर्माण करना सरल हो जाता है।

4) विषय–वस्तु की रूपरेखा का विकास करना– पाठ्यवस्तु का शिक्षार्थियों की योग्यता, पूर्व अनुभव, पूर्व ज्ञान तथा उद्देश्यों के सन्दर्भ में विश्लेषण करके विषय–वस्तु की एक रूपरेखा बना ली जाती है जिसके मूल में ताक्रिकता तथा मनोवैज्ञानिक आधार निहित होता है। विषय वस्तु की रूपरेखा सुनिश्चित करने में आवश्यकतानुसार विषय विशेषज्ञों का भी सहयोग लिया जा सकता है।

5) मानदण्ड परीक्षण का निर्माण करना– शिक्षार्थियों ने निर्धारित उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया है, इसका मूल्याकंन करने हेतु मानदण्ड परीक्षण का निर्माण किया जाता है। परीक्षण में प्रायः वस्तुनिष्ठ प्रश्नों को ही रखा जाता है। परीक्षण का निर्माण करते समय सम्बन्धित निर्देश तथा नियम स्पष्ट रूप से उल्लेखित होने चाहिए।

6) सामग्री की रचना– इस सोपान के अन्तर्गत विषय–सामग्री की रचना चार पदों– प्रस्तावना पद, शिक्षण पद, अभ्यास पद तथा निरीक्षण पद आदि में की जाती है। अभिक्रम की रचना उसके तीनों प्रकार रेखीय अथवा बाहृय, शाखीय अथवा आन्तरिक तथा अवरोही अथवा मैथिटिक्स में से किसी

एक पर आधारित होता है। परन्तु इनमे से शाखीय अभिक्रम का प्रयोग बहुतायत से किया जाता है जिसके चारो अंगो उद्दीपक, अनुक्रिया के संकेत, अनुक्रिया तथा पृष्ठ पोषण आदि का अनिवार्य रूप से प्रावधान किया जाता है। सामग्री की रचना सरल तथा व्यावहारिक शब्दावली में किया जाता है जिससेशिक्षाथी उसे भली भांति समझ सकें और उसे उचित क्रमों में व्यवस्थित कर लिया जाता है। इस सन्दर्भ में मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों को ध्यान में रखतें हुए पदों तथा प्रश्नों को सरल से जटिल के क्रम में रखा जाता है। पद की रचना पूरी होने के पश्चात विषय विशेषज्ञों की मदद से तकनीकी त्रुटि, भाषा तथा पदों की रचना से सम्बन्धित विसंगतियों को दूर किया जाता है।

7) निर्मित अभिक्रम का परीक्षण करना– निर्मित पद एवं इकाइयों की उपयुक्तता की जांच इस सोपान के अन्तर्गत की जाती है जिसमे प्रायः तीन प्रकार का परीक्षण प्रयोग में लाया जाता है–

(1) वैयक्तिक परीक्षण–इस प्रकार का परीक्षण दो–तीन शिक्षार्थियों पर लागू कर अभिकल्प की भाषा, कठिनाई स्तर, परीक्षण की लम्बाई तथा शिक्षाथी की कठिनाई के विषय में जानकारी प्राप्त कर उसमे वाछनीय संशोधन किया जाता है।

(2) अल्प समूह परीक्षण– इसमे तैयार अभिकल्प को पन्द्रह से बीस शिक्षार्थियों के समूह पर लागू कर अनुभव की गई समस्याओं एवं शिक्षार्थियों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर उसमे वांछित संशोधन किया जाता है।

(3) क्षेत्र परीक्षण–क्षेत्र परीक्षण का आशय अभिकल्प को एक प्रतिदर्श ॅ(।डच्स्म) पर लागू कर प्राप्त शिक्षार्थियों की अनुक्रियाओं एवं सुझावों के आधार पर वांछित संशोधन करना है।

8) मूल्यांकन– उपरोक्त सोपान से प्राप्त विविध आँकड़ो के आधार पर निम्नलिखित पदों से गुजरते हुए अभिक्रम का मूल्यांकन किया जाता हैः–

(1) वैधता निर्धारण– अर्थात अभिक्रम का निर्माण जिस गुण या उद्देश्य के मापन हेतु किया गया है वह प्रस्तुत अभिक्रम द्वारा मापा जा रहा है अथवा नही।

(2) त्रुटिदर निर्धारण– अर्थात अभिक्रम का त्रुटिदर निम्नलिखित सूत्र के माध्यम से ज्ञात किया जाता है–

त्रुटियों का कुल योग
त्रुटि दर = **x** 100 ________________________
पदो की संख्या **x**शिक्षार्थी संख्या

प्रायः त्रुटि दर 5 से 15 प्रतिशत के बीच ही रहना चाहिए।

(3) घनत्व निर्धारणः– अर्थात अभिकल्प में प्रयुक्त पदों का क्या कठिनाई स्तर है या उसके घनत्व का निर्धारण किया जाता है जिसके लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$\text{घनत्व निर्धारण} = \frac{\text{विविध अनुक्रियाओं की संख्या}}{\text{कुल अनुक्रियाओं की संख्या}}$$

(4) सतत प्रवाह निर्धारणः– मूल्यांकन के इस चरण में परीक्षण पर प्राप्त आँकड़ो के आधार पर एक स्केलोग्राम आरेख तालिका बनाई जाती है जिसके आधार पर अभिक्रम की निरन्तरता या सतत प्रवाह या तारतम्य प्रवाह निर्धारण किया जाता है तथा वांछित सुधार किया जाता है।

(5) अन्तिम निर्देशिका की तैयारीः– मूल्याकंन की प्रक्रिया पूरी होने के पश्चात अन्तिम रूप में अभिक्रम पुस्तिका या निर्देशिका का प्रकाशन किया जाता है जिसमे ऐतिहासिक परिदृश्य, विशिष्ट उद्देश्यों का विशिष्टीकरण, पदों की संख्या, पदो के प्रकार, वैधता, त्रुटि दर, मूल्याकंन का विवरण तथा प्रशासन सम्बन्धित निर्देशों का स्पष्ट रूप से वर्णन होता है।

8.3.10 अभिक्रम के प्रकार

वर्तमान समय में हर विषय से सम्बन्धित अभिक्रम सामग्रियों का निर्माण विषय की प्रकृति के अनुसार हो रहा है। परन्तु इनमे परम्परागत प्रयुक्त अभिक्रम तीन प्रकार के होते हैं–

1) रेखीय अथवा वाह्रय अभिक्रमित **(Linear or Extrinsic Programming)**– इस अभिक्रम के संस्थापक मनोवैज्ञानिक वी0 एफ0 स्किनर ने अपने अधिगम सिद्धान्त क्रिया प्रसूत अनुबंधन के आधार पर इस अभिक्रम को प्रस्तुत किया जिसके अनुसार शिक्षार्थी पूर्व निश्चित प्रक्रिया के आधार पर व्यवहार करते हुए अधिगम करता है। इसके अन्तर्गत शिक्षार्थी के सम्मुख विविध इकाईयों को प्रस्तुत किया जाता है जिसे वह सीखता है तथा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देता है तत्पश्चात् उसके उत्तरों की जाँच करके उसे परिणाम दिखाया जाता है और उसे पुनर्बलन प्राप्त होता है। इसी प्रकार की प्रक्रिया को दोहराते हुए शिक्षार्थी अन्तिम इकाई तक पहुंच जाता है। चूंकि ऐसा करते रहने से प्रत्येक इकाई के मध्य उद्दीपन और प्रतिक्रिया (Stimulas - Response) की एक श्रृंखला का निर्माण एक रेखा में होता है इसलिए इस अभिक्रम को रेखीय अभिक्रम के नाम से जाना जाता है। इसे बाह्रय अभिक्रम इसलिए कहा जाता है क्योंकि शिक्षार्थी द्वारा व्यक्त क्रिया आन्तरिक न हो कर वाह्रय होती है। उदाहरण के लिए यदि सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत शिक्षार्थियों को यदि सिन्धु घाटी की सभ्यता पढ़ानी है तो रेखीय अभिक्रम की रुप रेखा निम्न लिखित प्रकार से हो सकती है–

इच्छित पूर्व व्यवहार अधिगम मार्ग (1–11) अन्त्य व्यवहार											
फ्रेम	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
सैन्धव सभ्यता	सिन्धु घाटी के प्रमुख उत्खनित स्थल	कालक्रम	नगर निर्माण योजना	सभा भवन	स्नानागार	अन्नागार	सामाजिक जीवन	आर्थिक जीवन	धार्मिक जीवन	राजनैतिक जीवन	पतन
↓ S	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R	↓ ↓ S R

चित्रः 8–3–10.1 रेखीय अभिक्रम का रेखाचित्र के माध्यम से स्पष्टीकरण

2) शाखीय अथवा आन्तरिक अभिक्रमः– इस अभिक्रम के प्रणेता एन0 ए0 क्राउडर माने जाते हैं। यह अभिक्रम किसी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त पर आधारित नही है वरन इसमें विषय–वस्तु को शिक्षार्थी के सम्मुख शाखाबद्ध रुप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाता है कि शिक्षार्थी अपने विवक एवं सूझ से दिए गए प्रश्नों के सही उत्तर चुनता है। इसे हम निम्नलिखित रेखाचित्र के माध्यम से समझ सकते हैं।

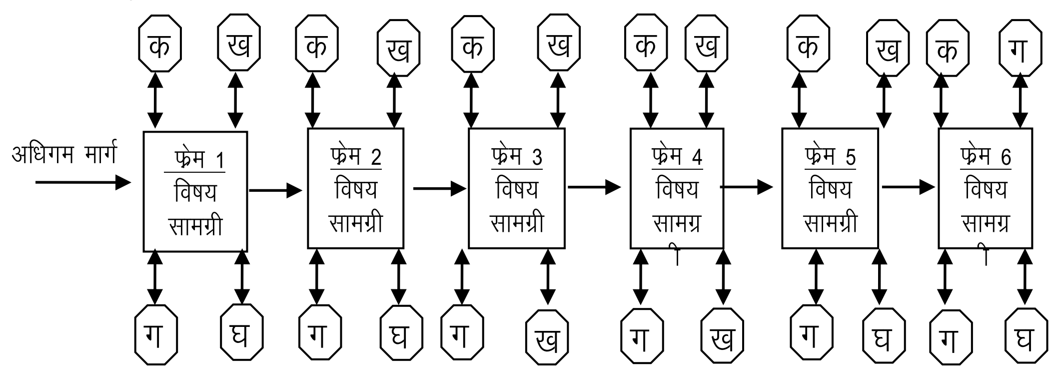

चित्रः 8–3.10.2 शाखीय अभिक्रम का रेखचित्र के माध्यम से स्पष्टीकरण

उपरोक्त चित्र के सन्दर्भ में आपको स्पष्ट कर दे कि एक से पाँच तक ईकाइयाँ है जिसमें विषय सामग्री अंकित है। प्रत्येक इकाई की चार शाखाएं क, ख, ग, घ है जिसमें विषय सामग्री से सम्बन्धित एक उत्तर सही तथा शेष तीन गलत होते हैं। सर्वप्रथम शिक्षार्थी फ्रेम एक की विषय सामग्री का अध्ययन कर उसका एक सही उत्तर चुनता है। यदि उसका उत्तर सही है तब तो वह फ्रेम 2 में आता है अन्यथा पहले फ्रेम का अध्ययन पुनः कर वह सही विकल्प को चुनता है। इसी प्रकार प्रत्येक फ्रेम का सही उत्तर चुनते हुए वह अन्तिम इकाई तक इसी प्रक्रिया को अपनाता जाता है। उपरोक्त अभिक्रम के उदाहरण को सामाजिक अध्ययन के प्रकरण "शाहजहां कालीन स्थापत्य कला" के अन्तर्गत इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैः–

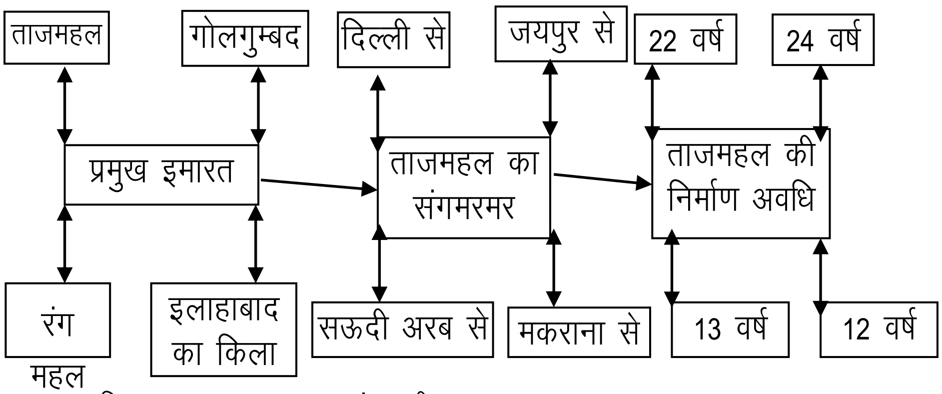

चित्रः 8–3–10–3 शाहजहां कालीन स्थापत्य कला का उदाहरण

3) अवरोही या मैथेटिक्स अभिक्रम–प्रस्तुत अभिक्रम के प्रेणता थॉमस एफ0 गिलवर्ड है। इस अभिक्रम में विषय वस्तु की इकाइयों को विखंडित न करके उसे श्रृंखलाबद्ध ढ़ंग से अवरोही क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। यह अभिक्रम सर्वोत्तम मानी जाती है क्योकि इसमे विषय वस्तु की ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर की समस्त ईकाइयां एक दूसरे से जुड़ी होती हैं जिससे शिक्षार्थी व्यवस्थित तथा पूर्णता के साथ अधिगम करने में सफल हो जाता है। इस अभिक्रम को हम निम्नलिखित रेखचित्र के माध्यम से समझ सकते हैंः–

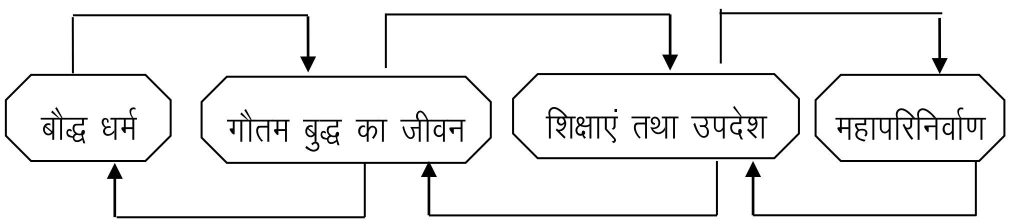

चित्रः 8–3.10.4 अवरोही अभिक्रम का रेखचित्र के माध्यम से स्पष्टीकरण

यद्यपि अवरोही अभिक्रम का संचालन अत्यन्त अनुभवी व्यक्ति के माध्यम से होता है परन्तु इसमे अधिगम का स्थानान्तरण होने से शिक्षार्थी न केवल नवीन ज्ञान वरन पूर्ववर्ती ज्ञान को भी स्थायित्व प्रदान करता है।

बोध प्रश्न

3.सामाजिक अध्ययन के अधिगम हेतु अभिक्रम का कौन सा प्रकार आपके दृष्टिकोण में सर्वोत्तम है और क्यो ?

4.अभिक्रमित अनुदेशन की सफलता हेतु आप किन– किन सावधानियों को अपनायेंगे?

5."सामग्री की रचना" सोपान से आप क्या समझते हों।

8.3.11 अभिक्रमित अनुदेशन के सिद्धान्त

1) लघु–पदों का सिद्धान्त (**Principle of small steps**)– यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि यदि विषय सामग्री को क्रमिक एवं व्यवस्थित ढ़ंग से छोटे छोटे पदों में विभक्त कर दिया जाए तो अधिगम प्रभावशाली ढ़ंग से होता है। इसीलिए अभिक्रमित अनुदेशन में विषय वस्तु को भली भाति विश्लेषित कर उन्हे छोटे छोटे सार्थक टुकड़ों/भागों में विभक्त किया जाता है जिसे अभिक्रम पद या फ्रेम कहते है। शिक्षार्थी जब एक पद पर सफलता प्राप्त कर लेता है तभी वह दूसरे पद की ओर बढ़ता है। इस प्रकार छोटे छोटे पदों पर ज्ञानार्जन करने से शिक्षार्थी में प्रवीणता आती है और प्रत्येक पद

2) शिक्षाथी को अगले पद में जाने के लिए तैयार करता है।

3) सक्रिय अनुक्रिया का सिद्धान्त (**Principle of Active Responding**)– चूंकि प्रभावशाली अधिगम के लिए शिक्षार्थी की सक्रिय तत्परता अनिवार्य है इसलिए इस अनुदेशन में प्रत्येक पद या फ्रेम के प्रति सतत रुप से शिक्षाथी द्वारा अपनी वाह्रय अनुक्रिया करने का प्रावधान किया गया है और शिक्षार्थी पुनर्बलन प्राप्त करते हुएं एक फ्रेम से दूसरे फ्रेम में जाते हुए प्रभावशाली ढ़ंग से अधिगम करता जाता है।

4) तत्काल प्रतिपुष्टि का सिद्धान्त (**Principle of Immediate Reinforcement**):–प्रत्येक उत्तर का परिणाम तुरन्त पता चल जाने से शिक्षार्थी अभिप्रेरित हो कर द्रुत गति से अधिगम करता है। यह प्रक्रिया अधिगम को प्रबलन प्रदान करती है और आगे कार्य की प्रतिपुष्टि करती है इसलिए अभिक्रमित अनुदेशन में तत्काल प्रतिपुष्टि प्रदान करने की आवश्कता पर ध्यान देते हुए इसका प्रावधान किया गया है।

5) स्व–गति का सिद्धान्त (**Principle of Self-Pacing**)–अभिक्रमित अनुदेशन वैयक्तिक रुप में अनुदेशन करने की तकनीक है जो इस धारणा पर आधारित है कि जब शिक्षार्थी को उसकी अपनी गति से सीखने और आगे बढ़ने का अवसर मिलता है तो अधिगम प्रभावपूर्ण ढ़ंग से सम्पन्न होता है। अभिक्रमित सामग्री वैयक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए व्यवस्थित की जाती है और शिक्षार्थी अपनी क्षमता तथा योग्यता के अनुसार विषयवस्तु के एक फ्रेम से दूसरे फ्रेम में जाने के लिए पूर्ण रुप से स्वतंत्र होता है।

6) छात्र परीक्षण तथा मूल्यांकन का सिद्धान्त (**Principle of Student Testing**):–प्रस्तुत सिद्धान्त इस आवश्यकता पर बल देता है कि यदि अधिगम प्रक्रिया का सतत् मूल्यांकन होता रहे तो अधिगम सम्बन्धी परिणाम अच्छे प्राप्त होंगे। इस अनुदेशन में शिक्षार्थी द्वारा की गयी बाह्रय अनुक्रिया के निरीक्षण तथा मूल्यांकन की भी उचित व्यवस्था की जाती है। प्रायः शिक्षार्थी की अनुक्रियाओं का लेखा–जोखा उसके द्वारा दिए जाने वाले उत्तरों से, जो उत्तर पत्र पर अंकित रहते हैं या टेप पर उपस्थित रहते हैं, उनके द्वारा स्वतः ही रख लिया जाता है। इस प्रकार इसमें शिक्षार्थी स्वयं अपनी अधिगम उपलब्धि का परिणाम प्राप्त करते हैं।

8.3.12 अभिक्रमित अनुदेशन के गुण अथवा लाभ

- इस विधि के माध्यम से वैयक्तिक अनुदेशन सम्भव है जिसमे शिक्षार्थी अपनी योग्यता तथा क्षमता के अनुसार अधिगम करता है।
- इसमें शिक्षार्थी पूरी तरह से सक्रिय रहता है।
- उपचारी तथा समृद्धिकरण शिक्षा के दृष्टिकोण से यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।
- सामान्य अथवा कमजोर बुद्धि वाले शिक्षार्थी भी इस विधि से सीखते हुए अपनी दक्षता सिद्ध कर

सकते हैं।

- इसमें शिक्षार्थियों को अपनी अनुक्रियाओं का तुरन्त पृष्ठ पोषण (मिमक इंबा) मिलने से उनमें अधिगम द्रुत गति से सम्भव हो जाता है।
- शिक्षार्थी बिना किसी तनाव के बोझ रहित अधिगम करता है।
- इसमें शिक्षार्थी एक प्रकरण को पूरी तरह से सीख लेने के पश्चात् ही आगे बढ़ता है।
- इस अधिगम से त्रुटि रहित अधिगम करने की सम्भावना रहती है।
- इस विधि में प्रतिस्पर्धा की भावना न रहने से शिक्षार्थी अपनी गति से अधिगम करता है।

8.3.13 अभिक्रमित अनुदेशन के दोष

- सामाजिक अध्ययन के अनेकों प्रकरण का शिक्षण इस विधि से सम्भव नही हो पाता।
- यह विधि अत्यन्त महँगी है।
- इस विधि में सामाजिक अन्तःक्रिया सम्भव नही हो पाती जिससे सामाजिक अध्ययन के उद्देश्य की प्राप्ति सम्भव नहीं हो पाती।
- सामाजिक अध्ययन जैसे विषय की िविषयवस्तु को अत्यन्त छोटे छोटे पदों में विभक्त करना आसान नहीं है क्योकि इससे विषय वस्तु का क्रम टूटने की आशंका रहती है।
- छोटे छोटे पदो ंके माध्यम से अधिगम करने से शिक्षार्थियों की समस्त मानसिक शक्तियों का प्रशिक्षण सम्भव नही हो पाता।
- इस विधि में शिक्षार्थियों की अधिक जिज्ञासाएं सन्तुष्ट करना सम्भव नहीं हो पाता।
- परम्परागत विद्यालयों में वैयक्तिक शिक्षा सम्भव नही हो पाती क्योकि इस विधि से निर्धारित सत्र में पाठ्य पूरा करना सम्भव नही होता।
- इस प्रकार के अनुदेशन हेतु उच्च कोटि की अधिगम सामग्री की उपलब्धता भी सम्भव नहीं हो पाती।
- इस अनुदेशन में समय, धन तथा शक्ति तीनों का ही अपव्यय होता है।

चर्चा के बिन्दु

कमजोर शिक्षार्थी इस अभिक्रम के माध्यम से सामाजिक अध्ययन का अधिगम भली भाति कर सकते हैं।

<u>बोध प्रश्न</u>

6.अभिक्रमित अनुदेशन के कौन–कौन से सिद्धान्त हैं।

....
....
....
....

8.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अभिक्रमित अनुदेशन का विस्तार से अनुशीलन किया। वास्तव में यदि विषय वस्तु के अध्ययन की दृष्टि से देख जाए, तो इस शैक्षिक नवाचार की महत्वपूर्ण भूमिका है परन्तु व्यावहारिक दृष्टिकोण से इसके माध्यम से हम सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों यथा सामाजिक गुणों, कौशलों तथा लोकतान्त्रिक गुणों एवं नेतृत्व की क्षमता आदि की प्राप्ति में अपूर्णता महसूस कर सकते हैं क्योकि यह अनुदेशन वैयक्तिक अनुदेशन है जिसमें शिक्षार्थी अकेले ही अधिगम करता है। तथापि इसके प्रति हम कुछ व्यापक दृष्टिकोण रखते हुए इसकी महत्ता को उपयोगी बना सकते हैं।

8.5 अभ्यास कार्य

1) अभिक्रमित अभिक्रम द्वारा अधिगम हेतु सामाजिक अध्ययन के कुछ प्रकरणों की रुपरेखा बनाइए ।
2) अभिक्रम अनुदेशन की रचना करते समय आप किन किन बातों को ध्यान में रखेंगे ।
3) अपने साथी अध्यापकों के साथ इस अनुदेशन का आयोजन करें तथा इस दौरान किए गए अनुभवों (अच्छाई तथा बुराई अथवा कठिनाई) को लिखिए ।

8.6 चर्चा के बिन्दु

1) सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अभिक्रमित अनुदेशन का महत्व है।
2) यह अनुदेशन शिक्षार्थियों में सामाजिक गुणों तथा नेतृत्व की क्षमता का विकास पूरी तरह नही कर पाता।
3) सामाजिक अध्ययन के लिए इस अनुदेशन को उपयोगी बनाया जा सकता है।

8.7 बोध प्रश्न के उत्तर

1. अभिक्रमित अनुदेशन वैज्ञानिकता से परिपूर्ण ऐसा नवाचार है जो स्वचालित तथा वैयक्तिकता पर आधारित होता है। इसम शिक्षार्थी अपनी क्षमता तथा गति के अनुसार अधिगम करते हैं। शिक्षा में जब से मनोविज्ञान ने प्रवेश किया, तभी से बाल केन्द्रित शिक्षा पर सर्वाधिक बल दिया जाने लगा। अभिक्रमित अनुदेशन भी बाल केन्द्रित शैक्षिक उपागम है जिसमे ज्ञान की सम्पूर्ण इकाई को अनेक सूक्ष्म भागों में विभक्त करके शिक्षार्थियों को उनकी सुविधा, योग्यता तथा आवश्यकतानुसार अधिगम करने का अवसर प्रदान किया गया है।
2. अभिक्रमित अनुदेशन वैयक्तिक रूप से शिक्षण प्रदान करने की एक तकनीक है जो शिक्षार्थी के लिये अत्यन्त उपयोगी है क्योकि इस अनुदेशन में शिक्षार्थी निरन्तर सक्रिय रहता है। वह अपनी गति अर्थात योग्यता तथा क्षमता के अनुरूप आगे बढ़ता जाता है और उसे उसके परिणामों का ज्ञान तत्काल ही प्रदान किया जाता है। यह शिक्षार्थियों को बिना अध्यापक के दबाव के सीखने में मदद करता है।
3. सामाजिक अध्ययन के अधिगम हेतु मेरे दृष्टिकोण से अवरोही या मैथेटिक्स अभिक्रम है क्योकि इसमे विषय वस्तु की ऊपर से नीचे तथा नीचे से ऊपर की समस्त ईकाइंया एक दूसरे से जुड़ी होती हैं जिससे शिक्षार्थी व्यवस्थित तथा पूर्णता के साथ अधिगम करने में सफल हो जाता है। इसमे अधिगम का स्थान्तरण होता है इसलिये शिक्षार्थी न केवल नवीन ज्ञान वरन पूर्ववर्ती ज्ञान को भी स्थायित्व प्रदान कर पाता है।

4. चूंकि यह अनुदेशनात्मक विधि है जिससे शिक्षार्थी तथा प्रोग्राम में अन्तःक्रिया के कारण अधिगम होता है (यहां प्रोग्राम का आशय शिक्षक से है) इसलिये इस प्रोग्राम को ताक्रिक, नियोजित, प्रमाणित, प्रभावपूर्ण तथा श्रेणीबद्ध प्रारूप में व्यवस्थित किया जाना चाहिये। इस अनुदेशन की पूरी सफलता फ्रेम के सुव्यवस्थित प्रारूप पर निर्भर करती है इसलिये इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना अपेक्षित है। साथ–साथ फ्रेम लेखन में भी विशेष प्रवीणता तथा कौशल अपेक्षित है।

5. सामग्री की रचना अभिक्रमित अनुदेशन की रचना का एक महत्वपूर्ण सोपान है जिसमें विषय सामग्री की रचना चार पदों – प्रस्तावना पद, शिक्षण पद, अभ्यास पद तथा निरीक्षण पद आदि में की जाती है। सामग्री की रचना सरल तथा व्यावहारिक शब्दावली में की जाती है जिससे शिक्षार्थी उसे भली भांति समझ सकें। सामग्री की रचना में मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुये पदों तथा प्रश्नों को सरल से जटिल के क्रम में रखा जाता है।

6. अभिक्रमित अनुदेशन के प्रमुख सिद्धान्त – लघु पदों का सिद्धान्त, सक्रिय अनुक्रिया का सिद्धान्त, तत्काल प्रतिपुष्टि का सिद्धान्त, स्व– गति का सिद्धान्त, शिक्षार्थी परीक्षण तथा मूल्यांकन का सिद्धांन्त आदि है।

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1) मंगल एस0 के0 तथा मंगल उमाः– "शिक्षा तकनीकी" पी0 एच0 आई0 लंर्निग, प्रा0 लि0, नई दिल्ली, 110001, 2011।

2) AECT, (1994):- Instructional Technology, Washington.

3) Callendar, P. (1960):- Programmed Learning: Its development & Structure, Longmans.

इकाई – 9 सामाजिक अध्ययन शिक्षण के नवीन उपागम

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 सामाजिक अध्ययन शिक्षण के नए उपागम या नवाचार

- 9.3.1 शिक्षण अभ्यास
- 9.3.2 अभिरूपित शिक्षण या अनुकरणीय शिक्षण
- 9.3.3 अभिक्रमित अनुदेशन
- 9.3.4 समूह शिक्षण
- 9.3.5 दूरस्थ शिक्षण
- 9.3.6 शिक्षण मशीन
- 9.3.7 टेली क्रांफ्रसिंग या दूर संवाद प्रणाली
- 9.3.8 बहुमाध्यम उपागम
- 9.3.9 मॉड्यूलर उपागम

9.4 सारांश

9.5 अभ्यास कार्य

9.6 चर्चा के बिन्दु

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.1 प्रस्तावना

आज के युग में मानव जीवन का प्रत्येक पक्ष वैज्ञानिक खोजों तथा अविष्कारों से प्रभावित है। शिक्षा का क्षेत्र भी इससे अछूता नही है। शिक्षाशास्त्र का कोई भी अंग चाहे वह विधियों–प्राविधियों का हो, उद्देश्य अथवा शिक्षण प्रक्रिया का हो अथवा शोध का हो, बिना तकनीकी के अपंग तथा असहाय है। वर्तमान समय में सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत जितने भी उपागमों का प्रयोग किया जा रहा है वह तकनीकी प्रसूत नवाचार का ही परिणाम है। यद्यपि यह नवाचार बिल्कुल नया सम्प्रत्यय नही है वरन यह तो नवीन एवं पुरातन का एक ऐसा संगम है जो एक नवीन इकाई के रूप में अपनी विशिष्टताओं के साथ प्रकट हो

रहा है। अतएव एक प्रभावशाली शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया के लिए आवश्यक है कि शिक्षक विभिन्न नवीन उपागमों से भली भांति परिचित होकर इनका प्रयोग अपने शिक्षण के दौरान आवश्कतानुसार करे। प्रस्तुत इकाई में सामाजिक अध्ययन के विभिन्न उपगमों का वर्णन किया जा रहा है।

9.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप–

1) सूक्ष्म शिक्षण के सम्प्रत्यय का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
2) सूक्ष्म शिक्षण के पदों का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
3) अभिरूपित शिक्षण के अर्थ का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
4) शिक्षण कौशलों की सूची बना सकेंगे।
5) सूक्ष्म शिक्षण तथा अभ्यास शिक्षण में व्याप्त अन्तरों को बता सकेंगे।
6) सूक्ष्म शिक्षण तथा अभिरूपित शिक्षण में विभेद कर सकेंगे।
7) अपने शिक्षण के सम्बन्ध में दूरस्थ शिक्षा की उपयोगिता समझ सकेंगे।
8) समाजिक अध्ययन के नवीन उपागमों का विश्लेषण कर सकेंगे।
9) अपने शिक्षण के दौरान विभिन्न उपागमों का प्रयोग कर सकेंगे।
10) सघन शिक्षण अभ्यास की उपयोगिता को समझ सकेंगे।
11) श्यामपट्ट कौशल का विकास स्वयं में कर सकेंगे।
12) टेलीक्रांफ्रेसिंग का पत्राचार शिक्षा में अतिशय महत्ता को समझ सकेंगे।

9.3 सामाजिक अध्ययन शिक्षण के नए उपागम या नवाचार

नूतन उपागम अथवा नवाचार–परिवर्तन प्रकृति का नियम है और यह परिवर्तन प्रकृति के साथ–साथ समाज में भी दृष्टि गोचर होता है। यही कारण है कि आज जो समाज का रूप है, वह पहले नही था क्योकि समय के परिवर्तन ने जीवन के विभिन्न पक्षों को प्रभावित किया और समाज की प्रकृति ही बदल दी। यह परिवर्तन हम शिक्षा के भी क्षेत्र में देखते हैं। वास्तव में यदि शिक्षा को जीवन्त तथा समसमायिक बनाना है तो हमें उसमें रचनात्मक तथा नूतन प्रविधियों को स्थान देना होगा। तकनीकी, व्यावसायिक तथा वैज्ञानिक विषयों पर बल देते हुए नवीन विषय वस्तु तथा नवीन शिक्षण प्रविधियों को अपनाना होगा। वैश्विक स्तर पर हो रहे परिवर्तनों के प्रति जागरूक रहते हुए उसे शिक्षा में सम्मिलित करना होगा।कहने का आशय है कि आज परिवर्तन स्वरूप शिक्षा में जिन नूतन सिद्धान्तों, प्रवृत्तियों, उपागमो तथा प्रयोगों का आविर्भाव हुआ उन्हे शैक्षिक नवाचार कहते हैं। नवाचार शब्द नवीनता का परिचायक है जिसका तात्पर्य नवीन व्यवहार, नवीन आचरण तथा नवीन विधाओं के प्रयोग से होता है।

प्राथमिक शिक्षा के शब्दकोष में लिखा है कि "शिक्षा और शिक्षण में नए विचारों अथवा अभ्यासों का प्रयोग ही नवाचार है।"

युनेस्को में 1971 में हुए एक सम्मेलन के दस्तावेज के अनुसार "नवाचार एक नूतन विचार की शुरूआत है। यह एक प्रक्रिया या तकनीक है जिसका विस्तृत उपयोग प्रचलित व्यवहारों तथा तकनीकी के स्थान पर किया जाता है। यह परिवर्तन के लिए परिवर्तन नही है बल्कि इसका क्रियान्वयन और नियन्त्रण परीक्षण तथा प्रयोगों के आधार पर किया जाता है।"

ई0 एम0 रोजर्स के अनुसार "नवाचार एक ऐसा विचार है जिसमें व्यक्ति नवीनता का अनुभव करता है।"

एम0 बी0 माइल्स के शब्दों में "नवाचार जानबूझ कर किया जाने वाला नूतन एवं विशिष्ट परिवर्तन होता है जिसे किसी तन्त्र के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अधिक प्रभावी माना जाता है।"

एच0 जी0 वार्नेट के अनुसार "कोई विचार, व्यवहार या वस्तु जो नूतन है तथा वर्तमान स्थित प्रारूप से गुणात्मक दृष्टि से भिन्न है, उसे नवाचार कहते है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि शैक्षिक नवाचार –

- एक नवीन विचार है।
- वर्तमान स्थिति की तुलना में यह गुणात्मक तथा श्रेष्ठ होता है।
- यह वर्तमान शैक्षिक परिदृश्य में गुणात्मक सुधार लाने का एक सफल प्रयास है।
- इसमें विशिष्टता तथा प्रासंगिकता निहित होती है।
- यह जानबूझ कर किया जाने वाला एक नियोजित प्रयास है।
- यह नवीन विचारों का समुच्चय है।

सामाजिक अध्ययन के नूतन उपागम सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में नवीनता एवं रोचकता बनी रहे, इसके लिए शैक्षिक नवाचार के अन्तर्गत विविध नए–नए उपागम विकसित किए गए, जिनका विवरण निम्नलिखित है:–

9.3.1 शिक्षण अभ्यास

शिक्षार्थियों को कक्षा की वास्तविक दशाओं का अनुभव कराने हेतु शिक्षण अभ्यास की संरचना की जाती है जिसे शिक्षार्थी आध्ययन या शिक्षण अभ्यास कहते हैं। शिक्षण अभ्यास मूलतः दो प्रकार से किया जाता है :–

1) सूक्ष्म शिक्षण– शिक्षण प्रक्रिया को उन्नत करने के लिए सूक्ष्म शिक्षण एक महत्वपूर्ण नवाचार है जिसमें अल्प समय के लिए एक छोटे समूह पर किसी भी प्रकरण के संदर्भ में विभिन्न कौशलों का अभ्यास किया जाता है। इसे और अधिक हम निम्नलिखित शिक्षाशास्त्रियों द्वारा दी गयी परिभाषाओं के माध्यम से समझ सकते हैं :–

बी0 के0 पासी तथा शाह के शब्दों में "सूक्ष्म शिक्षण कक्षा के आकार, पाठ के आकार, शिक्षण समय एवं शिक्षण की जटिलता के सन्दर्भ में एक न्यूनीकृत अनुमाप की प्रक्रिया है"।

एलेन तथा ईव ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "सूक्ष्म शिक्षण नियन्त्रित अभ्यास की एक ऐसी व्यवस्था है जो किसी विशेष शिक्षण – व्यवहार और नियंत्रित दशाओं में अभ्यास शिक्षण पर केन्द्रित रहना संभव बनाती है।"

पेक तथा ठेकर के अनुसार "वीडियो टेप फीडबैक के प्रयोग से प्रमुख शिक्षण कौशलों के विकास को संक्षिप्त रूप से जानने के लिए सूक्ष्म शिक्षण प्रयोगात्मक प्रविधि का एक सम्प्रत्यय है।"

एलन तथा रियान (1968) ने सूक्ष्म शिक्षण के सन्दर्भ में निम्नलिखित विचार व्यक्त किए –

"यह एक वास्तविक शिक्षण है जो परम्परागत कक्षा शिक्षण की जटिलता को कम करता है। इसमें एक समय में केवल एक ही विशिष्ट कार्य को पूरा किया जाता है और शिक्षण अभ्यास को अधिक नियंत्रित रखा जाता है। इसमें प्रथम प्रयास के बाद प्राप्त परिणामों में परिशोधन तथा प्रतिपुष्ट की सुविधा प्राप्त होती है।"

इसके सम्प्रत्यय को हम स्टेन फोर्ड विश्वविद्यालय द्वारा व्यक्त विचारों से भी स्पष्ट कर सकते हैं जिसके अनुसार "सूक्ष्म शिक्षण अध्यापन, अभ्यास, कक्षा के आकार और कक्षा की अवधि में न्यूनीकृत अनुमाप है।"

(i) सूक्ष्म शिक्षण की विशेषताएँ –

- यह शिक्षण का एक सफल उपागम है जो कक्षा – शिक्षण की जटिलताओं को कम करता है।
- इसके माध्यम से शिक्षण प्रक्रिया को वैयक्तिक स्वरूप प्रदान किया जाता है।
- इसमें एक ही समय में केवल एक ही कौशल के प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है।
- इसके माध्यम से समय की बचत होती है।
- इसमें पृष्ठ पोषण (feed-back) को विशेष महत्व दिया जाता है।
- यह नियन्त्रित परिस्थितियों में शिक्षण कौशल प्राप्त करने की एक प्रविधि है।
- चूंकि इस शिक्षण में छोटी कक्षा, थोड़े शिक्षार्थी तथा छोटी पाठ योजना प्रयोग में लाई जाती है इसलिए इसके माध्यम से प्रशिक्षणार्थियों में आत्मविश्वास का भाव उत्पन्न होता है।
- सूक्ष्म शिक्षण प्रशिक्षणार्थियों को विद्यालय में जाने से पूर्व ही शिक्षण अभ्यास करवाती है।
- इस शिक्षण में अध्यापक एक परामर्शदाता की भूमिका निभाता है।

(ii) सूक्ष्म शिक्षण के पद –

सूक्ष्म शिक्षण के लिए निम्नलिखित पदों का अनुसरण किया जाता है –

- सैद्धान्तिक विवेचन– इस पद पर प्रशिक्षणार्थियों को विभिन्न शिक्षण कौशल का परिचय, परिभाषा, उद्देश्य, महत्व तथा सम्बन्धित कौशल में प्रवीणता प्राप्त कराने में सम्भव घटकों के सन्दर्भ में सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान किया जाता है।
- विशिष्ट शिक्षण – कौशल की विवेचना– इस पद में विभिन्न शिक्षण कौशल में से बारी – बारी विभिन्न शिक्षण कौशल का चयन करके उसे शिक्षण व्यवहारों के रूपं में परिभाषित करते हैं। साथ– साथ अपेक्षित उद्देश्यों को भी स्पष्ट किया जाता है।
- आदर्श पाठ का प्रस्तुतिकरण– तत्पश्चात पाठ से सम्बन्धित एक पाठ उदाहरण स्वरूप स्वंय अध्यापक पढ़ाता है अथवा वीडियो टेप के माध्यम से शिक्षार्थियों को दिखाया जाता है जिससे शिक्षार्थी विशिष्ट कौशलों को भली भांति अर्जन कर लें।
- पाठ की योजना– अध्यापक द्वारा उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किए गए शिक्षण के पश्चात शिक्षार्थी आध्यापक स्वंय शिक्षण हेतु एक 5 से 10 मिनट तक की अवधि के लिए किसी विशिष्ट कौशल पर आधारित एक पाठ योजना को बनाता है।
- शिक्षणः–शिक्षार्थी –ध्यापक बनाए गए पाठ योजना का शिक्षण करता है तथा प्राध्यापक द्वारा उसका निरीक्षण किया जाता है। कही–कहीं पर साथी अध्यापकों द्वारा भी निरीक्षण करने का प्रावधान रहता है। जबकि कुछ लोग प्रशिक्षणार्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए शिक्षण कार्य का वीडियो टेप भी बनवाते हैं।

- <u>प्रति–पुष्टि (**Feed-back**)</u>– शिक्षणोपरान्त शिक्षार्थी आध्यापक अपने निरीक्षक द्वारा की गई टिप्पणी को समझता है और उसके अनुरूप अपने शिक्षण में वांछनीय सुधार करता है। यदि उसके शिक्षण का वीडियो टेप किया गया हो तो वह स्वंय से उसे देखकर अपनी कमियों को दूर करने का प्रयास करता है।

- <u>पुनः पाठ योजना बनाना</u>– निरीक्षक की समीक्षा के आधार पर शिक्षार्थी आध्यापक पुनः पाठ योजना बनाता है जिससे कि वह पूर्व की कमी को दूर कर विशिष्ट कौशल में वांछित निपुणता हासिल कर सके।

- <u>पुनः शिक्षणः</u>–शिक्षार्थी –ध्यापक पुनः शिक्षण करता है। इस पद में वह पूर्व की गल्तियों अथवा त्रुटियों को सुधारता है।

- <u>पुनः.प्रति–पुष्टि (**Re-feed back**)</u>– इस बार भी निरीक्षक उसके शिक्षण का अवलोकन कर उसे पुनः प्रति–पुष्टि देता है। यदि शिक्षण के दौरान कोई कमी हो तो, अन्यथा वह (छात्राध्यापक) अगले कौशल की तरफ अग्रसर हो जाता है।

<u>उपरोक्त पदों को हम निम्नलिखित रूप में भी देख सकते हैं</u>–

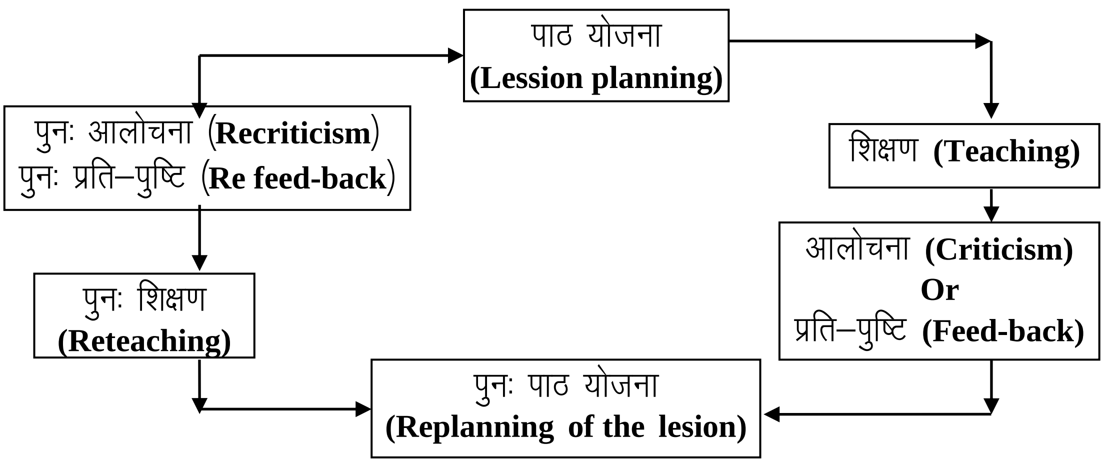

रेखाचित्र 9.3.1.1.1

(iii) <u>सूक्ष्म शिक्षण का समय अन्तराल</u>– अल्प समय में शिक्षण किए जाने के कारण इसे सूक्ष्म शिक्षण कहा जाता है। सम्पूर्ण पदों के निर्धारित समय में ही उस पद को व्यवहारिक रूप दिया जाता है। विभिन्न पदों के लिए निर्धारित समय अथवा अवधि निम्नलिखित प्रकार से है–

भारतीय प्रतिमान के अनुसार सूक्ष्म शिक्षण की कुल अवधि 36 मिनट होनी चाहिए जैसे–

शिक्षणः6 मिनट

आलोचना या प्रति–पुष्टि :6 मिनट

पुनः पाठ निर्माणः12 मिनट

पुनः शिक्षणः6 मिनट

पुनः आलोचना या प्रति–पुष्टि :6 मिनट

कुल अवधिः36 मिनट

स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के प्रतिमान के अनुसार इसकी अवधि 45 मिनट की होती है जैसेः–

शिक्षणः5 मिनट

आलोचना या प्रति–पुष्टि :10 मिनट

पुनः पाठ निर्माण:15 मिनट

पुनः शिक्षण:5 मिनट

पुनः आलोचना या प्रति–पुष्टि :10 मिनट

कुल अवधि:45 मिनट

(iv) सूक्ष्म शिक्षण के उद्देश्य–

- प्रशिक्षणार्थियों को अभ्यास पाठ की पूर्व तैयारी करवाकर निपुण बनाना।
- सूक्ष्म शिक्षण की सम्पूर्ण प्रक्रिया से प्रशिक्षणार्थियों को अवगत कराना।
- प्रशिक्षणार्थियों को इस बात का बोध कराना कि प्रभावशाली शिक्षण हेतु सूक्ष्म शिक्षण एक आवश्यक प्रक्रिया है।
- प्रशिक्षणार्थियों को प्रभावशाली शिक्षण हेतु वांछनीय विभिन्न कौशलों का ज्ञान कराना।
- उन्हे विभिन्न कौशलों के मूल घटकों से परिचित कराना।
- प्रशिक्षणार्थियों को शिक्षण प्रक्रिया के दौरान आने वाले अवांछनीय व्यवहारों को दूर करने में मदद करना।
- वास्तविक कक्षा शिक्षण की विभिन्न जटिलताओं तथा कठिनाईयों को कम करने हेतु शिक्षण के कार्य को कम अवधि में सम्पन्न कराना।
- प्रशिक्षणार्थियों को स्व मूल्यांकन के योग्य बनाना।
- पाठ को पूर्व नियोजित ढ़ंग से पूर्व योजना के साथ विस्तार देना।

(v) सूक्ष्म शिक्षण का महत्व–

- सूक्ष्म शिक्षण कक्षा शिक्षण से सम्बन्धित जटिलताओं को कम करता है।
- यह कम समय, कम शिक्षार्थी कम विषय वस्तु एवं कम शिक्षण व्यवहारों या क्रियाओं की प्रविधि है।
- सूक्ष्म शिक्षण में प्रशिक्षणार्थियों को स्व मूल्याकंन का अवसर प्राप्त होता है।
- यह प्रशिक्षणार्थियों में आत्मविश्वास के भाव को जागृत करने में सहायक है।
- प्रशिक्षण अवधि में यह विधि निदानात्मक और उपचारात्मक विधि का रूप ले लेती है।
- इस विधि में शिक्षार्थी स्वगति से सीखते हुए शिक्षण सम्बन्धी निपुणता को अर्जित करता है।
- इस शिक्षण का मुख्य आधार प्रति–पुष्टि है जो प्रशिक्षणार्थियों के ज्ञानार्जन में अत्यन्त सहायक है। क्योकि प्रति–पुष्टि के आधार पर प्रशिक्षणार्थी प्राप्त सुझावों एवं

टिप्पणियों पर अमल करते हुए उसमे वांछित सुधार लाता है।

- इस शिक्षण के माध्यम से वह सहायक सामग्रियों के प्रयोग तथा शिक्षण में उसकी उपयोगिता को भली भाति समझ लेता है।
- इसमे शिक्षार्थी आध्यापक का वस्तुनिष्ठ मूल्याकंन किया जाता है।

(vi) सूक्ष्म शिक्षण के दोष–

- इस शिक्षण में आवश्यकता से अधिक प्रशिक्षणार्थियों पर नियन्त्रण रखा जाता है जिसके कारण शिक्षण में स्वाभाविकता तथा वास्तविकता के स्थान पर कृत्रिमता आ जाती है।
- इसका मुख्य उद्देश्य प्रशिक्षणार्थियों में शिक्षण कौशल सम्बन्धित कुशलता तथा निपुणता का विकास करना है। परिणाम स्वरूप विषय वस्तु का सम्यक ज्ञान उपेक्षित रहता है।
- इस प्रविधि में समय का अपव्यय बहुत अधिक होता है क्योकि इसका चक्र तब तक चलता रहता है जब तक उन्हे कौशल सम्बन्धी ज्ञान पूर्ण रूप से नही हो पाता।
- चूंकि सूक्ष्म शिक्षण का सम्बन्ध भिन्न–भिन्न विद्यालयी विषयों के साथ होता है इसलिए हर विषय के लिए अलग–अलग कक्ष की आवश्यकता में भौतिक संसाधनों का अभाव होता है ।वहां पर इस शिक्षण के नियोजन एवं प्रबन्धन में समस्याएं आती है।
- प्रशिक्षक इस शिक्षण के प्रति उदासीनता रखते हुए इसके क्रियान्वयन में मात्र खानापूर्ति करते हैं।

परन्तु उपयफ्रक्त दोषों के बावजूद भी हम इसके महत्व को नही नकार सकते। क्योकि यह शिक्षण का प्रथम सोपान होता है जहां पर प्रशिक्षणार्थी कम अवधि के लिए छोटे समूह पर छोटी विषय वस्तु के साथ शिक्षण करना सीखते है। धीरे–धीरे इनमे न केवल आत्मविश्वास आता है वरन वे विभिन्न कौशलों में भी निपुणता हासिल कर लेते है और उनमे कालान्तर में शिक्षार्थी के बड़े समूह के समक्ष 35 से 40 मिनट तक शिक्षण कार्य करने की आदत विकसित होने लगती है। इस सन्दर्भ में बी0के0 पासी तथा एम0एच0 शाह का निम्नलिखित विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण है जिसके अनुसार "सूक्ष्म शिक्षण का प्रयोग निदानात्मक एवं उपचारात्मक साधन अथवा शिक्षण कौशलों के प्रशिक्षण के रूप में किया जाना चाहिए। इसे बृहद शिक्षण के विकल्प के रूप में कभी भी दावा नही करना चाहिए। यह एक पूरक उपागम के रूप में है। यह मितव्ययी है, सक्षम है लेकिन सब कुछ नही है।"

बोध प्रश्न

1) सूक्ष्म शिक्षण की किन्ही चार विशेषताओं को अंकित कीजिए।

____
____
____

2)शिक्षाथी आध्यापकों के लिए सूक्ष्म शिक्षण का क्या महत्व है ।

____
____
____

3) <u>सघन शिक्षण अभ्यास (**Block Teaching Practice**)</u>– शिक्षण – प्रशिक्षण कार्यक्रम में दो प्रकार के पाठ्यक्रम होते हैं पहला सैद्धान्तिक और दूसरा प्रयोगात्मक। सैद्धान्तिक विषय के अन्तर्गत प्रशिक्षणार्थियों को ऐसे विषयों का अध्ययन कराया जाता है जिनके माध्यम से वह शिक्षण सम्बन्धित विभिन्न ज्ञान का अर्जन करता है जबकि प्रयोगात्मक पाठ्यक्रम का सम्बन्ध शिक्षण से सम्बन्धित विभिन्न कौशलों के अर्जन से होता है। जब प्रशिक्षणार्थियों को शिक्षण कार्य करवाया जाता है तो प्रशिक्षण संस्थाओं में सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम को स्थगित कर दिया जाता है और प्रशिक्षणार्थियों को अपने प्राध्यापकों के मार्ग निर्देशन में करीब के विद्यालय जा कर शिक्षण कार्य करना होता है। इस दौरान उन्हे न केवल वास्तविक शिक्षण का अनुभव प्राप्त होता है वरन शिक्षार्थियों के सम्पक्र में आने से उन्हे शिक्षण सम्बन्धित विभिन्न व्यावहारिक तथ्यों का ज्ञान तथा विद्यालयी क्रिया – कलापों से परिचित होने का अवसर भी प्राप्त होता है। इस प्रकार प्रशिक्षणार्थियों का विद्यालयों में जाकर नियमित रूप से शिक्षण अभ्यास करना ही सघन शिक्षण अभ्यास कहलाता है। इस दौरान इन्हे विद्यालय के अन्य शिक्षकों के सम्पक्र में रहने से शिक्षण सम्बन्धित कई अनुभवों के अर्जन का अवसर प्राप्त होता है। सघन शिक्षण अभ्यास के अन्तर्गत इण्टर्नशिप कार्यक्रम भी होता है जिसमें प्रशिक्षणर्थियों को विद्यालय के पूर्ण कालिक शिक्षक के उत्तरदायित्व का निर्वाह करना होता है। इस कार्यक्रम में उन्हे अध्यापक के सभी कार्य जैसे प्रार्थना कार्यक्रम का संचालन, पाठ्य सहगामी प्रवृत्तियों की योजना बनाना, उनका प्रबन्धन तथा क्रियान्वयन करना, विद्यालय के विभिन्न प्रकार के लेख तथा अभिलेख तैयार करना तथा उनका रख – रखाव करना आदि करने होते हैं। यह कार्यक्रम प्रशिक्षणार्थियों को शिक्षक के वास्तविक जीवन से परिचित कराता है।

i)सूक्ष्म शिक्षण तथा अभ्यास शिक्षण में अन्तर– समय, कौशल,शिक्षार्थी की संख्या तथा विषय वस्तु की मात्रा के आधार पर वर्गीकृत शिक्षण के दोनो स्वरूप सूक्ष्म शिक्षण तथा अभ्यास शिक्षण में निम्नलिखित अन्तर हैः–

सूक्ष्म शिक्षण	अभ्यास शिक्षण
यह कौशल प्रधान होता है।	यह विषय वस्तु प्रधान है।
इसके अन्तर्गत एक समय में केवल एक ही कौशल का अभ्यास किया जाता है	इसमें एक समय में कई कौशलों का प्रयोग किया जाता है।
इसमें कक्षा की अवधि समान्यतया 6–7 मिनट तक होती है।	इसमें कक्षा की अवधि 30 से 40 मिनट तक होती है।
सूक्ष्म शिक्षण में शिक्षण के उपरान्त शिक्षार्थियों को प्रति–पुष्टि (feed back) प्रदान किया जाता है।	जबकि अभ्यास शिक्षण में शिक्षण के उपरान्त अध्यापक द्वारा निर्देशन देने की व्यवस्था होती है।
यह वास्तविक शिक्षण की पूर्व तैयारी है।	इसकी सफलता सूक्ष्म शिक्षण पर निर्भर करती है अर्थात शिक्षार्थी आध्यापक जितनी अधिक दक्षता कौशलों में अर्जित कर लेगा, उसका शिक्षण अभ्यास उतना ही अधिक प्रभावशाली माना जायगा।
यह शिक्षण शिक्षार्थियों के छोटे से समूह से सम्बन्ध रखता है।	जबकि अभ्यास शिक्षण का सम्बन्ध पूरी कक्षा से होता है।

बोध प्रश्न

1) सूक्ष्म शिक्षण की प्रकृति अभ्यास शिक्षण से किस प्रकार भिन्न है ।

____
____
____
____

ii) शिक्षण कौशलः– सूक्ष्म शिक्षण तथा शिक्षण अभ्यास के दौरान विषय वस्तु के साथ साथ शिक्षण कौशल पर सर्वाधिक बल दिया जाता है। अतएव सन्दर्भतः शिक्षण कौशलों पर भी संक्षिप्त चर्चा आपके लिए आवश्यक है।

डा0 वी के पासी के अनुसार "शिक्षण कौशल शिक्षार्थियों के सीखने के जिए सुगमता प्रदान करने के विचार से सम्पन्न की गई सम्बन्धित शिक्षण क्रियाओं या व्यवहारों का समूह है।"

आर0 ए0 शर्मा के शब्दों में "अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति का साधन शिक्षण कौशल है।"

एन0 एल0 गेज के अनुसार "शिक्षण कौशल वह विशिष्ट अनुदेशन प्रक्रिया है जिसे अध्यापक अपने कक्षा शिक्षण में प्रयोग कर सकता है। यह शिक्षण क्रम की विभिन्न क्रियाओं से सम्बन्धित होता है, जिन्हे शिक्षक अपनी कक्ष अन्तः क्रियाओं में लगातार प्रयुक्त करता है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि शिक्षण कौशल :–

- मुख्य उद्देश्य शिक्षार्थी आध्यापकों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन करना है।
- इसकी सफलता शिक्षण युक्तियों के सफल प्रयोग पर निर्भर करती है।
- इसके लिए पूर्व निश्चित् उद्देश्यों का होना आवश्यक है।
- इसमें भिन्न भिन्न कार्यों का विश्लेषण निहित है।
- इसमें कार्यों के अनुसार अलग अलग संरचनाएं तैयार की जाती हैं।
- इनका विकास शैक्षणिक उद्देश्यों के अनुरूप किया जाता है।
- इसमें शिक्षार्थी आध्यापक/अध्यापक को पूर्ण स्वतन्त्रता होती है।
- यह पाठ विकास या प्रस्तुतीकरण की एक सामान्यीकृत योजना है।

शिक्षण कौशल की विशेषताएँः–

- शिक्षण कौशल शिक्षण प्रक्रियाओं तथा व्यवहारों से सम्बन्धित होते हैं।
- शिक्षण कौशल कक्षा शिक्षण व्यवहार की इकाई से सम्बन्धित होते हैं।
- शिक्षण कौशल शिक्षा के विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं।
- शिक्षण कौशल शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाते हैं।

- शिक्षण कौशल के माध्यम से विषय वस्तु शिक्षार्थियों को सरलतापूर्वक सिखाया जाता है।
- शिक्षण कौशल अन्तः क्रिया को सक्रिय बनाया जाता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शिक्षण कौशल, शिक्षक के हाथ में वह शस्त्र है जिसका प्रयोग करके शिक्षक अपनी कक्षा में शिक्षण को प्रभावशाली तथा सक्रिय बनाता है तथा कक्षा की अन्तःक्रिया में सुधार लाने का प्रयास करता है।

प्रमुख शिक्षण कौशल–यूँ तो शिक्षण कौशल की संख्या के सन्दर्भ में विद्वानों के भिन्न – भिन्न मत है जैसे डॉ0 कुलश्रेष्ठ, डॉ0 मिश्रा, डॉ0 ममगाइन ने 15 तथा प्रो0 डा0 एलन तथा प्रो0 के रायन ने इनकी संख्या 14 बताई। परन्तु वास्तविकता यह है कि किसी भी सूक्ष्म शिक्षण परिस्थिति में इनकी संख्या घट – बढ़ सकती है और सभी कौशल एक प्रभावशाली शिक्षण के लिए आवश्यक होते है। जैसे–

(1) उद्देश्य लेखन कौशल– अर्थात शिक्षण सम्बन्धित उद्देयों को व्यावहारिक शब्दावलियों में लिखना। जिसके लिए आर0 सी0 ई0 एम0 उपागम के विविध कार्य परक सूचियों (Action verb) का प्रयोग किया जाता है जिसकी विस्तृत विवेचना तथा लेखन कौशल का वर्णन इकाई संख्या–3 में की जा चुकी है।

(2) प्रस्तावना कौशल– जिसमें शिक्षार्थियों के पूर्व ज्ञान को वर्तमान में पढ़ाए जाने वाले ज्ञान से जोड़ कर शिक्षार्थियों को नये ज्ञान के अर्जन हेतु तत्पर और प्रेरित किया जाता है।

(3) प्रश्न प्रेषण कौशल – प्रश्नो का पूछना भी एक कला होती है जिसमें कुछ बातों को विशेष रूप से ध्यान में रखा जाता है जैसे –

- प्रश्न संक्षिप्त एवं उद्देश्य पूर्ण होने चाहिए।
- प्रश्न सीधे तथा सटीक होने चाहिए।
- प्रश्न व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध होने चाहिए।
- प्रश्न का उत्तर हां अथवा नही में देने वाले नही होने चाहिए।
- प्रश्न नकारात्मक रूप में नही होने चाहिए।
- प्रश्नो का कक्षा में समान वितरण होना चाहिए।

शिक्षण अभ्यास में इन्ही कौशलों का विकास शिक्षार्थी आध्यापकों में किया जाता है।

(4) अनुशीलन प्रश्न कौशल –इसमें खोजक या अनुशीलन प्रकार के प्रश्न पूछकर अध्यापक शिक्षार्थियों के ध्यान को पाठ की तरफ आकर्षित करता है और उन्हे अधिगम हेतु अभिप्रेरित करता है। इस कौशल के प्रमुख घटक निम्न लिखित है–

- शिक्षार्थियों को संकेत देकर उन्हे सही उत्तर देने के लिए प्रेरित करना।
- विस्तृत सूचना प्राप्ति अर्थात शिक्षार्थी द्वारा अधूरा उत्तर देने पर उसे सही उत्तर देने हेतु प्रेरित करना।
- पुनः केन्द्रीयकरण अर्थात पूर्ण उत्तर प्राप्त करने के बाद प्राप्त ज्ञान को नवीन विषय वस्तु से जोड़ना।

- पुनः प्रेषण अर्थात शिक्षक द्वारा एक ही प्रश्न को कई शिक्षार्थियों से पूछना।
- आलोचनात्मक सजगता अर्थात सही उत्तर पाने के बाद शिक्षार्थियों से उत्तर की सार्थकता बताने के लिए कहना।

(5) <u>व्याख्या कौशल</u> – यह कौशल शिक्षार्थी आध्यापकों का वह व्यवहार समूह है जिसके द्वारा किसी सम्प्रत्यय, सिद्धान्त, नियम, परिभाषा, पद, विधि – प्रविधि तथा संरचना आदि को भलीभांति समझाने के लिए अन्तः सम्बन्धित एवं अन्तः आश्रित कथनों का प्रयोग किया जाता है। व्याख्या करते समय भी कुछ बातों को विशेष रूप से ध्यान में रखा जाता है जैसे –

- प्रारम्भिक कथनों का स्पष्टता से प्रयोग
- भाषा में प्रवाह
- उपयुक्त शब्दों का चयन
- कथनों में तारतम्यता होना
- असम्बद्ध कथनों की अनुपस्थिति
- विचारों को परस्पर जोड़ने वाले शब्दों का प्रयोग
- शिक्षार्थियों के बोध के परीक्षण हेतु बीच बीच में पूछे गए प्रश्न

शिक्षण अभ्यास के दौरान शिक्षार्थी आध्यापकों को उपर्युक्त बातो अथवा तत्वों को अवश्य ध्यान में रखना चाहिए और इन्ही बातों का अभ्यास करते–करते शिक्षार्थी आध्यापक व्याख्या कौशल का अर्जन करते हैं।

(6) <u>उद्दीपन परिवर्तन कौशल</u>– शिक्षार्थियों के ध्यान को पाठ की तरफ केन्द्रित करने के लिए शिक्षार्थी आध्यापक द्वारा अपने व्यवहार में जानबूझ कर किया गया परिवर्तन, उद्दीपन परिवर्तन कौशल कहलाता है। इस कौशल के प्रमुख तत्व अथवा घटक, जिन पर शिक्षार्थी आध्यापकों को कुशलता एवं निपुणता हासिल करनी है, निम्नलिखित हैः–

- शरीर संचालन अर्थात एक स्थान पर खड़े होकर नही वरन शरीर संचालन के साथ शिक्षण करना।
- हाव.भाव, मुख मुद्रा, आँखो व हाथों के संकेत।
- स्वर में उतार चढ़ाव।
- भाव केन्द्रीयकरण अर्थात किसी विशेष बिन्दु पर अधिक बल का केन्द्रीकरण करके शिक्षार्थियों का ध्यान आकर्षित करना।
- छात्र शिक्षक अन्तःक्रिया में परिवर्तन।
- कुछ कथनों के बाद मौन विराम देना।
- श्रव्य – दृश्य क्रम परिवर्तन।
- शिक्षार्थियों का सहयोग।

प्रभावशाली शिक्षण हेतु उपयफ्रक्त कौशल का प्रयोग अनिवार्य रूप से करना चाहिए।

(7) पुनर्बलन कौशल– पुनर्बलन का अभिप्राय ऐसे उद्दीपनों का प्रयोग करना जिनसे किसी अनुक्रिया के होने की आशा बढ़ जाती है। यह दो प्रकार का होता हैः–

(i) धनात्मक पुनर्बलन अर्थात इसका प्रयोग शिक्षार्थियों के वांछित व्यवहारों को प्रबल बनाने के लिए किया जाता है।

(ii) ऋणात्मक पुनर्बलन जिसके द्वारा शिक्षार्थियों के गलत या अवांछित व्यवहारों को दूर करने का प्रयास किया जाता है।

विभिन्न शोधों के माध्यम से यह प्रमाणित हो चुका है कि ऋणात्मक पुनर्बलन की तुलना में इस कौशल में निपुणता हासिल करने के लिए शिक्षार्थी आध्यापकों को इसके निम्नलिखित घटकों को व्यवहार मे लाना होगाः–

- प्रशंसात्मक कथनों का प्रयोग।
- हावभाव तथा अन्य अशाब्दिक संकेतो का प्रयोग।
- शिक्षार्थियों के भावों तथा विचारों से अपनी सहमति प्रकट करना।
- नकारात्मक शब्दिक तथा अशाब्दिक कथनों का प्रयोग।
- शिक्षार्थियों के सही उत्तर को श्यामपट्ट पर लिखना।
- पुनर्बलन का समुचित उपयोग।

(8) दृष्टान्त कौशल– शिक्षण के दौरान बहुत से ऐसे सिद्धान्त, नियम या प्रत्यय होते हैं जिन्हे मात्र व्याख्यान के द्वारा नही वरन चित्रों, उदाहरणों तथा विभिन्न दृष्टान्तों के माध्यम से स्पष्ट किया जाता है। कहने का तात्पर्य है कि चूंकि यह कौशल जटिल सम्प्रत्ययों तथा अमूर्त ज्ञान को सरल, सहज तथा बोधगम्य बनाने में मदद करता है इसलिए इसके प्रयोग में निपुणता का होना अति आवश्यक है। यही कारण है कि शिक्षार्थी आध्यापकों को इस कौशल में पारंगत होना चाहिए। जिसके लिए उसे निम्नलिखित घटकों को व्यवहार में लाना चाहिए–

- आगमन तथा निगमन उपागम का प्रयोग।
- सरल तथा रोचक उदाहरणों का प्रयोग।
- सार्थक उदाहरणों का प्रयोग।
- शिक्षार्थियों से उसी प्रकार के अन्य उदाहरणों का प्रस्तुतिकरण।

(9) कक्षा–कक्ष प्रबन्ध कौशल– कक्षा कक्ष प्रबन्ध कौशल शिक्षक के ऐसे व्यवहार हैं जिनके द्वारा शिक्षक प्रभावशाली शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया हेतु उचित कक्षा वातावरण उत्पन्न करने तथा शिक्षार्थियों के व्यवहारों को नियन्त्रित करते हुए उनका ध्यान विषय वस्तु की ओर आकर्षित करता है तथा कक्षा के अन्त तक उसे बनाए रखता है।

इस कौशल पर स्वामित्व प्राप्त करने के लिए वह निम्नलिखित घटकों / तत्वों को व्यवहार में लाता हैः–

- अधिगम को रोचक तथा उद्देश्यपूर्ण बनाना।
- शिक्षार्थियों को उद्देश्यों की प्रप्ति हेतु प्रेरित करना।
- निर्देशों की स्पष्टता।
- वांछित व्यवहारों का पुनर्बलन।
- अनुशासनहीनता पर नियन्त्रण।

(10) श्यामपट्ट कौशल– श्यामपट्ट, कक्षा शिक्षण में एक दृश्य साधन के रूप में सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाला उपकरण है। शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया में श्यामपट्ट को अध्यापक का सबसे अच्छा मित्र माना जाता है। शिक्षण को सफल तथा प्रभावशाली बनाने के लिए शिक्षार्थी आध्यापकों में श्यामपट्ट कौशल का विकास नितान्त अनिवार्य होता है जिसके लिए उसे निम्नाकिंत बातों पर विशेष रूप से अमल करना चाहिए यथा–

- श्यामपट्ट कार्य की उपयुक्तता।
- लेखनी में स्पष्टता।
- श्यामपट्ट कार्य में स्वच्छता।
- महत्वपूर्ण बातों का रेखाकंन।
- श्यामपट्ट बातों का रेखाकंन।
- श्यामपट्ट पर प्रदर्शित चित्र तथा रेखाचित्र की स्पष्टता तथा बोधगम्यता।

चूंकि श्यामपट्ट के प्रयोग से शिक्षार्थियों की लगभग 80% धारणा शक्ति में वृद्धि होती है अतएव इस कौशल के विकास पर विशेष बल देना चाहिए।

(11) श्रव्य – दृश्य साधन उपयोग कौशल– ये साधन शिक्षण को अत्यधिक रूचिकर, बोधगम्य तथा प्रभावशाली बनाते हैं। साथ – साथ शिक्षार्थियों के ध्यान को आकर्षित कर उन्हे अधिगम हेतु भी अभिप्रेरित करते हैं। अतएव शिक्षण में इस कौशल में भी पारंगत होना अनिवार्य है। यही कारण है कि प्रशिक्षण अवधि में शिक्षार्थी आध्यापकों को इस कौशल में भी निपुण किया जाता है जिसके अभ्यास हेतु उन्हे निम्नलिखित घटकों अथवा तत्वों को ध्यान में रखना पड़ता हैः–

- श्रव्य – दृश्य साधनों की स्पष्टता, सरलता, संक्षिप्तता, वास्तविकता तथा कक्षा की आकार के अनुरूप पर्याप्त बड़े।
- श्रव्य – दृश्य साधनों की अर्थपूर्णता, रोचकता तथा प्रभावशीलता।
- शिक्षार्थियों के ध्यानाकर्षण तथा अभिप्रेरित करने में सहायक।
- शिक्षार्थियों की समीक्षात्मक चिन्तन के प्रोत्साहन में सहायक।
- श्रव्य – दृश्य साधनों के प्रयोग की उपयुक्तता।

क्रिया कलाप–

शिक्षण कौशलों की आवश्यकता पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

____
____
____
____

9.3.2 अभिरूपित शिक्षण या अनुकरणीय शिक्षण (**Simulation Teaching**)

इसका विकास कुक शैंक (Cruick Shank) ने 1968 में शिक्षण प्रशिक्षण के ळिए किया था। अभिरूपित शिक्षण का अभिप्राय शिक्षण अभ्यास से पूर्व प्रशिक्षणार्थियों के समक्ष प्रशिक्षण प्राध्यापक द्वारा कौशल आधारित पाठ का प्रदर्शन करना तथा तत्पश्चात प्रशिक्षणर्थियों द्वारा इस शिक्षण का अनुकरण कर स्वयं सूक्ष्म शिक्षण अभ्यास करना है।दूसरे शब्दों में कृत्रिम परिस्थतियों में प्रशिक्षणार्थियों द्वारा कुछ विशेष व्यवहार आरोपित करना ही अनुकरणीय अथवा अभिरूपित शिक्षण है। इसे परिभषित करते हुए टेनस तथा अनाविन ने कहा है कि "अनुकरणीयता को सादृश्य की संज्ञा दी जा सकती है क्योकि इसमें वास्तविकता का आभास है।"

सन्तोष मित्तल के अनुसार "अनुकरणीय शिक्षण काल्पनिक, परन्तु सत्य लगने वाला कृत्रिम रूप में निर्मित शिक्षण होता है जिसके सहारे प्रशिक्षणार्थियों में वास्तविक घटना का सामना करने की क्षमता पैदा की जाती है।"

फिक "अनुकरणीयता वास्तविकता का नियंत्रित प्रतिनिधित्व करती है।"

क्रुक शैंक, जो इस शिक्षण के जनक माने जाते हैं, ने अनुकरणीय शिक्षण के पाँच बिन्दु बताए हैं –

- अनुकरण शिक्षार्थी आध्यापकों की साधारण एवं गहन समस्याओं को हल करने के बहुत से अवसर प्रदान करता है।
- अनुकरण शिक्षण विधि में कम खर्च में शिक्षार्थी आध्यापकों को अच्छा वातावरण उपलब्ध करवाया जा सकता है।
- इस विधि में कम समय में ऐसे अवसर उपलब्ध कराए जा सकते हैं जिनमें उन्हे निर्णय लेना होता है।
- अनुकरण विधि से शिक्षार्थी आध्यापकों को विद्यालय का विविध वातावरण उपलब्ध कराया जा सकता है।
- इस विधि से तुरन्त प्रति–पुष्टि की सुविधा उपलब्ध है।

9.3.2.1 अनुकरणीय शिक्षण का स्वरूप

इस शिक्षण में प्रशिक्षणार्थी शिक्षार्थी तथा अध्यापक दोनो की ही भूमिकाओं का वहन करते हैं अर्थात जब एक प्रशिक्षणार्थी शिक्षक की भूमिका का निर्वाह करता है तो शेष शिक्षार्थी की भूमिका में रहते हैं और एक एक करके समस्त प्रशिक्षणार्थी छोटे छोटे प्रकरणों को लेकर 5–10 मिनट के कालांश में शिक्षण कार्य करते हैं। यह शिक्षण विशिष्ट कौशल केन्द्रित होता है। शिक्षणोंपरान्त निरीक्षक प्राध्यापक द्वारा प्रति–पुष्टि प्रदान की जाती है जिससे प्रशिक्षणार्थी अपने शिक्षण में वांछित सुधार ला सके।

प्रायः लोग सूक्ष्म शिक्षण तथा अनुकरणीय शिक्षण को एक दूसरे का पर्याय मानते हैं। जबकि वस्तुस्थिति यह है कि दोनो शिक्षण में थोड़ी भिन्नता है । या यूँ कह सकते हैं कि प्राध्यापक द्वारा उसका अनुकरण कर शिक्षण करना सूक्ष्म शिक्षण है। दोनो में व्याप्त समानताएं तथा विषमताओं को हम निम्नलिखित तालिका के माध्यम से देख सकते हैं:–

समानताएं/विषमताएं	घटक	सूक्ष्म शिक्षण	अभिरूपित शिक्षण
समानताएं	समय	5 से 10 मिनट तक	5 से 10 मिनट तक
	कक्षा का आकार	5 से 10 संख्या में शिक्षार्थी आध्यापक	5 से 10 संख्या में शिक्षार्थी आध्यापक
	प्रकरण	सूक्ष्म अथवा छोटा प्रकरण	सूक्ष्म अथवा छोटा प्रकरण
	निरीक्षण कार्य	विषय विशेषज्ञ द्वारा	विषय विशेषज्ञ द्वारा
	अवलोकन	विषय विशेषज्ञ तथा शिक्षार्थी आध्यापक के समकक्ष समूह के द्वारा	विषय विशेषज्ञ तथा शिक्षार्थी आध्यापक के समकक्ष समूह के द्वारा
	प्रति.पुष्टि	कक्षा में उपस्थित उपरोक्त दोनो के माध्यम से	कक्षा में उपस्थित उपरोक्त दोनों के माध्यम से
	शिक्षण कौशल की संख्या	एक समय में एक ही शिक्षण कौशल का अभ्यास	समस्त शिक्षण कौशलों का एक साथ अभ्यास
विषमताएं	अवलोकन सूची	समकक्ष समूह में से एक एक शिक्षार्थी आध्यापक द्वारा अवलोकन सूची का प्रयोग तथा उसकी रिक्तियों को शिक्षण के अनुरूप भरना	अनुरूपित शिक्षण में ऐसा कोई भी उपकरण प्रयुक्त नही किया जाता

9.3.2.2 अभिरूपित शिक्षण का महत्व

- यह शक्षार्थियों में शिक्षण कौशल के स्वाभाविक विकास तथा उसमें निपुणता हेतु अत्यन्त उपयोगी है।
- इसमें प्रशिक्षणार्थियों को पूर्व अभ्यास का अवसर प्रदान किया जाता है। इससे उनमें वांछित व्यवहार का विकास होता है और अपेक्षित व्यवहार परिमार्जन की संभावना प्रबल रहती है।
- इस शिक्षण से उन्हे कक्षा की वास्तविक परिस्थिति से अनुभव करने का अवसर प्राप्त होता है।
- छात्राध्यापकों में अपने विषय वस्तु को क्रमबद्ध तथा सुव्यवस्थित ढ़ंग से प्रस्तुत करने का अभ्यास हो जाता है।

- छात्राध्यापकों को अभ्यास करते करते शिक्षण में आत्म विश्वास आ जाता है।
- यह शिक्षण समय तथा धन की दृष्टि से किफायती होती है।

बोध प्रश्न

5) अभिरूपित शिक्षण के आशय को स्पष्ट कीजिए ।

____
____
____
____

6) अभिरूपित शिक्षण का आपके लिए क्या महत्व है? अपने शब्दों में लिखिए।

____
____
____
____

9.3.3 अभिक्रमित अनुदेशन

अभिक्रमित अनुदेशन शैक्षिक नवाचार का वह माध्यम है जिसमें अध्यापक पाठ्य सामग्री को छोटे छोटे पदों में विभाजित कर श्रृंखलाबद्ध कर शिक्षार्थियों के सम्मुख क्रमानुसार प्रस्तुत करता है। यह पूरी तरह वैयक्तिक अनुदेशन की प्रक्रिया है। यह अनुदेशन शिक्षार्थियों को ज्ञान प्रदान करने का एक प्रभावशाली तरीका है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में यह नूतन प्रयोगों का प्रतिनिधित्व करता है। एक पूर्ण रूप से व्यवस्थित तथा वैयक्तिक अनुदेशनात्मक प्रविधि के रूप में यह न केवल प्रभावपूर्ण कक्षा शिक्षण के लिए अत्यन्त लोकप्रिय हुआ वरन इसके माध्यम से स्वाध्याय, स्व शिक्षण और पत्राचार पद्धति से भली भांति पढ़ना और पढ़ाना भी अत्यन्त सहज और सरल हो गया है। इस अनुदेशन का विस्तृत विवरण इकाई संख्या 8 में दिया जा चुका है।

9.3.4 समूह शिक्षण

समूह शिक्षण भी सामाजिक अध्ययन के शिक्षण और अधिगम हेतु एक नवीन प्रविधि है। शिक्षण की यह प्रविधि शिक्षार्थियों में सहयोग, एक दूसरे के प्रति आदर एवं सम्मान का भाव, एक दूसरे के विचारों का सम्मान तथा अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, सामाजिक गुणो, कौशलों तथा निपुणता का विकास करती है। यही कारण है कि सामाजिक अध्ययन हेतु यह प्रविधि अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

त्यागी के अनुसार "समूह शिक्षण एक ऐसी शैक्षणिक परिस्थिति है जिसमें शिक्षण कौशल से सम्पन्न दो या अधिक शिक्षक शिक्षार्थियों के एक समूह के लिए परस्पर सहयोग से तथा शिक्षण की विभिन्न परिस्थितियों के लिए उपयोगी, लचीली, समय विभाजन एवं समूह युक्तियों का प्रयोग करते हुए नियोजन एवं शिक्षण कार्य करते हैं।"

माथुर ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "यह ऐसी व्यवस्था है जिसमें दो या अधिक अनुभवी शिक्षक एक ही विद्यार्थियो के समूह को शिक्षण देने का उत्तरदायित्व ले लेते हैं तथा समूह के आकार तथा शिक्षण विधि में शिक्षण कार्य के उस समय के उद्देश्य तथा विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन ले

आते हैं।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि यह शिक्षण – संगठन का एक रूप है। इसका मुख्य आधार सहयोग के आधार पर शिक्षण करना है जिसमें िविषयवस्तु तथा शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं को समझ कर नियोजन पूर्वक शिक्षण प्रक्रिया का संचालन किया जाता है। इसका विस्तृत अध्ययन आप इकाई संख्या 6 में कर सकते हैं।

9.3.5 दूरस्थ शिक्षण

इस सम्प्रत्यय का विकास जन जन तक शिक्षा की सर्वसुलभता के उद्देश्य से हुआ। ऐसे शिक्षार्थी जिनका औपचारिक रूप से शिक्षा प्राप्त करने के लिए शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश नही हो पा रहा है अथवा वे नियमित रूप से विद्यालय जाने में असमर्थ हैं, उनके लिए इस शिक्षा का विकल्प प्रस्तुत किया गया। अपने लचीले स्वरूप तथा निश्चित् उद्देश्य के कारण दूरस्थ शिक्षा को शिक्षा के नि–रौपचारिक स्वरूप के अन्तर्गत रखा जाता है जिसका उद्देश्य शिक्षार्थियों की सुविधा के अनुसार उन्हे नि–रौपचारिक ढ़ंग से शिक्षा प्रदान करना।

यह शिक्षा की एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें शिक्षक तथा शिक्षार्थी के मध्य आमने सामने बैठ कर शिक्षण की प्रक्रिया नही होती वरन शिक्षार्थी अपने स्थान पर बैठ कर अपनी सुविधा के अनुसार शिक्षा प्राप्त करता है। इसमे शिक्षक शारीरिक रूप से उपस्थित न होकर विभिन्न अध्ययन सामग्री (Study material) के माध्यमों से भी विषय वस्तु का बोध करता है। यह शिक्षा अंशकालिक तथा शिक्षार्थियों के अपने अधिगम सुविधा पर आधारित होती है।

शाब्दिक दृष्टिकोण से यदि देखा जाए तो दूरस्थ शिक्षा का अभिप्राय ऐसी शिक्षा से है जो दूर से प्रदान की जाए। शिक्षा जगत में दूरस्थ शिक्षा एक नया अध्याय है। इसे घर बैठे शिक्षा भी कहा गया है। दूरस्थ शिक्षा की निम्नलिखित परिभाषाऐं इसके सम्प्रत्यय को और अधिक स्पष्ट करेंगी –

स्वप्न बोरा के अनुसार "यह शिक्षण की एक विधि है, जिसमें अध्यापक का यह उत्तरदायित्व होता है कि वह उन शिक्षार्थियों को, जिन्हे शाब्दिक रूप में अथवा मौखिक रूप में अनुदेशन प्राप्त नही है, जो सुदूर स्थानों पर व्यक्तिगत परिस्थितियों के कारण रह रहे हैं और अध्ययन करना चाहते हैं, उन्हे ज्ञान व कौशल प्राप्त कराएं।"

मूर (**Moore**) के अनुसार " दूरस्थ शिक्षा, अनुदेशन विधियों का परिवार है जिसमें अधिगम व्यवहार, शिक्षण व्यवहार के साथ सम्पन्न किया जाता है। अध्यापक और शिक्षार्थी के मध्य सम्प्रेषण छपी हुई सामग्री, इलेक्ट्रानिक, मैकेनिकल या दूसरे अन्य उपायों द्वारा किया जाता है।"

डोहमेन (**Dohmaen**) के शब्दों में "दूरस्थ शिक्षा एक स्वयं अध्ययन की क्रमबद्ध एवं संगठित रूप है जिसमें शिक्षार्थी निर्देशन एवं सलाह, अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरण और शिक्षार्थियों की सफलता का निरीक्षण आदि उत्तरदायित्व अध्यापक मण्डल द्वारा किए जाते हैं। ये सुदूर से सम्भव की जा सकती है, जिसमें मीडिया का प्रयोग करके लम्बी दूरी को कवर (**Cover**) कर लिया जाता है।"

अन्ततः हम कह सकते है कि –

- यह नि–रौपचारिक शिक्षा का एक रूप है।
- इसमें छात्र को अपने शिक्षक के समक्ष उपस्थित होकर शिक्षा ग्रहण नही करनी पड़ती वरन वह छपी अध्ययन सामग्री, यान्त्रिक एवं इलेक्ट्रानिक साधनों एवं माध्यमों जैसे – पत्र, समाचार, फिल्मे, रेडियों, टी0 वी0, कम्प्यूटर आदि के द्वारा वह अधिगम करता है। इस शिक्षा में शिक्षार्थी तथा अध्यापक आमने सामने बैठकर पढ़ने – पढ़ाने की औपचारिकताओं के बन्धन से मुक्त होते हैं।

यह एक स्व – अधिगम की विधि है जिसमें शिक्षार्थी स्वयं के प्रयासों से सीखता है। यह शिक्षा शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं, उनके स्तर तथा समय का ध्यान रखती है तथा शिक्षार्थी विषय वस्तु का चयन अपनी योग्यता, क्षमता तथा रूचि के अनुसार करते हुए अधिगम करता है।

9.3.5.1 दूरस्थ शिक्षण के विभिन्न रूप

दूरस्थ शिक्षा वर्तमान समय में अनेक रूपों में प्रचलित है जैसे – पत्राचार कार्यक्रम, रेडियों तथा दूरदर्शन के विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रम, मुक्त विद्यालय तथा मुक्त विश्वविद्यालय जो शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम सहित समस्त प्रकार की शिक्षा शिक्षार्थियों को अपने पाठ्यक्रम की मान्यतानुसार प्रदान करते हैं।

9.3.5.2 दूरस्थ शिक्षण का विकास तथा उसका कारण

वास्तव में दूरस्थ शिक्षा का विकास 19वी शताब्दी में डाक पद्धति के विकास के साथ माना जाता है जब सूचनाएं दूसरों तक पहुंचाना सरल हो गया था। सर्वप्रथम इस शिक्षा की शुरूआत इंग्लैण्ड में हुई। कालांतर में जर्मनी, स्वीडन, अमेरिका, रूस, न्यूज़ीलैंड ऑस्ट्रेलिया तथा जापान जैसे देशों ने भी इस शिक्षा को अंगीकृत किया। भारत में यदि इसके प्रारम्भ की दिशा को देखा जाए, तो स्वतन्त्रता के पश्चात् निरक्षर प्रौढ़ों को शिक्षित करने के लिए कई प्रयास किये गए। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम से जब अपेक्षित सफलता नही मिली, तो योजना आयोग, शिक्षा मन्त्रालय तथा U.G.C. ने इस रिपोर्ट में कुछ संस्तुति दी। परिणामतः सर्वप्रथम दिल्ली विश्वविद्यालय में इस पाठ्यक्रम की शुरूआत हुई। कालांतर में अन्य भारतीय राज्यों ने अपने अपने यहां पत्राचार पाठ्यक्रम की शुरूआत की। 1986 में नई शिक्षा नीति की घोषणा के साथ इंग्लैण्ड के खुले विश्वविद्यालय के आधार पर नई दिल्ली में भी इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय (I.G.N.O.U.) की स्थापना की गई जिसमें शिक्षा के विभिन्न पाठ्यक्रम विकसित किए गए। दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में यह महत्वपूर्ण प्रयास था। कालांतर में भारतीय उपग्रह इन्सेट 1–बी की स्थापना से इस शिक्षा के प्रसार को और अधिक बल मिला तथा रेडियो व टेलीविजन का उपयोग राष्ट्रीय साक्षरता, कृषि शिक्षा, महिला शिक्षा तथा ग्रामीण शिक्षा के प्रसार में भरपूर रूप से होने लगा।

दूरस्थ शिक्षा के विकास के निम्नलिखित कारण थे –

1) भारतीय संविधान की सभी के लिए शिक्षा के समान अवसर प्रदान करने की वचनबद्धता।
2) ज्ञान का विस्फोट।
3) तकनीकी के क्षेत्र में नित्य नई नई तकनीकी का विकास।
4) औपचारिक शिक्षा संस्थानों में शिक्षार्थियों की बढ़ती हुई संख्या को सन्तुलित करने हेतु।
5) औपचारिक शिक्षा संस्थानों में प्रवेश से वंचित शिक्षार्थियों के लिए।
6) औपचारिक शिक्षा की जटिलताओं को कम करने के लिए तथा उसके सहयोग हेतु।
7) उच्च शिक्षा के अवसरों की सर्व सुलभता हेतु।
8) ग्रामीण क्षेत्रों तथा पिछड़े एवं दूर दराज क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों को घर बैठे अध्ययन सुविधा प्रदान करने हेतु।
9) व्यवसाय अथवा नौकरी में लगे अथवा सेवारत लोगो को अपनी योग्यता में विस्तार हेतु।

10) स्वाध्याय की आदत डालने के लिए।

<u>बोध प्रश्न</u>

7) दूरस्थ शिक्षा का सम्प्रत्यय किन परिस्थितियों में विकसित हुआ ।

____
____
____
____

8) दूरस्थ शिक्षा के उदाहरण दीजिए।

____
____
____
____

9.3.6 शिक्षण मशीन

आज का युग भौतिकतावादी है जिसने मशीनों ने मानव जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया है । शिक्षा जगत भी अब इससे अछूता नही है। शिक्षा जगत में मशीनों के प्रयोग का श्रेय बी0 एफ0 स्किनर ने किया था। कालान्तर में ओहियो विश्वविद्यालय के प्रो0 सिडनी एल0 प्रेसे ने शिक्षण मशीनों के विकास में अग्रणी कार्य किया।

के0 सम्पथ तथा अन्य सहयोगियों के अनुसार "यह एक प्रकार की प्रणाली है जिसकी इस प्रकार से संरचना की गई है कि व्यक्तिगत रूप से शिक्षार्थी इसे स्वयं संचालित कर सके। यह छात्र के साथ महत्वपूर्ण अन्तःक्रिया कर सकती है।"

9.3.6.1 शिक्षण मशीन की विशेषताए

- यह स्वशिक्षण की तकनीक है जिसमें शिक्षार्थी बिना अध्यापक के स्वतः अध्ययन करता है।
- छात्र स्वगति (Self Pacing) के अनुसार शिक्षा प्राप्त करता है।
- शिक्षण मशीनों का प्रयोग अभिक्रमित अनुदेशनों के प्रस्तुतिकरण के लिए किया जाता है।
- इसमें शिक्षार्थी की त्रुटिपूर्ण अनुक्रिया के लिए स्पष्टीकरण भी दिया जाता है।
- अपनी क्रियाओं की प्रति–पुष्टि मिलते रहने से वह बराबर पुनर्बलन प्राप्त करते हुए आगे बढ़ता रहता है।
- इन मशीनों द्वारा शिक्षार्थियों की अनुक्रियाओं का आँकड़ा तैयार करते रहने से इनकी प्रगति का भी विवरण आसानी से प्राप्त होता रहता है।
- ये मशीनें शिक्षक के कार्य को सरल कर देती हैं।
- शिक्षण मशीन शिक्षार्थियों को प्रश्न पूछने, अतिरिक्त सूचना जानने, समीक्षा करने तथा स्पष्टीकरण

मांगने के भी अवसर प्रदान करती है।

- शिक्षण मशीन के लिए पाठ्य वस्तु का सृजन अलग से किया जाता है और उसका मूल्यांकन करने के उपरान्त ही उसे शिक्षण मशीन को दिया जाता है।

9.3.6.1 सामाजिक अध्ययन में इन मशीन का प्रयोग

सामाजिक अध्ययन के शिक्षण – अधिगम की प्रक्रिया में शिक्षण मशीनों की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसके माध्यम से शिक्षार्थी अपनी सुविधा और गति के अनुसार विभ्न्नि प्रकरणों को पढ़ते एवं सीखते हैं शिक्षण मशीन इस सन्दर्भ में वास्तविक Tutorial शिक्षण का काम करती है और शिक्षार्थी व्यक्तिगत भिन्नताओं के अनुसार अधिगम करते रहते हैं।

9.3.6.3 शिक्षण मशीन की सीमाए

- चूंकि ये मशीन महंगी होती हैं इसलिए हर शिक्षण संस्थाओं द्वारा इसका उपयोग सम्भव नही हो पाता।
- ये मशीनें शिक्षा के ज्ञानात्मक पक्ष को तो विकसित करती हैं परन्तु क्रियात्मक एवं भावात्मक पक्ष उपेक्षित रह जाता है।
- प्रत्येक विषय वस्तु की सामग्री शिक्षण मशीन हेतु तैयार करना एक कठिन कार्य होता है।

  ○उपरोक्त दोषों के बावजूद शिक्षण मशीनों का प्रयोग एक सहायक विधि के रूप में करते हुए प्रस्तुत विषय का शिक्षण सफलता पूर्वक किया जा सकता है।

<u>बोध प्रश्न</u> –

9)"शिक्षण मशीन स्व शिक्षण की एक तकनीकी है जिसमें शिक्षार्थी बिना अध्यापक के अधिगम करता है।" उक्त कथन को स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

____

9.3.7 टेली क्रांफ्रेसिंग या दूर संवाद प्रणाली

जैसे इन्दिरा गांधी नेशनल मुक्त विश्वविद्यालय, नशनल ओपेन स्कूल, तथा मुक्त शिक्षा आदि यह एक प्रकार की इलेक्ट्रानिक प्रणाली है जिसमें दो या दो से अधिक लोग दूर बैठ कर भी एक साथ परिचर्चा में भाग ले सकते हैं, अपनी बात कहने के साथ साथ दूसरों की बात सुन कर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकते हैं तथा वांछित सूचनाओं का आदान – प्रदान भी कर सकते हैं।

टेली कांफ्रेन्सिग का कुछ शिक्षण संस्थानों में बहुतायत से प्रयोग किया जा रहा है परन्तु इसके महत्व तथा कम लागत को देखते हुए शीघ्र ही इसका प्रयोग बहुतायत से किया जायेगा। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में यह विधि अत्यन्त महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है। इसके अन्तर्गत आने वाले विभिन्न प्रकरणों का शिक्षण

विषय विशषज्ञों द्वारा उनके स्थान से ही करवाना अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकता है। सामाजिक विज्ञान के विद्यार्थी स्थानीय भौगोलिक जानकारी से सम्बन्धित सूचनाएं तथा आकड़ें एकत्रित कर आपस में एक दूसरे से आदान प्रदान कर सकते हैं तथा उनके बारे में वांछित निष्कर्ष निकालने हेतु उचित संभावना या संवाद कायम रख सकते हैं। इससे शिक्षार्थियों को विषय वस्तु का ज्ञान रूचिकर ढ़ंग से व्यापकता के साथ हो जाएगा तथा शिक्षार्थी आवश्यकतानुसार अपनी जिज्ञासाओं को भी शान्त कर सकेंगे।

टेली कांफ्रेसिंग के निम्न लिखित प्रचलित तीन प्रकार है –

(1) ओडियो कांफ्रेसिंग (Audio Conferencing)

(2) वीडियो कांफ्रेसिंग (Video Conferencing)

(3) कम्प्यूटर कांफ्रेसिंग (Computer Conferencing)

9.3.7.1 टेली कांफ्रेसिंग से लाभ

- यह अधिगम के विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति मे अत्यंत सहायक है।
- चूंकि यह माध्यम नया है जिससे सीखने की उत्सुकता हर बच्चे में होती है इसलिए यह शिक्षार्थियों में आन्तरिक प्रेरणा तथा जिज्ञासा उत्पन्न करने में अत्यन्त सहायक है।
- इसके माध्यम से प्रतिभागी को अपने अपने स्थानों पर बैठे हुए कांफ्रेस स्थान पर गए बिना ही कान्फ्रेंस में भाग लेने का अवसर प्राप्त हो जाता है जिससे समय, धन तथा शक्ति का अपार बचत हो जाती है।
- यह पारस्परिक विचार विनिमय, संवाद तथा संभाषण हेतु अवसर प्रदान करती है। किसी भी क्षेत्र में स्थापित शिक्षण संस्थाएं अपना एक नेटवक्र स्थापित कर पारस्परिक ज्ञान, सूचनाएं तथा अनुभवों का आदान प्रदान कर सकती हैं।
- विषय विशेषज्ञों तथा कौशल में पारंगत लोगो से सम्पक्र में रह कर उनसे संवाद का लाभ टेली कान्फ्रेसिंग के माध्यम से ही उठाया जा सकता है।
- यह परम्परागत कान्फ्रेंस आयोजन से पृथक है क्योकि टेली कान्फ्रेसिंग में विभिन्न सामाजिक औपचारिकताओं यथा परिचय, स्वागत, धन्यवाद ज्ञापन आदि से परे होकर मात्र उद्देश्य की पूर्ति में रत रहा जाता है।
- टेली कान्फ्रेसिंग समस्त प्रतिभागियों को बिना किसी भेद भाव के स्वतन्त्रता पूर्वक पारस्परिक संवाद करने का अवसर प्रदान करती है।
- टेली कान्फ्रेसिंग ने विषय विशेषज्ञों, विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के मध्य विचारों, ज्ञान तथा कौशलों के आदान प्रदान के लिए आज अमूल्य स्रोत प्रस्तुत किया है। वेबसाइट पर उपलब्ध ज्ञान भण्डार तथा ऑन लाइन चैटिंग एवं वीडियों डिसप्ले ने व्यक्तियों के बीच समय तथा दूरी की समस्त बाधाओं को दूर कर ज्ञान तथा कौशल के प्रसार को सहजता एवं तीव्रता प्रदान की है।
- इस माध्यम का प्रयोग औपचारिक, अनौपचारिक तथा नि–रौपचारिक सभी प्रकार की शिक्षा के लिए किया जाता है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं टेली कान्फ्रेसिंग का तात्पर्य एक ऐसी संवाद प्रणाली से है जिसमें किसी इलेक्ट्रानिक माध्यम की सहायता से दूर दूर बैठे व्यक्ति उसी तरह पारस्परिक संभावना, वार्तालाप तथा अन्तःक्रियाओं में रत रह सकते हैं जैसे कि वे एक छत के नीचे बैठे किसी कक्ष में आवश्यक अंतः सम्प्रेषण और अंतः क्रियाएँ कर रहे हों। इसमें किसी भी प्रकरण को लेकर विभिन्न समूहो के मध्य विचार विमर्श किया जाना सम्भव है। यद्यपि इसके प्रयोग के सन्दर्भ में दो व्यावहारिक समस्याएं आती है यथा :–

1– प्रत्येक विद्यालय द्वारा महंगे उपकरणों की व्यवस्था न कर पाना।

2– इसके प्रयोग हेतु विशिष्ट प्रशिक्षण की आवश्यकता का होना।

तथापि जो विद्यालय उपर्युक्त दोनो समस्याओ पर विजय प्राप्त करते हैं उनके लिए टेली कान्फ्रेसिंग वरदान साबित हो रहा है।

बोध प्रश्न

10)दूर संवाद प्रणाली की प्रक्रिया को समझाइए ।

____

____

____

____

9.3.8 बहुमाध्यम उपागम (**Multi Media Approach**)

बहुमाध्यम उपगम का तात्पर्य प्रकरण को स्पष्ट करने के लिए शिक्षण सामग्री का विविध रूपों में प्रयोग करना है। इसका प्रयोग शैक्षणिक, मनोरंजन तथा प्रभावशाली अभिव्यक्ति हेतु किया जाता है। यह उपागम संचार, सूचना, अनुदेशन, अलंकरण (Enrichment) मनोरंजन तथा प्रतिपादन (Persuation) से सम्बन्धित समस्त कार्य सामाजिक अध्ययन के शिक्षण हेतु करता है।

मैरीयम बैबस्टर्स कालेजियेट डिक्शनरी में कहा गया है कि "यह एक ऐसा उपागम है जिसमें अनेक माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। इसके द्वारा एक ही विषय वस्तु को विविध प्रकार की शिक्षण सहायक सामग्री के प्रयोग द्वारा सुगमता से निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्रयुक्त किया जाता है तब कहा जाता है कि हम बहुमाध्यम उपागम द्वारा पढ़ रहे हैं।"

इस प्रकार शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया में संचार की आधुनिक तकनीकियों का विधिवत एवं सुचारू रूप से शिक्षा के क्षेत्र में प्रयोग करना, जिससे व्यक्ति परक (स्वअध्ययन) शिक्षण को सुधार कर अधिगम को प्रभावशाली बनाया जा सके, बहुमाध्यम उपागम कहलाता है।

9.3.8.1 बहुमाध्यम उपागम की विशेषताएँ

- इस उपागम के माध्यम से विषय वस्तु शिक्षार्थियों के लिए अत्यधिक बोधगम्य तथा सरल हो जाती है। क्योकि विविध माध्यम उपागम का प्रयोग करते हुए शिक्षक कठिन तथा जटिल सम्प्रत्ययों को सरल बना देता है।
- इसके प्रयोग से शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया अत्यन्त रोचक हो जाती है जिससे शिक्षार्थियों को भी अधिगम हेतु उत्साह तथा प्रेरणा मिलती है।
- ये उपागम शिक्षार्थियों पर अधिक नियन्त्रण रख सकते हैं। वे अपनी आवश्यकतानुसार अभ्यास करते हुए अपनी प्रगति की जाँच करते हैं।
- यह उपागम शिक्षार्थियों का ध्यान विषय वस्तु पर केन्द्रित करने में सहायक होता है और पाठों को बिना रटे आत्मसात् करने में वे सफल हो जाते हैं जिससे प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है।
- बहुमाध्यम उपागम का प्रयोग औपचारिक, अनौपचारिक तथा नि–रौपचारिक तीनों प्रकार का शिक्षा

में सफलतापूर्वक किया जाता है।

- इस उपागम के प्रयोग से न केवल छात्रों में एक ही विधा से शिक्षण की बोरियत समाप्त होती है वरन उनके लिए अधिगम अनुभव आनन्ददायी भी हो जाता है।
- छात्र अपनी योग्यता तथा गति के अनुसार अध्ययन करते हुए कक्षा कार्य में सक्रियता के साथ भग लेते है तथा गहन अध्ययन में समर्थ होते है।

9.3.8.2 बहुमाध्यम उपागम के प्रयोग की प्रक्रिया

बहुमाध्यम उपागम के प्रयोग में निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता हैः–

पाठ्य वस्तु तथा उसके उद्देश्यों का निर्धारण

↓

प्रकरण की प्रस्तावना निकालते हुए उनके पूर्ववर्ती ज्ञान को नवीन ज्ञान से जोड़ना

↓

अभिक्रमित अध्ययन सामग्री तथा रिकॉर्डिगं आदि के द्वारा शिक्षार्थियों को मूल भूत तत्वों की जानकारी प्रदान करना

↓

प्रकरण को पूरी तरह स्पष्ट करने के लिए सेमीनार, अन्तःक्रिया, वार्तालाप, व्यक्तिगत निर्देशन तथा अन्य विधाओं का प्रयोग करना

↓

विस्तृत अध्ययन हेतु शिक्षार्थियों को सन्दर्भ, पुस्तकालय अध्ययन तथा स्वतन्त्र–स्वाध्याय विधि के प्रयोग हेतु को प्रेरित करना

↓

कौशलों की प्राप्ति तथा उनके संश्लेषण हेतु फील्ड वक्र, भ्रमण, तथा वक्रशाप में कार्य के अवसर प्रदान करना

↓

निष्कर्ष तक पहुंचने के लिए सामूहिक वार्तालाप, पैनल वार्तालाप तथा सिम्पोजियम का प्रयोग करना

↓

शिक्षार्थियों का मूल्यांकन करना

↓

उन्हे सुधारात्मक अनुदेशन प्रदान करना

↓

शिक्षार्थियों को पृष्ठ पोषण प्रदान करना

रेखाचित्र 9.3.8.2.1

9.3.8.3 बहुमाध्यम उपागमों का चयन

शिक्षक अपनी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने हेतु किस प्रकार बहुमाध्यम उपागम का प्रयोग करे, इसके लिए उसे निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए :–

- संस्था में माध्यम उपागमों की उपलब्धता क्या है
- उपलब्ध उपागमों में किन उपागमों में उसकी (शिक्षक की) सिद्धहस्तता है
- कक्षा में शिक्षार्थियों को किस प्रकार का अनुभवों प्रदान करना है
- उस अधिगम अनुभव के अनुरूप कौन सी सामग्री की सरलता से उपलब्धता हो पा रही है
- किन माध्यमों के प्रयोग से वे अपने शिक्षण उद्देश्य को प्राप्त कर सकते हैं
- कक्षा के आकार अनुरूप कौन सी सामग्री उपयुक्त है
- शिक्षार्थियों के स्तर, आयु, गति तथा आवश्यकतानुसार कौन सी विधा सर्वोत्तम है

उपर्युक्त बिन्दुओं के सन्दर्भ में अध्यापक स्वयं से ही प्रश्न पूछते हुए माध्यमों के प्रयोग के सन्दर्भ में अन्तिम निर्णय पर पहुँचता है। बहुमाध्यम उपागम में वह मात्र विभिन्न साधनों का प्रयोग ही नही करता वरन यह उनका संश्लेषण प्रक्रिया का परिणाम भी हो सकता है। सामाजिक अध्ययन के किसी भी प्रकरण के सन्दर्भ में वह निम्नलिखित अथवा आवश्यकतानुसार माध्यमों का प्रयोग कर सकता है।

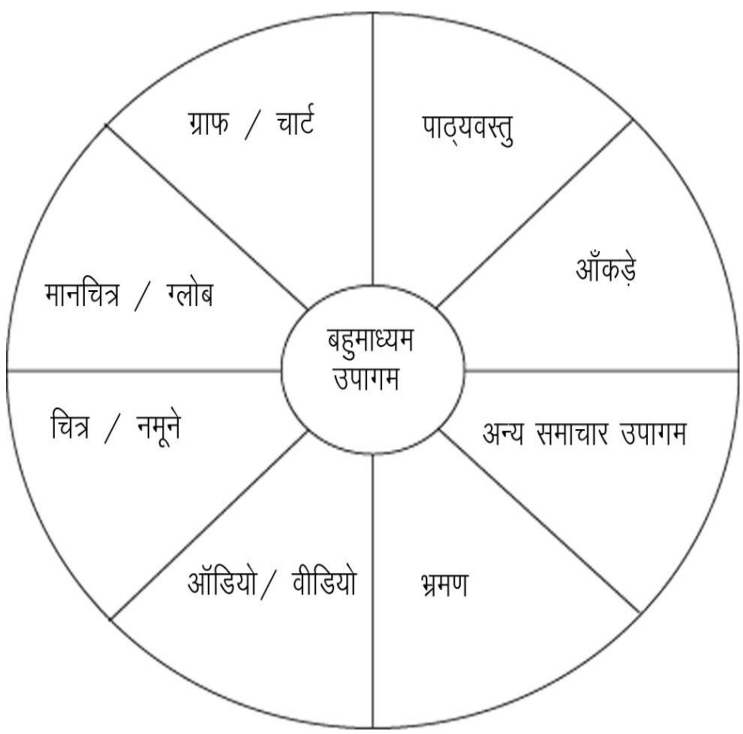

रेखा चित्र 9.3.8.2.2

9.3.8.4 बहुमाध्यम केन्द्र

बहुमाध्यम केन्द्र को अनुदेशनात्मक सामग्री केन्द्र, बहुमाध्यम पुस्तकालय, अधिगम संसाधन केन्द्र तथा पाठ्य सामग्री भी कहा जाता है जहाँ पर विभिन्न प्रकार की श्रव्य दृश्य सामग्री, अभिक्रमित अनुदेशन सामग्री, बहु माध्यम पैकेज अथवा किट उपलब्ध करते हैं जिनका शिक्षार्थी तथा शिक्षक अपनी आवश्यकता के अनुसार प्रयोग करते हैं। इन केन्द्रों पर इन माध्यमों के प्रयोग हेतु प्रशिक्षण की भी उचित व्यवस्था होती है।

इस प्रकार यह उपागम न केवल सामाजिक अध्ययन वरन प्रत्येक विषय के लिए अत्यन्त उपयोगी, महत्वपूर्ण तथा शिक्षण – अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने का एक सशक्त माध्यम साबित हो रहा है।

<u>बोध प्रश्न</u>

11)बहुमाध्यम उपागम से आप क्या समझते हैं –

____
____
____
____

<u>क्रिया कलाप–</u>

बहुमाध्यम केन्द्रो की सूची बनाइए –

____
____
____
____

9.3.9 मॉड्यूलर उपागम (**Modular Approach**)

मॉड्यूलर उपागम अथवा एप्रोच सामान्य कक्षाओं में अधिगम प्रक्रिया के लिए चलने वाली सामान्य दिन प्रतिदिन की संरचित अधिगम शिक्षण क्रियाओं तथा अभिक्रमित अध्ययन सामग्री के मध्य की कड़ी है। इसमें मॉड्यूलर्स का निर्माण किया जाता है और माड्यूल्स का जिस कोर्स में उपयोग किया जाता है उन्हे मॉड्यूलर कोर्स कहते हैं।

डा0 श्रीवास्तव ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "मॉड्यूलर एप्रोच एक ऐसा नवाचार है जिसमें शिक्षक और शिक्षार्थियों को सीखने एवं सीखाने में स्वतन्त्रता के साथ साथ एक निश्चित् पदानुक्रम का पालन करते हुए अधिगम उद्देश्यों तक पहुँचने में सहायता मिलती है।"

इस प्रकार हम कह सकते है कि यह अधिगम क्रियाओं का एक सेट होता है जिसमें निश्चित् पदानुक्रम का पालत करना होता है। इसके द्वारा अधिगमकर्ता अधिगम के अभीष्ट उद्देश्यों की प्रप्ति करता है जिसमे उसे अपनी गति तथा क्षमता के अनुसार कार्य करने की स्वतन्त्रता होती है।

9.3.9.1 मॉड्यूल्स की विशेषताएँ

- यह संरचित स्वतः पूर्ण है।
- इसमें उन सभी बातों का समावेश होता है जिसके आधार पर शिक्षार्थी मॉड्यूल्स_को सरलता के साथ सीख सकता है।
- इसमें दिए गए उद्देश्य प्रायः व्यावहारिक होते हैं।

- प्रत्येक व्यावहारिक उद्देश्य की प्राप्ति हेतु तथा क्रियाकलापों के लिए संकेत तथा कार्य – प्रारूप भी इन मॉड्यूल्स में दिये गये होते हैं।
- इसके क्रियाकलाप शिक्षार्थियों के लिए अनेक वैकल्पिक कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं।
- मॉड्यूल्स की विषय वस्तु में पूर्ण तारतम्यता रहती है।
- प्रत्येक मॉड्यूल्स में अधिगम सामग्री, उद्देश्यों, ज्ञान के स्रोतों, क्रियाकलापों तथा मूल्यांकन में स्पष्ट सम्बन्ध होता है।

9.3.9.2 मॉड्यूल्स निर्माण के सोपान

- विषय वस्तु की क्रमावार विवरणिका।
- विषय वस्तु की आवश्यकता तथा महत्व के सन्दर्भ में संक्षिप्त सूचना "प्रस्तावना" शीर्षक के अन्तर्गत।
- उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना।
- विषय वस्तु से सम्बन्धित अध्ययन सामग्री का विस्तार तथा प्रकरण के अनुरूप बोध प्रश्नों तथा क्रिया कलापों को प्रस्तुत करना।
- मॉड्यूल्स के निर्धारित उद्देश्यों के सन्दर्भ में मूल्यांकन करना।
- मूल्यांकन के साथ साथ अभ्यास कार्य व चर्चा के बिन्दु का प्रस्तुतीकरण।
- सन्दर्भ ग्रन्थों का विवरण।

9.3.9.3 मॉड्यूल्स के आवश्यक अंग

किसी भी मॉड्यूल्स की पूर्णता तभी मानी जाती है जब उसमें निम्न लिखित तत्व अथवा अंग सम्मिलित हो :–

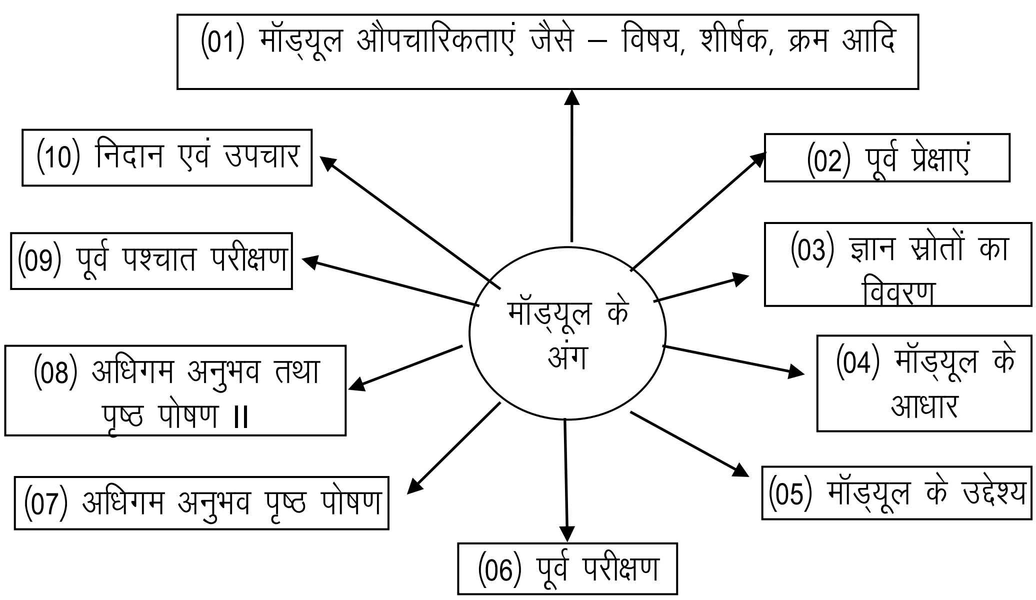

रेखा चित्र 9.3.9.2.1

मॉड्यूल को आप एक कैप्सूल की भांति समझ सकते हैं। जिस प्रकार कैप्सूल को खोलने पर उसके अन्दर कई तरह के विटामिन्स, खनिज लवण, प्रोटीन्स तथा अन्य आवश्यक तत्व का प्रतिनिधित्व करने वाली दवाइयों का सूक्ष्म कण होता है जिनके बिना कैप्सूल का कोई महत्व नही होता। ठीक उसी प्रकार मॉड्यूल्स में भी उपयक्रक्त अंगो अथवा तत्वों का होना अति आवश्यक है। इन तत्वों के बिना मॉड्यूल्स भी मात्र एक खोखा है। उसकी महत्ता इन्ही तत्वों के सम्मिलित होने पर ही होती है। जिस प्रकार कैप्सूल रोग का निदान करती है उसी प्रकार मॉड्यूल्स भी शिक्षार्थियों की विषय सम्बन्धित विभिन्न जिज्ञासाओं को सन्तुष्ट करती है। यह एक प्रकार से शिक्षार्थियों की मानसिक खुराक होती है।

मॉड्यूल उपागम में 90 X 90 के सिद्धान्त का प्रयोग किया जाता है जिसका अभिप्राय कक्षा के 90% शिक्षार्थियों द्वारा 90% विषय वस्तु पर अधिकार प्राप्त करना है और जब तक शिक्षार्थी एक मॉड्यूल की विषय वस्तु पर 90% अधिकार प्राप्त नही कर लेता, तब तक उसे अगला मॉड्यूल नही दिया जाता है। कहने का आशय है कि जब तक शिक्षार्थी एक मॉड्यूल की विषय वस्तु क 90% बोध नही कर लेता, तब तक उसे अगला मॉड्यूल अध्ययन हेतु नही दिया जाता। वर्तमान में इसकी उपयोगिता को देखते हुए NCERT, ISPT,UGC तथा NCTE ने विभिन्न विषयों पर मॉड्यूल उपागम पर आधारित मॉड्यूल विकसित किए हैं। चूंकि इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थी सरलता से क्रमानुसार तथा क्रमबद्ध तरीके से स्व अधिगम करता है जिसमें शिक्षक की भूमिका एक गाइड की भांति होती है इसलिए अपनी सरल तथा उपयोगी प्रकृति के कारण आज अनेक कोर्सो की आयोजन मॉडयूलर उपागम के आधार पर की जा रही है।

<u>अभ्यास कार्य–</u>

मॉड्यूल शब्द के आशय को स्पष्ट कीजिए ।

____
____
____
____

मॉडयूल के प्रमुख घटकों का विस्तारण कीजिए ।

____
____
____
____

9.4 सारांश

नवीन उपागमों के प्रयोग ने शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है। इन विविध उपागमों के प्रयोग ने न केवल शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया में परिमार्जन, सुधार तथा विकास को लाया है वरन शिक्षार्थियों को भी अधिगम हेतु अभिप्रेरित तथा उत्साहित किया है। इन नवीन उपागमों ने शिक्षा में शिक्षार्थियों को अत्यधिक सक्रिय किया है। अब शिक्षा मात्र "चॉक एण्ड टॉक" तक ही सीमित नही है। आज तकनीकी ने सामाजिक अध्ययन जैसे विषय को इन उपागमों के माध्यम से सजीव, जीवन्त तथा रूचिकर बना दिया है। विभिन्न प्रकार की नवीन विधाओं जैसे वचफ्रअल लर्निंग, ई–लर्निंग, ऑडियो – विडियो, प्रणाली उपागम तथा इसी प्रकार के अन्य उपागमों के प्रयोग ने शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्ति मचा दी है। प्रस्तुत इकाई में आपने सामाजिक अध्ययन के शिक्षण की दृष्टि से उपयोगी तथा महत्वपूर्ण उपागमों का अध्ययन

किया। बस आवश्यकता है इन विविध उपागमों प्रयोग में दक्षता तथा निपुणता हासिल करने की, जिससे प्रस्तुत विषय के अधिगमोंपरान्त शिक्षार्थी सामाजिक अध्ययन के विभिन्न उद्देश्यों तथा लक्ष्यों को कुशलता से प्राप्त कर सकें।

9.5 अभ्यास कार्य

1) अपने किसी साथी अध्यापक के निरीक्षण में सूक्ष्म शिक्षण कीजिए। आपके द्वारा शिक्षण कौशल का प्रयोग कितनी सफलता के साथ किया गया, इसका मूल्यांकन करवाइए ?
2) अभिक्रमित अनुदेशन के माध्यम से सामाजिक अध्ययन के किसी भी प्रकरण के शिक्षण हेतु एक रूपरेखा बनाइए तथा शिक्षण के दौरान आने वाली समस्याओं को इंगित कीजिए ?
3) यदि आपको बहुमाध्यम उपागम का प्रयोग करते हुए शिक्षण कार्य करना है तो उपयुक्त माध्यम उपागमों का चयन करते समय आप किन किन बातों को ध्यान में रखेंगे –

9.6 चर्चा के बिन्दु

1) शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार का प्रयोग आवश्यक है।
2) एक सफल शिक्षक बनने के लिए शिक्षण अभ्यास आवश्यक है।
3) अनुकरणीयता वास्तविकता का नियंत्रित प्रतिनिधित्व करती है।
4) दूरस्थ शिक्षा औपचारिक शिक्षा की जटिलता को कम करती है।
5) शिक्षण मशीने शिक्षक के कार्य को सरल कर देती हैं।

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सूक्ष्म शिक्षण के माध्यम से शिक्षण प्रक्रिया को वैयक्तिक स्वरूप प्रदान किया जाता है। इसमे एक समय में केवल एक ही कौशल के प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है। इसके माध्यम से समय की बचत होती है। इसमे पृष्ठ–पोषण को विशेष महत्व दिया जाता है।
2. सूक्ष्म शिक्षण का शिक्षार्थी आध्यापकों अथवा प्रशिक्षणार्थियों के लिये विशेष महत्व होता है क्योकि यह कक्षा शिक्षण से सम्बन्धित जटिलताओं को कम करता है। इससे उनमे आत्मविश्वास की भावना जागृत होती है क्योकि यह शिक्षण कम छात्रों में, कम विषयवस्तु में, कम समय में, कम शिक्षण क्रियाओं में, सम्पादित होता है। यह शिक्षण शिक्षार्थी आध्यापकों अथवा प्रशिक्षणार्थियों को स्व मूल्यांकन का अवसर प्रदान करता है।
3. सूक्ष्म शिक्षण वास्तविक शिक्षण की पूर्व तैयारी है जबकि अभ्यास शिक्षण की सफलता सूक्ष्म शिक्षण पर निर्भर करती है अर्थात प्रशिक्षणार्थी द्वारा कौशलों में दक्षता का अर्जन ही अभ्यास शिक्षण को प्रभावशाली बनाना है। सूक्ष्म शिक्षण में एक समय में केवल एक ही कौशल का अभ्यास किया जाता है जबकि अभ्यास शिक्षण में एक समय में कई कौशलों का प्रयोग किया जाता है।
4. कुशल शिक्षण अभ्यास के लिये शिक्षण कौशलों में पारगंतता अनिवार्य है। शिक्षण कौशल पाठ विकास या प्रस्तुतिकरण की एक सामान्यीकृत योजना है जिसमें शिक्षार्थी आध्यापकों को पूर्ण

स्वतन्त्रता होती है। इनका विकास शैक्षिक उद्देश्य के अनुरूप किया जाता है जिसका मुख्य उद्देश्य शिक्षार्थी आध्यापकों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन करना है।

5. अभिरूपित शिक्षण का अभिप्राय शिक्षण अभ्यास द्वारा कौशल आधारित पाठ का प्रदर्शन करना तथा तत्पश्चात प्रशिक्षणार्थियों द्वारा इस शिक्षण का अनुकरण कर स्वयं सूक्ष्म शिक्षण अभ्यास करना है। इसमें कम खर्च में शिक्षार्थी आध्यापकों को विद्यालय का विविध वातावरण उपलब्ध कराया जा सकता है। इस विधि में प्रशिक्षणार्थियों को तुरन्त प्रतिपुष्टि भी प्राप्त हो जाती है।

6. अभिरूपित शिक्षण का प्रशिक्षणार्थियों के लिये बहुत अधिक महत्व है क्योकि इसके माध्यम से अभ्यास करते करते आप लोगों के शिक्षण में आत्मविश्वास आता है। अपने ि‍विषयवस्तु को क्रमबद्ध तरीके से तथा सुव्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त होता है। चूंकि इससे प्रशिक्षणार्थियों को पूर्व अभ्यास का अवसर मिलता है इसलिये इनमें वांछित व्यवहार का विकास होता है। यह शिक्षण समय तथा धन की दृष्टि से भी बचत में सहायक होता है।

7. दूरस्थ शिक्षा का विकास 19 वीं शताब्दी में डाक पद्धति के विकास के साथ माना जाता है, जब सूचनाओं को दूसरों तक पहुचाना सरल हो गया था। भारत में इसका प्रारम्भ स्वतन्त्रता के पश्चात निरक्षर प्रौढों को शिक्षित करने के लिये प्रारम्भ किया गया। जब प्रौढ शिक्षा से अपेक्षित सफलता नही मिली तो योजना आयोग, शिक्षा मन्त्रालय तथा यू0जी0सी0 ने इस सन्दर्भ में विचार विमर्श करते हुये डा0डी0एस0 कोठारी की अध्यक्षता में बनी हुई एक समिति में कुछ विश्वविद्यालयों में पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने की संस्तुति दी।

8. दूरस्थ शिक्षा के अनेकों रूप है जो नि–रौपचारिक ढंग से शिक्षा प्रदान करते हुये अपने उद्देश्य को पूरा कर रहे है जैसे– पत्राचार कार्यक्रम, रेडियो तथा दूरदर्शन के विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रम, मुक्त विद्यालय तथा मुक्त विश्वविद्यालय आदि जो शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम सहित समस्त प्रकार की शिक्षा शिक्षार्थियों को अपने पाठ्यक्रम की मान्यता के अनुसार प्रदान करते हैं।

9. "शिक्षण मशीन स्व शिक्षण की एक तकनीकी है जिसमें शिक्षार्थी बिना अध्यापक के अधिगम करता है" इस कथन का आशय आज के भौतिकवादी युग में शिक्षा जगत में भी मशीनो का प्रयोग शिक्षा प्राप्ति के लिये किया जा रहा है। इस प्रकार की शिक्षण प्रणाली में शिक्षार्थी व्यक्तिगत रूप से इसे स्वंय संचालित करते हैं। यह स्व शिक्षण की तकनीक है जिसमें शिक्षार्थी बिना अध्यापक के स्वतः अध्यययन करता हैं। ये शिक्षण मशीनें शिक्षार्थी को प्रश्न पूछने, अतिरिक्त सूचना जानने, समीक्षा करने तथा स्पष्टीकरण मांगने के भी अवसर प्रदान करती हैं।

10. टेली कांफ्रेसिंग या दूर संवाद प्रणाली एक प्रकार की इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली है जिसमे दो या दो से अधिक लोग दूर बैठ कर भी एक साथ परिचर्चा में भाग ले सकते हैं, अपनी बात कहने के साथ – साथ दूसरों की बात सुनकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकते हैं तथा वांछित सूचनाओं का आदान – प्रदान भी कर सकते हैं। इसके मुख्य रूप से तीन प्रकार प्रचलित हैः–

- ऑडियों क्रान्फ्रेसिंग
- वीडियो क्रान्फ्रेसिंग
- कम्प्यूटर क्रान्फ्रेसिंग

11. बहु माध्यम उपागम का तात्पर्य प्रकरण को स्पष्ट करने के लिये शिक्षण सामग्री का विविध रूपों में प्रयोग करना है। यह उपागम संचार, सूचना, अनुदेशन, अलंकरण, मनोरंजन तथा प्रतिपादन से

सम्बन्धित समस्त कार्य सामाजिक अध्ययन के शिक्षण हेतु करता है। इस उपागम के माध्यम से विषयवस्तु शिक्षार्थियों के लिये सरल तथा बोधगम्य हो जाती है क्योकि विभिन्न माध्यम उपागमों का प्रयोग करते हुये शिक्षक कठिन तथा जटिल सम्प्रत्ययों को सरल बना देता है।

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1) कुलश्रेष्ठ एस0 पी0 – "शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार" श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा –2

2) मिश्रा आर0 एम0 – शिक्षण तकनीकी एवं मूल्यांकन आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद

3) Allen Dwight & k. Ryen (1969) Micro Teaching, Addison Wesley, London.

4) Jangira N.K. & Singh A (1981) :- Micro Teaching.

5) Passi & Kulshrestha :- Micro Teaching, (1985).

B.Ed.SE-41

सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – 4

सामाजिक अध्ययन का तथा सामाजिक अध्ययन के लिए आंकलन

इकाई – 10

शिक्षण सम्प्रत्यय के मापनीय उद्देष्य, सामान्यीकरण, समस्या समाधान और योजना विधि 215–242

इकाई – 11

छात्र तथा परिणाम प्रक्रिया के आंकलन हेतु परीक्षण पदों का निर्माण अथवा रचना, निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण 243–272

इकाई – 12

इकाई परीक्षणों का निर्माण, ब्लू प्रिन्ट, प्रश्न पत्र का निर्माण 273–304

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
B.Ed.SE-41 सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह — कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर छत्रसाल सिंह	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर के० एस० मिश्रा	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर धनन्जय यादव	विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ० जी० के० द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० शक्ति शर्मा — सह आचार्य, बी० एड० विभाग, के० पी० बी० एड० ट्रेनिंग कॉलेज, प्रयागराज

सम्पादक

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर विद्या अग्रवाल — पूर्व विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशकः

कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

Year -2023

ISBN: 978-81-963573-0-6

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Social Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0 http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

Printed by: Chandrakala Universal Pvt.Ltd, 42/7 JLN Road, Prayagraj

खण्ड परिचय– 4

सामाजिक अध्ययन का तथा सामाजिक अध्ययन के लिए आंकलन (**Assessment of and for social studies**)

प्रस्तुत खण्ड के अन्तर्गत आप इकाई संख्या 10 "शिक्षण सम्प्रत्यय के मापनीय उद्देश्य, सामान्यीकरण, समस्या समाधान और योजना विधि", इकाई संख्या 11 "छात्र तथा परिणाम प्रक्रिया के आंकलन हेतु परीक्षण पदो का निर्माण अथवा रचना, निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण" और इकाई संख्या 12 "इकाई परीक्षणों का निर्माण, ब्लू प्रिन्ट, प्रश्न पत्र का निर्माण " आदि का अध्ययन करेंगे।

इकाई संख्या 10 के माध्यम से आप शिक्षण के व्यावहारिक उद्देश्यों को किस प्रकार मापा जाता है अर्थात शिक्षणोपरान्त छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को आप किस प्रकार मापेगें, इसको भली भांति समझ कर अपने छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को आँकने के योग्य हो सकेंगे। साथ ही साथ सामान्यीकरण तथा समस्या समाधान के सम्प्रत्यय को भली भांति समझते हुए अधिगम में इनके महत्व को आत्मसात कर सकेंगे।

इकाई संख्या 11 के माध्यम से यह समझाने का प्रयत्न किया जा रहा है कि परीक्षण पदों का निर्माण कैसे किया जाता है, निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण का क्या महत्व है, आप अपने शिक्षण के दौरान इनका निर्माण कैसे करेंगे, यह आप प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त समझ सकेंगे तथा शिक्षणोपरान्त अपने छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान की वांछनीयता जानने के लिए परीक्षण पदों की रचना कर उन्हे छात्रों पर प्रशासित कर उनका मूल्याकंन कर सकेंगे और आवश्यकतानुसार निदानात्मक परीक्षण का प्रयोग कर कमजोर छात्रों के लिए उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था कर सकेंगे।

इकाई संख्या 12 के अन्तर्गत इकाई परीक्षणों के निर्माण, ब्लू प्रिन्ट तथा प्रश्न पत्र का निर्माण आप किस प्रकार करेंगे, इनका विश्द एवं व्यापक वर्णन किया जा रहा है जिनके अध्ययनोपरान्त आप विषय की अध्ययन सामग्री को सत्र की निर्धारित अवधि के अनुसार रखते हुए क्रमबद्ध तरीके से शिक्षण करते हुए तद्नुसार इकाई परीक्षण का निर्माण सफलतापूर्वक कर सकेंगे। साथ ही साथ प्रश्न पत्र में सभी प्रकरणों को समुचित प्रतिनिधित्व देते हुए विशिष्टीकरण तालिका बनाकर उत्तम प्रश्न पत्र का निर्माण सफलतापूर्वक कर सकेंगे।

इकाई –10 शिक्षण सम्प्रत्यय के मापनीय उद्देश्य, सामान्यीकरण, समस्या समाधान और योजना विधि

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 शिक्षण सम्प्रत्यय के मापनीय उद्देश्य

10.4 छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों के रूप में सामाजिक अध्ययन शिक्षण के मापनीय उद्देश्य

10.4.1 ज्ञान

10.4.2 अवबोध

10.4.3 प्रयोग

10.4.4 कौशल

10.4.5 रूचि

10.4.6 अभिवृत्ति

10.5 सामान्यीकरण

10.5.1 सामान्यीकरण की प्रक्रिया से लाभ

10.5.2 सामान्यीकरण की प्रक्रिया के दोष

10.6 समस्या समाधान

10.6.1 समस्या समाधान के आवश्यक तत्व

10.6.2 समस्या समाधान के सोपान

10.6.3 समस्या समाधान विधि के गुण

10.6.4 समस्या समाधान विधि के दोष

10.6.5 समस्या समाधान विधि के सन्दर्भ में कुछ सुझाव

10.7 योजना विधि

10.7.1 योजनाओं के प्रकार

10.7.2 योजना पद्धति के आधार भूत सिद्वान्त

10.7.3 योजना विधि के सोपान

10.7.4 योजना विधि के गुण

10.7.5 योजना विधि के दोष

10.7.6 योजना विधि के सन्दर्भ में कुछ सुझाव

10.8 सारांश

10.9 अभ्यास कार्य

10.10 चर्चा के बिन्दु

10.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.12 सन्दर्भ पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया के फलस्वरूप छात्रों के व्यवहार में कितना सार्थक परिवर्तन आया है इसे जानने के लिए अध्यापक अपने छात्रों का मूल्याकंन करता है तथा शैक्षणिक उद्देश्यों को व्यवहार सूचक क्रियाओं का प्रयोग करते हुए व्यावहारिक शब्दावलियों में लिखता है जिससे छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को सही ढ़ंग से मापा जा सके। इन उद्देश्यों को किस प्रकार लिखा जाए, इसका ज्ञान आप प्रस्तुत इकाई के माध्यम से प्राप्त कर सकेंगे। साथ ही साथ सामाजिक अध्ययन के शिक्षण–अधिगम में सामान्यीकरण, समस्या समाधान विधि तथा योजना विधि के विषय में व्यापक अध्ययन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आपः–

1. शिक्षण के सम्प्रत्यय का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
2. ज्ञान क्षेत्र के आशय का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
3. अवबोध तथा ज्ञान के सम्बन्ध को बता सकेंगे।
4. प्रयोग उद्देश्य से सम्बन्धित व्यवहार परक क्रियाओं की सूची बना सकेंगे।
5. सामाजिक अध्ययन में सामान्यीकरण की उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे।
6. समस्या समाधान विधि के दोषों का विश्लेषण कर सकेंगे।
7. योजनाओं का वर्गीकरण कर सकेंगे।
8. योजना विधि के सोपानों को सूचीबद्व कर सकेंगे।

10.3 शिक्षण सम्प्रत्यय के मापनीय उद्देश्य

शिक्षण के मापनीय उद्देश्य को जानने से पूर्व आपके लिए आवश्यक है शिक्षण के सम्प्रत्यय से परिचित होना। अभी तक तो शिक्षण को एक प्रकार की कला मानी जाती थी

जिसमें शिक्षक विषय वस्तु का ज्ञान अत्यन्त कुशलता के साथ प्रदान करता था। परन्तु आज शिक्षण को कला के साथ–साथ विज्ञान भी माने जाना लगा है जिसकी विभिन्न क्रियाएँ सामाजिक सन्दर्भ में ही सम्पादित की जाती है, और छात्र जिनका निरीक्षण और विश्लेषण भी करता है। अब शिक्षा की क्रियाओं का वस्तुनिष्ठ ढ़ंग से अध्ययन किया जा सकता है। अध्यापक छात्रों को पृष्ठ–पोषण (feedback) प्रदान कर उनके व्यवहार में वांछित परिवर्तन भी लाता है इसके विकसित रूप को आप अग्रांकित पंक्तियों के माध्यम से और भी अधिक समझ सकते हैं–

- शिक्षण एक अंतः प्रक्रिया है जो अध्यापक तथा छात्र के मध्य सम्पन्न होती है।
- यह एक सामाजिक तथा व्यावसायिक प्रक्रिया है।
- शिक्षण एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है।
- शिक्षण एक विकासात्मक प्रक्रिया है।
- शिक्षण अपने स्वरूप में कला तथा विज्ञान दोनों है।
- इसमें अध्यापक विभिन्न तथ्यों, प्रत्ययों, सिद्वान्तों तथा सामान्यीकरण का बोध अपने छात्रों को भाषा के माध्यम से कराता है। इस प्रकार शिक्षण में भाषा सम्प्रेषण का कार्य करती है।
- शिक्षक तथा छात्र के मध्य चलने वाली यह द्विध्रुवीय प्रक्रिया हैं।
- ब्लूम ने शिक्षण के तीन पक्ष माने हैं – (1) शिक्षण उद्देश्य (2) सीखने के अनुभव (3) व्यवहार परिवर्तन और इस आधार पर अधिकांश शिक्षाशास्त्रियों ने इसे त्रिध्रुवीय प्रक्रिया भी कहा है।
- शिक्षण में छात्रों की कमजोरियों का निदान करके उन्हें सुधार हेतु उपचार दिया जाता हैं। इस प्रकार यह एक उपचारात्मक प्रक्रिया है।
- शिक्षण एक ताक्रिक प्रक्रिया है।
- शिक्षण मापनीय होता है।
- पृष्ठ पोषण की प्रविधियों द्वारा शिक्षण में वांछित सुधार, तथा विकास भी किया जाता है।
- शिक्षण एक निर्देशन की प्रक्रिया है।
- शिक्षण औपचारिक, अनौपचारिक तथा निरौपचारिक प्रक्रिया है।
- शिक्षण के तीन उद्देश्य होते हैं – ज्ञानात्मक, बोधात्मक तथा क्रियात्मक

- शिक्षण एक सतत रूप में चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें विचारहीन से अधिक विचारपूर्ण तक की क्रियाएं की जाती हैं। इस क्रम को तीन स्तरों में विभाजित किया गया है –

  (1) स्मृति स्तर (2) बोध स्तर (3) चिन्तन स्तर

बोध प्रश्न –

1. शिक्षण कला एवं विज्ञान दोनों है स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

अभी आपने शिक्षण के सन्दर्भ में पढ़ा कि शिक्षण एक सोद्देश्य पूर्ण प्रक्रिया है। सामाजिक अध्ययन विषय के शिक्षण के भी विभिन्न उद्देश्य होते हैं जिनका अध्ययन आप इकाई संख्या–3 में कर चुके हैं जिनकी प्राप्ति के लिए छात्रों को न केवल ज्ञानार्जन की आवश्यकता होती है बल्कि स्वयं में विभिन्न प्रकार की आदतों, कुशलताओं, क्षमताओं, आदर्शो, दृष्टिकोणों, मूल्यों तथा प्रशंसात्मक झुकावों को भी विकसित करना होता है। बाइंनिग तथा बाइंनिग ने अपनी पुस्तक "Teaching social studies in secondary schools" (1952) में इन्हें पाँच भागों में विभक्त किया हैं –

1. ज्ञान का अर्जन
2. तक्र शक्ति और आलोच्य निर्णय शक्ति का विकास
3. स्वंत्रत अध्ययन करने का प्रशिक्षण
4. आदतों तथा कुशलताओं का विकास
5. उपयुक्त व्यवहार प्रतिमानों का प्रशिक्षण

आधुनिक शिक्षाशास्त्र में विषय के शिक्षण उद्देश्यों को छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों के परिणामों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। ये शिक्षण उद्देश्य इस मनोवैज्ञानिक सिद्वान्त पर आधारित है कि अधिगम का अर्थ छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन होना है। यदि छात्रों ने कुछ सीखा है तो उसका प्रभाव तथा प्रमाण अधिगमकर्ता के व्यवहार में दिखाई देना चाहिए। अर्थात् उसके परिवर्तन की मात्रा कितनी है, इसका मापन विभिन्न प्रश्नों के माध्यम से किया जाता है। यही कारण हैं कि वर्तमान में सभी विषयों के शिक्षण उद्देश्यों को 6 क्षेत्रों छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों के लक्षणों के रूप में रखा जाता है –

ज्ञान

प्रयोग

अवबोध

कौशल

रूचियाँ

अभिरूचि या दृष्टिकोण

10.4 छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों के रूप में सामाजिक अध्ययन शिक्षण के मापनीय उद्देश्य

ब्लूम तथा उनके सहयोगियों ने मानसिक जीवन के तीन पक्ष–ज्ञान, भावना तथा कर्म को स्वीकार करते हुए इन्हें क्रमशः ज्ञानात्मक, भावनात्मक तथा क्रियात्मक क्षेत्रों की संज्ञा प्रदान की। जिनका विस्तृत वर्णन तथा वर्गीकरण इकाई संख्या–3 में "ब्लूम तथा उनके सहयोगियों द्वारा शिक्षण उद्देश्यों का वर्णन" प्रकरण के अन्तर्गत किया गया है जिसका अध्ययन आप कर चुके हैं।

प्रस्तुत इकाई में आप ज्ञानात्मक क्षेत्र के उद्देश्य का ही अध्ययन करेंगे। सन्दर्भतः आप इस बात से भी अवगत हो लें वि जो पूर्व में वर्णित दो अन्य क्षेत्र–भावात्मक तथा क्रियात्मक थे, उसके आधार पर शिक्षणोपरान्त छात्रों के व्यवहार परिवर्तन की व्याख्या अत्यन्त व्यापक हो रही थी साथ–साथ उन दोनों क्षेत्रों के कुछ उद्देश्य सामाजिक अध्ययन शिक्षण के सन्दर्भ में व्यवहार में भी नही लाया जा सकता, इसलिए आपके अध्ययन को ज्ञानात्मक क्षेत्र के उद्देश्यों के सन्दर्भ में ही रखा गया है जिसमें उन दोनों उद्देश्यों को भी अप्रत्यक्ष रूप से समाहित कर एक सारगर्भित क्षेत्र के रूप में उसे परिकल्पित किया गया हैं जिसके विभिन्न उद्देश्यों को छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों के रूप में मापा जाता है।

10.4.1 ज्ञान

छात्र जब सामाजिक अध्ययन विषय का अधिगम करता है तो वह विभिन्न पदों तथ्यों, सम्प्रत्ययों, विधियों, प्रवृत्तियों, सिद्वान्तों, सामान्यीकरण, मान्यताओं, समस्याओं, उपकल्पनाओं, प्रक्रियाओं आदि के विषय में ज्ञानार्जन करता है। ब्लूम तथा उनके सहयोगियों के अनुसार ज्ञानात्मक पक्ष अथवा क्षेत्र में निम्नलिखित बातों को समाहित माना जा सकता है –

- विशिष्ट तथ्यों का ज्ञान
- विशिष्ट तथ्यों को उपयोग में लाने का ज्ञान
- परम्पराओं तथा मान्यताओं का ज्ञान
- प्रवृत्तियों तथा प्रक्रियाओं का ज्ञान
- वर्गीकरण तथा विभाजनों का ज्ञान
- मानदण्डों का ज्ञान
- विधियों तथा प्रविधियों का ज्ञान

- सिद्वान्तों तथा सामान्यीकरण का ज्ञान

ब्लूम के अनुसार उपरोक्त वर्णित ज्ञान प्रारम्भ में स्मृति के दो स्तरों–प्रत्यास्मरण तथा प्रत्याभिज्ञान पर प्राप्त होता है। इस उद्देश्य की प्रमुख विशेषता पुनः स्मरण करना होता है। अर्थात् ज्ञान उद्देश्य अधिगमकर्ता की उन क्रियाओं का वर्णन करता है जो मुख्य रूप से स्मृति से सम्बन्धित होती है इसलिए ज्ञान उद्देश्य के अन्तर्गत विभिन्न पदों, तथ्यों, सम्प्रत्ययों, विधियों, प्रवृत्तियों, संकेतो, परिभाषाओं, सिद्वान्तों, सूत्रों, प्रक्रियाओं, संरचनाओं आदि का प्रत्यास्मरण तथा प्रत्याभिज्ञान करने से सम्बन्धित व्यवहार निहित होते हैं।

उद्देश्य का निर्धारण– छात्रों ने विषय से सम्बन्धित कितना ज्ञान प्राप्त किया है, उनके व्यवहार में कितना परिवर्तन आया है, इसे जानने के लिए शिक्षण उद्देश्यों को व्यवहार परिवर्तन के रूप में व्यावहारिक क्रियाओं (Action verb) की सहायता से लिखा जाता है जिससे उनकी प्राप्ति की सीमा को स्पष्ट रूप से जाना जा सके।

उदाहरणार्थ–

1. छात्र तथ्यों, सम्प्रत्ययों, सूत्रों, सिद्वान्तों प्रवृत्तियों आदि का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
2. छात्र तथ्यों, सम्प्रत्ययों, सूत्रों, सिद्वान्तों, प्रवृत्तियों आदि का प्रत्याभिज्ञान कर सकेंगे।
3. छात्र लोकतन्त्र की परिभाषा दे सकेंगे।
4. छात्र संविधान में प्रदत्त स्वतन्त्रता सम्बन्ध अधिकारों की सूची बना सकेंगे।
5. छात्र छापामार युद्व पद्धति की रूपरेखा तैयार कर सकेंगे।
6. छात्र शाहजहाँ कालीन स्थापत्य कला का वर्णन कर सकेंगे।
7. छात्र जनाधिक्य के कारणों को लिख सकेंगे।

उपरोक्त रेखांकित शब्द ही ज्ञान क्षेत्र के क्रिया सूचक शब्द है जो छात्रों द्वारा ज्ञान क्षेत्र के विभिन्न उद्देश्यों को प्राप्त कर लेने की पुष्टि कर रहे हैं। इसे हम एक उदाहरण के माध्यम से स्पष्ट करते हैं कि यदि शिक्षक अपने छात्रों को लोकतन्त्र के विषय में पढाता है तो वह मान कर चलेगा कि छात्र लोकतन्त्र को परिभाषित कर सकेंगे और छात्र के मूल्याकंन के माध्यम से यह स्पष्ट हो जाएगा कि उन्होनें लोकतन्त्र पाठ के शिक्षणोपरान्त को ज्ञान क्षेत्र के समस्त उद्देश्यों को प्राप्त कर लिया है अथवा नही ।

बोध प्रश्न
2. ज्ञान क्षेत्र में किन–किन बातों को सम्मिलित किया जाता है– ____ ____ ____
क्रिया कलाप–

- ज्ञान क्षेत्र के 5 शैक्षणिक उद्देश्य को क्रिया सूचक शब्दों का प्रयोग करते हुए लिखिए।

10.4.2 अवबोध

अवबोध के लिए ज्ञान का होना आवश्यक है। छात्रों में सामाजिक अध्ययन के जिन तथ्यों, सम्प्रत्ययों, विधियों, प्रवृत्तियों, सिद्वान्तों, मान्यताओं, समस्याओं, प्रक्रियाओ आदि का ज्ञान प्राप्त करने के उपरान्त यदि इनका उन्हें बोध हो जाता है तो वे उसे अपने शब्दों में अनुवाद करने, व्याख्या करने, उल्लेख करने, उदाहरण देने, संकेत करने, प्रस्तुत करने, प्रतिपादन करने, वर्गीकरण करने, निर्णय लेने, चयन करने परिवर्तित करने आदि में सक्षम हो सकेंगे।

उद्देश्य का निर्धारण– शिक्षणोपरान्त अवबोध क्षेत्र के विभिन्न उद्देश्यों को छात्र ने किस सीमा तक प्राप्त किया है इसका जानने के लिए अध्यापक निम्नलिखित कथनों को व्यवहार सूचक क्रियाओं के साथ प्रस्तुत करेगा–

1. छात्र दीन–ए–इलाही धर्म की व्याख्या अपने शब्दों में कर सकेगा।
2. छात्र शाहजहाँ कालीन स्थापत्य कला का उदाहरण दे सकेंगे।
3. छात्र संभावित तृतीय विश्व युद्ध के होने वाले दुष्परिणामों का संकेत दे सकेंगे।
4. छात्र महात्मा गाँधी जी के सिद्वान्तों के आदर्श प्रस्तुत कर सकेंगे।
5. छात्र पंचवर्षीय योजनाओं का वर्गीकरण कर सकेंगे।
6. छात्र विदेश नीति के सन्दर्भ में अपने व्यक्तिगत निर्णय दे सकेंगे।

उपरोक्त रेखांकित शब्द छात्रों द्वारा अवबोध विकसित करने की पुष्टि करते हैं। अवबोध उद्देश्य के ये क्रियासूचक शब्द शिक्षणोपरान्त छात्रों के व्यवहार में हुए परिवर्तन को इंगित करते हैं।

बोध प्रश्न –

3. अवबोध के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।

____

____

4. अवबोध क्षेत्र के क्रिया सूचक शब्दों की सूची बनाइए।

____

....

10.4.3 प्रयोग

यदि छात्र अर्जित ज्ञान तथा अवबोध का प्रयोग अज्ञात परिस्थितियों में कर लेता है

और उसमें आलोचनात्मक तथा ताक्रिक चिन्तन की योग्यता विकसित हो जाती है तो इसका अभिप्राय उसने प्रयोग उद्देश्य को शिक्षणोपरान्त प्राप्त कर लिया है अर्थात् प्रयोग उद्देश्य के सन्दर्भ में उसके व्यवहार में परिवर्तन परिलक्षित हुआ है जिसके फलस्वरूप वह पूर्व कथन देने, जाँच करने, गणना करने, रचना करने, प्रयोग करने, ज्ञात करने, प्रदर्शन करने, उल्लेख करने, स्पष्ट करने आदि क्रियाओं में दक्ष हो सकेगा।

उद्देश्य का निर्धारण–अधिगमोपरान्त छात्र अर्जित ज्ञान तथा अवबोध का अन्य परिस्थितियों में कितना प्रयोग करने में सफल है इसको जानने के लिए अध्यापक निम्नांकित कथनों को माध्यम बनाएगा–

1. छात्र उपलब्ध आर्थिक संसाधनों के विश्लेषण के आधार पर देश की आर्थिक व्यवस्था के सन्दर्भ में पूर्व कथन दे सकेंगे।
2. छात्र मृदा के विभिन्न प्रकारों की जाँच कर सकेंगे।
3. छात्र भारत की मान्य भाषा की गणना कर सकेंगे।
4. छात्र भारत सरकार द्वारा भारतीय जीवन स्तर में सुधार तथा गरीबी मिटाने के प्रस्तावित प्रयासों का व्यक्तिगत स्तर पर प्रयोग कर सकेंगे।
5. छात्र भारत में जनसंख्या वृद्धि से खाद्य सामग्रियों और आवासीय स्थलों पर पड़ने वाले प्रभावों का उल्लेख कर सकेंगे।

   देश में बढ़ती हुई बेरोजगारी का आर्थिक विकास पर पड़ने वाले प्रभाव को स्पष्ट कर सकेंगे।
6. छात्र उपर्युक्त कथनों में समस्त रेखांकित शब्द प्रयोग उद्देश्य के क्रियासूचक शब्द है जो इस बात की पुष्टि कर रहे हैं कि ज्ञान तथा अवबोध विकसित होने के पश्चात छात्र अर्जित ज्ञान का अन्य परिस्थितियों में प्रयोग करने में सफल है।

क्रियाकलाप–

- निम्नांकित रिक्त स्थानों पर प्रयोग क्षेत्र की कार्य सूचक क्रियाओं को लिखिए।

10.4.4 कौशल

शिक्षक अपने छात्रों को विषय का सैद्वान्तिक ज्ञान देने के साथ–साथ सामाजिक अध्ययन के अध्ययन में सहायक व्यावहारिक कौशलों को विकसित करता है। विषय सम्बन्धित व्यावहारिक कुशलता के मापन हेतु वह कौशल सम्बन्धी निम्नांकित उद्देश्यों का निर्धारण करता है।

उद्देश्य का निर्धारणः–

1. छात्र दिए हुए तथ्यों (Data) के आधार पर मानचित्र, चार्ट, रेखाकृति, ग्राफ आदि बना सकेंगे।
2. छात्र तथ्यों के प्रस्तुतिकरण के रूप को दूसरे रूप में भी परिवर्तित कर सकेंगे।

3. छात्र विभिन्न ऐतिहासिक स्मारकों यथा ताजमहल, लाल किला, कुतुबमीनार आदि का प्रतिरूप (Model) बना सकेंगे।

4. छात्र विभिन्न राष्ट्रीय प्रतीकों का रेखाकंन कर सकेंगे।

उपर्युक्त कथनों में रेखाकिंत शब्द छात्रों के विषय सम्बन्धी कौशल को इंगित करते हैं अर्थात छात्रों ने बनाने, रेखाकंन करने, दर्शाने आदि का कौशल अर्जित कर लिया है।

बोध प्रश्न

5. सामाजिक अध्ययन के छात्रों ने विषय सम्बन्धी कितना कौशल अर्जित किया है, इसे आप कैसे पहचानेंगे।

____

____

____

10.4.5 रूचि

चूँकि सामाजिक अध्ययन की विषय वस्तु का सम्बन्ध उस समाज से होता है जिसमें छात्र रहता है इसलिए अध्ययनोपरान्त छात्र सामाजिक अध्ययन तथा समाज के लोगों से सम्बन्धित समस्याओं में रूचि लेता है या नही, इसे भी जानना अत्यन्त आवश्यक है।

उद्देश्य का निर्धारण–छात्र की सम्बन्धित रूचि का मापन करने हेतु अध्यापक निम्नलिखित उद्देश्यों का निर्धारण करता हैः–

1. छात्र सामाजिक अध्ययन से सम्बन्धित विभिन्न पुस्तकों तथा अन्य साहित्य का अध्ययन कर सकेंगे।

2. छात्र अवकाश काल में समाज की विभिन्न समस्याओं को समझ कर उनका हल प्रस्तावित कर सकेंगे।

3. छात्र सामाजिक प्रक्रियाओं में हो रहे स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर परिवर्तनों का निरीक्षण कर सकेंगे।

4. छात्र विभिन्न सामाजिक मुद्दों पर एक दूसरे से विचार–विमर्श कर सकेंगे।

5. छात्र ऐतिहासिक, आर्थिक, भौगोलिक तथा सामाजिक दृष्टिकोण से प्रसिद्व तथा महत्वपूर्ण स्थलों का भ्रमण कर सकेंगे।

6. छात्र समाज से सम्बन्धित विभिन्न क्रियाकलापों में रूचि ले सकेंगे।

क्रिया कलाप–

- सामाजिक अध्ययन के छात्रों की रूचि का मापन करने के लिए आप किस प्रकार उद्देश्यों को लिखेंगे? तीन उदाहरण प्रस्तुत कीजिए।

उपयफ्रक्त कथनों में रेखांकित शब्द अधिगमोपरान्त छात्रों के व्यवहार में होने वाले रूचि सम्बन्धी परिवर्तनों की पुष्टि करते हैं।

10.4.6 अभिवृत्ति

सामाजिक अध्ययन विषय के प्रति छात्रों की सकारात्मक अथवा नकारात्मक अभिवृत्ति है, इसको जानने के लिए अध्यापक विभिन्न प्रश्नों के माध्यम से उनके व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों का मूल्यांकन करता है।

उद्देश्य का निर्धारण –

1. छात्र दूसरों के विचारों तथा दृष्टिकोणों का आदर करते हुए उनके प्रति भाईचारा तथा सहानुभूति की भावना रख सकेंगे।
2. समस्याओं के विषय में राय निश्चित करने में वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अपना सकेंगे।
3. असंगत सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक नीतियों के प्रति प्रतिकूल विचार रख सकेंगे।
4. मानव श्रम के प्रति आदर भाव कर सकेंगे।
5. भारतीय संस्कृति के विकास में विभिन्न प्रजातियों, धर्मो, तथा क्षेत्रों के लोगों के योगदान की सराहना कर सकेंगे।
6. महान आदर्शो की भावनाओं को अपना सकेंगे।

क्रिया कलापः–

- पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में छात्रों की अभिवृत्ति मापक तीन उद्देश्यों का निर्धारण कर उन्हें लिखिए।

उपयफ्रक्त कथनों में रेखांकित शब्द छात्रों की सामाजिक अध्ययन विषय के प्रति धनात्मक/सकारात्मक अभिवृत्ति का बोध कराते हैं अर्थात उपर्युक्त कथनों से विषय के अध्ययनोपरान्त छात्र का अपने समाज के प्रति संवदेनशील होना, अपनी संस्कृति तथा मूल्यों पर गर्व करना, वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना, श्रम के प्रति निष्ठा भाव, असंगतता का विरोध करना, समस्या समाधान के लिए तत्पर होना आदि परिलक्षित हो रहा है।

उपयफ्रक्त बिन्दुओं के माध्यम से आप समझ गए होगें कि छात्रों ने सामाजिक अध्ययन विषय का शैक्षणिक उद्देश्य कितनी मात्रा में प्राप्त किया, उसकी गुणवत्ता कितनी है, उसके व्यवहार में कितना परिवर्तन आया है आदि बातों के निर्धारण हेतु अध्यापक उनका मूल्याकंन करता है और मूल्याकंन के प्रयोजनों की सिद्धि हेतु शैक्षणिक उद्देश्यों को छात्रों के विशिष्ट व्यवहार को ध्यान में रखकर लिखता है। ये उद्देश्य ही बताते है कि अमुक बात सीख लेने के उपरान्त छात्र अमुक–अमुक कार्य कर सकेंगे और इस प्रकार वह छात्रों के व्यवहार में हुए परिवर्तन का सही ढ़ंग से जान जाता है।

अब शायद आपके मन में उद्देश्यों के लेखन स्वरूप को लेकर प्रश्न उठ रहा होगा। तो इसके

समाधानार्थ आप पहले निम्नलिखित दो कथनों को पढ़िए।

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त छात्र

1. मानचित्र पर विभिन्न स्थलों की स्थिति जान सकेंगे।

2. मानचित्र पर विभिन्न स्थलों की स्थिति को दर्शा सकेंगे।

उद्देश्य सूचक पहले उदाहरण को यदि आप ध्यान से पढ़िए तो यह बोध होता है कि छात्र मानचित्र पर स्थलों की स्थिति जान सकेंगे परन्तु छात्रों के द्वारा किए जाने वाले किसी कार्य का कोई उल्लेख नही हुआ है। परन्तु दूसरे उदाहरण में छात्रों द्वारा उन स्थलों को मानचित्र पर दर्शाने की बात कही गई है अर्थात अध्ययनोंपरान्त वे दर्शाने का कार्य कर सकेंगे अर्थात वे केवल जानकारी ही नही प्राप्त कर रहे हैं वरन क्रिया करके भी दिखा रहे हैं। इसीलिए अध्यापक को मूल्याकंन के उद्देश्य सदैव व्यवहारपरक शब्दावली में ही लिखना चाहिए।

10.5 सामान्यीकरण

तथ्यों का विश्लेषण एवं आलोचना कर कुछ निष्कर्ष निकालना और कुछ नियमों का निर्धारण करना ही सामान्यीकरण है। प्रायः समस्या पद्धति में समस्या का विश्लेषण कर कुछ निष्कर्ष निकाला कर उसके समाधानार्थ नियम बनाए जाते हैं। इन नियमों का निर्धारण ही सामान्यीकरण कहलाता है। आप इसे एक सरल उदाहरण के माध्यम से समझ सकते हैं

आम बेचने वाले किसी विक्रेता के पास सभी आम हरे रंग के है जिसे कई लोगों ने खरीदा। उन आमों को चखने के पश्चात यदि सभी क्रेताओं ने उसका स्वाद खट्टा बताया, तो आप उसके आधार पर यह निष्कर्ष निकालते हैं कि सभी हरे रंग के आम कच्चे और खट्टे होते हैं। उसके बाद यदि अन्य इसी प्रकार की परिस्थितियां आती हैं अर्थात दुबारा से अन्य व्यक्ति से भी खरीदे गए हरे रंग के आम कच्चे तथा स्वाद में खट्टे निकलते हैं तब आप यह निष्कर्ष निकाल लेते हैं कि सभी हरे रंग के आम कच्चे तथा खट्टे होते हैं और इस निष्कर्ष के आधार पर यह नियम बनाते हैं कि हरे रंग के आम कच्चे और खट्टे होते हैं। यह नियम ही सामान्यीकरण करना कहलाता है। इसे नियमाकंन भी कहते हैं।

सामाजिक अध्ययन के अधिगम के दौरान भी कई ऐसी, ऐतिहासिक समस्याएं अथवा अनुत्तरित प्रश्न छात्रों के समझ आते हैं जिनके समाधानार्थ अथवा अनुत्तरित प्रश्न को उत्तरित करने के लिए छात्र सर्वप्रथम समस्या से सम्बन्धित तथ्यों और आकँड़ों को एकत्र कर सर्वप्रथम किसी परिकल्पना (समस्या के समाधान हेतु प्रस्तावित कथन) का निर्माण करता है तत्पश्चात तथ्यों तथा आँकड़ो का विश्लेषण करता है। विश्लेषण के आधार पर कुछ निष्कर्ष निकाल कर उसके आधार पर कुछ नियम बनाता है और यही नियम सामान्यीकरण कहलाता है जिसके आधार पर समस्या का समाधान किया जाता है। सामान्यीकरण, समस्या समाधान पद्धति का एक चरण है जिसमें छात्र द्वारा वैज्ञानिक ढ़ंग से समस्या समाधान के लिए निष्कर्ष निकाले जाते हैं। उन निष्कर्षो को वास्तविक परिस्थितियों की कसौटी पर कसकर उनकी सत्यता एवं उपयोगिता की जाँच की जाती है। पुनः निरीक्षण, जाँच एवं प्रयोगों के आधार पर एक निश्चित नियम का निर्माण किया जाता है जिनका लेखा जोखा सुरक्षित रख लिया जाता है जिससे आने वाली भावी समस्याओं के समाधान हेतु उसके प्रयोग की सम्भावनाओं पर विचार किया जा सके।

10.5.1 सामान्यीकरण की प्रक्रिया के लाभ

- सामान्यीकरण से छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है।
- यह विभिन्न प्रकार के नियमों के प्रतिपादन का माध्यम है जिससे अनेक भावी समस्या का समाधान प्रस्तुत किया जा सकता है।
- सामान्यीकरण की प्रक्रिया छात्रों में सोचने, विचारने, निर्णय करने, तुलना करने, विश्लेषण करने, मूल्याकंन और चयन करने की प्रवृत्तियों के विकास में अत्यन्त सहायक है।
- छात्रों में पुस्तक के पृष्ठों को रटने के बजाय उनकी विषय वस्तु को प्रयोग की कसौटी पर कसने की प्रवृत्ति जन्म लेती है।
- ऐतिहासिक समस्याओं अथवा तथ्यों का विश्लेषण और आलोचना करके छात्र जब निष्कर्ष निकालते हैं तो नियमों के निर्धारण और सामान्यीकरण सेछात्र अत्यन्त उत्साहित और अभिप्रेरित होते हैं। उनकी यह प्रवृत्ति उन्हें बड़ी–बड़ी समस्याओं के समाधान हेतु भी प्रेरित करती है।

10.5.2 सामान्यीकरण की प्रक्रिया के दोष

- सामाजिक अध्ययन के प्रत्येक प्रकरण के सन्दर्भ में सामान्यीकरण को नही लागू किया जा सकता।
- इसका प्रयोग कर पाठ्यक्रम को सत्रान्त तक समाप्त कर पाना मुश्किल है क्योंकि इसमें समय बहुत लगता हैं।
- यह आवश्यक नही है कि एक परिस्थिति का सामान्यीकरण दूसरी परिस्थिति में भी लागू हो या वो दूसरी प्रकार की समस्या के समाधान में सहायक हो।
- छोटे बच्चे सामान्यीकरण के लिए अनुपयुक्त होते हैं क्योंकि उनमें इतनी मानसिक परिपक्वता नही होती कि वे समस्या का बहुआयामी विश्लेषण कर, निष्कर्ष निकाल कर नियमों का प्रतिपादन कर सकें।

यद्यपि सामान्यीकरण की प्रक्रिया छोटे बालकों के लिए उपयुक्त नही है परन्तु उच्च कक्षा के छात्रों की मानसिक शक्तियों को प्रखर करने में यह महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

<u>बोध प्रश्न –</u>

6. सामान्यीकरण से आप क्या समझते हैं।

7. सामाजिक अध्ययन विषय में इसकी आवश्यकता किस प्रकार पड़ सकती है।

———————————————————————————————
———————————————————————————————
—————————————————————————

10.6 समस्या समाधान

समस्या समाधान विधि पूर्णतः कोई नवीन विधि नही है। प्राचीन काल में सुकरात, सेण्ट थॉमस जैसे विचारक भी इसका प्रयोग किया करते थें। यह सामाजिक अध्ययन के शिक्षण की एक उपयोगी विधि है जिसमें छात्रों के सम्मुख किसी भी तथ्य को प्राप्त करने के लिए कोई समस्या दी जाती है जिसका हलछात्र को स्वंय के प्रयासो से ढूड़ना पड़ता है औरछात्र को समस्या समाधान वैज्ञानिक ढ़ंग से करना होता है। दूसरे शब्दों में छात्र स्वंय ही चिन्तन, तक्र, पूछताछ, अनुसंधान, वाछंनीय सामग्री को एकत्रित करना तथा समस्या के विविध पहलुओं की समीक्षा करते हुए किसी निष्कर्ष तक पहुंचते हैं और आवश्यकतानुसार अपने शिक्षक से मार्ग निर्देशन लेते हैं। इस सम्प्रत्यय को और अधिक हम निम्नलिखित विद्वानों के कथनों से स्पष्ट करते हैं –

सी० वी० गुड के अनुसार " समस्या समाधान विधि निर्देश की वह विधि है जिसके द्वारा सीखने की प्रक्रिया को उन चुनौतीपूर्ण स्थितियों की सृजना द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है, जिनका समाधान करना आवश्यक है। "

जेम्स एम० ली० के शब्दों में " समस्या समाधान एक शैक्षिक प्रणाली है जिसके द्वारा शिक्षक तथाछात्र किसी महत्वपूर्ण शैक्षिक कठिनाई के समाधान या स्पष्टीकरण के लिए सचेत होकर एवं नियोजित ढ़ंग से पूर्ण संलग्नता के साथ प्रयास करते हैं। समस्या समाधान एक विशेष शिक्षण–प्रविधि की अपेक्षा एक सामान्य शिक्षण विधि है। "

10.6.1 समस्या समाधान के आवश्यक तत्व

अध्यापक द्वारा समस्या का चयन करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है

- समस्या नवीन होनी चाहिए।
- इसका सम्बन्ध जीवन की वास्तविकताओं से होना चाहिए।
- समस्या स्पष्ट, उपयोगी प्रेरणात्मक तथा समाधान के योग्य होनी चाहिए।
- समस्या बालक के पाठ्यक्रम से सम्बन्धित होनी चाहिए।
- यह शैक्षिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण होनी चाहिए अर्थात इसके माध्यम से छात्रों को सीखने का अवसर प्राप्त होना चाहिए।
- समस्या बालकों की रूचि, आवश्यकता एवं क्षमता के अनुकूल होनी चाहिए।
- समस्या के माध्यम से छात्रों की तक्र, चिन्तन तथा सृजनात्मकता को प्रोत्साहन मिलना चाहिए।
- बहुत लम्बे समय तक चलने वाली समस्या को नही लेना चाहिए।

बोध प्रश्न –

8. समस्या समाधान के आशय को स्पष्ट कीजिए।

____
____
____

9. अध्यापक द्वारा अपने छात्रों को दी जाने वाली समस्या का स्वरूप कैसा होना चाहिए?

____
____
____

10.6.2 समस्या समाधान के सोपान

समस्या समाधान की प्रक्रिया निम्नलिखित सोपान से होती हुई गुजरती है –

1. समस्या का चयनः–अर्थात जिस पर छात्रों को कार्य करना होता है सर्वप्रथम उसे अध्यापक द्वारा समस्या के रूप में छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है।

2. समस्या का प्रस्तुतिकरण – समस्या के चयन के उपरान्त उसे सरल, स्पष्ट तथा बोधगम्य शब्दों में छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत की जानी चाहिए जिससेछात्र पूरी रूचि तथा उत्साह के साथ उसके समाधानार्थ प्रस्तुत हो जाए।

3. तथ्यों का सकंलन–अर्थात समस्या के समाधान हेतुछात्र विभिन्न यथार्थ तथ्यों का संकलन करते हैं और अध्यापक आवश्यकतानुसार उनकी सहायता करते हैं। जैसे कि चयनित समस्या यदि " क्या अकबर एक पाखण्डी शासक था " है तो छात्रों को अकबर के व्यक्तित्व, उसकी नीतियों, विजय, पड़ोसी देशों/राज्यों के साथ सम्बन्ध तथा उसकी उपलब्धियों से सम्बन्धित साक्ष्य एकत्रित कर उसकी धार्मिक नीति का विश्लेषण तथा संश्लेषण करना होगा।

4. परिकल्पना का निर्माण – अर्थातछात्र संकलित तथ्यों एवं सामग्रियों के आधार पर समस्या के समाधान हेतु संभावित कथन प्रस्तुत करते हैं कि शायद उक्त समस्या का यह कारण हो सकता है। और निर्मित परिकल्पना के आधार पर समाधान की राह में ताक्रिक ढ़ंग से चलते हैं।

5. तथ्यों का विश्लेषण– इस सोपान मेंछात्र एकत्रित तथ्यों की जाँच एवं विश्लेषण कर तक्र एवं चिन्तन के आधार पर उनकी यथार्थता जानने का प्रयास करते हैं।

6. समाधान पर पहुँचना –एकत्रित तथ्यों तथा सामग्रियों के आधार परछात्र विश्लेषण और संश्लेषण करते हुए अपनी परिकल्पना को सत्यापित करते हुए समाधान पर अथवा एक निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।

7. मूल्याकंन एवं सामान्यीकरण– निष्कर्ष निकाल लेने के पश्चात साथ एक बार पुनः

समग्रता के साथ पूरी प्रक्रिया का मूल्याकंन करते हैं अर्थात निष्कर्ष को वास्तविकता की कसौटियों पर कसते हुए उसके सत्यता तथा उपयोगिता की जाँच कर एक नियम का निर्माण करते हैं अर्थात सामान्यीकरण करते हैं और उनका यह नियम एक सामान्य तथा ताक्रिकता पर आधारित होता है जिसका प्रयोग वे अन्य परिस्थितियों में भी कर सकते हैं।

8. लेखा–जोखा तैयार करना– उपरोक्त सोपानों से होते हुएछात्र अन्ततः अपने निर्णय अथवा निष्कर्ष का एक लेखा–जोखा तैयार कर भविष्य में भी आवश्यकतानुसार उसके प्रयोग हेतु सुरक्षित रखते हैं। शिक्षक उनके द्वारा किए गए समस्त कार्यो का मूल्याकंन कर उनकी प्रगति का आंकलन करते हैं।

बोध प्रश्न –

10. छात्र किसी भी समस्या के समाधान के लिए किन–किन सोपानों का अनुसरण करता हैं ?

____

____

____

____

10.6.3 समस्या समाधान विधि के गुण

- यह विधि छात्रों में सोचने, निर्णय करने, तुलना करने, तक्र करने, मूल्याकंन तथा चयन करने की प्रवृत्ति का विकास करती है।
- छात्र स्वक्रिया के द्वारा ज्ञान प्राप्त करते हैं।
- यह विधि छात्रों में वैज्ञानिक ढ़ंग से काम करने की आदत को विकसित करती है।
- इसके माध्यम से कार्य करने से छात्रों में मुद्रित पृष्ठों को रटने के स्थान पर स्वाध्ययन की आदत का विकास होता हैं।
- इस विधि से छात्रों में अपने जीवन की सामाजिक समस्याओं के हल ढूड़ने का कौशल विकसित होता हैं।
- इस विधि से छात्रों में उपयोगी तथ्यों के संग्रह की प्रवृत्ति विकसित होती है।
- वे नवीन सन्दर्भ में पुराने तथ्यों के प्रयोग की कुशलता भी अर्जित करने लगते हैं।
- उनमें सामान्यीकरण की योग्यता का विकास होता हैं।
- यह विधि छात्रों को मिलजुल कर कार्य करने को प्रेरित करती है जिससे छात्रों में सहयोग तथा एक दूसरे के विचारों के प्रति सम्मान के भाव का विकास होता हैं।

- यह विधि एक प्रेरणात्मक विधि है।

इस विधि के महत्व को हम जार्ज जॉन्सन के निम्नलिखित कथन से भी समझ सकते हैं जिसके अनुसार " मस्तिष्क को प्रशिक्षित करने का सर्वोत्तम ढ़ंग उसके समक्ष वास्तविक समस्याओं को प्रस्तुत करना तथा उसको उनके समाधान के लिए अवसर तथा स्वतन्त्रता प्रदान करना है। "

बोध प्रश्न –

11. समस्या समाधान विधि छात्रों की मानसिक शक्तियों को प्रखर बनाती है। इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

____
____
____

10.6.4 समस्या समाधान विधि के दोष

- यह विधि छोटे बालकों के लिए उपयफ्रक्त नही है।
- इस विधि में समय की आवश्यकता बहुत अधिक पड़ती है। यदि इस विधि से अध्यापक सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम को सत्र भर में पूरा करना चाहे, तो वह नही कर सकता है।
- सामाजिक अध्ययन के समस्त प्रकरणों यथा अतीत से सम्बन्धित तथ्यों का शिक्षण इस विधि के माध्यम से नही हो सकता।
- किसी भी समस्या का समाधान पूर्ण रूपेण सन्तोष जनक ढंग से हो, यह भी आवश्यक नही है।
- इस विधि के प्रयोग हेतु सन्दर्भ ग्रन्थ, निर्देशात्मक सामग्री की बहुत अधिक आवश्यकता होती है। कभी–कभी तो चयनित समस्या के अनुरूप सम्बन्धित स्थल पर जाना भी अपेक्षित हो जाता है। ऐसी स्थिति में यह विधि छोटे बालकों के लिए बहुत उपयोगी नही रह जाती। और इस सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि हमारे विद्यालयों में न तो इस प्रकार की पुस्तकों तथा पत्रिकाओं की उपलब्धता है और न ही विद्यालय आर्थिक दृष्टि से इतने सक्षम है कि वे इनकी व्यवस्था कर सकें।
- इस विधि की सफलता ऐसे सुयोग्य तथा प्रशिक्षित अध्यापकों पर भी निर्भर करती है जो छात्रों को वांछित प्रेरणा तथा दिशा निर्देशन दे सके।
- इस विधि में समय तथा शक्ति दोनों का ही अपव्यय होता है।

10.6.5 समस्या समाधान विधि के सन्दर्भ में कुछ सुझाव

उपयफ्रक्त दोषों के बावजूद निम्नलिखित बातों पर अमल करते हुए इस विधि को उपयोगी बनाया जा सकता है

- इस विधि का प्रयोग मात्र उन्ही प्रकरणों के सन्दर्भ में किया जाए जिनसे सम्बन्धित तथ्यों का संग्रह तथा सन्दर्भ पुस्तकें आसानी से उपलब्ध हो जाए। स्मरण रहे कि प्रत्येक प्रकरण के सन्दर्भ हम इस विधि का प्रयोग नही कर सकते अन्यथा निष्कर्ष में वस्तुनिष्ठता कम आने की संभावना रहेगी।
- समस्याओं का चयन छात्रों की सामाजिक परिस्थितियों के ही सन्दर्भ में किया जाए।
- समस्या स्पष्ट एवं बोधगम्य रूप में प्रस्तुत की जानी चाहिए।
- समस्याओं के विश्लेषण एवं संश्लेषण में अध्यापक द्वारा पर्याप्त मार्ग दर्शन मिलना चाहिए। अर्थात समस्या का समाधान उसके स्वरूप पर निर्भर करती है इस बात का स्पष्ट संकेत अध्यापक को अपने छात्रों को दे देना चाहिए जैसे – यदि समस्या का स्वरूप आगमनात्मक है तो आगमन के पदों का अनुसरण किया जाएगा और यदि उसका स्वरूप निगमनात्मक है तो उससे सम्बन्धित पदों का पालन करना होगा।

▪ उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए इस विधि को उपयोगी बनाया जा सकता है।

10.7 योजना विधि

योजना विधि के जन्मदाता अमेरिका के प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री डबल्यू एच० किलपैट्रिक माने जाते हैं जिन्होनें अपने गुरू जॉन डयूवी के प्रयोजनवाद के सिद्वान्त के आधार पर इस पद्धति का निर्माण किया। योजना विधि में छात्रों के समक्ष किसी समस्या के समाधान से सम्बन्धित एक योजना प्रस्तुत की जाती है और छात्र अपने ज्ञान, विवेक तथा अनुभवों के आधार पर योजना के अनुरूप समस्या समाधान हेतु प्रयत्न करते हैं। इस विधि के सम्प्रत्यय को आप और अधिक निम्नाकिंत विद्वानों के मत से भी समझ सकते हैं :–

किलपैट्रिक के अनुसार " योजना सामाजिक वातावरण में पूर्ण संलग्नता से किया जाने वाला उद्देश्यपूर्ण कार्य है। "

पाक्रर के अनुसार " योजना कार्य की एक इकाई है जिसमें छात्रों को कार्य की योजना और सम्पन्नता के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है। "

थामस और लैंग के शब्दों में " प्रोजेक्ट अथवा योजना इच्छानुसार ऐसा कार्य है जिसके रचनात्मक प्रयास अथवा विचार हों और जिसका कुछ साकार परिणाम हो। "

स्टीवेन्सन के अनुसार " यह एक समस्या मूलक कार्य है जो अपनी स्वाभाविक परिस्थितियों के अन्तर्गत पूर्णता को प्राप्त करता है। "

उपयफ्रक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि योजना पद्धति में कार्य का एक उद्देश्य तथा एक योजना होती है। छात्रों के सम्मुख एक समस्या प्रस्तुत कर दी जाती है जिसे सुलझाने का वह प्रयास सुव्यवस्थित ढ़ंग से करता है। सामाजिक अध्ययन में विभिन्न

योजनाओं का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है क्योंकि सामाजिक अध्ययन सामाजिक वातावरण में मानवीय सम्बन्धों का अध्ययन करता है और योजनाओं की पूर्ति सामाजिक वातावरण में ही सम्भव है। इस सन्दर्भ में अनेक ऐसी योजनाएं प्रयोग में लायी जा सकती है जैसे।

- ग्राम पंचायत का चुनाव, संगठन व कार्य प्रणाली
- विद्यालय के विभिन्न परिषदों, गोष्ठियों तथा समुदायों का चयन, संगठन तथा उनकी कार्य प्रणाली।
- हमारे पर्व एवं उत्सव
- सिंचाई के साधन
- सामुदायिक सर्वेक्षण
- विभिन्न स्थलों की यात्राएँ
- विभिन्न वस्तुओं यथा सिक्कों, टिकटों, मुहरों तथा बर्तनों आदि का निर्माण
- मानचित्र, समय रेखा, समय ग्राफ, चित्र तथा मॉडल का निर्माण
- यातायात के साधन
- विभिन्न युगों के मकानों की निर्माण कला का ज्ञानार्जन करना
- भिन्न–भिन्न देशों में मकान की कलाओं से परिचित होना
- भारत में कृषि की हीन दशा आदि

बोध प्रश्न –

12. योजना विधि के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।

____
____
____

10.7.1 योजना के प्रकार

1. व्यक्तिगत योजनाएं अर्थात ऐसी योजनाएं जिसे एक हीछात्र को दी जाती है और वह अकेले ही इसे पूरा करता है जैसे – मानचित्र, समयरेखा, मॉडल, चित्र आदि बनाना

2. सामूहिक योजनाएं अर्थात ऐसी योजनाएं जिसमें छात्र मिलजुल कर प्रदत्त कार्य को अन्तिम रूप देते हैं जैसे विद्यालय की सफाई, सहकारी दुकान, सहकारी बैंक या पोस्ट ऑफिस का संचालन आदि।

थॉमस एम० रिस्क ने अपनी पुस्तक "Principles & practices of Teaching secondary schools" में तीन प्रकार की योजनाओं को बताया है। जैसे–

1. उत्पादनात्मक योजनाएं – जिसके अन्तर्गत व्यक्तिगत अथवा सामूहिक रूप सें किसी वस्तु का निर्माण करने को दिया जाता है। जैसे – मॉडल बनाना, खिलौने बनाना आदि।

2. सीखने से सम्बन्धित योजनाएं – जिसमें किसी रचनात्मक या सृजनात्मक क्रिया के माध्यम सेछात्र ज्ञानार्जन करता है। जैसे – किसी भी प्रकार के निबन्ध की रूपरेखा बनाना सीखना, कहानी, कविता आदि को प्रभावकारी ढ़ंग से लिखना तथा पढ़ना सीखना।

3. बौद्धिक या समस्यात्मक योजनाएं – जिसके अन्तर्गत पूर्व कार्य प्रणाली या सिन्द्वात का विश्लेषण कर उसका समग्रता के साथ ज्ञान प्राप्त किया जाता है । जैसे – विभिन्न राजनीतिक इकाइयों की कार्य प्रणाली, वित्तीय व्यवस्था आदि।

किलपैट्रिक ने अपनी पुस्तक 'Foundation of Method' में चार प्रकार की योजनाओं का वर्णन किया है जैसे –

1. रचनात्मक योजनाएं :– जो उत्पादनात्मक तथा सीखने से सम्बन्धित योजनाओं की भांति है।

2. रसास्वादनात्मक योजनाएं :– इस प्रकार की योजनाएं किसी कार्य को पूरा आनन्द प्राप्त करने या सौन्दर्यानुभूति से सम्बन्धित होती है जैसे – संगीत सुनना, कविता सुनना तथा सुन्दर चित्र अथवा वस्तु को देखना आदि।

3. अभ्यासात्मक योजनाएं :– जिसके अन्तर्गत किसी कार्य में दक्षता तथा निपुणता प्राप्त की जाती है। जैसे – शब्दों का उच्चारण सीखना, तैराकी, चित्रकारी संगीत आदि सीखना

4. समस्यात्मक योजनाएं :– यह थॉमस एम० रिस्क द्वारा बताई गई बौद्धिक या समस्यात्मक योजनाओं की ही भांति होती है।

उपयक्रक्त योजनाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार की योजनाओं का लेखन आपके ज्ञानवर्द्धन के लिए आवश्यक है यथा –

- निर्माण कार्य से सम्बन्धित योजनाएं
- बागवानी सम्बन्धित योजनाएं
- सफाई कार्य से सम्बन्धित योजनाएं
- कृषि कार्य से सम्बन्धित योजनाएं

- चीड़ फाड़ कार्य से सम्बन्धित योजनाएं
- स्थलीय स्थलों से सम्बन्धित योजनाएं
- विभिन्न वस्तुओं के संग्रहण से सम्बन्धित योजनाएं
- शैक्षिक उन्नयन सम्बन्धित योजनाएं
- वैज्ञानिक प्रयोग से सम्बन्धित योजनाएं
- पहचान सम्बन्धित योजनाएं
- औद्योगिक ज्ञान सम्बन्धित योजनाएं

10.7.2 योजना पद्धति के आधार भूत सिद्वान्त

योजनाओं को बनाने अथवा चयन करने में निम्नलिखित सिद्वान्तों को ध्यान में रखना चाहिएः–

1. उपयोगिता का सिद्वान्त – अर्थात योजनाएं उपयोगी होनी चाहिए।
2. प्रयोजनशीलता का सिद्वान्त – अर्थात योजानाएं छात्रों के प्रयोजन या उद्देश्य को पूरा करने वाली होनी चाहिए।
3. वास्तविकता का सिद्वान्त – अर्थात योजनाएं बालक के वास्तविक जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए जिससे वे भविष्य में सफल जीवन जी सके।
4. सामाजीकरण का सिद्वान्त – इस योजना विधि मेंछात्र सामूहिक रूप से करते हैं जिससे उनमें सहयोग, सहकारिता, सदभावना तथा स्नेह का भाव जाग्रत हो सके।
5. क्रियाशीलता का सिद्वान्त – क्रियाशील रहना बालक की सहज प्रवृत्ति होती है इसीलिए मनोविज्ञान ने करके सीखने पर बल दिया है। योजना विधि भी इसी विचार से प्रेरित हैं जिसमें क्रिया के द्वारा ही शिक्षा प्रदान की जाती हैं।
6. व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्वान्त – चूंकि प्रत्येक बालक में व्यक्तिगत भिन्नता पाई जाती है अतएव योजना विधि में छात्र की राय लेते हुए उनकी रूचि तथा योग्यता के अनुसार कार्य दिया जाता है।
7. स्वतन्त्रता का सिद्वान्त – अर्थात योजना विधि में प्रत्येक छात्र को प्रोजेक्ट चुनने, क्रियान्वित करने तथा कार्य का मूल्याकंन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी जाती है।
8. शैक्षिक मूल्य का सिद्वान्त – अर्थात वही योजनाएं लाभप्रद होती हैं जिनका शैक्षिक मूल्य होता है।
9. मितव्ययता का सिद्वान्त – अर्थात ऐसी योजनाएं चयनित की जानी चाहिए जिसे पूर्ण करने में बहुत महंगी सामग्री की आवश्यकता न हो वरन उपलब्ध संसाधनों तथा कम लागत में पूरी होने वाली योजना चयनित की जानी चाहिए।

10. उचित समय का सिद्धान्त – योजना बहुत लम्बे समय तक चलने वाली नही होनी चाहिए। उसका स्वरूप ऐसा हो जिसे अल्प समय में ही खत्म किया जा सके जिससे विद्यालय की अन्य गतिविधियाँ बाधित न हो।

बोध प्रश्न –

13. योजना का निर्माण करते समय अथवा चयन करते समय छात्रों को किन–किन बातों पर ध्यान देना अपेक्षित है।

____
____
____

10.7.3 योजना विधि के सोपान

योजना विधि का शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में प्रयोग करने के दौरान निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता है :–

1. उचित परिस्थिति उत्पन्न करना– सर्वप्रथम शिक्षक द्वारा छात्रों के समक्ष ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करना चाहिए जिससे उनमें रूचि उत्पन्न हो जाए और वे समस्या के प्रति एकाग्रचित होकर उसका प्रस्तावित हल शिक्षक के समक्ष निर्भीक होकर प्रस्तुत करने में तत्परता दिखा सके।

2. योजना का चुनाव– शिक्षक द्वारा बालकों के समक्ष विभिन्न योजनाओं को प्रस्तुत कर वाद–विवाद द्वारा उनके शैक्षिक मूल्यों को निकलवाने अथवा बताने का प्रयास छात्रों से करवाना चाहिए। और छात्रों की रूचि, योग्यता तथा आवश्यकता अनुसार ही उन्हे योजना के चयन में पर्याप्त सहायता करनी चाहिए।

3. उद्देश्य निर्धारण करना– बिना उद्देश्य के कोई भी कार्य अर्थहीन होता है अतएव योजना के चयन के पश्चात उसका उद्देश्य निश्चित कर लेना चाहिए।

4. कार्यक्रम बनाना–उद्देश्य निश्चित होने के पश्चात योजना को पूर्ण करने का एक प्रस्तावित कार्यक्रम रखा जाता है जिसे शिक्षक के निर्देशन में छात्र प्रस्तुत करते हैं। चूंकि यह एक सामूहिक कार्य होता है इसलिए अध्यापक को छात्रों की रूचि तथा क्षमता के अनुसार उत्तरदायित्व दे देना चाहिए जिससे सामूहिक प्रयास से योजना को अन्तिम रूप दिया जा सके।

5. योजना को क्रियान्वित करना– चूंकि यह विधि " क्रिया द्वारा सीखना " के सिद्वान्त पर आधारित होता है इसलिए इस सोपान में प्रत्येक छात्र अपने–अपने गति से प्रदत्त उत्तरदायित्व के निर्वहन में लग जाते हैं। इस सोपान में छात्रों को पढ़ना, लिखना, हिसाब लगाना, घूमना, निरीक्षण करना, वस्तुओं को आवश्यकतानुसार संग्रह करना, विचार विमर्श तथा निर्माण कार्य करने होते हैं।

6. योजना का मूल्याकंन करना – योजना पूर्ण हो जाने के पश्चात समस्त छात्र शिक्षक के समक्ष अपने–अपने कार्य का ब्यौरा प्रस्तुत करते हैं और विचार मन्थन किया जाता

है कि प्रोजेक्ट कहां तक सफल हुआ है। इस सोपान में छात्रों द्वारा अपने कार्य पर पुनः विचार करते हुए अपनी त्रुटियों तथा उपलब्धियों का अनुभव किया जाता है। नतीजतन वे उपयोगी ज्ञान की भविष्य में पुनरावृत्ति करते हैं तथा त्रुटियों को सुधारते हैं।

7. योजना का रिकॉर्ड बनाना – इस सोपान मे ंछात्र किए गए कार्यो को एक लेखा बनाते हैं जिसमें आरम्भ से लेकर अन्त तक के समस्त कार्यो का विवरण प्रस्तुत किया जाता है और इसी रिकॉर्ड के आधार पर शिक्षक छात्रों की प्रगति के सन्दर्भ में मूल्याकंन करता है।

10.7.4 योजना के गुण

- यह विधि बाल केन्द्रित है जिसमें व्यक्तिगत भिन्नता को दृष्टिगत रखते हुए छात्रों को स्वतन्त्र ढ़ंग से सोचने, निर्णय लेने तथा अपनी रूचि के अनुसार कार्य करने का अवसर प्रदान किया जाता है।

- यह विधि बालक को शारीरिक तथा मानसिक दोनों दृष्टियों से क्रियाशील रखती है औरछात्र स्वंय करते हुए सीखते हैं।

- यह नीति छात्रों में सक्रियता, श्रम के प्रति अनुराग तथा समय बद्धता जैसे मूल्यों का विकास करती है।

- इस विधि द्वारा प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है क्योंकि छात्र रटकर नही वरन स्वंय करके सीखते हैं और स्वंय करके सीखा हुआ ज्ञान स्थायी होता है।

- इस विधि के माध्यम से छात्रों में अपने जीवन की तमाम व्यावहारिक समस्याओं के समाधान की क्षमता विकसित होती है।

- इसमेंछात्र वैयक्तिक तथा सामूहिक रूप से अपनी रूचि, क्षमता, योग्यता तथा आवश्यकता के अनुरूप कार्य करते हैं। इस प्रकार इसमें वैयक्तिक तथा सामूहिक दोनो प्रकार के शिक्षण के लिए समान अवसर पाए जाते है।

- यह विधि छात्रों में प्रजातान्त्रिक गुणों का भी विकास करती है क्योंकि इसमें छात्र सामूहिक रूप से कार्य करते हैं परिणामतः उनमें सहयोग, सदभावना, सह अस्तित्व तथा एक दूसरे के विचारों के प्रति सम्मान के गुणों का विकास होता है और छात्रों में विभिन्न सामाजिक आदर्शो, गुणों आदतों तथा अभिरूचियों का विकास कर यह विधि सामाजिक अध्ययन के लक्ष्य को प्राप्त करने में पूर्ण रूप से सफल रहती है।

- यह विधि छात्रों में आत्मनिर्भरता, आत्मविश्वास तथा कर्तव्य परायणता के भाव को रोपित करती है।

- इस विधि की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि यह पाठ्यक्रम का वास्तविक

जीवन से सम्बन्ध स्थापित करती है क्योंकि छात्र प्रदत्त कार्य को सामाजिक पर्यावरण में ही रहकर पूर्ण करता है जिसके दौरान उसे अनेक व्यावहारिक बातो का ज्ञान होता है।

- यह विधि छात्रों में स्वानुशासन की भावना का विकास करती है क्योंकि छात्र निरन्तर कार्य में व्यस्त रहते हैं जिससे उनमे फालूत बैठकर शरारत करने का अवसर नही प्राप्त हो पाता।

- यह विधि थानडाईक द्वारा प्रतिपादित अधिगत के नियमों पर भी आधारित है जैसे– अधिगम का पहला नियम तत्परता का होता है और इस विधि में छात्रों में समस्या का हल ढूँढ़ने की तत्परता बनी रहती है। दूसरा नियम अभ्यास का है जिसके अनुसार छात्र निरन्तर अभ्यास रत रहता है। और तीसरे नियम परिणाम या प्रभाव का है जो इस विधि में छात्रों द्वारा प्रोजेक्ट खत्म होने पर अपने परिश्रम का फल देखकर सन्तोष तथा गौरव का अनुभव करने में देखा जा सकता है।

- यह विधि मनोवैज्ञानिक है क्योंकि बालक अपनी रूचि के अनुरूप कार्य में लगते हैं।

बोध प्रश्न –

14. योजना विधि छात्रों में स्वानुशासन की भावना उत्पन्न करने में किस प्रकार सहायक है –

____
____
____
____

10.7.5 योजना के दोष

उपयफ्रक्त गुणों के साथ–साथ इस विधि में कतिपय दोष भी हैं जैसे –

- यह विधि एक व्यय साध्य तथा श्रम साध्य है क्योकि इस विधि के सफल प्रयोग हेतु विद्यालय में उन्नत पुस्तकालय, वाचनालय, प्रयोगशाला तथा अन्य भौतिक संसाधनों की उपलब्धता अनिवार्य होती है जबकि वस्तुस्थिति यह है कि भारत के प्रत्येक विद्यालय में इसकी उपलब्धता हो, यह आवश्यक नही है।

- इस विधि का एक अन्य दोष शैक्षिक महत्व के प्रोजेक्ट के चयन का है। यदि सतक्रता तथा दूरदर्शिता न अपनायी गई तो छात्रों का श्रम व्यर्थ चला जाता है।

- इस विधि में समय बहुत लगता है जबकि अध्यापक को निर्धारित सत्र में ही पाठ्यक्रम को समाप्त करना होता है।

- सामाजिक अध्ययन के प्रत्येक प्रकरण को इस विधि से नही पढ़ाया जा सकता।

- इस विधि में अध्यापकों का पूरा ध्यान छात्रों द्वारा किए जा रहे प्रोजेक्ट की तरफ ही

केन्द्रित रहता है जिसके कारण विद्यालय की अन्य गतिविधियां तथा छात्रों के व्यक्तित्व के अन्य महत्वपूर्ण पक्षों का विकास उपेक्षित ही रह जाता है।

- यह विधि विषय की क्रमबद्धता तथा तारतम्यता को कायम नही रख पाती है जिसके कारण छात्रों को एक ही विषय के विभिन्न अंशो का ज्ञान आंशिक रूप में तथा खण्ड रूप में प्राप्त होता है। परिणामस्वरूप ज्ञान में हुए अन्तराल को अध्यापक द्वारा अलग से पूरा करना होता है।

- प्रोजेक्ट विधि से छात्रों को पढ़ाने के लिए हमारे यहां उपयुक्त पाठ्य पुस्तकें उनकी मातृभाषा में उपलब्ध नही है।

- इस विधि में अर्जित ज्ञान की पुनरावृत्ति न हो पाने के कारण लम्बे समय अन्तराल के पश्चात छात्र उसे विस्मृत करने लगते हैं।

- इस विधि के सफल क्रियान्वयन हेतु योग्य, प्रशिक्षित तथा अनुभवी अध्यापकों की आवश्यकता है जो निरन्तर इस कार्य में लगे रहें। परन्तु हमारे यहां के अधिकांश अध्यापक अपने लिए काम नही बढ़ाना चाहते और परम्परागत ढ़ंग से शिक्षण करने को वरीयता देते हैं । इस प्रकार अध्यापकों का उपेक्षित दृष्टिकोण भी प्रोजेक्ट विधि के सफल क्रियान्वयन में एक बाधा है।

10.7.6 योजना विधि के सन्दर्भ में कुछ सुझाव

परन्तु उपयफ्रक्त दोषों के बावजूद भी हम निम्नलिखित बिन्दुओं पर अमल करते हुए इसे हम एक उपयोगी विधि बना सकते हैं ।

- इस विधि से शिक्षण–अधिगम हेतु कुछ ही प्रकरण लिए जाए जो अपने आप में सम्पूर्ण हो। सम्पूर्ण पाठ्यक्रम को इस विधि द्वारा न पढ़ाया जाए।

- विद्यालयी सुविधा तथा भौतिक संसाधनों की उपलब्धता को देखते हुए ही उपयुक्त प्रकरण का चयन किया जाए।

- अध्यापक को इस विधि में रूचि लेते हुए इस विधि के प्रयोग हेतु उचित ढ़ंग समय–सारणी बनानी होगी जिससे विद्यालय की अन्य गतिविधियां अस्त–व्यस्त न हों।

- इस विधि का प्रयोग स्वतन्त्र विधि के रूप में न करके अन्य विधियों की सहायक विधियों के रूप में अपनाना हितकर होगा।

- एक शैक्षिक सत्र में दो से चार प्रोजेक्ट लेना अधिक उचित होगा।

10.8 सारांश

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई में आपने शिक्षण के मापनीय उद्देश्य, सामान्यीकरण, समस्या समाधान तथा योजना विधि का सांगोपांग अध्ययन किया। सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में एक अध्यापक के रूप में आप अपने छात्रों के व्यवहार में किस प्रकार का परिवर्तन चाहते हैं,

जिससे विषय के लक्ष्य तथा उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके तथा उनका क्रियासूचक शब्दावलियों में लेखन भी प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप भली भांति समझ गए होंगे।

10.9 अभ्यास

1. सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के दौरान आप अपने छात्रों में ज्ञान क्षेत्र से सम्बन्धित उद्देश्यों का मापन किस प्रकार करेंगे।
2. समस्या समाधान विधि का मूल्याकंन कीजिए।
3. योजना विधि के सोपानों का विस्तारण कीजिए।

10.10 चर्चा के बिन्दु

1. सामाजिक अध्ययन के अध्यापक को मूल्याकंन के उद्देश्य सदैव व्यवहारपरक शब्दावलियों में ही लिखना चाहिए।
2. समस्या–समाधान विधि छोटे बालकों के लिए उपयुक्त नही है।
3. प्रोजेक्ट कार्य हेतु प्रयोग में लाई जाने वाली विभिन्न योजनाओं का स्वरूप।

10.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. अभी तक तो शिक्षण को कला माना जाता था जिसमें शिक्षक विषय वस्तु का ज्ञान अत्यन्त कुशलता के साथ प्रदान करता था। परन्तु वर्तमान में इसे विज्ञान भी माना जाने लगा क्योकि शिक्षण की विभिन्न क्रियायें उस सामाजिक सन्दर्भ में सम्पादित की जाती है जिनका छात्र निरीक्षण तथा विश्लेषण करता है और उन क्रियाओं का वस्तुनिष्ठ ढ़ंग से अध्ययन किया जाता है। इस दृष्टिकोण से शिक्षण कला तथा विज्ञान दोनों है।
2. ज्ञान क्षेत्र के अन्तर्गत विशिष्ट तथ्यों तथा उनके उपयोग में लाने का ज्ञान, परम्पराओं, मान्यताओं, प्रवृत्तियों तथा प्रक्रियाओं का ज्ञान, वर्गीकरण, विभाजन, मानदण्डों, विधियों, प्रविधियों, सिद्धान्तो तथा सामान्यीकरण आदि बातों को सम्मिलित किया जाता है।
3. अवरोध का तात्पर्य जानने अथवा समझने से होता है और आप किसी चीज को तभी समझ पाते हैं जब आपको उसका ज्ञान कराया जाता है। जब आपको सामाजिक अध्ययन के विभिन्न तथ्यों, सम्प्रत्ययों, विधियों, प्रवृत्तियों, सिद्धान्तों मान्यताओं, समस्याओं, प्रक्रियाओं आदि का ज्ञान प्राप्त होने के उपरान्त यदि इनका बोध हो जाता है तभी आप उसे अपने शब्दों में व्यक्त करने में सफल हो पाते हैं। कहने का आशय है कि अवबोध के लिये ज्ञान का होना आवश्यक है।
4. अवबोध क्षेत्र के क्रियासूचक शब्दों में व्याख्या करना, उदाहरण देना, संकेत देना, आदर्श प्रस्तुत करना, वर्गीकरण करना निर्णय देना आदि को सम्मिलित किया गया है जो आपके द्वारा प्राप्त किये गये ज्ञान का अवबोध होने की पुष्टि करते

हैं।

5. शिक्षक अपने छात्रों को सामाजिक अध्ययन का सैद्धान्तिक ज्ञान देने के साथ अध्ययन में सहायक व्यावहारिक कौशलों को भी विकसित करता है। यदि विषय के अध्ययन के पश्चात आप दिये गये तथ्यों के आधार पर मानचित्र, चार्ट, रेखाकृति, ग्राफ आदि बना लेंगे, विभिन्न ऐतिहासिक इमारतों का प्रतिरूप बना लेंगे, विभिन्न राष्ट्रीय प्रतीकों को रेखाकिंत कर लेंगे, तो इसका आशय है कि आपने बनाने तथा रेखांकन का कौशल अर्जित कर लिया है।

6. तथ्यों का विश्लेषण एवं आलोचना करने के उपरान्त कुछ निष्कर्ष तथा नियमों का निर्धारण करना ही सामान्यीकरण कहलाता है। सामाजिक अध्ययन में ऐतिहासिक समस्याओं या तथ्यों के विश्लेषण तथा आलोचना करने, समस्याओं के समाधान ढूढने, निर्णय लेने, तुलना करने, मूल्यांकन तथा चयन करने के दौरान सामान्यीकरण की आवश्यकता पड़ सकती है।

7. प्राचीन काल में इस विधि का प्रयोग सुकरात, सेंट थॉमस जैसे विचारक किया करते थे। यह सामाजिक अध्ययन के शिक्षण की एक उपयोगी विधि है जिसमें छात्रों के सम्मुख किसी भी तथ्य को प्राप्त करने के लिये कोई समस्या दी जाती है जिसका समाधान छात्रों को अपने प्रयासों से स्वंय ढूढना पड़ता है और अन्ततः वह वैज्ञानिक ढंग से उस समस्या का वांछित समाधान निकाल ही लेता है।

8. अध्यापक द्वारा अपने छात्रों को दी जाने वाली समस्या नवीन, स्पष्ट, उपयोगी, प्रेरणात्मक, पाठ्यक्रम से सम्बन्धित, छात्रों की रूचि, क्षमता, आवश्यकता के अनुकूल, जीवन की वास्तविकताओं के निकट, शैक्षिक दृष्टिकोण से उपयोगी, तथा छात्रों की तक्र, चिन्तन तथा सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करने वाली होनी चाहिये।

9. किसी भी समस्या का समाधान करने में, समस्या के चयन, प्रस्तुतिकरण, तथ्यों का संकलन, परिकल्पना का निर्माण, तथ्यों का विश्लेषण, निष्कर्ष तक पहुंचना, मूल्यांकन एवं सामान्यीकरण, लेखा–जोखा तैयार करना आदि सोपानों का अनुसरण करना पड़ता है।

10. "समस्या समाधान विधि छात्रों की मानसिक शक्तियों को प्रखर बनाती है" इसमें तनिक भी सन्देह नही है। क्योकि किसी भी समस्या के समाधान के दौरान छात्रों को अपनी विभिन्न मानसिक शक्तियों जैसे– स्मरण, तक्र, कल्पना, चिंतन, सृजनात्मक, आदि का प्रयोग करना पड़ता है। वह स्वक्रिया के माध्यम से सम्बन्धित समस्या का साधान वैज्ञानिक ढ़ंग से करता है जिससे उसकी मानसिक शक्तियां मुखरित हो जाती हैं।

11. योजना विधि के प्रणेता अमेरिका के प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री डब्ल्यू0 एच0 किलपैट्रिक है। इस विधि में छात्रों के समक्ष किसी समस्या के समाधान से सम्बन्धित एक योजना प्रस्तुत की जाती है और छात्र अपने ज्ञान, विवेक तथा

अनुभवों के आधार पर योजना के अनुरूप समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है।

12. योजनाओं का चयन करते समय छात्रों को यह स्मरण रहे कि योजना उपयोगी, प्रयोजनपूर्ण, वास्तविक, क्रियात्मक, मितव्ययी, बालक के समाजीकरण में सहायक, शैक्षिक मूल्य केन्द्रित, अल्प समय में पूर्ण होने वाली होनी चाहिये। चूंकि प्रत्येक बालक में व्यक्तिगत विभिन्नतायें पाई जाती है, इसलिये छात्र की रूचि तथा योग्यतानुसार ही योजना का चयन होना चाहिये।

13. हमारे यहां एक कहावत प्रचलित है कि "खाली मस्तिष्क शैतान का घर होता है " जो शतप्रतिशत सत्य है। यदि व्यक्ति निरन्तर अपने कार्यो में व्यस्त है तो वह निरर्थक तथा अनर्गल बातों से बचेगा अन्यथा वह समय का दुरूपयोग करते हुये अनुशासनहीन बन जायेगा। योजना विधि इस दृष्टिकोण से अत्यन्त लाभप्रद है। इस विधि के अनुसार छात्र निरन्तर कार्य में व्यस्त रहते हैं जिससे उनमें फालतू बैठकर शरारत करने का अवसर नही मिल पाता। इस प्रकार योजना विधि छात्रों में स्वानुशासन की भावना का विकास करती है।

10.12 सन्दर्भ पुस्तकें

1. चन्द्र, शिवेन्द्र सोती तथा वर्मा, विरेन्द्र, सामाजिक विज्ञान शिक्षण, इण्टरनेशनल पब्लिंशिग हाउस, मेरठ,

2. मिश्रा, आर० एम०, शिक्षण तकनीक एवं मूल्याकंन, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद 2013ः

3. समाजिक विज्ञान का शिक्षण, कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)।

इकाई – 11 छात्र तथा परिणाम प्रकिया के आंकलन हेतु परीक्षण पदों का निर्माण अथवा रचना, निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 मूल्यांकन का सम्प्रत्यय

11.3.1 मूल्यांकन के उद्देश्य

11.3.2 मूल्यांकन के उपकरण

11.3.2.1 उपलब्धि परीक्षण

11.3.2.2 उपलब्धि परीक्षण के उद्देश्य

11.3.2.3 उपलब्धि परीक्षण के निर्माण तथा इसका प्रमापीकरण

11.4 निदानात्मक परीक्षण

11.4.1 निदानात्मक परीक्षण का उद्देश्य

11.4.2 निदानात्मक परीक्षण का कार्य क्षेत्र

11.4.3 निदान के साधन

11.5 उपचारात्मक शिक्षण

11.5.1 उपचारात्मक शिक्षण का उद्देश्य

11.5.2 उपचारात्मक शिक्षण की विशेषताएँ

11.5.3 उपचारात्मक शिक्षण की विधियां

11.5.4 उपचारात्मक शिक्षण के पद

11.5.5 उपचारात्मक शिक्षण में अपेक्षित सावधानियां

11.5.6 निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण से लाभ

11.6 सारांश

11.7 अभ्यास कार्य

11.8 चर्चा के बिन्दु

11.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.1 प्रस्तावना

सामाजिक अध्ययन में छात्रों के कार्य–निष्पादन अथवा उपलब्धियों का मूल्यांकन करना अत्यन्त आवश्यक होता हैं क्योकि इससे न केवल छात्रों की प्रगति स्तर का आंकलन किया जाता हैं वरन आवश्यकतानुसार अध्यापक भी अपनी शिक्षण रणनीतियों में संशोधन और परिमार्जन कर उनका विस्तार करता हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि मूल्यांकन के द्वारा छात्रों के व्यवहार में हुए सभी प्रकार के परिवर्तनों की जाँच की जाती है और जाँच के परिणामों के आधार पर सीखने–सिखाने की प्रकिया में वांछनीय तथा गुणात्मक सुधार भी लाया जाता है और अब यह मूल्यांकन सत्रान्त नही होता वरन निरंतर तथा विशद रूप से होता है। छात्रों के मूल्यांकन हेतु अध्यापक कई विधियों तथा प्रविधियों का प्रयोग करता है यथा लिखित परीक्षा, मौखिक परीक्षा, साक्षात्कार, निरीक्षण, संचयित अभिलेख, प्रयोगात्मक कार्य, विभिन्न प्रकार की तालिकाएं, अनुसूची आदि जिनके माध्यम से वह छात्रों के ज्ञानार्जन अथवा उपलब्धि स्तर का पता लगा कर उसका मूल्यांकन करता है। इस मूल्यांकन के दौरान यदि छात्रों की किसी भी प्रकार की समस्या अथवा कठिनाइयाँ हैं तो उसका निदान कर उसके लिए उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जाती है। प्रस्तुत इकाई में आप मूल्यांकन के व्यापक स्वरूप को समझेंगे। साथ ही साथ मूल्यांकन के लिखित पक्ष के अन्तर्गत प्रयुक्त किए जाने वाले उपलब्धि परीक्षण के निर्माण अथवा रचना के सोपान, निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण का सम्प्रत्यय तथा उसके विविध पहलुओं को समझते हुए उसकी उपयोगिता तथा महत्व का व्यापक अध्ययन करेंगे।

11.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप

1) मूल्यांकन के सम्प्रत्यय का प्रत्याभिज्ञान कर सकेंगे।
2) निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण की अवधारणा का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
3) मूल्यांकन के उपकरणों की सूची बना सकेंगे।
4) उपलब्धि परीक्षण का विभिन्न भागों में वर्गीकरण कर सकेंगे।
5) उपलब्धि परीक्षण निर्माण के सोपानों का विश्लेषण कर सकेंगे।
6) निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्यों के मध्य के सम्बन्ध को बता सकेंगे।
7) उपचारात्मक शिक्षण विधियों का आवश्यकतानुसार कक्षागत परिस्थितियों में प्रयोग कर सकेंगे।

8) निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण से होने वाले लाभों से लाभान्वित हो सकेंगे।

छात्र तथा अधिगम प्रकिया के परिणाम के मूल्यांकन हेतु परीक्षण पदों का निर्माण–विद्यालय स्तर पर सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रम में सामाजिक अध्ययन विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है क्योंकि यह विषय सैद्वान्तिक ज्ञान के साथ–साथ छात्रों की विभिन्न योग्यताओं, कौशलों, रूचियों, अभिवृतियों, आदि का विकास कर उसे समाज और राष्ट्र का एक उपयोगी सदस्य बनाता है। छात्रों ने सामाजिक अध्ययन के उद्देश्य को किस सीमा तक प्राप्त किया है, इसे भी जानना प्रत्येक अध्यापक का एक महत्वपूर्ण कर्तब्य है जिसके लिए वह छात्रों का मूल्यांकन करता है। मूल्यांकन सम्पूर्ण शैक्षणिक प्रक्रम का एक अभिन्न अंग है। यद्यपि वर्तमान परीक्षा पद्वति में छात्रों के कार्य निष्पादन या उसकी उपलब्धियों का मूल्यांकन करना अर्थात छात्रों को खराब, सामान्य, अच्छे, बहुत अच्छे तथा सर्वोकृष्ट आदि वर्गो में विभाजित करना है जो मूल्यांकन का मुख्य प्रयोजन नही है। जैसा कि यह सर्वविदित है कि शिक्षा का लक्ष्य प्रत्येक बालक में अन्तर्निहित योग्यताओं, संभावनाओं तथा सामर्थ्य का बाह्मय उद्घाटन करना अर्थात उन्हें पूरी तरह से विकसित करना है। शिक्षा का यह लक्ष्य कहां तक और कितना प्राप्त हुआ है यह जानकारी हमें मूल्यांकन के ही माध्यम से मिलती है। इसलिए अध्यापक द्वारा अपने छात्रों का मूल्यांकन कर उनकी योग्यता, सामर्थ्य तथा क्षमता के अनुरूप शिक्षा प्रदान करना चाहिए। मूल्यांकन के माध्यम से अध्यापक को न केवल छात्रों के ज्ञानार्जन स्तर का पता चलता है वरन आवश्यकतानुसार वह अपनी शिक्षण पद्वति में भी परिवर्तन और परिवर्धन कर सकता है। इस प्रकार मूल्यांकन न केवल सम्पूर्ण शिक्षण प्रक्रम को सुधारता है वरन छात्रों को भी ज्ञानार्जन तथा अधिगम में अधिकाधिक वृद्वि हेतु प्रेरित करता है।

11.3 मूल्यांकन का सम्प्रत्यय

शिक्षा मानव जीवन की अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। जिसका मुख्य उद्देश्य बालक का सर्वागींण विकास करना है। नए उभरते हुए समाज के सन्दर्भ में शिक्षा के स्वरूप में काफी परिवर्तन आया है। आज न केवल शिक्षा के ज्ञानार्जन के उद्देश्य पर बल दिया जाता है वरन प्रयोग, कौशल, रूचि तथा अभिवृद्वि जैसे उद्देश्यों को प्राप्त करने पर बल दिया जाता है। यही कारण है कि जाँच की पुरानी विधि परीक्षा, जिसके द्वारा छात्रों के अर्जित ज्ञान का पता लगता है, के साथ–साथ शिक्षाशास्त्रियों ने अब एक नवीन प्रत्यय मूल्यांकन का प्रयोग प्रारम्भ कर दिया जो परीक्षा से कहीं अधिक व्यापक है जिसके द्वारा छात्रों के व्यवहार में हुए सभी प्रकार के परिवर्तनों की जाँच कर प्राप्त परिणामों के आधार पर शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया में भी वांछित सुधार लाया जाता है। मूल्यांकन के प्रत्यय को आप निम्नलिखित शिक्षाविदों के मतों से और अधिक स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं :–

मोफात के अनुसार "मूल्यांकन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है और यह छात्रों की औपचारिक शैक्षिक उपलब्धि की अपेक्षा अधिक है। यह व्यक्ति के विकास में अधिक रूचि रखती है। यह व्यक्ति के विकास को उसकी भावनाओं, विचारों तथा क्रियाओं से सम्बन्धित वांछित व्यवहार–परिवर्तनों के रूप में करता है।"

जेम्स एम० ली० के शब्दों में "मूल्यांकन विद्यालय, कक्षा तथा स्वंय के द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के सम्बन्ध में छात्र की प्रगति की जाँच है। मूल्यांकन का मुख्य प्रयोजन छात्रों की सीखने की प्रक्रिया को अग्रसर एवं निर्देशित करना है। इस प्रकार मूल्यांकन एक नकारात्मक प्रक्रिया न होकर सकारात्मक प्रक्रिया है।"

एच० एच० रैमर्स तथा एन० एल० गेज के अनुसार "मूल्यांकन में व्यक्ति अथवा समाज अथवा दोनों की दृष्टि से क्या अच्छा है अथवा क्या वांछनीय है का विचार या लक्ष्य निहित रहता है।"

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (**NCERT** ने मूल्यांकन के प्रत्यय को स्पष्ट करते हुए कहा है कि "यह एक ऐसी सतत व व्यवस्थित प्रक्रिया है जो देखती है कि

1) निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हो रही है।

2) कक्षा में दिए गए अधिगम अनुभव कितने प्रभावशाली रहे हैं तथा

3) शिक्षा के उद्देश्य कितने अच्छे ढ़ंग से पूर्ण हो रहे हैं।"

एन० एम० डांडेकर के शब्दों में "शैक्षिक उद्देश्यों को बालक द्वारा किस सीमा तक प्राप्त किया गया है, यह जानने की व्यवस्थित प्रक्रिया को ही मूल्यांकन की संज्ञा दी जाती है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता हैं कि–

- यह अत्यन्त व्यापक तथा बहुआयामी होता है।
- यह निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है।
- यह शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न अंग है जो छात्रों की शैक्षिक उपलब्धियों के साथ–साथ शिक्षण प्रक्रिया में भी सुधार लाती है।
- यह मापन की उपयोगिता को स्पष्ट करता है।
- इसमें मापने के साथ – साथ उसकी उपयुक्तता तथा मूल्य भी देखा जाता है।
- देश, काल तथा परिस्थिति के आधार पर मूल्यांकन का मापदंड बदलता रहता है।
- यह किसी कार्यक्रम के द्वारा प्राप्त उद्देश्यों अथवा उपलब्धियों की वांछनीयता का बोध कराता है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि प्रत्येक शिक्षा संस्था का कार्य छात्रों को अधिगम करने में सहायता प्रदान करना है। अधिगम के दौरान छात्रों के व्यवहार में जिन परिवर्तनों को लाना चाहते हैं, उन्हें शिक्षा के उद्देश्य कहते हैं और इन्ही शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विद्यालय में विभिन्न अधिगम क्रियाएँ आयोजितकी जाती हैं। ये अधिगम क्रियाएँ किस सीमा तक निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल रही, इसका बोध मूल्यांकन की प्रक्रिया से होता है। इस प्रकार मूल्यांकन की प्रक्रिया में शिक्षण उद्देश्यों की वांछनीयता को देखा जाता है। अतएव हम कह सकते है वि मूल्यांकन प्रक्रिया के तीन प्रमुख अंग होते हैं – शिक्षण उद्देश्य, अधिगम क्रियाएँ तथा व्यवहार परिवर्तन, जो परस्पर निर्भर तथा एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। इन अंगो को हम निम्नलिखित चित्र के माध्यम से भी समझ सकते हैं

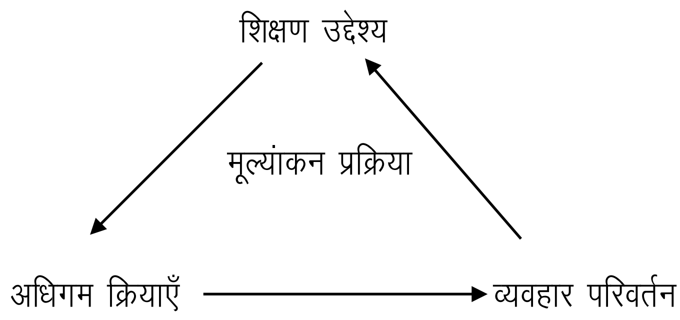

रेखा चित्र –1

11.3.1 मूल्यांकन के उद्देश्य

- छात्रों द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति की सीमा जानना।
- छात्रो की शैक्षिक प्रगति के बाधक तत्वों को जानना।
- छात्रो में व्यक्तिगत भिन्नताओं की जानकारी प्राप्त करना।
- छात्रो में प्रतियोगिता की भावना को विकसित करना।
- उन्हें अधिगम हेतु प्रेरित करना।
- शिक्षक की शिक्षण सम्बन्धी प्रभावशीलता को ज्ञात करना।
- पाठयक्रम तथा शिक्षण विधियों की अच्छाइयां तथा कमियों का ज्ञात करना तथा ज्ञात कमियों के आधार पर उनमें सुधार हेतु आधार तैयार करना।
- सहायक सामग्रियों की उपादेयता की जानकारी प्राप्त करना।
- शैक्षिक मानकों का निर्धारण करना।
- कक्षा उन्नति तथा रोजगार के लिए शैक्षिक योग्यता का प्रमाण पत्र देना।
- छात्रो के शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन के लिए आधार तैयार करना।
- छात्रो की उपलब्धियों के आधार पर योग्यता आधारित वर्गीकरण करना।
- छात्रो का विभिन्न दृष्टियों से चयन करना।

बोध प्रश्न –

1. मूल्यांकन के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

2. मूल्यांकन के उद्देश्यों को निरूपित कीजिए। ____ ____ ____

11.3.2 मूल्यांकन के उपकरण

मूल्यांकन के उपयफ्रक्त उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अध्यापक निम्नलिखित उपकरणों का प्रयोग करता हैः– 1. अवलोकन 2. परीक्षण 3. साक्षात्कार 4. अनुसूची 5. प्रश्नावली 6. निर्धारण मापनी 7. प्रक्षेपीय तकनीक 8. समाजमिति 9. संचयी अभिलेख 10. ऐनकडोटल अभिलेख 11. परीक्षण बैटरी।

आपके पाठ्यक्रम के अनुसार यहां पर हम परीक्षण का ही विस्तृत उल्लेख करेंगे जिसके माध्यम से हम न केवल छात्रा की उपलब्धियों वरन सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया के परिणामों का आंकलन अथवा मूल्यांकन कर सकते हैं –

विद्यालय में संचालित होने वाली शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया से छात्रा द्वारा अर्जित ज्ञान, बोध, कौशल, अनुप्रयोग आदि योग्यताओं की प्राप्ति की सीमा को ज्ञात करने के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। इन्ही परीक्षणों को हम उपलब्धि परीक्षण कहते हैं। इन परीक्षणों को कई आधारों पर हम वर्गीकृत कर सकते हैं यथा –

1. उपयोग के आधार पर परीक्षण के प्रकार
   - i) सम्प्राप्ति परीक्षण (Achievement Test)
   - ii) निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test)
2. निर्माण के आधार पर परीक्षण के प्रकार
   - i) अप्रमापीकृत परीक्षण (Non-standardized Test)
   - ii) मानकीकृत परीक्षण (Standardized Test)
3. प्रकृति के आधार पर परीक्षण के प्रकार
   - i) निबन्धात्मक परीक्षण (Essay Type Test)
   - ii) वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Objective Type Test)
4. अभिव्यक्ति के आधार पर परीक्षणों के प्रकार
   - i) मौखिक परीक्षण (Oral Test)
   - ii) प्रयोगात्मक परीक्षण (Practical Test)
   - iii) लिखित परीक्षण (Written Test)
5. प्रशासन के आधार पर परीक्षण के प्रकार

i) व्यक्तिगत परीक्षण (Individual Test)

ii) सामूहिक परीक्षण (Group Test)

6. <u>परीक्षण में प्रयुक्त सामग्री के प्रस्तुतीकरण के आधार पर परीक्षण के प्रकार</u>

iii) शाब्दिक परीक्षण (Verbal Test)

iv) अशाब्दिक परीक्षण (Non-verbal Test)

7. <u>परीक्षण में प्रयुक्त प्रश्नों के शैक्षिक उद्देश्यों के आधार पर परीक्षण के प्रकार</u>

i) ज्ञान परीक्षण (Knowledge Test)

ii) कौशल परीक्षण (Skills Test)

iii) अनुप्रयोग परीक्षण (Application Test)

iv) बोध परीक्षण (Comprehensive Test)

8. <u>परीक्षण द्वारा मापे जा रहे गुण के आधार पर परीक्षण के प्रकार</u>

i) सम्प्राप्ति परीक्षण (Achievement Test)

ii) बुद्धि परीक्षण (Intelligence Test)

iii) निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test)

iv) रूचि परीक्षण (Interest Test)

v) अभिक्षमता परीक्षण (Aptitude Test)

9. <u>परीक्षण में लगने वाले समय के आधार पर परीक्षण के प्रकार</u>

i) गति परीक्षण (SpeedTest)

ii) पद्ध सामर्थ्य परीक्षण (Power Test)

11.3.2.2 उपलब्धि परीक्षण के उद्देश्य

- छात्रा को सतत रूप से अध्ययन के लिए प्रेरित करना।
- उनमें स्वस्थ प्रतिस्पर्धा की भावना विकसित करना।
- छात्रा को पर्याप्त मार्ग निर्देशन तथा परामर्श देना।
- प्रवेश के लिए छात्रा का चयन करना।
- छात्रा के वर्गीकरण तथा उनके कक्षोन्नति में सहायक होना।
- अध्यापक का मूल्यांकन करना।
- शिक्षण कार्य की गुणवत्ता में वृद्धि करना।

- शैक्षिक संस्थाओ के स्तर का निर्धारण करना।

11.3.2.3 उपलब्धि परीक्षण के निर्माण तथा इसका प्रमापीकरण

उपलब्धि परीक्षण के निर्माण तथा प्रमापीकरण की प्रक्रिया को मुख्य रूप से चार सोपानों में वर्गीकृत किया जा सकता है –

(i) परीक्षण की योजना बनाना।

(ii) प्रश्नों की रचना करना।

(iii) प्रश्नों का चयन करना।

(iv) परीक्षण का मूल्यांकन करना।

(i) परीक्षण की योजना बनाना परीक्षण का प्रथम सोपान परीक्षण से सम्बन्धित विभिन्न महत्वपूर्ण बातों के निर्णय से सम्बन्धित होता हैं जिसमें परीक्षण के लिए विषय वस्तु, शिक्षण उद्देश्यों, प्रश्नों के प्रकार, प्रश्नों की संख्या, समयावधि, अंकन विधि, परीक्षण का प्रारूप जैसे महत्वपूर्ण निर्णय लिए जाते हैं। परीक्षण की विषय वस्तु, शिक्षण के उद्देश्य, प्रश्नों के प्रकार तथा उनकी संख्या को निश्चित करने के पश्चात् विशिष्टीकरण तालिका या नील पत्र **(Table of Specificaition or Blue print)** को तैयार किया जाता है साथ ही साथ इस तालिका में विषय वस्तु के विभिन्न प्रकरणों तथा शिक्षण उद्देश्यों को दिए जाने वाला भार को भी स्पष्ट किया जाता है जिससे परीक्षण में विषय वस्तु के प्रत्येक प्रकरण को उचित भार के साथ स्थान दिया जा सके तथा प्रकरणों को उनके महत्व के आधार पर उन्हे उचित भार के साथ रखा जा सके। जिसका प्रारूप इस प्रकार हैं :–

सामाजिक अध्ययन के लिए विशिष्टीकरण तालिका

विषय – सामाजिक अध्ययन कुल प्रश्न –100

कक्षा – 7 अवधि –2 घंटा

उद्देश्य		ज्ञान			बोध			अनुप्रयोग			कुल प्रश्न			योग
भार		40%			40%			20%			100%			
प्रश्नों के प्रकार →		TF	MC	MT	TF	MC	MT	TF	MC	MT	TF	MC	MT	
प्रकरण	भार	12%	16%	12%	12%	16%	12%	6%	8%	6%	30%	40%	30%	100
प्रचीन भारतीय सिक्कों की मौलिकता	15%	2	2	2	2	2	2	1	1	1	5	5	5	15

भारतीय संस्कृति	10%	1	2	1	1	2	1	0	1	1	2	5	3	10
मुगल कालीन स्थापत्य कला	15%	2	2	2	2	2	2	1	1	1	5	5	5	15
भूगोल की शब्दावलियाँ	10%	1	2	1	1	2	1	1	1	0	3	5	2	10
भारतीय लोकतन्त्र के समक्ष चुनौतियाँ	10%	1	2	1	1	2	1	0	1	1	2	5	3	10
भारतीय संविधान की विशेषताएँ	15%	2	2	2	2	2	2	1	1	1	5	5	5	15
राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा	10%	1	2	1	1	2	1	1	1	0	3	5	2	10
अक्षय ऊर्जा तथा आर्थिक विकास	15%	2	2	2	2	2	2	1	1	1	5	5	5	15
	100%	12	16	12	12	16	12	6	8	6	30	40	30	100

<u>तलिका संख्या –1</u>

संकेत **TF = True False** (सत्य असत्य)

MC = Multiple choice (बहुविकल्पीय)

MT = Match Items (मिलान प्रश्न)

सन्दर्भतः प्रश्नों के विविध प्रकारों को निम्नलिखित तालिका में आप देख सकते हैं –

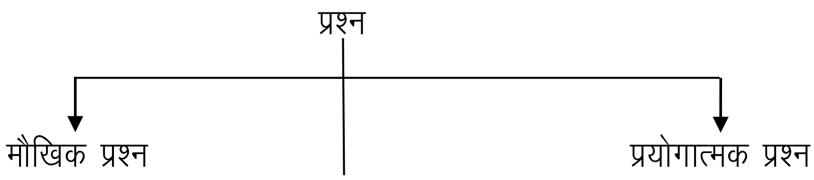

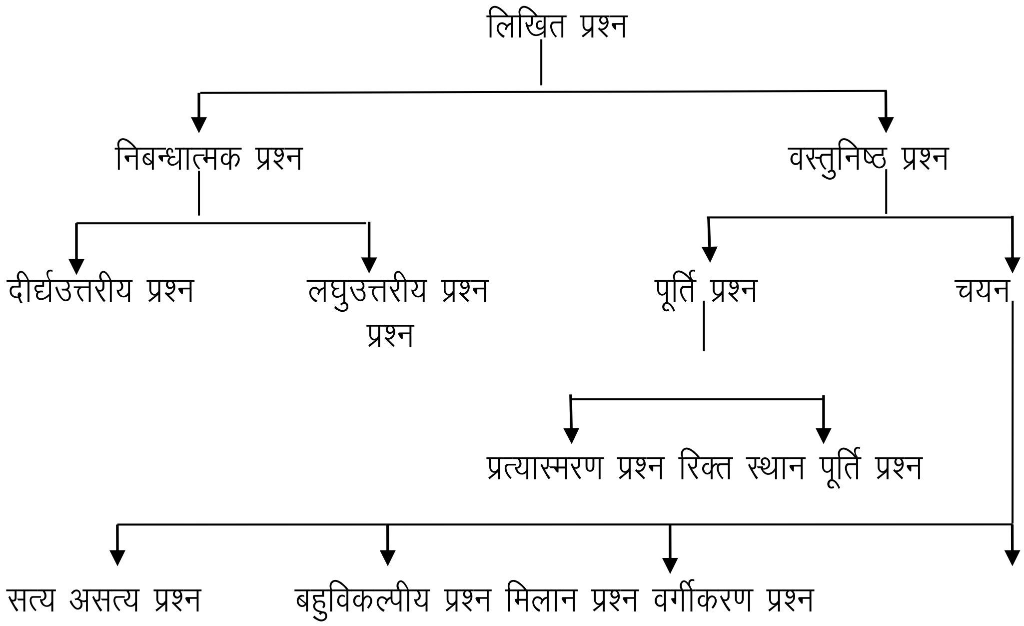

<u>तालिका संख्या –2</u>

<u>बोध प्रश्न</u>

4. का मूल्यांकन क्यों करना आवश्यक है?

____
____
____
____

<u>क्रिया कलाप–</u>

समाजिक अध्ययन के किसी भी प्रकरण पर आधारित 5 बहुविकल्पीय तथा 5 मिलान प्रश्नों की रचना कीजिए।

____
____
____
____

उपयफ्रक्त प्रश्नों के विभिन्न प्रकारों में से किसी भी प्रकार को आप परीक्षण के निर्माण हेतु ले सकते हैं। प्रश्नों की संख्या का निर्णय परीक्षण विधि, प्रश्नों के प्रकार, छात्रों की आयु तथा पाठ्यक्रम की प्रकृति के आधार पर किया जाता है। परन्तु उपयफ्रक्त प्रकार के प्रश्नों के क्रम के सन्दर्भ में निम्नलिखित क्रम अपनाना अधिक उपयुक्त होता हैं जैसे –

1. सत्य–असत्य प्रश्न (True-False Items)
2. मिलान प्रश्न (Matching Items)

3. प्रत्यास्मरण प्रश्न (Recall Items)

4. पूर्ति प्रश्न (Completion Items)

5. बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple choice Items)

6. लघु उत्तर प्रश्न (Short Answer Items)

7. निबन्धात्मक प्रश्न (Essay Type Items)

प्रश्नों के क्रम तथा प्रकार के निर्धारण के पश्चात् परीक्षक अंकन विधि का निर्धारण करता है। अंकन हाथ से किया जाए अथवा अंकन कुंजी (Scoring key) से अथवा कम्प्यूटर की सहायता से, इसका निर्णय भी इसी सोपान में ही लिया जाता है। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के अंकन में कोई समस्या नही रहती क्योंकि इसमें सही प्रश्न होने पर एक अंक तथा गलत उत्तर होने पर शून्य दिया जाता हैं परन्तु निबन्धात्मक प्रश्नों के अंकन में वस्तुनिष्ठता के स्थान पर व्यक्तिनिष्ठता आ जाती है। यही कारण है कि परीक्षण में निबन्धात्मक प्रश्न के स्थान पर वस्तुनिष्ठ प्रश्नों पर अधिक बल दिया जाता है। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों में भी बहुविकल्पीय प्रश्न में थोड़ी वस्तुनिष्ठता संदिग्ध हो जाती है। क्योंकि इसमें छात्रों द्वारा अनुमान से उत्तर देने की संभावना प्रबल होती है। यदि उन्होनें विषय वस्तु की तैयारी अच्छी नहीं की हैं तब। परन्तु इस सन्दर्भ में अनुमान से हुई त्रुटि को समाप्त करने के लिए संशोधन सूत्र का प्रयोग किया जाता है जिसके अनुसार यदि बहुविकल्पीय प्रश्नों पर किसी छात्र द्वारा दिए गए उत्तरों की संख्या R हैं और गलत उत्तरों की संख्या W हैं तथा प्रत्येक प्रश्न में दिए गए विकल्पों की संख्या K हैं, तब उसका संशोधित प्राप्तांक ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है –

संशोधित प्राप्तांक $(S) = R - \frac{W}{K-1}$

उपयफ्रक्त सूत्र का प्रयोग करते हुए परीक्षक बहुविकल्पीय प्रश्नों में होने वाली अनुमानित त्रुटि को दूर करता है। परीक्षण का प्रशासन किस प्रकार किया जाएगा, यह भी निर्णय परीक्षक इसी सोपान में लेता है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि उपलब्धि परीक्षण का प्रथम सोपान निर्णयात्मक सोपान होता है जिसमें परीक्षण से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के निर्णय लिए जाते हैं।

(ii) <u>प्रश्नों की रचना करना</u> इस सोपान में प्रथम सोपान के अन्तर्गत लिए गए निर्णयों को व्यावहारिक रूप प्रदान किया जाता है अर्थात् विशिष्टीकरण तालिका के अनुसार विभिन्न प्रश्नों की रचना की जाती हैं। जितने प्रश्न अन्तिम परीक्षण में रखने होते हैं प्रायः उसके दो गुना प्रश्नों की रचना कर ली जाती है। प्रश्नों की रचना के दौरान इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाता है वि प्रश्नों की रचना तथा उससे सम्बन्धित निर्देश बिल्कुल स्पष्ट तथा छात्रों के मानसिक स्तर के अनुरूप होने चाहिए। इस कार्य के लिए परीक्षक पूर्ववर्ती परीक्षणों से मदद ले सकते हैं। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की रचना करते समय परीक्षक आर० एच० दवे (R.H. Dave) के द्वारा प्रस्तुत किए निम्नलिखित मॉडल का उपयोग कर सकता है :–

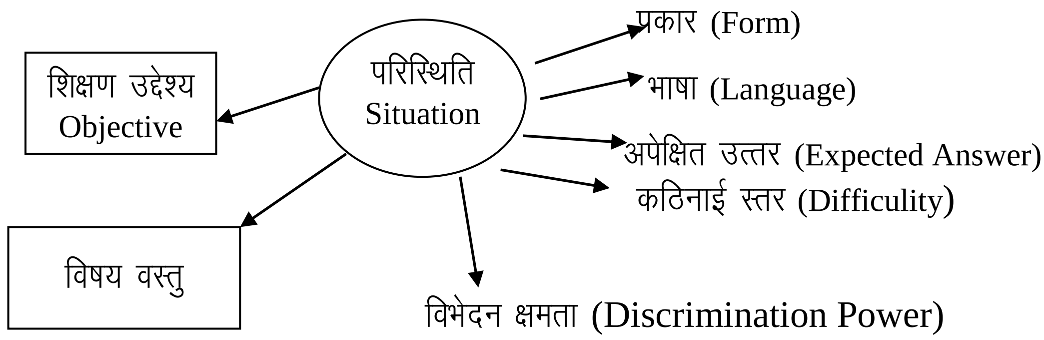

आधार →	आधार के सृजनात्मक विश्लेषण का परिणाम विचार के रूप में Product of creative synthesis of the basis in the form of an Idea	विचार को प्रश्न का रूप देने का कौशल Skill of transforming an idea in the form of a Test item

<u>रेखा चित्र संख्या –2</u>

परीक्षण निर्माण के द्वितीय सोपान में सबसे महत्वपूर्ण कार्य प्रश्नों की रचना को माना जाता हैं। अतएव इस कार्य में नितान्त सावधानियां अपेक्षित होती है जो निम्नलिखित हैं –

- प्रश्नों की रचना द्विअर्थी वाक्य (जिसके दो अर्थ मिलते हो) में नही करनी चाहिए।
- प्रश्नों में क्लिष्ट शब्दावलियों का प्रयोग नही करना चाहिए।
- आवश्यकता से अधिक शब्दों का प्रयोग करके प्रश्न को जटिल नही बनाना चाहिए वरन उसे सरल शब्दों से बनाना चाहिए जिससे छात्र उसे सही ढ़ग से समझ कर उसे उत्तरित कर सकें।
- प्रश्न सम्बन्धी निर्देश स्पष्ट शब्दों में होने चाहिए।
- प्रश्नों के उत्तर के सन्दर्भ में अनावश्यक संकेत नही देने चाहिए।
- सही उत्तर के लिए किसी निश्चित उत्तर क्रम का अनुसरण नही करना चाहिए क्योकि कभी–कभी सही उत्तर एक निश्चित क्रम में होते है और यदिछात्र उसे समझ जाते हैं तो वे उसी क्रम के अनुसार सही उत्तर देने में सफल हो जाते हैं।
- प्रश्नों की रचना परीक्षक द्वारा अपने शब्दों में ही करनी चाहिए।
- प्रत्येक प्रश्न किसी विशिष्ट उद्देश्य की तरफ ही केन्द्रित होने चाहिए।

- प्रश्नों की रचना समय से पूर्व ही कर लेनी चाहिए जिससे उन पर बार–बार विचार करके उनमें आवश्यकतानुसार पर्याप्त सुधार किया जा सके।
- प्रश्नों की रचना में कठिनाई स्तर तथा विभेदन क्षमता का विशेष ध्यान रखना चाहिए जिसका वर्णन विस्तार से आगे किया जा रहा है।
- परीक्षण का प्रारूप ऐसा होना चाहिए कि छात्र यह भली भाँति समझ सकें कि उन्हें क्या करना है।
- अन्त में परीक्षक को यह स्मरण रखना चाहिए कि उनका उद्देश्य छात्रों की योग्यता का मापन करना है न कि उनके चातुर्य का। अतएव ट्रिक प्रश्नों से उन्हें सदैव बचना चाहिए।
- परीक्षण में सम्मिलित प्रश्न विषय वस्तु से ही सम्बन्धित होने चाहिए न कि पाठ्यक्रम के बाहर से ।
- प्रश्नों के उत्तर हां या नही वाले नही होने चाहिए। दूसरे शब्दों में नकारात्मक उत्तर वाले प्रश्नों को नही बनाने चाहिए।
- विकल्पात्मक प्रश्नों में यह स्मरण रहे कि विकल्प में सही उत्तर केवल एक ही हो। साथ ही साथ 'उपरोक्त सभी' तथा 'उपरोक्त में से कोई नही' जैसे विकल्प को भी आवश्यकतानुसार प्रयोग करना चाहिए।

उपरोक्त बिन्दुओं को प्रश्नों की रचना करते समय अवश्य ध्यान में रखना चाहिए।

(iii) प्रश्नों का चयन –द्वितीय सोपान में निर्मित सभी प्रश्न उपयुक्त हो, यह आवश्यक नही है अतएव परीक्षण निर्माण के तृतीय सोपान में प्रश्नों की विस्तृत जाँच करते हुए, प्रश्नों में वांछित सुधार कर परीक्षण के अन्तिम रूप में केवल उपयुक्त प्रश्नों का चयन करके ही परीक्षण में रखा जाता हैं। इसीलिए इस सोपान को परीक्षण का जाँच स्तर (Try out Stage) भी कहा जाता है। परीक्षण की जाँच के दो स्तर होते हैं –

1)प्रारम्भिक जाँच स्तर **(Pre-tryout stage)&** इस स्तर पर परीक्षण की भाषा सम्बन्धी त्रुटियाँ तथा भ्रान्तियों को दूर किया जाता है जिसके लिए परीक्षण की कुछ प्रतियाँ तैयार कर उसे व्यक्तिगत रूप से छात्रों पर प्रशासित किया जाता है। तत्पश्चात् छात्रों द्वारा इंगित कठिनाइयों अथवा अस्पष्टताओं के आधार पर प्रश्नों में वांछित संशोधन किया जाता है, कुछ प्रश्नों को निकाल दिया जाता हैं तथा बाकी प्रश्नों को यथावत रखा जाता है। आवश्यकतानुसार तथा परिस्थतिनुसार परीक्षण में सुधार हेतु विषय विशेषज्ञों के भी विचार तथा सुझाव लिए जाते हैं।

2)वास्तविक जाँच स्तर **(Tryout stage)&** यह स्तर परीक्षण के विभिन्न पदों की तकनीकी विशेषताओं को ज्ञात करने से सम्बन्धित होता है। तथा इन्हीं तकनीकी विशेषताओं के आधार पर प्रश्नों को संशोधित किया जाता है अथवा चयन किया जाता है या अस्वीकार किया जाता हैं। प्रश्नों की तकनीकी विशेषताओं को ज्ञात करने के लिए अनुसरण की जाने वाली पद विश्लेषण नामक प्रक्रिया का विवरण इस प्रकार है

पद विश्लेषण **(Item Analysis)&** पद विश्लेषण का अभिप्राय उस प्रक्रिया से होता है जिसमें प्रश्नों की मनोमितीय विशेषताओं (Psychometric Characteristies) को आंकिक दृष्टि से विश्लेषित किया जाता है तथा उसी के आधार पर अन्तिम रूप में प्रश्नों का चयन किया जाता है। चूंकि परीक्षण निर्माता का उद्देश्य ऐसे परीक्षण का निर्माण करना होता है जो कम समय, कम धन तथा कम शक्ति में अपने कार्य को पूरा करे, इसलिए उसका उद्देश्य परीक्षण में आवश्यक तकनीकी विशेषताओं से युक्त प्रश्नों को ही रखना होता हैं जिससे एक संक्षिप्त तथा प्रभावशाली परीक्षण तैयार हो सके, इसीलिए पद विश्लेषण की प्रक्रिया में प्रश्नों की दो तकनीकी विशेषताओं–कठिनाई स्तर तथा विभेदन क्षमता की गणना की जाती है।

कठिनाई स्तर कठिनाई स्तर का सम्बन्ध प्रश्नों के कठिनाई स्तर से होता है। दूसरे शब्दों में प्रश्नों के कठिनाई स्तर से तात्पर्य छात्रों की दृष्टि से प्रश्नों की कठिनता से हैं।

विभेदन क्षमता इसे पद वैधता भी कहते है जो यह बताती है कि कोई प्रश्न परीक्षण पर प्राप्त कुल प्राप्तांक के अनुरूप किस सीमा तक मापन कर रहा है अर्थात् किस सीमा तक अच्छे और कमजोर छात्रों में विभेद कर रहा है। कोई भी प्रश्न कमजोर तथा अच्छे छात्रों में अन्तर करने में किस सीमा तक सफल है यह प्रश्नों की विभेदन क्षमता ही बताती है।

कठिनाई स्तर ज्ञात करने की विधि –

प्रश्नों के कठिनाई स्तर को ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता है –

(i) सर्वप्रथम परीक्षण को छात्रों के एक बड़े प्रतिनिधि प्रतिदर्श पर प्रशासित कर लीजिए।

(ii) प्रत्येक छात्रों के लिए परीक्षण पर कुल प्राप्तांकों की गणना करके कुल प्राप्तांक को उसछात्र की परीक्षण पुस्तिका पर अंकित कर दीजिए। माना कि प्रत्येक पद के सही उत्तर देने वालो की संख्या R हैं और जाँच में सम्मिलित होने वाले छात्रों की कुल संख्या N हैं।

(iii) इसके पश्चात् R तथा N से अनुपात ज्ञात कर लीजिए अर्थात् R/N।

(iv) R तथा N का प्राप्त अनुपात को 100 से गुणा कर दीजिए अर्थात् 100× R/N

(v) 100 × R/N से प्राप्त संख्या को 100 से घटा दीजिए। प्राप्त संख्या ही कठिनाई मान होगा। इसे हम इस प्रकार से सूत्र में व्यक्त कर सकते हैं :–

D.V. = 100 –(**R/N×100**) इसमें **D.V.** संकेताक्षर से व्यक्त करते हैं।

उदाहरण के लिए यदि जाँच में सम्मिलित होने वाले छात्रों की संख्या 50 है और एक पद का सही उत्तर देने वालों की संख्या 30 है तो इस पद का कठिनाई मान 40% होगा अर्थात्

[100 – (30/50×100)] की गणना का परिणाम 40 आएगा। चूंकि कठिनाई स्तर का

मान प्रतिशत में रखा जाता हैं इसलिए यह 40% होगा।

विभेदीकरण मान ज्ञात करने की विधि :–

विभेदीकरण मान ज्ञात करने में (i) तथा (ii) सोपान कठिनाई मान के निर्धारण वाला ही होगा।

(iii) छात्रों की परीक्षण पुस्तिकाओं को कुल प्राप्तांको के आधार पर अधिक से कम के क्रम (Ascending order) में व्यवस्थित कीजिए जिसमें सबसे अधिक अंक प्राप्त करने वालेछात्र का नाम सबसे ऊपर तथा सबसे कम अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थी का नाम सबसे नीचे होगा।

(iv) परीक्षा में सम्मिलित होने वाले छात्रों को तीन समूहों में बाँट दीजिए – एक उच्च सूमह (माना H समूह) दूसरा निम्न समूह (माना L समूह) और तीसरा बीच का समूह। उच्च तथा निम्न दोनों समूहों के प्रत्येक समूह में सम्पूर्ण समूह के लगभग 27%छात्र होने चाहिए और बीच के समूह में लगभग 46%छात्र होगें। छात्रों की संख्या को N समूह से व्यक्त किया जायेगा।

(v) प्रत्येक प्रश्न के लिए उच्च समूह के छात्रों के द्वारा दिए गए सही उत्तरों की संख्या (N_H) तथा प्रत्येक प्रश्न के लिए निम्न समूह के छात्रों के द्वारा किए गए सही उत्तरों की संख्या (N_L) ज्ञात कर लीजिए।

(vi) N_H में से N_L को घटा दीजिए तथा प्राप्तांको को H समूह अथवा L समूह के छात्रों की संख्या, जो कि सम्पूर्ण समूह की संख्या का लगभग 27% हैं (माना यह $_KN$ हैं) से विभाजित कर लीजिए तथा उसे 100 से गुणा कर दीजिए प्राप्त उत्तर ही विभेदीकरण मान होगा। इसे हम इस प्रकार सूत्र के माध्यम से व्यक्त कर सकते है :–

$$D.P. = \frac{N_H - N_L}{_KN} \times 100$$

यहां D.P. विभेदीकरण (Discriminating Power) का संकेताक्षर है।

उदाहरण के लिए यदि जाँच में सम्मिलित होने वाले छात्रों की संख्या 50 हैं, H तथा L दोनो समूहों में 14–14 छात्रों हुए (यह संख्या सम्पूर्ण समूह की संख्या के 27% से कुछ अधिक हैं) यदि एक पद का सही उत्तर H समूह के 13छात्र तथा L समूह के 6छात्र देते है तो प्रस्तुत पद का विभेदीकरण मान 50% होगा। अर्थात्

$$\frac{(13-6) \times 100}{14}$$

सामान्य रूप से इस प्रकार जाँच किए जाने वाले परीक्षण में उन्हीं पदों को सम्मिलित किया जाता है जिनका कठिनाई मान 25% से 75% तक हो तथा विभेदीकरण मान 20% से 80% तक हो। परन्तु इस सन्दर्भ में कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि यदि किसी पद का कठिनाई मान 20% से 80% तक तथा विभेदीकरण मान लगभग 30% से अधिक हो,

तो भी उसे परीक्षण में सम्मिलित किया जा सकता है। उपरोक्त प्रक्रिया से चयनित पद अच्छे तथा विश्वसनीय होने के साथ–साथ उस कक्षा के लिए भी उपयुक्त होंगे जिसके लिए वह बनाए गए है।

(iv) परीक्षण का मूल्यांकन करना यह परीक्षण निर्माण का अन्तिम सोपान है जिसमें परीक्षण का मूल्यांकन कर उसे अन्तिम रूप प्रदान किया जाता है। तृतीय सोपान में सम्पन्न की जाने वाली पद विश्लेषण की प्रक्रिया के आधार पर अन्तिम रूप से चयनित प्रश्नों को परीक्षण में व्यवस्थित कर लिया जाता है तथा साथ–साथ परीक्षण की तकनीकी विशेषताओं तथा विश्वसनीयता, वैद्यता तथा मानकों को भी सुनिश्चित किया जाता है। सामान्यतया 80 से अधिक विश्वसनीयता गुणांक वाले परीक्षण को एक अच्छे परीक्षण के रूप में स्वीकार किया जाता है। परीक्षण के उद्देश्य के आधार पर परीक्षण की वैद्यता भी तय कर ली जाती है। उपलब्धि परीक्षण के लिए साधारणतया पाठ्यवस्तु वैद्यता को स्थापित किया जाता है। इसी प्रकार परीक्षण पर प्राप्त अंको की व्याख्या के लिए मानक ज्ञात कर लिए जाते है। उपलब्धि परीक्षण के सन्दर्भ में प्रायः कक्षा मानकों की गणना की जाती है। इसके पश्चात् परीक्षण निर्माता का अन्तिम कार्य परीक्षण निर्देशिका को तैयार करना है जिसमें परीक्षण के निर्माण से सम्बन्धित समस्त जानकारी रहती है जैसे –परीक्षण का उद्देश्य, मापी जाने वाली योग्यता का स्पष्टीकरण, विशिष्टीकरण तालिका, पद विश्लेषण के आँकड़े, प्रशासित करने व अंकन करने की विधियां, विश्वसनीयता, वैद्यता तथा मानक आदि से सम्बन्धित विवरण। इस परीक्षण निर्देशिका की सहायता से कोई भी व्यक्ति परीक्षण से सम्बन्धित विभिन्न सूचनाएं प्राप्त कर उसका उपयोग कर सकता है।

परीक्षण निर्माण तथा मानकीकरण की उपयफ्रक्त प्रक्रिया में आए विश्वसनीयता, वैद्यता तथा मानक जैसे सम्प्रत्ययों का स्पष्टीकरण भी आपके लिए आवश्यक है तभी आप उपयफ्रक्त प्रक्रिया को भली भंति समझ सकते हैं

विश्वसनीयता :– विश्वसनीय शब्द का शाब्दिक अभिप्राय विश्वास करना है। इस प्रकार विश्वसनीयता परीक्षण वह परीक्षण होता है जिस पर विश्वास किया जा सके। यदि किसी परीक्षण का प्रयोग बार–बार उन्ही छात्रों पर किया जाए तथा प्रत्येक बार वेछात्र समान अंक प्राप्त करे तो वह परीक्षण विश्वसनीय माना जाएगा। चूंकि वह परीक्षण प्रत्येक बार छात्रों के एक जैसा अंक दर्शा रहा है इसलिए यह उस परीक्षण के विश्वसनीय होने का प्रमाण है अर्थात् परीक्षण की विश्वसनीयता का सम्बन्ध प्राप्तांको में स्थायित्व से है। इसे आप एक उदाहरण के माध्यम से समझ सकते हैं वि यदि किसी बुद्वि परीक्षण में किसी छात्र की बुद्वि लब्धि 112 आती है तथा 10 दिन के पश्चात पुनः उसी परीक्षण में उसी छात्र की बुद्वि लब्धि 110 या 112 के लगभग आती है तो उस परीक्षण को विश्वसनीय परीक्षण कहा जाएगा अर्थात् उक्त परीक्षण में प्राप्त अंको की समानता, जो वि अलग –अलग परिस्थितियों में एक हीछात्र ने प्राप्त किया है, ही परीक्षण को विश्वसनीय परीक्षण होने का प्रमाण देती है।

किसी भी परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करने की पाँच विधियाँ प्रमुख रूप से होती है जैसे

- परीक्षण पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता विधि
- समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता विधि

- अर्द्ध विच्छेद विश्वसनीयता विधि
- ताक्रिक समतुल्यता विश्वसनीयता विधि
- होयट विश्वसनीयता विधि

(1) परीक्षण पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता विधि –

विश्वसनीयता ज्ञात करने की यह विधि अत्यन्त सरल तथा स्पष्ट है जिसमें किसी भी परीक्षण को छात्रों के किसी भी समूह पर दो बार प्रशासित कर प्रत्येक छात्र के लिए दो प्राप्तांक ले लिए जाते हैं। तत्पश्चात परीक्षण के प्रथम तथा द्वितीय प्रशासन से प्राप्त अंको के मध्य सह सम्बन्ध गुणांक की गणना कर ली जाती है। यह सह सम्बन्ध गुणांक परीक्षण पुर्नपरीक्षण विश्वसनीयता गुणांक तथा विधि परीक्षण पुनपरीक्षण विश्वसनीयता विधि कहलाती है।

(2) समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता विधि –

इस विधि से विश्वसनीयता ज्ञान करने के लिए प्रत्येकछात्र को परीक्षण की समान दो प्रतियां छात्रों को एक के बाद एक देकर प्रत्येकछात्र के लिए दो प्राप्तांक ले लिए जाते हैं और दोनों प्राप्तांको के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक निकाल लिया जाता है। यह गुणांक समतुल्यता गुणांक तथा यह विधि समतुल्य परीक्षण विश्वसनीयता विधि कहलाती है।

(3) अर्द्ध विच्छेद विश्वसनीयता विधि –

इस विधि में परीक्षण को दो समतुल्य भागों में बाँट कर परीक्षण के दोनों भागों के लिए प्रत्येक छात्र के लिए दो अलग–अलग प्राप्तांक प्राप्त कर लिए जाते हैं जिनके मध्य सहसम्बन्ध गुणांक की गणना की जाती है। प्राप्त सहसम्बन्ध गुणांक आधे परीक्षण की विश्वसनीयता को बताता है जबकि पूर्ण परीक्षण की विश्वसनीयता को ज्ञात करने के लिए स्पीयर मैन –ब्राउन सूत्र का प्रयोग करते हैं जो निम्नलिखित है

$$\frac{2r}{1+r}$$

इस विधि से प्राप्त विश्वसनीयता को अर्द्ध विच्छेद विश्वसनीयता विधि कहते है।

(4) ताक्रिक समतुल्यता विश्वसनीयता विधि –

इस विधि के जन्मदाता कूडर तथा रिचर्डसन है। उनके अनुसार यदि परीक्षण के प्रश्नों को कठिनाई स्तर के बढ़ते हुए क्रम में रखा जाए तो आदर्श स्थिति में प्रत्येक छात्र एक ऐसे बिन्दु पर पहुँचेगा जिससे पूर्व के सभी प्रश्नों को वह सही हल करेगा तथा बाद के प्रश्नों को सही नही। यदि समस्त छात्रों के लिए प्रश्नों का ऐसा विभाजन सम्भव होता है तो परीक्षण को पूर्णतया विश्वसनीय कहा जाएगा और जिस सीमा तक कुछ कठिन प्रश्नों को सही तथा सरल प्रश्नों को गलत करते हैं तो उसी सीमा तक परीक्षण की विश्वासनीयता कम हो जाएगी। परन्तु यह विधि विजातीय परीक्षणों की तुलना में सजातीय परीक्षणों के लिए अधिक उपयुक्त होती है अर्थात् एक ही गुण मापन करने वाले परीक्षण के लिए यह विधि अधिक उपयुक्त है।

(5) होयट विश्वसनीयता विधि –

इस विधि का प्रतिपादन होयट ने किया जिसका आधार प्रसरण को बनाया। परन्तु इससे प्राप्त परिणाम कूडर रिचार्डसन विधि से प्राप्त परिणामों के ही समान होते हैं।

वैधता – प्रायः विभिन्न उपलब्धियों के मापन, व्यक्तियों के चयन, व्यवसाय अथवा भावी सफलता का अनुमान लगाने के लिए विभिन्न परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। यदि प्रयोग में लाया जाने वाला परीक्षण अपने उद्देश्य की पूर्ति सफलतापूर्वक करता है तो वह परीक्षण वैध माना जाएगा तथा परीक्षण की इस विशेषता को वैधता कहते है। इस प्रकार कोई परीक्षण जितनी शुद्वता के साथ अपने उद्देश्यों को पूरा करता है अर्थात् वांछित गुणों का मापन करता है वह परीक्षण उसी सीमा तक वैध माना जाता है।

किसी भी परीक्षण की वैधता ज्ञात करने की भिन्न–भिन्न विधियां हमारे मापनविदों ने बताई है जिनमें से आपके अध्ययन हेतु हेल्मस्टेडटर द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण, जो सर्वाधिक उपयुक्त है, को प्रस्तुत किया जा रहा है :–

(1) विषयगत वैधता – परीक्षण की वैधता स्थापित करने के लिए परीक्षण परिस्थितियों तथा परीक्षण व्यवहार का सावधानी – पूर्वक विश्लेषण करके परीक्षण द्वारा मापी जा रही योग्यता के सम्बन्ध में प्रमाण एकत्रित करना विषयगत वैधता का बोध करता है।

(2) आनुभाविक वैधता – जब परीक्षण व्यवहार तथा निकर्ष व्यवहार के मध्य सम्बन्ध को ज्ञात करके परीक्षण द्वारा मापी जाने वाली योग्यता या विशेषता के सम्बन्ध में प्रमाण प्रस्तुत किए जाते हैं तो इसे आनुभाविक वैधता कहा जाता है। इस प्रकार की वैधता निकष वैधता भी कहलाती है।

अन्वय वैधता –अन्वय किसी चर या गुण के सम्बन्ध में चार परिकल्पित विचार है जो उस चर या गुण की व्याख्या करता है। जब किसी परीक्षण की वैधता मानसिक शील गुणों की उपस्थिति के आधार पर ज्ञात की जाती है तब इसे अन्वय वैधता कहते हैं।

मानक – शिक्षा, मनोविज्ञान तथा समाजशास्त्र के अधिकांश चरों की प्रकृति अप्रत्यक्ष होती है जिसके कारण उनके मापन के लिए किसी एक सर्व स्वीकृति मानक इकाई का होना सम्भव नहीं हो सकता। परिणामतः प्राप्तांकों को अर्थ युक्त बनाने या उनकी व्याख्या करने की समस्या आती है। इस समस्या से निजात पाने के लिए परीक्षण निर्माताओं ने कुछ ऐसे सन्दर्भ बिन्दु निर्धारित किए जिसके आधार पर प्राप्तांको की व्याख्या की जा सके। इन सन्दर्भ बिन्दुओं को ही मानक कहते हैं। दूसरे शब्दों में परीक्षण मानक वे सन्दर्भ बिन्दु हैं जिनकी सहायता से या जिनसे तुलना करके परीक्षण के प्राप्तांको की व्याख्या की जाती है।

परीक्षण के निर्माण समय परीक्षण निर्माता प्रायः चार प्रकार के मानको का प्रयोग करता है –

1. आयु मानक – अर्थात विभिन्न आयु वर्गो के छात्रों द्वारा उस परीक्षण पर प्राप्त औसत प्राप्तांक

2. कक्षा मानक – अर्थात विभिन्न कक्षाओं के छात्रों द्वारा परीक्षण पर प्राप्त औसत प्राप्तांक। यह आयु मानक के समान ही होते हैं।

3. शतांशीय मानक– अर्थात छात्रों के किसी प्रतिनिधित्व प्रतिदर्श के द्वारा प्राप्त अंको के

विभिन्न शतांश। कोई शतांश वह प्राप्तांक है जिसके नीचे एक दिए गए प्रतिशत बराबर छात्र अंक प्राप्त करते हैं। सामान्यतया व्यक्तित्व परीक्षण, बुद्विलब्धि परीक्षण, रूचि परीक्षण, अभिवृत्ति परीक्षण आदि के लिए शतांशीय मानक का प्रयोग किया जाता है।

4. प्रमापीकृत प्राप्तांक मानक –विभिन्न प्रकार के मानकीकृत प्राप्तांकों जैसे जेड प्राप्तांक, टी, प्राप्तांक, सी प्राप्तांक तथा स्टेनाइन प्राप्तांक आदि का उपयोग भी मानक की तरह ही किया जा सकता है।

चर्चा के बिन्दु–

किसी भी परीक्षण के निर्माण तथा उसके मानकीकरण में विश्वसनीयता, वैधता तथा मानकों की क्या आवश्यकता होती है।

____

____

____

____

____

11.4 निदानात्मक परीक्षण

ऐसा परीक्षण जिसके माध्यम से छात्रों की अधिगम सम्बन्धी कठिनाइयों का पता लगाया जाता हैं, निदानात्मक परीक्षण कहलाता है। इस परीक्षण के माध्यम से अध्यापकछात्र की अधिगम सम्बन्धी कठिनाइयों अथवा समस्याओं की पहचान कर उसका विश्लेषण कर उसके मूल कारणों का पता लगाता है।

निदानात्मक परीक्षण एक प्रकार से उपलब्धि परीक्षण का ही रूप है जिसका उद्देश्य उपलब्धि परीक्षण से ज्यादा व्यापक होता है। क्योकि उपलब्धि परीक्षण के द्वारा छात्रों ने विभिन्न विषयों में कितना ज्ञान, बोध और कौशल अर्जित किया है, इसका मापन किया जाता है। जबकि निदानात्मक परीक्षण उस अर्जित ज्ञान, बोध तथा कौशल की विशिष्टता तथा इनके अर्जन में आ रही बाधाओं को ज्ञात करने का प्रयास करते हैं। अध्यापक निदानात्मक परीक्षण के माध्यम से प्राप्त सूचनाओं अथवा समस्याओं का विश्लेषण कर उनकी अधिगम प्रकियाओं तथा अपनी शिक्षण विधि में वांछित परिवर्तन करके ऐसे छात्रों के लिए उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करता है।

रैमर्स गेज तथा रूमेल ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि " निदानात्मक उपलब्धि परीक्षण परीक्षित किए जा रहे किसी एक या अधिक क्षेत्रों में किसी व्यक्ति की कमियों को ज्ञात करने के लिए बनाया जाता है।"

स्टोडोला तथा स्टोर्डहल के शब्दों में " निदानात्मक परीक्षण का निर्माण प्राथामिक कौशलों जैसे पढ़ना या अंकगणित की विशिष्ट जानकारी तथा कमजोरियों को ज्ञात करने के लिए किया जाता है।"

ईबेल के अनुसार " निदानात्मक परीक्षण को अध्ययन के किसी विषय जैसे पढ़ना या अंकगणित के अधिगम करने में आई विशिष्ट कमजोरियों या असफलताओं को सामने लाने के

लिए बनाया जाता है।"

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि निदानात्मक परीक्षण छात्रों की विषय से सम्बन्धित अधिगम कठिनाई तथा उन कठिनाइयों के मूल कारणों को इंगित करते हैं। इस सन्दर्भ में एस० के० अग्रवाल का मत है कि " जब कोई रोगी उपचार के लिए डॉक्टर के पास जाता है तो डॉक्टर पहले उसके शरीर की परीक्षा करके रोग के कारण मालूम करता है। तत्पश्चात रोग को दूर करने के लिए उपचार करता है। इस क्रिया को निदान कहते हैं। डॉक्टर की भाँति अध्यापक भी जब देखता है कि बालक का वचन त्रुटिपूर्ण है, वह पढ़ने में अटकता है, वह गणित के प्रश्न नही कर पाता अथवा ज्ञान प्राप्ति में कोई अन्य कठिनाई है तो वह इन दोषों के कारणों का पता लगाया है। दूसरे शब्दों में वहछात्र के किसी भी विषय की कमजोरी अथवा कमी या पिछड़ेपन का निदान करता है। निदान करने के पश्चात वह विविध उपचारिक विधियों की सहायता से बालक के पिछडेपन या कमजोरी को दूर करता है।" अग्रवाल के उक्त वकतव्य से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि बालक की शैक्षिक प्रगति में उत्पन्न अवरोधों का निदान अत्यन्त आवश्यक है और यह निदान, निदानात्मक परीक्षण के ही माध्यम से सम्भव है।

11.4.1 निदानात्मक परीक्षण का उद्देश्य

- किसी विशिष्ट विषय या प्रकरण के ज्ञानार्जन में छात्रों की अधिगम कठिनाइयों, कमियों या कमजोरियों का पता लगाना।
- छात्रों की अधिगम कठिनाइयों, कमियों या कमजोरियों के पीछे की पृष्ठभूमि अथवा कारणों को ज्ञात करना।
- अध्ययन प्रक्रिया के बाधक तत्वों का पता लगाना।
- शिक्षण प्रक्रिया में वांछनीय परिवर्तन लाना।
- यदि समस्या पूरी कक्षा से सम्बन्धित है तो पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि तथा कक्षागत परिस्थितियों में वांछित सुधार लाना।
- पिछड़े छात्रों की विशिष्ट कमजोरियों का पता लगाना।
- छात्रों की अधिगम कठिनाइयों का तत्काल पता लगाकर उसके उपचार की व्यवस्था करना तथा भविष्य में इनकी पुनरावृत्ति होने से रोकना।
- छात्रों की इन कमजोरियों को रोका जा सकता है, इस बात से उन्हें अवगत कराकर उनमें आत्मविश्वास की भावना को उत्पन्न करना।
- छात्रों के विषय में अध्यापकों के अनुभवों में वृद्वि करना।

11.4.2 निदानात्मक परीक्षण का कार्य क्षेत्र

किसी भी भवन की सुदृढ़ता उसकी मजबूत नींव पर ही निर्भर करती है। शिक्षा के क्षेत्र में भी यही बात लागू होती है। यदि छात्र कक्षा के प्रारम्भिक, स्तर पर हो वाचन, अक्षर विन्यास, लेखन, व्याकरण तथा गणित में त्रुटियाँ कर रहा है तो स्वाभाविक रूप से वह आगे भी प्रत्येक विषय में त्रुटियाँ करेगा क्योंकि उपयफ्रक्त वर्णित तत्व प्रत्येक विषय में विद्यमान

होते हैं। बात यदि सामाजिक अध्ययन की हो, तो उसमे भी ये तत्व विद्यमान रहते हैं जैसे यदिछात्र में वाचन दोष है तो वह कठिन स्थलों, शासकों, व्यापारिक शब्दावलियों तथा अन्य कठिन शब्दों के उच्चारण या वाचन त्रुटिपरक ढंग से करेगा और तदनुसार उनका लेखन भी त्रुटिपरक ढंग से करेगा। साथ ही साथ गणित सम्बन्धित त्रुटियां उसे ई०, ई० पू० की गणना, शताब्दी की गणना तथा किसी भी साम्राज्य अथवा शासक की अवधि गणना में भी त्रुटियां ही करवायेंगी। ऐसी स्थिति में उसकी इन आधारभूत तत्वों की त्रुटियों या कमजोरियों का तत्काल निदान आवश्यक है जिससे कि वह विषय का त्रुटि रहित ढंग से अधिगम कर सकें।

बोध–प्रश्न

5. निदानात्मक परीक्षण की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।

____
____
____

6. "निदानात्मक परीक्षण से शिक्षण प्रक्रिया में वांछनीय परिवर्तन आता है" इस कथन की पुष्टि कीजिए।

____
____
____

11.4.3 निदान के साधन

छात्रों की शैक्षिक या अधिगम सम्बन्धी कठिनाइयों को ज्ञात करने का सर्वोत्तम उपाय अथवा साधन निदान परीक्षण होता है जिसमें पाठ्यक्रम के विभिन्न पक्षों पर अंश प्राप्तांकों के देने का प्रावधान होता है। दूसरे शब्दों में निदानात्मक परीक्षण के अंश प्राप्तांक सम्बन्धित विषय वस्तु के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध मेंछात्र की स्थिति का बोध कराते हैं। उदाहरण स्वरूप सामाजिक अध्ययन के निदानात्मक परीक्षण का स्वरूप कुछ इस प्रकार हम देख सकते हैं

छात्र का नाम	घटनाओं से सम्बन्धित ज्ञान	तिथियों से सम्बन्धित ज्ञान	मानचित्र सम्बन्धित ज्ञान	स्थानों के दिशा सम्बन्धित ज्ञान	जलवायु से सम्बन्धित ज्ञान	भारतीय अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित ज्ञान	समसामयिक घटनाओं का ज्ञान	प्रशासन से सम्बन्धित ज्ञान	नागरिकों के कर्तव्य तथा अधिकारों का ज्ञान	प्रस्तुतिकरण की शैली	कुल प्राप्तांक
	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	10 अंक	100 अंक

रेखाचित्र संख्या – 3

उपयफ्रक्त निदानात्मक परीक्षण के नमूने से आप समझ गए होगें कि इसमें विषय को विभिन्न घटकों में विभाजित कर दिया गया है और प्रत्येक घटक के अलग–अलग प्राप्तांक है।छात्र जिस–जिस घटक में कम अंक पाते हैं, वही–वही घटक उसकी अधिगम कठिनाई से

सम्बन्धित माने जाते हैं और छात्रों की कमजोरियों के विषय के क्षेत्र विशेष में ज्ञान प्राप्त हो जाता है जो उसके लिए उपचारात्मक शिक्षण की आवश्यकता को इंगित करता है।

सन्दर्भित अनुसन्धानों के द्वारा एक बात और प्रकाश में आई है कि कभी–कभीछात्र कक्षा में सम्प्रेषित ज्ञान को तो आत्मसात अथवा बोध कर लेते हैं परन्तु परीक्षा में वे आशा के अनुरूप परिणाम नही प्राप्त कर पाते । क्योंकि व्यक्तित्व सम्बन्धी तत्व, सामाजिक वातावरण का प्रभाव, पारिवारिक पृष्ठभूमि, माता पिता का दृष्टिकोण घर की आर्थिक स्थिति तथा उसके संगी साथी का प्रभाव का भी बालक की शिक्षण सम्बन्धित कठिनाइयों से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। जैसे –यदि छात्र विषय में कम अंक पाता है तो हो सकता है वि उसका पारिवारिक वातावरण कलहपूर्ण रहा हो, आर्थिक तंगी हो, उसके समाज तथा परिवार का वातावरण शिक्षा के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण रखता हो या फिर उसके संगी साथी उसे पढ़ने न देते हो आदि। और इन समस्त बातों का ज्ञान निदानात्मक परीक्षण मात्र से नही हो सकता। इसके लिए अध्यापक को निम्नलिखित साधनों का भी प्रयोग करना चाहिए यथा–

(1) निरीक्षण अर्थात अध्यापक छात्रों के व्यवहार का निरीक्षण करते हुए इस सन्दर्भ में कुछ जानकारी प्राप्त कर सकता है कि ऐसे कौन से कारक है जो उसके अधिगम को प्रभावित कर रहे हैं।

(2) साक्षात्कार अर्थात छात्रों से खुलकर पूछताछ करना। परन्तु स्मरण रहे वि इस कार्य के लिए अध्यापक को ऐसे छात्रों के साथ पहले आत्मीयता स्थापित करनी होगी जिससे छात्र बिना डरे अध्यापक द्वारा पूछे गए प्रत्येक प्रश्न का उत्तर दे सकें और ये प्रश्न उसकी सामान्य गतिविधियों से सम्बन्धित होने चाहिए।

(3) संचित अभिलेख– प्रायः विद्यालयों में संचित अभिलेख रखने का प्रावधान होता है जिसमें प्रत्येकछात्र की दिन–प्रतिदिन या वार्षिक प्रगति का लेखा–जोखा रहता है। इस अभिलेख के अवलोकन से भी अध्यापक ऐसे छात्रों के विषय में काफी कुछ पता लगा सकते हैं।

इस प्रकार हम कह सकते है किनिदानात्मक परीक्षण का शिक्षा की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान है। अध्यापक इनका प्रयोग करके छात्रों की अधिगम सम्बन्धी समस्याओं तथा कमजोरियों को जानकर आवश्यकतानुसार उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था कर सकता है। अन्यथा छात्रों की कमजोरियों के ज्ञान के अभाव में वह बार–बार सामान्य ढंग से शिक्षण करके अपने श्रम, समय तथा शक्ति का अपव्यय करता रहेगा तथाछात्र वांछित ज्ञान प्राप्त करने में असफल होते रहेंगे।

क्रिया कलाप –

अपनी कक्षा के यदि किसी कमजोरछात्र के लिए आप को निदानात्मक परीक्षण का निर्माण करना है तो आप कैसे उसका स्वरूप प्रस्तुत करेंगे, एक नमूना प्रस्तुत कीजिए।

____

____

____

बोध प्रश्न –7–

अपने छात्रों की समस्याओं के निदान हेतु अध्यापक किन–किन साधनों का प्रयोग करता है ।

____
____
____
____
____

11.5 उपचारात्मक शिक्षण

सामान्य तौर पर उपचार शब्द का सम्बन्ध चिकित्साशास्त्र से होता है जिसमे किसी भी रोग अथवा शारीरिक दोष को ठीक किया जाता है जो व्यक्ति की स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रगति में बाधक होते है। उपचार के इस प्रक्रम में न केवल रोगी को दवा वरन उसके खान–पान, रहन–सहन तथा उसके सम्पूर्ण वातावरण में भी वांछित परिवर्तन लाया जाता है जिससे वह रोगी बिलकुल स्वस्थ होकर सामान्य जीवन व्यतीत कर सके। अपने इसी अर्थ में यह शब्द शिक्षा के क्षेत्र में बहुतायत से प्रयोग में लाया जाता है और छात्रों की कमजोरी (शैक्षिक) का पता लगाकर उसे दूर करने का प्रयास किया जाता है। दूसरे शब्दों में उपचारात्मक शिक्षण वह शिक्षण प्रक्रिया है जिसके द्वारा छात्रों की कठिनाइयों का पता लगा कर उसका उपचार किया जाता है।

प्रायः किसी भी कक्षा में कुछछात्र ऐसे होते हैं जिनकी उपलब्धि सामान्य से कम होती है फलस्वरूप ऐसेछात्र ज्ञानार्जन में पिछड़ जाते हैं। उपचारात्मक शिक्षण का प्रावधान ऐसे ही छात्रों के लिए किया जाता है।

11.5.1 उपचारात्मक शिक्षण का उद्देश्य

इस विधि का मुख्य उद्देश्य कमजोर छात्रों की शिक्षण सम्बन्धी कमजोरियों का पता लगा कर उन्हें सामान्य स्थिति में लाना है जिससे कक्षा के अन्य छात्रों की भांति ये भी प्रगति कर सके जिसके लिए अध्यापक निम्नलिखित लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है :–

- छात्रों के मानसिक भ्रम को दूर करना।
- विकास में बाधक कठिनाइयों का निराकरण।
- बुरी आदतों को दूर कर स्वस्थ आदतों को विकसित करना।
- छात्रों के मनोबल को ऊँचा करना।
- उन्हें निरन्तर प्रोत्साहित करते हुए उनके विकास को प्रोत्साहन देना।

11.5.2 उपचारात्मक शिक्षण की विशेषताएँ

इस शिक्षण में अध्यापक शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े छात्रों को अपने करीब बैठा कर

उनकी समस्याओं से अवगत होकर उसे दूर करने का प्रयास करता है। विभिन्न सम्प्रत्ययों की व्याख्या के लिए अध्यापक उसकी सरल, सुबोध तथा बोधगम्य ढ़ंग से व्याख्या करता है तथा आवश्यकतानुसार सरल उदाहरणों को प्रस्तुत करता है अथवा विभिन्न सहायक सामग्रियों का प्रयोग करते हुए उसे सरल बनाता है।

- छात्रों को अधिक से अधिक प्रश्न पूछने को प्रोत्साहित किया जाता है तथा अध्यापक भी बीच–बीच में बोध प्रश्नों को पूछते हुए उनके अधिगम स्तर का पता लगाता रहता है।
- अध्यापक छात्रों को उन क्रियाओं को करने के लिए प्रेरित करता है जिसे करने में वे कठिनाई का अनुभव करते हैं तथा आवश्यकतानुसार अध्यापक छात्रों को वांछित निर्देशन देकर उन्हें अपनी सहभागिता प्रस्तुत करने के लिए प्रेरित करता है।
- छात्र अपनी दूर की गई अधिगम कठिनाइयों का बार–बार अभ्यास कर उसे सुदृढता तथा स्थायित्व प्रदान कर सके इसके लिए उन्हें गृह कार्य भी दिया जाता है।

11.5.3 उपचारात्मक शिक्षण की विधियाँ

1. उपचारात्मक दत्त कार्य– छात्रों की कठिनाइयों के निराकरण हेतु अध्यापक निम्नलिखित उपचारात्मक कार्य कर सकता है
   - सरल तथा क्रमबद्व ढ़ंग से विषय सामग्री को सुव्यवस्थित कर अध्ययन कराना।
   - छात्रों को स्वतः अभ्यास हेतु प्रेरित करना।
   - छात्रों की त्रुटियों पर ध्यान देते हुए उन्हें दूर करना तथा छात्रों को ऐसी त्रुटियों की पुनरावृत्ति न करने के लिए प्रेरित करना
2. आवृत्यात्मक अभ्यास – इसका अभिप्राय छात्र को अपनी गलती सुधारने हेतु बार–बार अभ्यास करने को प्रेरित करना। इस अभ्यास का मुख्य उद्देश्य छात्रों की त्रुटि को सही करके उसकी सही अनुक्रियाओं को मजबूत बनाना है। इसके लिए अध्यापक छात्रों को ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों अर्थात देखकर, सुनकर तथा करके सीखने पर बल देता है।
3. पर्यवेक्षित अध्ययन –छात्र पुनः त्रुटि न करे इसके लिए अध्यापक छात्रों द्वारा किए जाने वाले कार्यों का बार–बार अवलोकन करता है और छात्रों को व्यक्तिगत निर्देशन में सीखने हेतु प्रेरित करता है।
4. शैक्षिक क्रीडा – अर्थात छात्र अधिगम को बोझ न समझे, इसके लिए अध्यापक प्रकरण के अनुसार कुछ खेलों को भी शिक्षण में सम्मिलित करता है जिससे छात्र रूचि के साथ ज्ञानार्जन कर सके।
5. उपचार गृह–इसमें अध्यापक छात्र को मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक वातावरण में रखकर अधिगम कराता है जिससे वे भली भांति सीख सकें।

6. <u>सहपाठी अनुशिक्षण</u>– कभी–कभी छात्र जिन बातों को अपने अध्यापक से भय, संकोच अथवा घबराहट में सीखने में असमर्थ रहता हैं, उन बातो को वह अपने सहपाठी से सीख लेता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि कभी–कभी छात्रों की अधिगम सम्बन्धी कुछ कठिनाइयों को दूर करने में उनके सहपाठी बहुत मदद कर देते हैं। इस सहायता को हम सहपाठी अनुशिक्षण कहते हैं। परन्तु यह कार्य सभी छात्र नही कर सकते हैं। सहपाठी अनुशिक्षण का कार्य केवल वही छात्र कर सकते हैं जिनमें निम्नलिखित योग्याताएं होती है जैसे–

- जो कुछ पढ़ाना अथवा समझना हो उसे वे स्वयं भली भांति जानते हो।
- उनमें सम्प्रेषण का कौशल हो।
- उनमें धैर्य तथा प्रेम पूर्वक सिखाने का गुण हो।
- वे काम को बोझ नही वरन रूचि के साथ सिखाने में सक्षम हो।

उपरोक्त विधियों के अतिरिक्त कुछ अन्य मनोवैज्ञानिक तथा आधुनिक विधियां भी होती है जिनका प्रयोग उपचारात्मक शिक्षण विधियों के रूप में भी किया जा सकता है जैसे– क्लीनिक विधि, व्यक्तिगत अनुदेशन प्रणाली, दक्षता अधिगम, अभिक्रमित अनुदेशन, मॉड्यूल उपागम, बहुमाध्यम उपागम, श्रव्य दृश्य अनुदेशन आदि

परन्तु उपयक्रक्त विधियों का प्रयोग केवल वही अध्यापक कर सकते हैं जो इसके प्रयोग में निपुणता एवं कौशल रखते हो।

11.5.4 उपचारात्मक शिक्षण के पद

अधिगम में कठिनाई महसूस करने वाले छात्रों के उपचारात्मक शिक्षण के दौरान अध्यापक को निम्नलिखित पदों का अनुसरण करना चाहिए :–

➢ सर्व अधिगम कठिनाइयों से ग्रस्त छात्रों की पहचान करना चाहिए। इनकी पहचान अध्यापक छात्रों की उपलब्धियों के आधार पर कर सकता है। यदि कोई छात्र कक्षा के अन्य छात्रों के समान लेखन, पठन तथा तथ्यों को समझने में असफल है, यदि वह बार–बार परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाता है, यदि कक्षा में वह एकाग्र भाव से नही बैठता है अथवा कक्षा में पूछे गए प्रश्नों के उत्तर देने में वह असफल हो रहा है तो इसका अर्थ वह अधिगम कठिनाइयों से युक्त बालक है।

- ऐसे छात्रों के लिए उपयुक्त उपचारात्मक विधि को सुनिश्चित करना।
- उपयुक्त उपचारात्मक सामग्री का निर्माण करना।
- इन्हें अतिरिक्त समय देने हेतु समय सारणी निर्धारित करना और उसी के अनुरूप कार्य करना।
- उनकी प्रत्येक गतिविधि (सफलता तथा असफलता दोनों) का लेखा–जोखा रखना।
- जब तक छात्र की अधिगम कठिनाइयां दूर न हो, तब तक इसी पद क्रम का अनुसरण करते रहना।

11.5.5 उपचारात्मक शिक्षण में अपेक्षित सावधानियाँ

- छात्रों की शैक्षिक, सामाजिक तथा सांवेगिक पृष्ठभूमि को सदैव ध्यान में रखते हुए उपचारात्मक शिक्षण करना चाहिए।
- यह शिक्षण प्रेरणात्मक होना चाहिए।
- अध्यापक को धैर्य के साथ उन्हें सिखाना चाहिए।
- एक समय में एक ही कठिनाई का उपचार करना चाहिए जिससे छात्र बोझ न महसूस करें।
- छात्रों को उनकी त्रुटियों एव कमियों के बारे में सकारात्मक ढंग से बताना चाहिए तथा 'तुम बेहतर कर सकते हो' यह कहकर उन्हें सुधार हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए।
- छात्रों की अच्छाइयों तथा विशिष्ट योग्यताओं को भी अध्यापक द्वारा सराहा जाना चाहिए। क्योकि हर बच्चे में अन्तनिर्हित कुछ विशिष्ट योग्यता होती है जिसकी सराहना से छात्रों का मनोबल ऊँचा उठता है और वे अधिगम हेतु प्रेरित होते है।
- छात्रों द्वारा महसूस की जाने वाली कठिनाइयों से अवगत होने के पश्चात अध्यापक को उन्हें सरल से जटिल के क्रम में पहले सुव्यवस्थित करना चाहिए तत्पश्चात सबसे पहले सरल समस्याओं का समाधान करते हुए ही जटिल की ओर अग्रसर होना चाहिए।
- उपचारात्मक कार्यक्रम की अवधि में छात्रों द्वारा प्राप्त होने वाली समस्याओं से निरन्तर उन्हें अवगत कराते रहना चाहिए जिससे छात्र और बेहतर का प्रयास करते रहें।
- समस्त उपचारात्मक कार्यक्रम सतत रूप से तथा पूर्व निश्चित समय सारणी के अनुसार तब तक चलाते रहना चाहिए जब तक छात्र में पूरी तरह से आत्म विश्वास की भावना न आ जाए।
- यदि अध्यापक को कहीं से भी उपचारात्मक कार्यक्रम लाभप्रद होते नहीं प्रतीत हो रहा है तो उसे बदल कर वैकल्पिक व्यवस्था करना चाहिए।

11.5.6 निदानात्मक परीक्षण तथा उपचारात्मक शिक्षण से लाभ

- इसके माध्यम से छात्रों की दुर्बलताओं तथा कठिनाइयों का पता लगाकर उसे दूर किया जा सकता है।
- इसके द्वारा छात्रों को अपनी योग्यताओं तथा क्षमताओं को निखारने का अवसर प्राप्त होता है।
- छात्रों को कुसमायोजन से बचाया जा सकता है।
- इसके माध्यम से शिक्षा के गिरते हुए स्तर को बचाया जा सकता है।

- छात्र भविष्य में भी करने वाली त्रुटियों को सुधार लेते हैं।
- उनकी हीन भावना को दूर कर उनमें आत्मविश्वास के भाव को विकसित किया जा सकता है।
- उन्हें बेहतर करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।
- यह मात्र छात्रों में ही सकारात्मक परिवर्तन नही लाता वरन अध्यापकों को भी लाभान्वित करता हैं क्योकि इस प्रक्रिया में मनोयोग से लगा हुआ शिक्षक अपनी शिक्षण विधियों में नित्य नवीनता एवं परिवर्तन लाने का प्रयास करता हैं। उसमें धैर्य एवं संयम का भाव धीरे–धीरे आने लगता है तथा अपनी सफलता से उत्साहित होकर वह बेहतर तथा और बेहतर परिणाम हेतु नित्य अग्रसर रहता है।

उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता हैं कि निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के संचालन के समय छात्रों के समक्ष उपस्थित विभिन्न समस्याओं का पता लगाकर उनका त्वरित उपचार करने की अवधारणा से सम्बन्धित है। इस शिक्षण का मूल प्रयोजन छात्रों की समस्त कठिनाइयों का निदान कर उनमें वांछित सुधार लाने हेतु उपचारात्मक शिक्षण प्रदान कर छात्रों के व्यक्तिव का सर्वागीणं विकास करना है। जैसा कि बुनकर तथा मेलवी जी ने भी इस सन्दर्भ में कहा हैं कि:–

"निदानात्मक शिक्षण का मुख्य उद्देश्य किसी विषय वस्तु में विद्यार्थी की विशिष्ट कमजोरी को प्रकाश में लाना है, जिससे कि उस कमजोरी के कारणों की खोज करके सुधार हेतु उपचारात्मक कदम उठाया जा सके।"

<u>बोध प्रश्न</u>

8. उपचारात्मक शिक्षण कमजोर छात्रों को भी सामान्य छात्रों के समकक्ष लाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

9. उपचारात्मक शिक्षण के दौरान अपेक्षित सवाधानियों को कारण सहित लिखिए।

____

____

____

____

____

11.6 सारांश:

यह सर्वमान्य है कि शिक्षा समाज की एक प्रमुख तथा महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था के रूप में ख्याति अर्जित कर चुकी है। चूंकि समाज की प्रकृति परिवर्तन शील है एतदर्थ इसकी सामाजिक संस्थाओं में भी परिवर्तन परिलक्षित होता है। इस उदीयमान भारतीय समाज के

अनुरूप शिक्षा के स्वरूप में भी काफी परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए। अब शिक्षा का उद्देश्य मात्र ज्ञानार्जन नही है वरन छात्रों में प्रयोग, कौशल, रूचि तथा अभिरूचि का विकास करना भी है। शिक्षा के उद्देश्यों में व्यापकता के साथ–साथ अब छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान का पता लगाने के लिए परीक्षा के स्थान पर मूल्यांकन का व्यापक तथा सतत रूप व्यवहार में लाया जाने लगा। अब मूल्यांकन विद्यालय द्वारा लाये गए छात्रों के व्यवहार में परिवर्तनों के विषय में वैध प्रमाणों के संकलन और उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया है। जिससे प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर शिक्षण– अधिगम प्रक्रिया में भी वांछित सुधार लाया जाता हैं। मूल्यांकन के आधार पर छात्र की समस्या अथवा उसकी शैक्षिक प्रगति के अवरोधों का कारण पता कर उसका निदान तथा उपचार कर प्रस्तुत छात्र के उपलब्धि स्तर को बढ़ाया जाता हैं। सन्दर्भतः परीक्षण पदों का निर्माण निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण का महत्व आपने प्रस्तुत इकाई के माध्यम से समझ लिया होगा।

11.7 अभ्यास कार्य

1) अपने छात्रों के सतत मूल्यांकन हेतु आपके दृष्टिकोण से कौन से उपकरण उपयुक्त होंगे। उनका औचित्य सिद्व कीजिए।
2) आठवीं कक्षा की सामाजिक अध्ययन की पाठ्यपुस्तक में से 50% प्रकरणों के लिए अर्द्ववार्षिक परीक्ष हेतु प्रश्न पत्र का ब्लूं प्रिट तैयार कीजिए।
3) मूल्यांकन करने के पश्चात किसी छात्र की अधिगम गति की मन्दता यदि आपके संज्ञान में आती है तो आप उसकी इस समस्या का निदान कैसे करेंगे।
4) नवीं कक्षा की सामाजिक अध्ययन की पाठ्यपुस्तक के किन्ही दो पाठों पर आधारित वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की 25% की संख्या में रचना कीजिए।

11.8 चर्चा के बिन्दु

1) आपके द्वारा निर्मित प्रश्न पत्र पाठ्यपुस्तक के समस्त प्रकरणों का समुचित प्रतिनिधित्व करे, इसके लिए आप किन बातों को ध्यान में रखेगें।
2) उपचारात्मक शिक्षण के दौरान आप किन–किन विधियों को व्यवहार में लाएंगे, स्पष्ट कीजिए।
3) उपचारात्मक शिक्षण छात्रों की अधिगम प्रगति हेतु अत्यन्त महत्वपूर्ण, सत्यापित कीजिए।

11.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षा की प्रक्रिया बिना मूल्यांकन के अपूर्ण है। मूल्यांकन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें छात्रों के व्यवहार में हुये सभी प्रकार के परिवर्तनों की जांच कर उनकी वांछनीयता को ज्ञात किया जाता है। मूल्यांकन का मुख्य प्रयोजन छात्रों की सीखने की प्रक्रिया को अग्रसर एवं निर्देशित करना है। इस प्रकार मूल्यांकन एक सकारात्मक प्रक्रिया है जिससे किसी कार्यक्रम के द्वारा प्राप्त उद्देश्यों या उपलब्धियों की वांछनीयता

को ज्ञात किया जाता है।

2. मूल्यांकन सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था की रीढ है। इसके बिना किसी भी प्रकार का सुधार सम्भव नही हो पाता। यह सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया की उपादेयता की जानकारी देती है तथा ज्ञात कमियों के आधार पर उनमें वांछित सुधार की पृष्ठभूमि भी निर्मित करती है। वर्गीकरण, प्रोन्नत करना, मानकों का निर्धारण करना, निर्देशन देना, चयन करना, प्रमाण पत्र देना यह सभी मूल्यांकन के उद्देश्य है।

3. मूल्यांकन के विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु अध्यापक विभिन्न शैक्षिक उपकरणों का प्रयोग करता है जिसका मुख्य प्रयोजन इन उपकरणों द्वारा प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रम की वांछनीयता अथवा उपयोगिता को जानना है। इन शैक्षिक उपकरणों के आधार पर न केवल हम छात्रों की उपलब्धियों वरन सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया के परिणामों का आंकलन या मूल्यांकन कर सकतें है।

4. निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हो रही है, कक्षा में दिये गये अधिगम अनुभव कितने प्रभावशाली हो रहें हैं तथा छात्रों े के व्यवहार में वांछित परिवर्तन किस सीमा तक हो रहा है– यह सभी जानने के लिये शिक्षा की प्रक्रिया में मूल्यांकन आवश्यक है।

5. निदानात्मक परीक्षण एक ऐसा परीक्षण है जिसके माध्यम से छात्रों की अधिगम सम्बन्धी कठिनाइयों का पता लगाया जाता है और उन कठिनाइयों का पता लगा कर उसका विश्लेषण कर उसके मूल कारणों का पता लगाकर उनमें वांछित परिवर्तन किया जाता है तथा आवश्यकतानुसार अध्यापक अपने छात्रों के लिये उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करता है।

6. "निदानात्मक परीक्षण से शिक्षण प्रक्रिया में वांछित परिवर्तन आता है" यह कथन अक्षरशः सत्य है। निदानात्मक परीक्षण छात्रों की विषय से सम्बन्धित अधिगम कठिनाई तथा उन कठिनाईयों के मूल कारणों को इंगित करते हैं। तत्पश्चात इन समस्याओं अथवा कठिनाइयों को दूर करने के लिये शिक्षक अपने शिक्षण विधि में वांछित सुधार कर छात्रों को पुनः शिक्षण देकर उनकी समस्याओं अथवा कठिनाईयों का निदान करता है। दूसरे शब्दों में अधिगम करने में आई कठिनाईयों अथवा समस्याओं को दूर कर निदानात्मक परीक्षण शिक्षण प्रक्रिया में वांछित सुधार करता है।

7. यदि छात्रों के अधिगम परिणाम बहुत सन्तोषजनक है, वह शिक्षा के वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति में असफल है तथा उसके व्यवहार में भी वांछित परिवर्तन नही हो पा रहा है, तो इसका आशय उसकी कुछ अधिगम समस्यायें या कठिनाईयॅा है जिसका ज्ञान वह केवल निदानात्मक परीक्षण के माध्यम से ही प्राप्त कर सकता है इसलिये वह तीन अन्य साधनों यथा छात्रों के व्यवहार का निरीक्षण करके, छात्रों का साक्षात्कार लेकर तथा संचित अभिलेख आदि का प्रयोग करके अपने छात्रों की समस्याओं का निदान करता है।

8. उपचारात्मक शिक्षण कमजोर छात्रों को भी सामान्य छात्रों के समकक्ष लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रायः कक्षा में कुछ छात्र ऐसे होते हैं जिनकी उपलब्धि सामान्य बच्चों से कम होती है। फलस्वरूप ऐसे बच्चे ज्ञानार्जन में पिछड़ जाते हैं। परन्तु उपचारात्मक शिक्षण ऐसे छात्रों की शिक्षण सम्बन्धी कमजोरियों का पता

लगाकर उनके विकास में आई कठिनाईयों का निराकरण करता है, छात्रों के मानसिक भ्रम को दूर कर उनके मनोबल को ऊँचा करता है तथा उन्हे निरन्तर प्रोत्साहित करते हुये उन्हे सामान्य छात्रों के समकक्ष लाता है।

9. उपचारात्मक शिक्षण सदैव छात्रों की शैक्षिक, सामाजिक तथा सांवेगिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुये करना चाहिये। यह शिक्षण प्रेरणात्मक तथा धैर्य के साथ करना चाहिये। एक समय में यदि एक ही कठिनाई का उपचार हो, तो छात्र बोझ महसूस नहीं करेंगे। उन्हे उनकी त्रुटियों के बारे में सकारात्मक ढ़ंग से बताकर "तुम बेहतर कर सकते हो" कहकर प्रेरित करना चाहिये और यह शिक्षण तब तक करते रहना चाहिये, जब तक छात्र में सुधार न हो जाये तथा वह आत्मविश्वास से न भर जाये।

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. गुप्ता, एस० पी०, आधुनिक मापन एवं मूल्यांकन;

a. शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2005।

2. मालवीय, राजीव; शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद 2011।

3. मंगल, एस० के, मंगल उमा; शिक्षा तकनीकी पी० एच० आई लर्निग प्रा० लि० न्यू देहली – 110001 – 2011।

इकाई –12 इकाई परीक्षणों का निर्माण, ब्लू प्रिन्ट, प्रश्न पत्र का निर्माण

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 इकाई

12.3.1 इकाई योजना

12.3.2 इकाईयों का निर्माण

12.3.3 इकाई योजना के घटक

12.3.4 इकाई योजना निर्माण के सिद्वान्त

12.3.5 इकाई योजना तथा पाठ योजना में अन्तर

12.3.6 इकाई योजना में शिक्षण के पद

12.3.7 इकाई योजना का नमूना

12.3.8 इकाई योजना का महत्व तथा उपयोगिता

12.3.9 इकाई परीक्षण

12.3.10 इकाई परीक्षण के प्रशासन का समय

12.3.11 इकाई परीक्षण के निर्माण के सोपान

12.4 ब्लू प्रिन्ट या विशिष्टीकरण तालिका

12.5 प्रश्न पत्र का निर्माण

12.5.1 विषयवस्तु का समुचित विश्लेषण

12.5.2 व्यवहारपरक शब्दावलियों में शैक्षणिक उद्देश्य का लेखन

12.5.3 प्रश्न पत्र का ब्लूप्रिन्ट तैयार करना

12.5.4 संज्ञानात्मक तथा संज्ञानेत्तर परिणामों के लिए परीक्षण मदें (प्रश्न) विकसित करना

12.5.4.1 संज्ञानात्मक परिणामों के लिए मदें तैयार करना

12.5.4.1.1 ज्ञानात्मकता से सम्बन्धित मदें

12.5.4.1.2 अवबोध अथवा समझ सम्बन्धित मदें

12.5.4.1.3 अनुप्रयोग के लिए मदें

12.5.4.2 संज्ञानेत्तर परिणामों के लिए मदें तैयार करना

12.5.5 अच्छा प्रश्न पत्र तैयार करना

12.6 सारांश

12.7 अभ्यास कार्य

12.8 चर्चा के बिन्दु

12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.10 सन्दर्भ पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

इकाई शब्द किसी भी विषय वस्तु की समग्रता की सूचक है जिसमें इस बात पर बल दिया जाता है कि विषय वस्तु को समग्र रूप में प्रस्तुत करने से ही स्पष्ट रूप से उसे समझा जा सकता है। इकाई में सीखना एक सक्रिय प्रक्रिया होती है जिसमें छात्रों के व्यवहार पर बल दिया जाता है। इस प्रकार समग्र रूप में सीखना तथा अनुभवों द्वारा सीखना ही इसके महत्वपूर्ण पहलू है। शिक्षणोपरान्त छात्रों ने कितना सीखा और उनके व्यवहार में वांछित परिवर्तन हुआ अथवा नही, इसको जानने के लिए अध्यापक इकाई परीक्षण तथा प्रश्न पत्रों का निर्माण करता है। इन परीक्षण तथा प्रश्नपत्र का निर्माण किस प्रकार किया जाए कि वो वैध परीक्षण हो, जिससे छात्रों के व्यवहार का वांछित मूल्याकंन हो सके, आदि के विषय में प्रस्तुत इकाई में विस्तृत वर्णन किया जा रहा है।

12.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप–

(1) इकाई शब्द का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।

(2) इकाई योजना के अर्थ का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।

(3) इकाई योजना के घटकों को सूचीबद्ध कर सकेंगे।

(4) इकाई योजना तथा पाठ योजना में विभेद कर सकेंगे।

(5) इकाई परीक्षण निर्माण के समस्त सोपानों की सूची बना सकेंगे।

(6) ब्लू प्रिन्ट तैयार करते समय इकाइयों के महत्व की गणना किस प्रकार करना चाहिए, इसकी व्याख्या कर सकेंगे।

(7) शैक्षणिक उद्देश्य को व्यवहारपरक शब्दावलियों में लिखते हुये ज्ञान तथा बोध उद्देश्यों के दो–दो उदाहरण दे सकेंगे।

(8) सामाजिक अध्ययन के कोई पाँच संज्ञानेत्तर अधिगम परिणाम बता सकेंगे।

(9) किसी भी प्रकरण से सम्बन्धित दस मिलान प्रश्नों की रचना कर सकेंगे।

12.3 इकाई

इकाई परीक्षण के विषय में जानने से पूर्व आपको इकाई तथा इकाई योजना का ज्ञान होना आवश्यक है। इकाई शब्द अपनी उत्पत्ति में नवीन है परन्तु इसमें निहित धारणा हरबर्ट स्पेन्सर के शैक्षिक विचारों से साम्यता रखती है। शिक्षा के क्षेत्र में सामान्य रूप से इसका प्रयोग 1920 से हुआ। यह शब्द अवयवीवाद या गेस्टाल्ट के सिद्वान्त पर आधारित है जो पूर्ण को महत्व देता है। इसके अनुसार अधिगम हेतु प्रस्तुत की जाने वाली सामग्री अंशो में नही वरन समग्र रूप में होनी चाहिए। यह किसी भी विषय का एक बड़ा उपविभाग होता है जिसका कोई मूल सिद्वान्त या प्रकरण होता है जिसके अनुरूप छात्रों की क्रियाओं को नियोजित किया जाता है। जिससे छात्रों को विषयके आवश्यक तत्वों का पूर्ण ज्ञान हो जाए। प्रेस्टॉन के अनुसार " एक जैसी वस्तुओं का समूह, जो कि अधिकांश लोगो द्वारा बोधगम्य किया गया हो, इकाई कहलाता है। "

थॉमस एम० रिस्क ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि "इकाई किसी समस्या या योजना या सम्बन्धित सीखने वाली क्रियाओं की समग्रता या एकता को प्रकट करती है।"

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान तथा प्रशिक्षण परिषद के अनुसार "इकाई एक निर्देशात्मक युक्ति है जो छात्रों को समवेत रूप में ज्ञान प्रदान करती है।"

कार्टर बी० गुड के शब्दों में "इकाई से तात्पर्य किसी एक केंद्रीभूत समस्या या प्रयोजन के इर्द गिर्द संगठित उन विभिन्न क्रिया कलापों, अनुभवों तथा अधिगम सामग्री से है जिसे शिक्षक के नेतृत्व में विद्यार्थियों के एक समूह विशेष के द्वारा प्रकाश में लाया जाता है।"

एच० सी० मैरिसन ने इसे स्पष्ट करते हुए कहा है कि "विद्यार्थियों के प्रयोजन को सिद्ध करने के लिए इस प्रकार की एक इकाई विकसित, विस्तृत, श्रृखंलाबद्ध तथा एक दूसरे से सम्बन्धित अर्थपूर्ण क्रियाकलापों से समाविष्ट रहती है जिसके द्वारा विद्यार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाने हेतु महत्वपूर्ण शैक्षिक अनुभव प्रदान किए जाते हैं।"

उपयफ्रक्त परिभाषाओं के आधार पर निम्नलिखित परिणाम निकाले जा सकते हैं

- किसी केन्द्रीभूत समस्या या प्रयोजन के इर्द गिर्द ही इकाई की विषय वस्तु का ताना–बाना बुना जाता है।
- इकाई निर्माण कार्य में प्रत्येक छात्र का अपने शिक्षक के साथ पूरा सहयोग रहता है।
- इकाई में अपने आप में सार्थक, अर्थ युक्त तथा अपने आप में पूर्ण ऐसी विषय वस्तु तथा अधिगम अनुभवों का समावेश होता है जिसके द्वारा वांछित शिक्षण अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति ठीक तरह संभव हो सके।
- इकाई में सम्मिलित की जाने वाली ििवषयवस्तु में निरंतरता तथा विस्तृतता पाई जाती है जिससे छात्रों को सम्बन्धित प्रकरण अथवा समस्या के विषय में व्यापक जानकारी प्राप्त हो जाती है।
- कोई भी इकाई निर्धारित पाठ्यक्रम के सभी प्रकार से पूर्ण उस भागांश का प्रतिनिधित्व करती है जिसके माध्यम से उपयुक्त तथा सार्थक अनुभव प्रदान किया जा सकता है।

बोध प्रश्न –

1) 'इकाई' शब्द के आशय को स्पष्ट कीजिए।

____

____

____

____

____

12.3.1 इकाई योजना

अभी पूर्व में आपने इकाई के सम्प्रत्यय को भली भांति समझा। सन्दर्भत, इकाई योजना के सम्प्रत्यय को भी समझना आवश्यक है। इकाईयों में संग्रहित विषय वस्तु तथा अधिगम अनुभवों का किस प्रकार शिक्षण–अधिगम किया जाए जिससे वांछित उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके, इसके लिए किए जाने वाले नियोजन कार्यो को इकाई योजना की संज्ञा दी जाती है। दूसरे शब्दों में इकाई योजना से तात्पर्य एक ऐसी कार्य प्रणाली से है जिसे किसी एक इकाई विशेष में निहित विषय वस्तु तथा अधिगम अनुभवों के शिक्षण अधिगम हेतु बनाया जाता है तथा उससे सम्बन्धित समस्त उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके, उसके लिए वांछित समस्त विधियों तथा तकनीकों की चर्चा की जाती है।

12.3.2 इकाईयों का निर्माण

इकाईयों के निर्माण से सम्बन्धित कुछ विशेष बातों पर ध्यान देना एक अध्यापक के लिए नितान्त आवश्यक है यथा

- पाठ्यक्रम में जिस तरह का प्रकरण युक्त विभाजन किया गया है, अध्यापक उसी के अनुरूप विभिन्न प्रकरणों को विभिन्न इकाई मानकर चल सकता है।
- पाठ्यक्रम में सम्मिलित समान प्रकृति तथा शिक्षण–अधिगम उद्देश्यों वाले प्रकरणों को एकत्रित कर इकाईयों का निर्माण कर सकता है।
- कुछ विशेष प्रयोजनों के सम्पादन के सन्दर्भ में पाठ्यक्रम की विषय सामग्री एवं प्रकरणों का विभाजन करके इकाईयों का निर्माण कर सकता है।

उपयक्रक्त वर्णित प्रक्रियाओं का अनुसरण करते हुए अध्यापक शिक्षण हेतु विभिन्न इकाईयों का निर्माण कर सकता है। सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में कुछ इकाईयों का उल्लेख उदाहरणार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है यथा सिन्धुघाटी, भारतीय धर्म और संस्कृति, आर्थिक नियोजन, प्रजातन्त्र, धर्म निरपेक्षता, भौगोलिक धरातल, पारिस्थितिक संकट, वंदेमातरम की गाथा आदि। पाठ्यक्रम की विषय वस्तु को अर्थपूर्ण, सार्थक तथा पूर्णता के साथ इकाईयों में विभाजित करने के उपरान्त अध्यापक को कुछ अन्य व्यावहारिक बातों पर भी ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है यथा –

- कुल कार्य दिवस तथा घंटे, जो अध्यापक को शिक्षण हेतु विद्यालयी समय सारणी में प्रदत्त है।
- उद्देश्यों तथा लक्ष्यों की प्राप्ति की दृष्टि से विभाजित इकाईयों की पूर्णता तथा सार्थकता।
- छात्रों की आयु, रूचि, क्षमता, योग्यता तथा आवश्यकताओं के सन्दर्भ में इकाईयों के विभाजन की उपयुक्तता।
- शिक्षण–अधिगम परिस्थितियों तथा विद्यालय में उपलब्ध संसाधनों के सन्दर्भ में इकाईयों की उपयुक्तता।
- इकाईयों की विषयवस्तु तथा अधिगम अनुभवों का पारस्परिक सहसम्बन्ध तथा समन्वय।
- इकाईयों की विषयवस्तु तथा अधिगम अनुभवों में आवश्यक तारतम्यता तथा निरंतरता हेतु उचित सहसम्बन्ध तथा समन्वय की पुष्टि।
- इकाईयों की उपइकाईयों तथा भागों में सम्मिलित विषयवस्तु तथा अधिगम अनुभवों का समय सारणी में प्रदत्त समयावधि में उचित क्रियान्वयन की उपयुक्तता।
- इकाईयों की अध्ययन सामग्री हेतु वांछित अधिगम सामग्री तथा साधनों की उपलब्धता तथा उपयुक्तता।
- इकाई तथा उसकी उपइकाईयों की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में छात्र तथा अध्यापक के मध्य होने वाली अन्तःक्रिया का स्वरूप।
- इकाई तथा उपइकाईयों के शिक्षण अधिगम के मूल्याकंन हेतु पहले से ही इकाई परीक्षण का निर्माण।

बोध प्रश्न –

2) एक अध्यापक के लिए इकाई निर्माण के सम्बन्ध में किन–किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

____

____

____

____

____

12.3.3 इकाई योजना के घटक

इकाई योजना के घटक अथवा तत्व अथवा सोपानों के सन्दर्भ में भी विद्वानों के अलग–अलग मत है जैसे रिस्क महोदय ने इकाई योजना के सात घटक बताए हैं

1) उद्देश्य चयन

2) इकाईयों का विभाजन

3) विभाजित इकाई खण्डों का विकास अर्थात विशिष्ट उद्देश्यों का चयन, क्षेत्र, निर्धारण, क्रियाओं का चयन आदि

4) इकाई प्रस्तावना की तैयारी

5) वैयक्तिक भिन्नता अनुरूप व्यवस्था बनाना

6) उपलब्धि का मूल्याकंन

7) सन्दर्भ ग्रन्थों एवं शिक्षण सामग्री का चयन

ग्राम्बस तथा आईबर्सन ने चार घटकों का उल्लेख किया है

1) प्रस्तावना

2) नियोजन

3) अनुसन्धान

4) अवबोध

सामान्यतया इकाई योजना में निम्नाकिंत घटक माने जाते हैं :–

1) कक्षा एवं विषय

2) इकाई शीर्षक एवं संक्षिप्त विवरण

3) इकाई उद्देश्य

4) अनुदेशात्मक सामग्री

5) प्रारम्भिक क्रियाएँ

6) मूल्याकंन प्रविधियां एवं तकनीकी

12.3.4 इकाई योजना निर्माण के सिद्वान्त

अधिगम प्रक्रिया का संचालन सुचारू रूप से हो, इसलिए इकाई योजना का निर्माण करते समय निम्नलिखित सिद्वान्तों का अनुसरण किया जाना चाहिए :–

1) उपयोगिता का सिद्वान्त

2) रूचि का सिद्वान्त

3) आवश्यकता का सिद्वान्त

4) लचीलेपन का सिद्वान्त

5) ताक्रिक क्रियाओं से सम्बद्धता का सिद्वान्त

6) ज्ञान, भाव तथा क्रिया के सन्तुलन का सिद्वान्त

7) भौतिक संसाधनों की उपलब्धता का सिद्वान्त

12.3.5 इकाई योजना तथा पाठ योजना में अन्तर

इकाई योजना	पाठ योजना
1) इसमें विषयवस्तु एक इकाई का एक खण्ड या भाग के रूप में होती है।	जबकि पाठ योजना अपने आप में पूर्ण तथा एक कालांश में पूरी होने वाली होती है।
2) इकाई योजना में कई पाठ सम्मिलित होते हैं जिनमे पारस्परिक सह सम्बन्ध होता है।	इसमें एक प्रकरण को ही एक कालांश में पढ़ाया जाता है।
3) इकाई योजना में सामान्य तथा विशिष्ट उद्देश्य दोनों होते हैं जो व्यापक होते हैं।	जबकि पाठ योजना में व्यावहारिक उद्देश्य होते हैं अर्थात विशिष्ट उद्देश्य को छात्र के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है।
4) इकाई योजना का क्षेत्र तथा विस्तार अत्यन्त व्यापक तथा विस्तृत होता है।	पाठ योजना का क्षेत्र तथा विस्तार सीमित तथा संक्षिप्त होता है।
5) इकाई योजना का निर्माण कक्षा के पीरियड में सम्पन्न शिक्षण तथा अधिगम के लिए किया जा सकता है तथा विभिन्न उप–इकाईयों के शिक्षण के रूप में इसकी अवधि कई दिनों तक बढ़ाई जा सकती है।	जबकि पाठ योजना के अन्तर्गत किए गए नियोजन के क्रियान्वयन की अवधि पूरी तरह से मात्र विषय हेतु निर्धारित कक्षा के एक पीरियड अर्थात 35 से 40 मिनट की अवधि तक ही सीमित रहती है।
6) एक इकाई योजना अनेक पाठ योजनाओं को जन्म देने वाली सिद्ध हो सकती हैं अर्थात उसकी उप–इकाई से अनेक पाठ योजनाएं बनाई जा सकती है।	पाठ योजना अपने आप में पूर्ण होती हैं अर्थात किसी एक प्रकरण को लेकर पाठ योजना बना कर उसे एक ही पीरियड में पढ़ाया जाता है।

बोध प्रश्न –

3) इकाई योजना का निर्माण किन–किन सिद्वान्तों को दृष्टिगत रखते हुए किया जाता है?

____
____
____
____
____

4) शैक्षणिक उद्देश्यों के सन्दर्भ में इकाई योजना तथा पाठ योजना में अन्तर बताइए।

____
____
____
____
____

12.3.6 इकाई योजना में शिक्षण के पद

जिस प्रकार से पाठ योजना के शिक्षण में आप निश्चित सोपानों का अनुसरण करते हैं उसी प्रकार इकाई योजना के शिक्षण में भी कुछ पदों का अनुसरण किया जाता है जिससे इकाई शिक्षण के उद्देश्यों को, जिसे सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में बनाया गया है, पूरी तरह प्राप्त किया जा सके। इकाई योजना को कक्षा शिक्षण में प्रयोग करने हेतु मॉरीसन महोदय ने पाँच पदों का उल्लेख किया हैं–

(1) खोज–छात्र इकाई से सन्दर्भित विषयवस्तु के विषय में कितना पूर्व ज्ञान रखते हैं इस बात को जानने के लिए अध्यापक, छात्रों से विचार विमर्श करता है अथवा उसके पूर्व ज्ञान पर आधारित प्रश्न पूछता है जिससे छात्रों में नवीन ज्ञान के अर्जन हेतु तत्परता आ जाए।

(2) प्रस्तुतीकरण– छात्रों के पूर्व ज्ञान को नवीन ज्ञान से जोड़ने के लिए उनके पूर्व ज्ञान पर आधारित प्रश्न पूछ कर वह छात्रों को ज्ञानार्जन हेतु तत्पर कर इकाई की विषयवस्तु को छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत करता है। छात्रों ने सम्प्रेषित ज्ञान को कितना ग्रहण किया है, इसकी जानकारी हेतु अध्यापक छात्रों से प्रश्न पूछता है। यदि छात्र सही उत्तर देते हैं, तो इसका अर्थ उन्होनें विषयवस्तु को भली भांति समझ लिया और उसके पश्चात ही अध्यापक अगले विषय वस्तु के प्रस्तुतीकरण हेतु तत्पर होता है अन्यथा उसी ि‍विषयवस्तु को पुनः प्रस्तुत करता है।

(3) आत्मसातीकरण–यह पद अध्यापक द्वारा अपने छात्रों को अधिगम हेतु अर्थात ज्ञान के आत्मसातीकरण हेतु अभिप्रेरित करने से सम्बन्धित होता है जिसके लिए अध्यापक, छात्रों को स्वयं अध्ययन हेतु, ज्ञान का लिखकर अभ्यास करने तथा पारस्परिक विचार विमर्श कर उसके स्पष्टीकरण हेतु प्रेरित करता है।

(4) संगठन– इस पद में छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान की जाँच हेतु उनसे लेखन कार्य करवाया जाता है। यदि छात्रों ने अर्जित ज्ञान की अभिव्यक्ति संगठित रूप में की है तो ठीक है अन्यथा अध्यापक को उस विषय वस्तु की पुनरावृत्ति फिर से करके छात्रों के ज्ञानार्जन हेतु प्रयासरत रहना होता है।

(5) वाचन–इकाई शिक्षण का अन्तिम सोपान वाचन से सम्बन्धित होता है जिसमें दो प्रकार की विधियां प्रयोग में लाई जाती हैं

1) आदर्श विधि– अर्थात शिक्षक द्वारा पढ़ाई गई विषयवस्तु को छात्र उसी रूप में पुनः प्रस्तुत करता है जिस प्रकार शिक्षक ने उसे पढ़ाया है। इससे छात्र द्वारा अर्जित ज्ञान की पुनरावृत्ति भी हो जाती है। परन्तु इस विधि का एक दोष भी है और वह है बार–बार पुनरावृत्ति के कारण नीरसता का आ जाना और इसमें समय भी अधिक लगता है।

2) यथार्थ विधि– आदर्श विधि की तुलना में यथार्थ विधि अधिक मनोवैज्ञानिक तथा उपयोगी होती है क्योंकि इसमें छात्र विषय वस्तु को आवश्यकतानुसार लिखते भी हैं वाचन भी करते हैं तथा उस पर विचार विमर्श भी करते हैं।

12.3.7 इकाई योजना का नमूना

विषय : सामाजिक अध्ययन

कक्षा : 10

इकाई का नाम : जनाधिक्य अथवा जनसंख्या विस्फोट

इकाई के उद्देश्य–

1) ज्ञानात्मक उद्देश्य

i. छात्र जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों, प्रक्रियाओं, प्रवृत्तियों आदि का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।

ii. छात्र जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न सम्प्रत्ययों एवं धारणाओं यथा जनसंख्या की वृद्धि दर, जन्म दर, मुत्यु दर, जनसंख्या का घनत्व, प्रत्याशित आयु आदि के विषय में प्रत्याभिज्ञान कर सकेंगे।

2) अवबोधात्मक उद्देश्य–

i. छात्र राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति आय में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।

ii. छात्र विकसित तथा विकासशील देश में व्याप्त अन्तर में जनसंख्या वृद्धि की भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे।

iii. छात्र भारतीय जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों की तुलना अन्य देशों से सकेंगे।

iv. छात्र जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न समस्याओं की सूची बना सकेंगे।

v. छात्र जनाधिक्य के कारण उत्पन्न समस्याओं का उदाहरण दे सकेंगे।

5) प्रयोगात्मक उद्देश्य –

(1) छात्र जनंसख्या वृद्धि के सन्दर्भ में हो रही आर्थिक प्रगति की गति का आंकलन कर सकेंगे।

(2) छात्र जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं के निदान हेतु मौलिक सुझाव सकेंगे।

(3) छात्र जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने वाले सुझावों का क्रियान्वन किस सीमा तक किया जा रहा है इसका पता लगा सकेंगे।

4) कौशलात्मक उद्देश्य :–

i. छात्र जनसंख्या के विभिन्न तथ्यों से सम्बन्धित रेखाचित्र, चाट, ग्राफ तथा तालिकाएं बना सकेंगे।

ii. छात्र विभिन्न देशों में शादी करने की औसत आयु से सम्बन्धित तथ्यों का चित्रमय प्रदर्शन कर सकेंगे।

5) अभिरूचि से सम्बन्धित उद्देश्य –

i. छात्र भारतीय जनसंख्या से सम्बन्धित विभिन्न साहित्यों, पुस्तकों तथा पत्र पत्रिकाओं का अध्ययन कर सकेंगे।

ii. छात्र जनाधिक्य से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं के प्रति वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण अपना सकेंगे।

iii. छात्र अपने उत्तरदायित्व के प्रति सजग रहते हुए सामाजिक परिवर्तन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपना सकेंगे।

क्रम संख्या	प्रकरण	पाठों की संख्या	विषयवस्तु का क्षेत्र	सहायक सामग्री
1.	जनसंख्या विस्फोट की अवधारणा।	1	जनसंख्या तथा आर्थिक विकास में सम्बन्ध	तेजी से बढ़ रही जनसंख्या तथा उसके अनुपात में सीमित होते भौतिक संसाधनो से सम्बन्धित चार्ट या चित्र।
2.	भारतीय जनसंख्या से सम्बन्धित मुख्य	2	1891 से 2011 तक की जनगणना के अनुसार भारतीय जनसंख्या तथा	जनसंख्या वृद्धि को दर्शाता हुआ ग्राफ

	तथ्य : अतीत से वर्तमान के सन्दर्भ में।		उसकी वृद्धि का एक आंकड़ा, जो निरंतर बढ़ रहा है। बढ़ती हुई जन्मदर तथा प्रोत्साहित करने वाले घटक अथवा तत्व	अथवा तालिकाएं। चार्ट के माध्यम से जन्मदर तथा मुत्युदर के आँकड़ों का प्रदर्शन तथा जनाधिक्य को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्गीकरण चार्ट।
3.	जनाधिक्य का कारण तथा इस वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारक।	2	आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा औद्योगिक क्षेत्र में इस वृद्धि से उत्पन्न दुष्परिणाम।	दुष्परिणामों का वर्गीकरण चार्ट के माध्यम से प्रस्तुति।
4.	बढ़ती हुई जनसंख्या के दुष्परिणाम।	1	परिवार नियोजन, गर्भपात, निरक्षरता उन्मूलन, तथा व्यक्तिगत प्रयास और इस समस्या के नियन्त्रण में सरकारी तथा गैर सरकारी प्रयास।	चार्ट के माध्यम से जनाधिक्य को कम करने वाले कारकों का वर्गीकरण तथा पचंवर्षीया योजनाओं में किए गए व्यय के आधार पर दण्ड चित्र।
5.	जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव तथा सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा किए गए प्रयास।	2		

12.3.8 इकाई योजना का महत्व तथा उसकी उपयोगिता

- इकाई योजना में अध्यापक सम्पूर्ण सत्र में प्रदत्त समय के अनुसार पाठ्यक्रम की विषय वस्तु को इस प्रकार इकाइयों में विभक्त कर लेता है जिससे वह उचित समय पर अपने शिक्षण को पूर्ण कर लेता है।

- इकाई योजना द्वारा शिक्षणें के शैक्षणिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अत्यन्त लाभप्रद होता है क्योंकि निर्मित पाठ्य इकाईयाँ अपने आप में पूर्ण तथा सार्थक होती है और

छात्र रूचि के साथ अधिगम करते हैं।

- इकाई योजना में अध्यापक तथा छात्रों को अपने–अपने उत्तरदायित्वों तथा लक्ष्यों के विषय में पूर्ण ज्ञान होता है जिससे शिक्षण तथा अधिगम दोनो ही पूर्ण रूपेण सार्थक होता है।

- विभिन्न उपइकाईयों के शिक्षण अधिगम हेतु वांछित विधियों, तकनीको, व्यूह रचनाओं तथा सहायक शिक्षण सामग्रियों के सन्दर्भ में पूर्व विचार कर लेने के कारण इनका समुचित प्रयोग तथा उपयोग शिक्षण अधिगम के लक्ष्यों तथा उद्देश्यों की प्राप्ति में भी सहायक होता है।

- चूंकि इकाई योजना में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को ठीक प्रकार से व्यवस्थित एवं संगठित करने हेतु वांछित कार्य तथा क्रिया कलापों के संपादन का ज्ञान अध्यापक को पूर्व से ही रहता है इसलिए अध्यापक अपने कर्तव्यों तथा उत्तरदायित्वों के समुचित निर्वहन हेतु मानसिक तथा व्यावसायिक रूप से तत्पर रहता है।

- यह योजना कक्षा में अनुशासनहीनता की समस्या को उत्पन्न ही नही होने देती क्योंकि पढ़ाई जाने वाली विषय वस्तु का सार्थक इकाईयों तथा उपइकाईयों में विभाजन तथा उनके शिक्षण अधिगम हेतु वांछित क्रियाओं एवं संसाधनों का पूर्व नियोजन शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को अत्यन्त रोचक, प्रभावशाली तथा सारगर्भित बना देता है, जिससे छात्रों का ध्यान इधर–उधर नही भटकता और वे पूर्ण रूचि के साथ अधिगमरत रहते हैं।

- इकाई योजना में वांछित शिक्षण अधिगम उद्देश्यों के सन्दर्भ में एक इकाई परीक्षण के निर्माण का प्रावधान होता है जिससे इकाई के शिक्षण अधिगम परिणामों का मूल्याकंन करने में मदद मिलती है और ें का पूरे सत्र सतत रूप से मूल्याकंन होता रहता है।

उपरोक्त बिन्दुओं से स्वंम इकाई योजना के महत्व तथा उसकी उपयोगिता की पुष्टि हो जाती है। बस आवश्यकता इस बात की है कि विषय वस्तु को अपने आप में पूर्ण तथा सार्थक इकाईयों में बाँटकर पूर्ण तथा पूर्व नियोजन के साथ इसका क्रियान्वयन किया जाए तथा क्रियान्वयन में भी पूर्ण रूचि, लगन तथा पारदर्शिता बरती जाए। तो निःसन्देह सामाजिक अध्ययन का इकाई योजना द्वारा शिक्षण वरदान साबित होगा।

<u>बोध प्रश्न</u>

5) वाचन के प्रकार लिखिए। आपके दृष्टिकोण में सर्वोत्तम वाचन कौन–सा है कारण बताइए।

____
____
____
____
____

6) इकाई योजना का सामाजिक अध्ययन के शिक्षण और अधिगम में क्या महत्व है?

____

____

____

____

____

12.3.9 इकाई परीक्षण

प्रत्येक इकाई के उपरान्त छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान, बोध तथा कौशल के बोध हेतु लिए गए परीक्षण को ही इकाई परीक्षण कहते हैं। दूसरे शब्दों में प्रत्येक इकाई से छात्रों ने जो कुछ सीखा अथवा ज्ञानार्जन किया है, इसको जानने के लिए हर एक इकाई की समाप्ति पर अध्यापक छात्रों के ज्ञानार्जन का मूल्याकंन करता है जिसके लिए वह इकाई परीक्षण का प्रयोग करता है। इसी प्रकार प्रत्येक इकाई की समाप्ति के पश्चात परीक्षण का चक्र चलता रहता है और छात्रों की ज्ञान सीमा का मूल्याकंन होता रहता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि इकाई योजना में अन्तिम चरण परीक्षण प्रक्रिया या इकाई परीक्षण का होता है। इसे और अधिक स्पष्ट आप डा० आर० एन० पटेल के निम्न कथन से कर सकते हैं जिसके अनुसार

"इकाई परीक्षण एक छोटा परीक्षण है जो एक इकाई के शिक्षण के बाद लिया जाता है।"

इकाई परीक्षण के उद्देश्य

(1) छात्रों द्वारा उद्देश्यों की प्राप्ति सीमा को जानना

(2) शैक्षिक उपलब्धि की प्राप्ति का बोध करना

(3) अधिगम क्रियाओं में अर्जित सफलता को जानना

(4) शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया की उपादेयता को जानना

12.3.10 इकाई परीक्षण के प्रशासन का स्वरूप

इकाई परीक्षण के प्रशासन के सन्दर्भ में लचीलापन होता है। यह आवश्यक नही कि इसे प्रत्येक इकाई के अध्ययन के उपरान्त ही प्रशासित किया जाया। इसके प्रशासन के सन्दर्भ में विद्यालयी कार्यक्रम तथा गतिविधियों की सुविधा देखते हुए अध्यापक निर्णय लेता है। इसका प्रशासन हम निम्नाकिंत स्थितियों में से किसी पर भी सुविधानुसार कर सकते हैं –

(1) शिक्षण के दौरान

(2) प्रतिदिन पाठ के शिक्षण के पश्चात

(3) एक इकाई के शिक्षणोपरान्त

(4) अवधि की समाप्ति पर या उसके बाद

(5) वर्ष की समाप्ति पर या उसके बाद

12.3.11 इकाई परीक्षण के निर्माण के सोपान

किसी भी इकाई परीक्षण के निर्माण हेतु निम्नलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता है

1) परीक्षण की योजना बनाना– परीक्षण की योजना बनाते समय अध्यापक को निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए

- उद्देश्यों का चयन करना
- उद्देश्यों को महत्व (Weightage) प्रदान करना
- पाठ्यवस्तु के विभिन्न प्रकरणों को महत्व प्रदान करना
- प्रश्नों को विभिन्न रूपों में महत्व प्रदान करना
- कठिनाई के स्तर को महत्व प्रदान करना
- प्रश्नों के विकल्प की योजना बनाना
- प्रश्नपत्र के खण्डों अथवा उपवर्गों की योजना बनाना

2) इकाई परीक्षण का सम्पादनः– इस सोपान में अध्यापक प्रथम सोपान में बनाई गई योजनाओं को व्यावहारिक रूप प्रदान करता है जैसे –

- परीक्षण सामग्री का चयन करना
- परीक्षण सामग्री का वर्गीकरण करना
- परीक्षार्थी को निर्देश देना
- प्रश्न पत्र के खण्ड बनाना
- अंको की योजना का निर्माण करना

3) प्रश्न पत्र की समीक्षा– इकाई परीक्षण निर्माण के तृतीय सोपान में छात्रों को प्रश्न पत्र देने से पूर्व अध्यापक निम्नलिखित कार्य करता है –

- प्रत्येक प्रश्न का विश्लेषण करना
- विषय वस्तु का विश्लेषण करना
- इकाई परीक्षण का आलोचनात्मक मूल्याकंन करना

इस सन्दर्भ में विस्तार से अध्ययन आप इकाई संख्या– II के अन्तर्गत ' परीक्षण पदों का निर्माण' के अन्तर्गत कर चुकें हैं।

बोध प्रश्न

7) इकाई परीक्षण का प्रशासन कब किया जा सकता है।

____
____
____
____
____

12.4 ब्लू प्रिन्ट या विशिष्टीकरण तालिका

परीक्षण की अंतवस्तु/विषयवस्तु की वैधता तभी हो सकती है जब इकाई परीक्षण में विषय के समस्त क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व हो, समस्त उद्देश्य स्तरों यथा ज्ञान, अवबोध, अनुप्रयोग, कौशल आदि को समुचित महत्व दिया गया हो। इसलिए सामाजिक अध्ययन का अध्यापक एक सारणी अथवा तालिका बनाता है जिसमें बाई ओर ऊपर से शुरू कर नीचे तक सभी इकाईयों को लिखा जाता है तथा ऊपर बाई ओर से दाहिनी ओर तक समस्त शैक्षणिक उद्देश्य अंकित किए जाते हैं। उसके बाद प्रत्येक उद्देश्य के नीचे और सम्बन्धित इकाईयों के सामने की पंक्तियों में स्तम्भवार उनके लिए निर्धारित अंक लिख दिए जाते हैं। इसी सारणी या तालिका को ब्लू प्रिन्ट या विशिष्टीकरण तालिका कहते हैं। इस प्रकार ब्लू प्रिन्ट का अर्थ समस्त इकाइयों और उनको दिए गए महत्व का एक ऐसा योजनाबद्ध स्वरूप, जिसका उपयोग सामाजिक अध्ययन का अध्यापक इकाई परीक्षण के निर्माण के दौरान करता है। ब्लू प्रिन्ट बना लेने से अध्यापक को इस बात का ज्ञान हो जाता है कि किस इकाई के लिए उसके किन–किन उद्देश्यों को कितना महत्व देना हैं। उदाहरण स्वरूप दी गई प्रस्तुत तालिका में आप देख रहें हैं कि इकाई संख्या –1 में ज्ञान को 8%, अवबोध को 3% प्रयोग को 2% तथा कौशल को 0 देते हुए कुल 13% भार दिया गया। परन्तु आपके मन में यह प्रश्न उठ रहा होगा कि अध्यापक अलग–अलग इकाइयों और अलग–अलग उद्देश्यों के लिए भार (Weightage) का निर्धारण किस प्रकार करे। इसके लिए अध्यापक को सर्वप्रथम प्रत्येक इकाई की विषय वस्तु की मात्रा को ध्यान में रखते हुए हर इकाई का प्रतिशत महत्व निर्धारण कर लेना चाहिए। इसके लिए उसे इकाई के पृष्ठों की संख्या गिनकर उस संख्या को पाठ–पुस्तक के कुल पृष्ठों की संख्या से भाग दे देना चाहिए। इससे अध्यापक को उस इकाई का प्रतिशत महत्व ज्ञात हो जाएगा। इसी प्रकार परीक्षापत्र में सम्मिलित किए जाने वाली इकाई का प्रतिशत उसे ज्ञात कर ब्लू प्रिन्ट तैयार कर लेना चाहिए। जैसे– परीक्षा पत्र में सम्मिलित किए जाने वाली पाठ्यपुस्तक की सभी इकाइयों की कुल पृष्ठ संख्या 100 है तथा पहली इकाई की पृष्ठ संख्या 9 है तो प्रस्तुत इकाई का प्रतिशत में महत्व 9 होगा।

$$\frac{9 \times 100}{100} = 9\%$$

इसी प्रकार से सभी इकाईयों के महत्व की गणना करनी चाहिए। इकाई का महत्व निर्धारित करते समय एक और महत्वपूर्ण बात है– इकाई की विषय वस्तु सम्बन्धी जटिलता और सरलता का। यदि अध्यापक को ऐसा प्रतीत होता है कि किसी इकाई की कठिनता के कारण

उसको बोधगम्य बनाने के लिए अधिक समय देना पड़ेगा तो वह उस इकाई का महत्वसूचक प्रतिशत बढ़ा सकता है और इसी प्रकार सरल इकाई का महत्व सूचक प्रतिशत घटा सकता है। यदि इकाई का महत्व सूचक प्रतिशत दशमलव में आए, तो अध्यापक दशमलव वाले अंक को पूर्ण अंक में बदलने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है।

यहाँ एक बात आपकों और स्पष्ट कर दें कि प्रस्तुत सारणी में जो महत्वसूचक संख्याएं दी गई हैं वे इकाई के प्रश्नों की संख्या सूचक नही है वरन अंकों के प्रतिशत की सूचक है। अध्यापक जिस इकाई के लिए जिन–जिन उद्देश्यों को उचित समझते है, वे उसे ब्लू प्रिन्ट की सारणी में सम्मिलित कर सकतें है तथा उन्हें इकाइयों की संख्या भी अपने अनुसार रखने की स्वतन्त्रता होती है।

समाजिक अध्ययन ब्लू प्रिन्ट या विशिष्टीकरण तालिका

इकाईयाँ शैक्षणिक उद्देश्य					
	ज्ञान	अवबोध	प्रयोग	कौशल	योग
(1) यूरोप में आधुनिक युग का आरम्भ	8	3	2	–	13
(2) भौगोलिक खोजें तथा वैज्ञानिक आविष्कार	7	4	3	–	14
(3) दो महान क्रान्तियाँ	6	4	2	–	12
(4) भारत और विश्व शान्ति	6	3	2	2	13
(5) भारत और उसके पड़ोसी देश	5	4	2	1	12
(6) बाजार अर्थ व्यवस्था और व्यापार	5	3	2	1	11
(7) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार	3	2	1	–	6
(8) मानव पर्यावरण	3	2	1	1	7
(9) जलवायु	2	2	1	1	6
(10) प्राकृतिक संसाधन	3	2	1	–	6
योग	50	29	17	4	100

सारणी –12–1

बोध प्रश्न –

8)ब्लू प्रिन्ट का आशय स्पष्ट करते हुए इसकी उपयोगिता को सिद्ध कीजिए।

____

____

____

____

12.5 प्रश्न पत्र का निर्माण

छात्रों के कार्य निष्पादन की वैधता तथा विश्वसनीयता प्रश्न पत्र की गुणवत्ता पर निर्भर करती है इसलिए अध्यापक को प्रश्न पत्र का निर्माण करते समय उसे अत्यन्त व्यवस्थित रूप देना आवश्यक है जिसके लिए उसे निम्नांकिंत बातों पर अमल करना चाहिए–

12.5.1 विषय वस्तु का समुचित विश्लेषण

अर्थात अध्यापक को सर्वप्रथम सामाजिक अध्ययन की पाठ्य पुस्तक का समुचित विश्लेषण कर उसे सर्वप्रथम इकाईयों में, इकाईयों को प्रकरणों में, प्रकरणों को पाठ्य बिन्दुओं में और फिर पाठ्य बिन्दुओं को उप पाठ्य बिन्दुओं में बाँटना चाहिए तद्नुसार प्रत्येक बिन्दु को प्रश्न पत्र में सम्मिलित किया जाना चाहिए। विषयवस्तु के समुचित विश्लेषण से विषय का कोई भी पहलू अथवा प्रकरण छूट नही पाता और प्रश्न पत्र में विषयवस्तु का समुचित प्रतिनिधित्व हो पाना सम्भव हो पाता है।

प्रस्तुत पंक्तियों में इकाई ' मुगल सल्तनत' के अन्तर्गत प्रकरण ' अकबर ' का उदाहरण आपकी समझ के लिए दिया जा रहा है –

<u>पाठ्य बिन्दु</u> → <u>उप पाठ्य बिन्दु</u>

- प्रारम्भिक परिचय
  - माता पिता
  - शिक्षा के सन्दर्भ में
  - राज्यारोहण
  - विरासत
- प्रमुख विजयें
  - युद्ध के कारण
  - परिणाम
- साम्राज्य विस्तार
  - कारण
  - पड़ोसियों से सम्बन्ध का स्वरूप
- प्रशासनिक व्यवस्था
  - सुरक्षा व्यवस्था
  - सैन्य व्यवस्था
  - न्याय प्रणाली

- स्थापत्य कला
  - उदाहरण
  - स्थापत्य शैली
  - निर्माण कार्य की मूल प्रेरणा
- साहित्यिक अभिरूचि
  - नवरत्न
  - विद्वानों को आश्रय देने का कारण
- जीवन का अन्तिम पड़ाव
  - पारिवारिक पहलू
  - राजनैतिक पहलू

इसी प्रकार मुगलवंश के अन्य शासकों से सम्बन्धित पाठ्य बिन्दु तथा उपपाठ्य बिन्दु बनाते हुए उसमें से प्रश्नों का निर्माण करना चाहिए। यही तरीका प्रत्येक इकाई के सन्दर्भ में करणीय होगा।

<u>बोध प्रश्न</u> –

9) प्रश्न पत्र का निर्माण करते समय अध्यापक को विषयवस्तु का विश्लेषण किस प्रकार करना चाहिए उदाहरण के साथ समझाइए।

____
____
____
____
____

12.5.2 व्यवहारपरक शब्दावली में शैक्षणिक उद्देश्य का लेखन

छात्रों ने शैक्षणिक उद्देश्यों की प्राप्ति की है अथवा नही। और यदि की है तो कितनी मात्रा में और उस उपलब्धि की गुणवत्ता क्या है आदि बातों को जानने के लिए ही सामाजिक अध्ययन का अध्यापक अपने छात्रों का मूल्यांकन करता है। शैक्षणिक उद्देश्य का आशय छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों अर्थात छात्रों के ज्ञान, अवबोध, कौशल तथा रूचियों में होने वाले वांछित परिवर्तन से है। यदि इनमें सकारात्मक परिवर्तन है तो इसका अभिप्राय छात्रों ने विषय से सम्बन्धित उद्देश्यों को प्राप्त कर लिया है। चूंकि छात्रों के ज्ञान, अवबोध तथा कौशल सम्बन्धी परिवर्तनों को प्रत्यक्ष रूप से सही मात्रा में नही जाना जा सकता इसलिए मूल्यांकन के प्रयोजनों की सिद्धि के लिए उसके उद्देश्यों को छात्रों के विशिष्ट व्यवहार को दृष्टिगत रखते हुए ही लिखा जाना चाहिए। अर्थात हर उद्देश्य यह बताए कि शिक्षण प्राप्त कर लेने के पश्चात छात्र अमुक–अमुक कार्य कर पाएगा। इस सन्दर्भ में निम्नलिखित उदाहरणों से और अधिक स्पष्ट हो जाएगा

(1) औद्योगिक क्रान्ति के सम्प्रत्यय का प्रत्याभिज्ञान कर सकेंगे।

(2) औद्योगिक क्रान्ति की शुरूआत किस प्रकार हुई, इसका वर्णन कर सकेंगे।

(3) औद्योगिक क्रान्ति के प्रेरक कारकों की सूची बना सकेंगे।

(4) पूर्व के तथा बाद के उद्योगों की तुलना कर सकेंगे।

(5) वैज्ञानिक आविष्कारों की औद्योगिक क्रान्ति में क्या भूमिका थी, इसका वर्णन कर सकेंगे।

(6) औद्योगिक क्रान्ति के कारणों को अपने शब्दों में लिख सकेंगे।

उपयफ्रक्त उद्देश्य की रचना अध्यापक द्वारा यदि छात्रों को 'औद्योगिक क्रान्ति' प्रकरण पढ़ाया गया है, तो की जाएगी। उपयफ्रक्त उदाहरणों में अपने देखा वि विभिन्न उद्देश्यों को स्पष्ट करने वाले वाक्यों में प्रत्याभिज्ञान कर सकेंगे, वर्णन कर सकेंगे, सूची बना सकेंगे, तुलना कर सकेंगे तथा अपने शब्दों में लिख सकेंगे आदि जैसे क्रियापद (Action Verb) प्रयोग में आए हैं और इन क्रियाओं में आई क्रियाएँ, कार्य सूचक क्रियाएँ है जो यह इंगित करती हैं वि शिक्षणोपरान्त छात्र अमुक–अमुक कार्य अथवा क्रियाएँ कर सकेंगे। यही कारण है कि समस्त शैक्षणिक उद्देश्यों को व्यावहारिक शब्दावलियों में ही लिखा जाता है जो छात्रों द्वारा उद्देश्यों की प्राप्ति की पुष्टि करते हैं। व्यावहारिक शब्दावली में शैक्षणिक उद्देश्यों को लेखन की कला का विस्तार में अध्ययन आप इकाई संख्या 3 में कर चुके हैं।

12.5.3 प्रश्न पत्र का ब्लू प्रिन्ट तैयार करना

उपलब्धि परीक्षण की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उसकी अतंवस्तु या विषय वस्तु की वैधता होती है अर्थात यह जानना कि परीक्षण की रचना जिस उद्देश्य का मापन के लिए की गई है वह उसी उद्देश्य का मापन कर रहा है अथवा नही। यदि वह परीक्षण उसी उद्देश्य का मापन कर रहा है तो इसका अर्थ है कि वह परीक्षण वैध परीक्षण है। परीक्षण वैध हो, इसके लिए आवश्यक है कि परीक्षण में विषय के समस्त क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए। साथ ही साथ शिक्षण के समस्त उद्देश्य अर्थात ज्ञान, अवबोध, प्रयोग तथा कौशल का भी प्रतिनिधित्व होना अनिवार्य है। इसके लिए अध्यापक एक सारणी बनाता है जिसे ब्लू प्रिन्ट या विशिष्टीकरण तालिका कहते है, जिसका अध्ययन आप प्रस्तुत इकाई में ही इसके पूर्व कर चुके हैं।

12.5.4 संज्ञानात्मक तथा संज्ञानेत्तर परिणामों के लिए परीक्षण मदें (प्रश्न) विकसित करना

परीक्षण तैयार करते समय सर्वाधिक महत्वपूर्ण है सही प्रकार से प्रश्नों की रचना करना। जिससे छात्रों के संज्ञानात्मक तथा संज्ञानेत्तर दोनों ही परिणामों का भली प्रकार से मूल्याकंन हो सके। संज्ञानेत्तर अधिगम परिणामों हेतु सामाजिक अध्ययन के अध्यापक को अपने छात्रों के ज्ञान, अवबोध, प्रयोग तथा कौशल सम्बन्धी योग्याताओं की जाँच करने वाली मदें तैयार करनी होती है।

12.5.4.1 संज्ञानात्मक परिणामों के लिए मदें तैयार करना–

12.5.4.1.1 ज्ञानात्मकता से सम्बन्धित मदें

ज्ञानात्मक का परीक्षण करने वाली मदें में छात्रों को याद करना या पहचानना पड़ता है जिनका सम्बन्ध सामाजिक अध्ययन से सम्बन्धित तथ्य, संकल्पनाओं, परिभाषाओं, सिद्वान्तों नियमों, मानचित्र, नक्शा तथा ग्लोब में प्रयोग किए जाने वाले विभिन्न प्रतीक चिन्हों तथा इसी प्रकार की अन्य सूचनाओं से होता है जिसके लिए अध्यापक वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की रचना करता

है। जिनके उत्तर निश्चित तथा साधारणतया एक शब्द में दिए जाते हैं। इनके उत्तरों का अंकन भी सरल तथा वस्तुनिष्ठ होता है और प्राप्त परिणामों में भी विश्वसनीयता तथा वैधता होती है।

इसमें वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के दो प्रमुख रूपों का प्रयोग किया जाता है ।

(क) अभिस्वीकारात्मक या प्रत्याभिज्ञान प्रश्न (**Recognition Question**)

प्रत्याभिज्ञान प्रश्नों में छात्रों को दिए गए प्रश्नों का चयन करना होता है जो मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं –

(1) सत्य–असत्य प्रश्न इसमें दिए गए कथनों में से छात्रों को सत्य कथन तथा असत्य कथन की पहचान करनी होती है। परन्तु कभी–कभी छात्रों द्वारा अनुमान से भी उत्तर दिए जाने के कारण जाँच का यह तरीका कम विश्वसनीय होता है। उदाहरण –

- निम्नलिखित प्रश्नों को पढ़कर सत्य कथन के सामने के कोष्ठक पर सत्य (√) तथा असत्य कथन के सामने के कोष्ठक पर असत्य (×) का निशान लगाइए।

(1) हमारा संविधान 1947 ई० में लागू हुआ। ()

(2) अकबर लोदी वंश का महान शासक था। ()

(3) सिन्धु घाटी की सभ्यता भारत की प्राचीन सभ्यता है। ()

(4) श्रम गतिशील होता है। ()

(5) विश्व में सबसे अधिक लोहा भारत में पाया जाता है।()

(2)बहु विकल्पीय प्रश्नः– सामाजिक अध्ययन में इस प्रकार के प्रश्नों का बहुत प्रयोग किया जाता है। इसमें एक कथन या प्रश्न के कई उत्तर दिए होते हैं जिनमें से छात्रों को सही उत्तर के सामने सही का निशान (√) लगाना होता है।

उदाहरण – नीचे दिए गए कथनों में से प्रत्येक के साथ चार कथन दिए गए है उनमें से सही वाले कथन पर सही का निशान लगाइए

(1) पानीपत का प्रथम युद्ध हुआ

i. 1526

ii. 1527

iii. 1556

iv. 1761

(2) भारत में सबसे अधिक कपास होती है

i. नागपुर

ii. उत्तर प्रदेश

iii. पंजाब

iv. बंगाल

(3) जब कोई देश मुद्रा का अवमूल्यन करता है तो निम्नाकिंत में से कौन सा विकल्प उसका प्रभाव होता है

a) निर्यात की कीमत बढ़ जाती हैं।

c) आयात की कीमत कम हो जाती हैं।

b) आन्तरिक कीमत गिर जाती हैं।

d) निर्यात की कीमत घट जाती है।

(3) मिलान प्रश्न इसमे प्रश्नों या कथनों को दो स्तम्भों 'अ' तथा 'ब' में लिखा जाता है। एक स्तम्भ में प्रश्न तथा दूसरे स्तम्भ में उनके उत्तर होते हैं परन्तु उत्तर सही क्रम में नही होते। छात्रों को प्रश्नों या कथनों को उनके सही उत्तर से मिलाना होता है।

उदाहरण – (अ) (––––––) (ब)

(1) महात्मा बुद्ध (––––––) अ भूदान आन्दोलन

(2) दयानन्द सरस्वती (––––––) ब जैन धर्म

(3) महावीर स्वामी (––––––) स आर्य समाज

(4) विनोबा भावे (––––––) द बौद्ध धर्म मथियोसोफिकल सोसाइटी

(ख) प्रत्यास्मरण प्रश्न (**Recall Question**)–प्रत्यास्मरण प्रश्नों में छात्र स्मरण शक्ति द्वारा प्रश्नों के उत्तर देतें है। ऐसे प्रश्न का मुख्य उदाहरण रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न (Completion Item) होता है।

(1) रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न इन प्रश्नों में रिक्त स्थान देकर वाक्य अधूरा छोड़ दिया जाता है। छात्रों को अपनी स्मरण शक्ति के आधार पर उस रिक्त स्थान में सही उत्तर लिखना पड़ता है

उदाहरण :– निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

(1) भारत के राष्ट्रपति –––––––––––– है।

(2) अधिकार और कर्तव्य एक दूसरे के –––––––––––– है।

(3) अमेरिका महाद्वीप की खोज –––––––– ने की।

(4) ताजमहल का निर्माण –––––––––––– ने करवाया था।

परन्तु ऐसे प्रश्नों के लिए अध्यापक को कुछ बातें स्मरण में रखनी चाहिए–

- वाक्य में छोड़ी गई खाली जगह पूरक शब्दों की लम्बाई के अनुसार होनी चाहिए।

- एक वाक्य में एक ही रिक्त स्थान होना बेहतर है।
- खाली स्थान मुख्य तथा आधारभूत संज्ञा शब्दों की पूर्ति के लिए छोड़ा जाए न कि क्रिया पूर्ति के लिए
- पुस्तक के वाक्य को ज्यों का त्यों न उतार कर उसे नए रूप में लिखा जाए जो पूर्ण तथा सार्थक होना चाहिए।

12.5.4.1.2 अवबोध अथवा समझ सम्बन्धित मदें

सामाजिक अध्ययन में छात्रों के अवबोध स्तर को मापने का मुख्य उद्देश्य यह होता है कि छात्रों ने प्राप्त ज्ञान से तुलना, विश्लेषण, वर्गीकरण, वर्णन आदि करना सीखा है अथवा नही। आँकड़ो, आरेखों, सारणियों, तालिकाओं, ग्लोब, मानचित्र आदि का अर्थ अथवा भाव समझ पा रहें हैं अथवा नही। इसका सही अर्थ समझने के लिए हो सकता है कि छात्रों को ऐतिहासिक दृष्टि से अलग–अलग स्थानों की, परिस्थितियों की तथा आर्थिक दृष्टि से अलग–अलग कालों और स्थानों की परिस्थितियों की तुलना करनी पड़े। उनके विकास पर पड़ने वाले प्रभाव को जानना आवश्यक हो। इस उद्देश्य के मापन के लिए बनाए जाने वाले प्रश्नों के स्वरूप को आप निम्नलिखित उदाहरणों से समझ सकते हैं –

उदाहरण 1–नीचे दिए गए कथनों की जाँच कीजिए। यदि वे सही है तो 'अ' पर गोला बनाइए और यदि गलत, तो 'ब' पर।

(1)सामान्यतया युद्ध का किसी भी देश की अर्थ व्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। 'अ' 'ब'

(2)खतरों से खेलने वाले ही नई–नई भौगोलिक खोजें करने में सफल हो पाते हैं। 'अ' 'ब'

उदाहरण 2– निम्नलिखित कथन से सम्बन्धित सबसे सही उत्तर पर निशान लगाइए।

पर्याप्त बारिश होने तथा तेज हवाएँ न चलने के कारण आम की फसल बहुत अच्छी हुई है इससे

(अ) आम की कीमत बढ़ जाएगी।

(ब) आम की घट जाएगी।

(स) इससे आम के दाम पर कोई प्रभाव नही पड़ेगा।

(द) आम के दाम पूर्ववत ही रहेंगे।

उदाहरण 3– निम्नलिखित प्रश्न का संक्षिप्त उत्तर दीजिए। बढ़ती हुई गरीबी के लिए जनसंख्या का विस्फोट किस प्रकार उत्तरदायी है।

उपरोक्त प्रश्नों के उदाहरणों से आप भली भांति समझ गए होंग कि उदाहरण संख्या '1' तथा '2' छात्रों की समानता दर्शी योग्यता का मूल्याकंन कर रहें हैं जबकि उदाहरण संख्या '3' छात्रों की विश्लेषणात्मक शक्ति का मूल्याकंन कर रहे हैं।

12.5.4.1.3 अनुप्रयोग के लिए मदें

अनुप्रयोग का अभिप्राय छात्रों ने सीखे हुए ज्ञान का नवीन परिस्थितियों में प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया कि नही। उन्होने अर्जित सामान्य विचारों, नियमों, सिद्वान्तों तथा प्रक्रियाओं या कार्य विधियों को अन्य परिस्थितियों की समस्याओं को हल करने में स्थान्तरित किया है अथवा नही। भूगोल सम्बन्धी सिद्वान्तों और ज्ञान का उपयोग छात्रों ने भौतिक संसाधनों की उन्नति में किया अथवा नही या फिर सामाजिक जीवन में घटित होने वाली घटनाओं से सम्बन्धित उनमें व्याख्या कौशल का विकास हुआ या नही। इनकी जानकारी प्राप्त करने के लिए सामाजिक अध्ययन का अध्यापक प्रयोग सम्बन्धी प्रश्नों की रचना करके छात्रों के उत्तर के आधार पर उनका मूल्याकंन करता है।

उदाहरण–निम्नलिखित विकल्पों में से आप जिस विकल्प को कथन का मुख्य पूरक मानतें हैं उस पर सही का निशान लगाइए।

(1) एक आदर्श नागारिक के लिए अनिवार्य है कि वह

(अ) अपना सुख–सुविधाओं को वरीयता दें।

(ब) दूसरों की परवाह न करे।

(स) राष्ट्र के हित को सर्वोपरि माने।

(द) व्यक्तिगत हितों को महत्व दें।

(2) रेगिस्तानी पौधों की पंक्तियाँ बहुत छोटी तथा प्रायः बहुत जल्दी शूलवत् हो जाती है क्योंकि

(अ) वह पौधों का जानवर से बचाती है।

(ब) वहॉ की भूमि बहुत रेतीली होती है।

(स) वह जल वाष्पन की क्रिया को बढ़ा देती है।

(द) वह जल वाष्पन की क्रिया को कम कर देती है।

उपर्युक्त उदाहरणों में से प्रथम उदाहरण में को स्वःचिन्तन के आधार पर सर्वोत्तम विकल्प चुनना है जबकि दूसरे के प्रसंग में छात्र को बार–बार घटना घटित होते रहने के कारण बताना है

12.5.4.2 संज्ञानेत्तर परिणामों के लिए मदें तैयार करना

छात्रों के संज्ञानात्मक पक्ष के साथ–साथ संज्ञानेत्तर पक्ष का भी मूल्यांकन आवश्यक है जिसके लिए छात्रों की रूचियों, अभिवृत्तियों, क्षमता, कौशल तथा प्रतिबद्धताओं का सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में जाँच की जाती है जैसे यदि छात्रों ने कोई मानचित्र, चित्र, नक्शा, आरेख या मॉडल बनाया है तो उसकी बनावट तथा प्रस्तुति के आधार पर उनके संज्ञानेत्तर कौशल का मूल्यांकन किया जाता है। इसके अतिरिक्त अध्यापक विभिन्न मापन उपकरणों यथा प्रश्नावलियों, साक्षात्कारों, निर्धारण मापनी, जाँच सूचियों आदि का उपयोग करते हुए सामाजिक अध्ययन के प्रति छात्रों की रूचियों, अभिवृत्तियों, क्षमता कौशल तथा प्रतिबद्धताओं की जाँच

करता हैं।

उदाहरण – नीचे दिए गए कथन के सन्दर्भ में आप किस विकल्प से सहमत है।

सामाजिक अध्ययन से सम्बन्धित किसी विषय को लेकर पी० एच० डी० करना सार्थक होगा क्योंकि

(अ) पी० एच० डी० की डिग्री मिलेगी

(ब) यह विषय सरल है। कुछ भी करके काम हो सकता है।

(स) इसमें हमारी सम्पूर्ण सभ्यता तथा संस्कृति का प्रतिविम्ब है।

(द) आजकल इस विषय को काफी महत्व दिया जा रहा है।

उपयफ्रक्त उपकरणों के अतिरिक्त अध्यापक स्वयं भी प्रश्न तैयार कर छात्रों के संज्ञानेत्तर परिणामों को जान सकता है जैसे –

उदाहरण –

(1) सामाजिक विज्ञान विषय के प्रति आप अपनी राय वक्त कीजिए।

(2) विद्यालय की समय सारणी में सामाजिक अध्ययन को अन्तिम कालांश में रखा जाना चाहिए। क्या आप इससे सहमत है यदि हाँ, तो तक्र दीजिए। और यदि नही तो उसके कारण बताइए।

12.5.5 अच्छा प्रश्न पत्र बनाना

परीक्षण मदों का चयन करने के उपरान्त, उस परीक्षण की विश्वनीयता तथा वैधता को सुनिश्चित करने के क्रम में निम्नलिखित बातों को व्यवहार में लाना है :–

- विषयवस्तु की समस्त इकाईयों का प्रश्नपत्र में समावेश।
- प्रश्नपत्र के समस्त प्रश्न विभिन्न उद्देश्यों का मापन करते हो।
- प्रश्नपत्र में कठिनाई सम्बन्धी समस्त स्तरों के प्रश्नों का समावेश।
- प्रश्नों की प्रस्तुति सरलता से कठिनता के क्रम में।
- प्रश्नपत्र में प्रश्नों के विभिन्न प्रकारों का समावेश।
- स्पष्ट निर्देश अर्थात समय, पूर्णाकं, प्रश्नों के हल सम्बन्धी निर्देशों मे स्पष्टता।
- प्रत्येक प्रश्नों के अंको को उसकी दाहिनी ओर अर्थात सामने अंकन।
- प्रश्न निर्माण सम्बन्धी समस्त विशेषताओं और सावधानियों का पालन, जिनका अध्ययन आप पूर्व में इकाई संख्या 2 में कर चुकें हैं।

उपरोक्त बातों का अनुसरण करते हुए सामाजिक अध्ययन के अध्यापकों को प्रश्न पत्र का

निर्माण करना चाहिए जिससे वह अपनें छात्रों का वस्तुनिष्ठ तथा विश्वनीय ढंग से मूल्याकंन कर सकें।

क्रिया कलाप

प्रत्याभिज्ञान प्रश्नों के प्रकार उदाहरण सहित लिखिए।

____

____

____

____

बोध प्रश्न

10) छात्रों के संज्ञानेत्तर परिणामों की जाँच किस प्रकार की जाती हैं ?

____

____

____

____

12.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने इकाई, उसके निर्माण, इकाई परीक्षणों के निर्माण, ब्लाू प्रिन्ट, प्रश्न पत्रों के निर्माण के सम्बन्ध में व्यापक अध्ययन किया। अध्ययन के दौरान आप समझ गए होंगे कि छात्रों के मूल्याकंन के लिए बनाया जाने परीक्षण मात्र प्रश्नों का समूह नही होता, जिसे जहाँ से चाहा उठा कर लिख दिया बल्कि उसका निर्माण एक जटिल बौद्धिक प्रक्रिया के तहत किया जाता है। यह कार्य बिल्कुल सही हो, इसके लिए अध्यापक ब्लू प्रिन्ट तैयार करता है जिसकी रूपरेखा देखकर हम यह जान पाते हैं कि मूल्याकंन के क्या उद्देश्य है, उसमें किस प्रकार और कितनी विषय सामग्री का समावेश करना है, किस विषय वस्तु और किन–किन उद्देश्यों को कितना भार देना है, प्रश्न पत्रों का निर्माण करते समय क्या–क्या बातें ध्यान में रखकर किस प्रकार के उद्देश्य के मूल्याकंन हेतु किस प्रकार के प्रश्नों की रचना करनी है आदि बातों का प्रस्तुत इकाई में आपने सांगोपांग अध्ययन किया।

12.7 अभ्यास कार्य

1) किसी भी कक्षा के सामाजिक अध्ययन विषय के किसी इकाई को लेकर उसकी योजना बनाइए।

2) कक्षा 6 की सामाजिक अध्ययन की पुस्तक से 5 इकाइयों को लेकर एक ब्लू प्रिन्ट तैयार कीजिए।

3) छात्रों के स्मरण शक्ति की जाँच के लिए आप किस प्रकार के प्रश्नों की रचना करेंगे,

उदाहरण सहित लिखिए।

4) छात्रों के प्रयोग सम्बन्धी कौशल की जाँच के लिए पाँच प्रश्नों का निर्माण कीजिए।

12.8 चर्चा के बिन्दुः

1) इकाई योजना अध्यापक को अपना शिक्षण समय पर पूर्ण कर लेने में सहायक होती है।

2) ब्लू प्रिन्ट की रूपरेखा तैयार करते समय विषय वस्तु तथा व्यावहारिक उद्देश्यों का महत्व दिया जाना आवश्यक है।

3) 'सत्य–असत्य ' प्रकार के प्रश्नों से छात्रों का विषय सम्बन्धी मूल्याकंन यर्थाथ ढ़ंग से नही हो पाता।

4) प्रश्न पत्रों में विषय वस्तु का समुचित प्रतिनिधित्व होना चाहिए।

12.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. इकाई शब्द अवयवीवाद या गेस्टाल्ट या समग्रवाद के सिद्धान्त पर आधारित है जो "पूर्ण" को महत्व देता है न कि "अंश" को। इसके अनुसार अधिगम की जाने वाली सामग्री अंशों में नही वरन समग्र रूप में होनी चाहिये। इस सन्दर्भ में "राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान तथा प्रशिक्षण परिषद" के अनुसार इकाई के सन्दर्भ में दिये गये विचार " इकाई एक निर्देशात्मक युक्ति है जो छात्रों को समवेत रूप में ज्ञान प्रदान करती है।" आपको इस सम्प्रत्यय को समझने में बहुत सहायक होगी।

2. अध्यापक को पाठ्यक्रम में सम्मिलित समान प्रकृति तथा शिक्षण–अधिगम उद्देश्यों वाले प्रकरणों को एकत्रित कर इकाइयों का निर्माण करना चाहिये। इनका विभाजन करते समय छात्रों की आयु, रूचि, क्षमता, योग्यता तथा आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखना चाहिये। इसके अतिरिक्त शिक्षण – अधिगम परिस्थितियों तथा विद्यालय में उपलब्ध संसाधनों के सन्दर्भ में इकाईयों की उपयुक्तता, इकाइयों की ििवषयवस्तु तथा अधिगम अनुभवों में आवश्यक तारतम्यता तथा निरन्तरता हेतु उचित सहसम्बन्ध तथा समन्वय की पुष्टि पर भी ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

3. इकाई योजना का निर्माण उपयोगिता, रूचि, आवश्यकता, लचीलेपन, ताक्रिक क्रियाओं से सम्बन्धता, ज्ञान, भाव तथा क्रिया के सन्तुलन तथा भौतिक सिद्धान्तों की उपलब्धता आदि सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिये।

4. शैक्षणिक उद्देश्यों के सन्दर्भ में यदि इकाई योजना तथा पाठ योजना में अन्तर देखा जाये तो हम देखते है कि इकाई योजना में सामान्य तथा विशिष्ट उद्देश्य दोनो होते हैं जो व्यापक होते हैं जबकि पाठ योजना में व्यावहारिक उद्देश्य होते हैं अर्थात विशिष्ट उद्देश्य को छात्र के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है।

5. इकाई शिक्षण के अन्तिम सोपान वाचन की दो प्रकार की विधियॉ है– आदर्श विधि

तथा यर्थाथ विधि। मेरे अनुसार दोनो विधियों में यर्थाथ विधि अधिक मनोवैज्ञानिक तथा उपयोगी होती है क्योकि इसमें छात्र विषय वस्तु को आवश्यकतानुसार लिखते भी है, वाचन भी करते है तथा उस पर विचार विमर्श भी करते हैं।

6. सामाजिक अध्ययन के शिक्षण तथा अधिगम में इकाई योजना छात्रों के शैक्षिणिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अत्यन्त लाभप्रद है क्योकि इसमें निर्मित पाठ्य इकाइयॉ अपने आप में पूर्ण तथा सार्थक होती है और छात्र रूचि के साथ अधिगम करते हैं। इसमे शिक्षक तथा छात्रों को अपने – अपने उत्तरदायित्वों तथा लक्ष्यों का पूर्ण ज्ञान होता है जिसके कारण उचित समय पर शिक्षण व अधिगम कार्य पूरा हो जाता है। पढाई जाने वाली ििवषयवस्तु पूर्ण तथा सार्थक इकाई में बटी होने के कारण शिक्षण व अधिगम कार्य लक्ष्य केन्द्रित तथा सारगर्भित होता है इसलिये कक्षा में अनुशासनहीनता की समस्या उत्पन्न नही हो पाती।

7. इकाई परीक्षण का प्रशासन–शिक्षण के दौरान, प्रतिदिन पाठ के शिक्षण के पश्चात, एक इकाई के शिक्षणोपरान्त, अवधि की समाप्ति पर या उसके बाद, वर्ष की समाप्ति पर या उसके बाद किया जा सकता है।

8. ब्लू प्रिन्ट का अर्थ है समस्त इकाइयों तथा उनको दिये गये महत्व का एक ऐसा योजनाबद्ध स्वरूप, जिसका उपयोग सामाजिक अध्ययन का अध्यापक इकाई परीक्षण के निर्माण के दौरान करता है। ब्लू प्रिन्ट बना लेने से अध्यापक को इस बात का ज्ञान हो जाता है कि किस इकाई के लिये उसके किन किन उद्देश्यों को कितना महत्व देना है। अध्यापक जिस इकाई के लिये जिन – जिन उद्देश्यों को उचित समझते हैं, वे उसे ब्लू प्रिन्ट की सारणी में सम्मिलित कर सकतें हैं तथा उन्हे इकाईयों की संख्या भी अपने अनुसार रखने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है।

9. सामाजिक अध्ययन की पाठ्य पुस्तक का समुचित विश्लेषण कर उसे सर्वप्रथम इकाइयों में, इकाईयों को प्रकरणों में, प्रकरणों को पाठ्य बिन्दुओं में और फिर पाठ्य बिन्दुओं को उप पाठ्य बिन्दुओं में बॉटना चाहिये। तदनुसार प्रत्येक बिन्दु को प्रश्न पत्र में सम्मिलित किया जाना चाहिये। विषय वस्तु के समुचित विश्लेषण से विषय का कोई भी प्रकरण छूट नही पाता तथा प्रश्न पत्र में विषय वस्तु का समुचित प्रतिनिधित्व हो जाता है।

10. सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में छात्रों के संज्ञानेत्तर परिणामों की जॉच अध्यापक उनकी रूचियों, अभिवृत्तियों, क्षमता, कौशल तथा प्रतिबद्धताओं के सन्दर्भ में करता है जिसके लिये अध्यापक विभिन्न मापन उपकरणों यथा प्रश्नावलियों, साक्षात्कारों, निर्धारण मापनी, जॉच सूचियों आदि का उपयोग करता है। यदि छात्रों ने कोई मानचित्र, चित्र, नक्शा, आरेख, मॉडल आदि बनाया है तो उनकी बनावट तथा प्रस्तुति के आधार पर उनके संज्ञानेत्तर कौशल का मूल्यांकन किया जाता है।

12.10 सन्दर्भ पुस्तकें

1) सामाजिक विज्ञान का शिक्षण, कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा राजस्थान।

2) गुप्ता, एस० पी०, गुप्ता, अलका आधुनिक मापन एवं मूल्याकंन, शारदा पुस्तक भवन, पाब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 11, युनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद, 2011 ।

॥ सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.SE-41

सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

खण्ड – 5

सामाजिक अध्ययन के अधिगम संसाधन

इकाई – 13

अधिगम संसाधन, अर्थ, प्रकार, संसाधनों की तैयारी तथा उपयोग 305–318

इकाई – 14

पाठ्य पुस्तक, जर्नलस, हस्त पुस्तिकाएं, छात्रों की कार्य पुस्तिकाएं 319–338

इकाई – 15

सामाजिक अध्ययन की प्रयोग"ााला, कक्षा के बाहर तथा कक्षा के अन्दर सामाजिक अध्ययन 339–353

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed.SE-41 सामाजिक अध्ययन का शिक्षण

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सीमा सिंह	कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन	निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर छत्रसाल सिंह	प्रोफेसर, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर के० एस० मिश्रा	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर धनन्जय यादव	विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह	आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ० जी० के० द्विवेदी	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० शक्ति शर्मा	सह आचार्य, बी० एड० विभाग, के० पी० बी० एड० ट्रेनिंग कॉलेज, प्रयागराज

सम्पादक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर विद्या अग्रवाल	पूर्व विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ० दिनेश सिंह	सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार	सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक:

कुलसचिव, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

Year -2023

ISBN: 978-81-963573-0-6

Registrar, U. P. Rajarshi Tandon Open University, Prayagraj

©UPRTOU, 2023. Pedagogy of Social Science is made available under a Creative Commons Attribution-ShareAlike 4.0

http://creativecommons.org/licences/by-sa/4.0

सामाजिक अध्ययन के अधिगम संसाधन (**Learning Resources of social study**)

प्रस्तुत खण्ड के अन्तर्गत तीन इकाइयाँ "अधिगम संसाधन, अर्थ प्रकार, संसाधनों की तैयारी तथा उपयोग" (इकाई संख्या 13) "पाठ्य पुस्तक, जर्नलस, हस्त पुस्तिकाएं, छात्रों की कार्य पुस्तिकाएं" (इकाई संख्या 14) तथा "सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला, कक्षा के बाहर तथा कक्षा के अन्दर सामाजिक अध्ययन" (इकाई संख्या 15) सम्मिलित है।

इकाई संख्या 13 में सामाजिक अध्ययन के विभिन्न अधिगम संसाधनों का विश्द विवेचन किया गया है। ये संसाधन क्या है, इनके कौन – कौन से प्रकार है, सामाजिक अध्ययन के अधिगम में इन संसाधनों का क्या महत्व है, विभिन्न संसाधनों को आप अधिगम के लिए किस प्रकार तैयार कर उसका उपयोग करेंगे अर्थात किस प्रकार आप विभिन्न संसाधनों को सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में उपयोगी बना सकेंगे, इन बातों का अनुशीलन प्रस्तुत इकाई में करते हुए आप सामाजिक अध्ययन को वास्तविक रूप से समझ सकेंगे।

इकाई संख्या 14 के माध्यम से सामाजिक अध्ययन के लिए उपयोगी पाठ्य पुस्तक, जर्नल्स, हस्त पुस्तिकाएं, छात्रों की कार्य पुस्तिकाएं आदि के विषय में वर्णन किया गया है जिसके अनुशीलनोपरान्त आप प्रस्तुत विषय के लिए अपने आप में उपयोगी एवं प्रासंगिक पाठ्यपुस्तक का चयन कर उसके माध्यम से ज्ञानार्जन कर सकेंगे। पाठ्य पुस्तक के साथ–साथ जर्नल्स किस प्रकार अधतन जानकारी प्रदान करने में सहायक है, प्रस्तुत इकाई के अध्यनोपरान्त आप इस तथ्य से भी परिचित हो सकेंगे तथा प्रस्तुत विषय के अध्ययन हेतु आप इनके प्रयोग हेतु अभिप्रेरित हो सकेंगे।

इकाई संख्या 15 सामाजिक अध्ययन की व्यापक एवं विशद् प्रकृति तथा स्वरूप का बोध कराते हुये आपको इस बात से भिज्ञ कराएगा कि सामाजिक अध्ययन केवल कक्षा के अन्दर ही नही वरन कक्षा के बाहर भी अध्ययन किया जाने वाला विषय है। अर्थात यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही इसकी प्रयोगशाला तथा उसकी समस्त सामग्रियाँ एवं गतिविधियाँ उसकी अध्ययन सामग्री है। प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप अपने आस पास की सामग्री तथा विभिन्न दैनिक गतिविधियों एवं क्रिया कलापों के माध्यम से सामाजिक अध्ययन विषय को मूर्त रूप में समझ सकेंगे।

इकाई –13 अधिगम संसाधन, अर्थ, प्रकार, संसाधनों की तैयारी तथा उपयोग

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 अधिगम संसाधन का अर्थ

13.3.1 अधिगम संसाधनों के प्रकार

13.3.2 अधिगम संसाधनों का महत्व

13.3.3 संसाधनों की तैयारी तथा उपयोग

13.4 सारांश

13.5 अभ्यास कार्य

13.6 चर्चा के बिन्दु

13.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

13.1 प्रस्तावना

सामाजिक अध्ययन विषय में उस समाज के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया जाता है जिसमे बालक रहता हैं, जिसका वह सदस्य होता है। इसीलिए सामाजिक अध्ययन के शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे शैक्षिक अनुभव आयोजित किए जाएं जो छात्रों के व्यक्तिगत अनुभवों से सम्बन्धित हों। उन्हें उन संसाधनों के माध्यम से अधिगम कराया जाए, जो उनके आस पास हो। वास्तव में छात्र का सम्पूर्ण समाज ही प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से छात्रों के अधिगम में सहायक होता है। समाज के विभिन्न संसाधन ही उसके अधिगम संसाधन होते हैं। बस आवश्यकता इस बात की हैं कि उन्हें सुव्यवस्थित तथा क्रमबद्ध ढ़ंग से पाठ्यवस्तु से जोड़ा जाए। ऐसे साधनों के उपयोग करने से सम्बन्धित विभिन्न क्रियाएँ कराई जाएं। इससे छात्रों को सामाजिक तथ्यों तथा घटनाओं का प्राथमिक अनुभव होगा, सिद्धान्तों को वास्तविक जीवन में प्रयोग करने का अवसर प्राप्त होगा तथा उनमें अवलोकन, तथ्यों के संकलन एवं विश्लेषण से सम्बन्धित क्षमताओं का विकास होगा। प्रस्तुत इकाई में आप ऐसे विभिन्न साधनों या संसाधनों तथा उनसे सम्बन्धित विभिन्न क्रियाओं का अध्ययन करेंगे जो सामाजिक अध्ययन के अधिगम में अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा प्रेरणात्मक सिद्ध होंगे।

13.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप

1) अधिगम संसाधन के अभिप्राय का प्रत्यास्मरण कर सकेंगे।
2) अधिगम संसाधन के सन्दर्भ में मुफात के विचारों का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
3) सभ्यता और संस्कृति का दर्शन कराने वाले सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्थलों की सूची बना सकेंगे।
4) सामुदायिक साधनों के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।
5) समुदाय को विद्यालय के निकट लाने वाली सहायक क्रियाओं का आयोजन कर सकेंगे।
6) सामुदायिक सर्वेक्षण से छात्रों को होने वाले लाभों का विश्लेषण कर सकेंगे।
7) सामाजिक अध्ययन के अधिगम में भ्रमण तथा पर्यटन की उपयोगिता का मूल्याकंन कर सकेंगे।
8) भ्रमण के आयोजन से पूर्व अपेक्षित सावधानियों को व्यवहार में ला सकेंगे।

13.3 अधिगम संसाधन का अर्थ

वे समस्त संसाधन जिनके माध्यम से हम अधिगम करते हैं अथवा कुछ ज्ञान प्राप्त करते हैं अधिगम के संसाधन अथवा अधिगम संसाधन कहलाते हैं। सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में देखा जाए तो सम्पूर्ण विश्व ही अधिगम संसाधन है जिसके विभिन्न साधनों से वह प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षा प्राप्त करता है। बालक जिस समाज में रहता है वहीं से उसकी शिक्षा अनौपचारिक रूप से प्रारम्भ हो जाती है। उसका समाज एक प्रकार से समुदाय है और आज के समुदाय का अध्ययन ही अपने आप में शिक्षा है जहां से बालक विभिन्न भौगोलिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, आर्थिक, औद्योगिक तथा वैज्ञानिक बातों को सीखता है और ये सभी बातें सामाजिक अध्ययन के शिक्षण सम्बन्धी विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक है। इससे न केवल छात्रों का ज्ञान बढ़ता है वरन उसकी अभिवृतियां, कुशलताएं तथा रूचियाँ भी विकसित होती है। इसीलिए सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में सामुदायिक तथा स्थानीय संसाधनों का अत्यन्त महत्व है।

सामाजिक अध्ययन में समाज के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। छात्र समाज का एक सदस्य होता है। उसी समाज में रहते हुए वह सामाजिक गतिविधियों तथा प्रक्रियाओं का प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप में निरीक्षण करता रहता है। इसलिए सामाजिक अध्ययन के शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए अध्यापक छात्र के इन्हीं अनुभवों के आधार पर विभिन्न सामाजिक संप्रत्ययों, सिद्धान्तों, धारणाओं तथा प्रवृतियों को समझाता है। चूँकि छात्र का ये निरीक्षण और अनुभव क्रमबद्ध तथा सुव्यवस्थित नही होता, इसलिए समाज के महत्वपूर्ण पहलुओं से सम्बन्धित अनुभवों को नियोजित ढ़ंग से प्रदान करने की आवश्यकता होती है जिसस छात्र विभिन्न बातों का वैज्ञानिक ढ़ंग से अध्ययन करने के लिए प्रेरित हो

सके। इसलिए सामुदायिक जीवन को शिक्षा के कार्यक्रम का एक आवश्यक अंग अवश्य बनाना चाहिए। मुफात ने समुदाय के महत्व को स्पष्ट करते हुए कहा भी है कि "आधुनिक समुदाय, चाहे उसका स्वरूप कैसा ही क्यों न हो, नवयुवकों की शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। समुदाय सीखने के विभिन्न प्रकार के अनुभवों को सजीव तथा विस्तृत करके एक प्राकृतिक प्रयोगशाला के रूप में कार्य करता है। वह नवयुवकों को अवकाश के सदुपयोग के लिए विभिन्न क्रियाओं तथा उनके मनोरंजन के हेतु अवसर प्रदान करता है। समुदाय के सांस्कृतिक साधन उनकी बौद्धिक अभिवृद्धि एवं विकास के लिए अवसर प्रदान करते हैं। साथ ही उसके अन्य साधन प्रभावकारी जीवन–यापन तथा नागरिकता के लिए वांछित निर्देशन प्रदान करते हैं।"

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि सामुदायिक साधनों में वे समस्त स्थानीय साधन सम्मिलित किए जाते हैं जो शिक्षा के कार्यो में सहायक होते हैं और यही साधन अधिगम संसाधन होते हैं। वास्तव में पठन–पाठन समुदाय से जितना अधिक निकट रह कर किया जाता है वह उतना ही प्रभावशाली होता है। छात्रों के परिवेश में घर, परिवार, विद्यालय के अतिरिक्त भी बहुत से स्त्रोत तथा साधन है जो छात्रों को सामाजिक जीवन की शिक्षा प्रदान करते हैं जिससे छात्रों का ज्ञानवर्द्धन तो होता ही है साथ–साथ उनकी अभिवृत्तियाँ, कुशलताएं तथा रूचियाँ भी विकसित होती हैं।

बोध प्रश्न

1)सामुदायिक संसाधन को अधिगम संसाधन क्यों कहा जाता हैं?

____

____

____

____

____

13.3.1 अधिगम संसाधनों के प्रकार

व्यक्ति जिस स्थान पर रहता है वहाँ पर उपलब्ध प्रत्येक वस्तु से वह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सीखता रहता है। यह बात सभी शिक्षाशास्त्रियों ने स्वीकार भी की है कि अनुभवों से बड़ा कोई शिक्षक नही होता। इसलिए अधिगम की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष अनुभवों का विशेष स्थान होता है और छात्र यह अनुभव अपने आस पास (समुदाय) में उपलब्ध विभिन्न साधनों के माध्यम से प्राप्त करता है जिन्हें वह प्रत्यक्ष रूप में देखता है। ऐसे अधिगम संसाधन असंख्य होते हैं। वेस्ले ने ऐसे साधनों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया है,

1) भौगोलिक स्थितियाँ –जिसके अन्तर्गत पहाड़ियाँ, फैक्टरी, मिलें, सड़कें, ऐतिहासिक खण्डहर, अजायब घर तथा अन्य स्थान एवं वस्तुएं जिनका निरीक्षण किया जा सकता है, आदि आते हैं।
2) सामाजिक संस्थाएँ – जिसमें परिवार, समुदाय, संघ, टीम, क्लब तथा न्यायालय आदि आते हैं।

3) संस्कृति –संस्कृति के अन्तर्गत समाज में प्रचालित विश्वास, परम्पराएं, रीति रिवाज, विचार, दृष्टिकोण तथा नियम आदि आते हैं।

समुदाय में उपलब्ध ऐसे संसाधनों के सन्दर्भ में मुफात का कथन है कि " प्रत्येक समुदाय अपने साधनों के सम्बन्ध में अनूठा स्थान रखता है। हमको इसके अजायबघरों, पुस्तकालयों, आर्ट गैलरियों, तीर्थ स्थानों, यातायात के केन्द्रों, मनोरंजन, व्यापार, उद्योगों, कृषि तथा विज्ञान के प्रयोगात्मक स्थलों आदि को उपयोग में लाने का प्रयास करना चाहिए।"

सामाजिक विज्ञान की शिक्षा के लिए सम्पूर्ण समाज तथा समुदाय, जहाँ बालक रहता है, विभिन्न संसाधनों से युक्त एक प्रयोगशाला है जिसके विभिन्न साधन तथा स्रोत्र इस विषय की व्यावहारिक तथा सैद्धान्तिक शिक्षा देने में योगदान देते हैं। वास्तव में इन समस्त साधनों तथा स्रोत्र को इनकी प्रकृति के आधार पर निम्नलिखित भागों में बांटा जा सकता हैं

1) प्रशासकीय स्थल – इसके अन्तर्गत सरकारी तन्त्र से सम्बन्धित स्थल आते हैं जैसे विधान सभा, राज्य सभा, संविधान, संसद भवन, न्यायालय, नगर महापालिका, सामाजिक कल्याण करने वाली संस्थाएं, ग्राम पंचायत, जिला बोर्ड, आरक्षित केन्द्र (पुलिस स्टेशन) आदि, जिनके भ्रमण से छात्र सामाजिक अध्ययन के महत्वपूर्ण घटक नागारिकशास्त्र के अन्तर्गत आने वाले तथ्यों को व्यवहार रूप में सीखता है।

2) सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्थल – जिसके अन्तर्गत विद्यालय, पुस्तकालय, विश्वविद्यालय, डाक–तार विभाग, चलचित्र गृह, अजायब घर, चिड़िया घर, उद्यान, अरोग्य सदन, पाक्र, धर्मशाला, पंचायत घर, कला केन्द्र, आकाशवाणी (रेडियो) दूरदर्शन (टी० वी०) मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्धारा, चर्च, लोक रंगमंच, रामलीला, रासलीला, सामाजिक मान्यताएं, परम्पराएं, रीति रिवाज, उत्सव तथा त्योहार सभी आते हैं जिनके माध्यम से छात्र हमारे देश की सामाजिक तथा सांस्कृतिक परम्पराओं को बहुत करीब से देखते, सुनते तथा समझते हैं।

3) भौगोलिक स्थल – सामाजिक अध्ययन के महत्वपूर्ण घटक भूगोल से सम्बन्धित व्यापक तथा प्रत्यक्ष जानकारी भी छात्रों को अपने स्थानीय तथा समुदायिक स्थलों से होती है। छात्र पर्वत, पहाड़, नदी, नहरें, सोते, झरने, पोखर, कुएँ, बाबड़ी, सागर, समुद्री तट, ग्लेशियर, खेत, खलिहान, कस्बे, पगडंडी, सड़कें, वन, रेलवे स्टेशन, हवाई स्थल, बन्दरगाह, खनिज स्थल, संचार एवं परिवहन केन्द्र आदि अनेक उन तथ्यों से परिचित होते हैं जिनको उन्होनें पुस्तक में पढ़ा है।

4) आर्थिक साधन–इसके अन्तर्गत डाक खाना, बैंक, बीमा कार्यालय, बाजार, मण्डी, उत्पादन केन्द्र, डेरियाँ, वितरण केन्द्र, व्यापरिक केन्द्र, ईंट, भट्टे, कृषि फार्म, मिल, कारखानें, व्यापरिक केन्द्र, दुकानें आदि आते हैं जिनमें देश की अर्थ व्यवस्था से सम्बन्धित व्यावहारिक ज्ञान छात्रों को प्राप्त होता है।

5) ऐतिहासिक स्थल–ऐतिहासिक स्थलों के अन्तर्गत ऐतिहासिक इमारतें, ऐतिहासिक टीले, ऐतिहासिक अवशेष, धार्मिक स्थल, मन्दिर जो किसी काल विशेष अथवा व्यक्ति विशेष की विशिष्ट उपलब्धि हो, खंडहर, दरगाह, भवन, स्मारक, प्रसिद्ध गुफाएं, चित्र मूर्तियाँ, चिन्ह, कब्रिस्तान, किले, सुरंग, मीनार, स्तूप, शिलालेख, संग्रहालय, पुराने रिकॉर्ड, प्राचीन साहित्य तथा पुस्तकें आदि आते हैं जिनके माध्यम से छात्र अपने अतीत कालीन

इतिहास को समझ कर उनके स्थापत्य तथा वास्तुकला के विषय में ज्ञान प्राप्त करता हैं।

6) वैज्ञानिक तथा तकनीकी रूचि से सम्बन्धित क्षेत्र –छात्र में यदि वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्रों में रूचि है तो वह अपने समुदाय में स्थित बिजली घर, प्रयोगशालाएं, वक्रशॉप, विज्ञापन भवन, वैज्ञानिक मेले और प्रदर्शनियाँ, तकनीकी अनुसन्धान, संस्थान, सम्बन्धित पुस्तकें, लोगो (सम्बन्धित क्षेत्र के) के भाषण, वैज्ञानिकों के जीवन वृत्त तथा उनकी उपलब्धियों और उनकें संस्मरण से भी लाभान्वित हो अपना ज्ञान वर्धन कर सकता है।

बोध प्रश्न –

2) वेस्ले ने सामुदायिक अथवा अधिगम संसाधनों को कितने वर्गो में विभक्त किया है ।

____

3) "प्रत्येक समुदाय अपने संसाधनों में अनूठा स्थान रखता है" इस कथन को स्पष्ट कीजिए ।

____

13.3.2 अधिगम संसाधनों का महत्व

सामाजिक अध्ययन के अधिगम में बालक के वातावरण में उपलब्ध विभिन्न संसाधनों अथवा सामुदायिक संसाधनों के महत्व का हम एम० पी० मुफात के शब्दों में आँकलन कर सकते हैं जिसके अनुसार " आधुनिक समुदाय अपने उपलब्ध साधनों के भण्डार के फलस्वरूप सीखने के लिए एक प्रयोगशाला का रूप ग्रहण कर लेता है। समुदाय का जीवन तथा उसकी क्रियाओं के प्रत्यक्ष अध्ययन तथा निरीक्षण से प्राप्त ज्ञान आज के जटिल समाज में रहने वाले नवयुवकों की शिक्षा के लिए आवश्यक है। इस प्रकार का व्यावहारिक ज्ञान कक्षा–कक्ष में सीखे हुए ज्ञान का पूरक है। पाठ्यक्रम समुदाय की समस्याओं से सम्बन्धित होना चाहिए। छात्र इसके माध्यम से उन लोगों तथा उनके व्यवसायों, व्यापार तथा उद्योगो के बारे में सीखता है जो समुदाय के समाज का निर्माण करते हैं। उसको व्यक्तियों से जीवन के विभिन्न पहलुओं पर बातचीत करने का अवसर प्राप्त होता है। नवयुवक अपने समुदाय से जिन अनुभवों को प्राप्त करता है वे उसकी क्षमता में वृद्धि करते हैं तथा उसके तत्कालीन युग में जीवन को व्यापक दृष्टिकोण से देखने के अवसर प्रदान करता है।"

इसी प्रकार वेस्ले ने भी, समुदाय तथा उसके विविध संसाधन, अधिगम संसाधन के रूप में

छात्रों के ज्ञानार्जन में कहां तक सहायक है, इस पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि " समुदाय विश्व का संक्षिप्त रूप है। यह प्रत्येक मूलभूत क्रिया के लिए अवसर प्रदान करता है चाहे वह क्रिया अतीत से सम्बन्धित हो, चाहे वर्तमान से।"

इस तरह हम कह सकते है कि–

1) इन अधिगम संसाधनों से बालक को सामाजिक जीवन की शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से प्रभावात्मक ढंग से प्राप्त होती है।

2) इसके माध्यम से अतीत से भविष्य तक का शिक्षण प्राप्त होता है।

3) समुदाय में उपलब्ध संसाधन अध्यापक, छात्र तथा विद्यालय को समाजशास्त्र शिक्षण की पूर्ण सामग्री देता है।

4) समुदाय में स्थित विभिन्न धार्मिक तथा सांस्कृतिक स्थलों के माध्यम से अपने धर्म तथा संस्कृति से परिचित होकर उसके संरक्षण हेतु प्रेरित होते हैं।

5) प्रशासनिक स्थलों तथा उनकी कार्य प्रणाली से छात्र अपने देश की शासन व्यवस्था, नागारिक अधिकार तथा कर्तव्यों से प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर परिचित होते हैं।

6) बालक आदर्श नागरिकता का पाठ भी प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से समुदाय में ही रह कर सीखता है।

7) किसी भी सभ्यता के निर्माण में किन–किन घटकों का योगदान है, इसके सन्दर्भ में वह सामाजिक आदर्शो, परम्पराओं, रीति–रिवाज तथा प्रथाओं को अपने समुदाय में ही रह कर सीखता है।

8) छात्र नागरिक अधिकारों तथा कर्तव्यों से परिचित होते हैं।

9) छात्र यदि कोई बुराई को प्रत्यक्ष रूप से देखता है तो उसे दूर भगाने का प्रयास करता है। इस प्रकार समाज सुधार तथा बुराईयों के उन्मूलन का भाव उनमें पनपता है।

10) छात्र धीरे–धीरे समुदाय से उठकर राष्ट्र तथा विश्व से खुद को जोड़ने का प्रयास करता है जिससे उनमें राष्ट्रीयता तथा अन्तर्राष्ट्रीयता का भाव विकसित होता है।

11) छात्रों को भविष्य में जीविकोपार्जन कर अपने राष्ट्र की आर्थिक प्रगति में अपना सहयोग देने का भाव इन समुदायिक केन्द्रों से ही सीखने को मिलता है।

12) विभिन्न संसाधन सामाजिक अध्ययन के शिक्षण को स्वाभाविक तथा रूचिकर बनाने में सहायक होते हैं।

13) ऐसे अधिगम संसाधन छात्र के सर्वागीण विकास में भी सहायक होते हैं।

14) अधिगम संसाधन छात्र को वास्तविक ज्ञान देने के साथ–साथ उनका स्वस्थ्य मनोरंजन भी करते हैं।

15) विभिन्न सामुदायिक संसाधनों यथा संग्रहालय, अजाबघर, चिड़ियाघर, मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्धारा, चर्च, रेलवे स्टेशन, हवाई अड्डा, ईंटों के भट्टे, सरकारी भवन, संसद भवन,

विभिन्न भौगोलिक स्थलों तथा ऐतिहासिक इमारतों को देखकर छात्रों में नवीन अनुभव प्राप्त होते हैं जो उनका ज्ञानवर्द्धन करते हैं।

16) विभिन्न सामुदायिक स्थलों जैसे भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि पर जाकर, वहां के लोगो को काम करते देख छात्र के मन में भी विभिन्न प्रकार के कार्यो के प्रति रूचि जागृत होती है।

17) समय–समय पर स्कूलों में महान विभूतियों के भाषण, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर वार्ता, नाट्य प्रदर्शन कवि सम्मेलन आदि का आयोजन छात्रों को अनेकों नवीन सूचनाओं से अवगत कराता है।

18) सामुदायिक भ्रमण पर जाकर वहां विभिन्न प्रकार के छोटे–छोटे कार्य तथा कागज के खिलौने बनाना, रंगाई, बुनाई, कटाई, पेंटिंग, फोटोग्राफी, माचिस बनाना, सिक्के इकट्ठे करना, टिकट इकट्ठे करना, तथा बेकार की चीजो से कलात्मक चीजों को बनाने से छात्रों की छिपी हुई योग्यता, क्षमता, कौशल तथा रूचियों को विकसित किया जा सकता है।

19) ऐसे माध्यम संसाधन छात्रों की तक्र, चिन्तन, विश्लेषण, कल्पना तथा सृजनात्मक शक्तियों के विकास में सहायक होती है।

20) विभिन्न सामुदायिक अधिगम संसाधन छात्रों को स्वंय करके ज्ञानार्जन करने का अवसर प्रदान करते हैं जिससे प्राप्त ज्ञान स्थायी होता है।

21) ऐसे अधिगम संसाधन छात्रों में विभिन्न प्रजातान्त्रिक गुणों का विकास करते हैं। क्योंकि जब बच्चे विभिन्न स्थलों पर जाते हैं तो वहाँ सामूहिक रूप से सामुदायिक सर्वेक्षण करते हैं, समाज सेवा कार्य करते हैं तो उनमें प्रेम, सहयोग, सहानुभूति, समानता, सहकारिता, भ्रातृत्व भाव तथा न्याय जैसे गुणों का विकास होता है।

बोध प्रश्न –

4)छात्रों में प्रजातान्त्रिक गुणों के विकास में सामुदायिक साधन किस प्रकार सहायक है–

____

13.3.3 संसाधनों की तैयारी तथा उपयोग

समाज में उपलब्ध विभिन्न संसाधनों को अधिगम संसाधन बनाने हेतु आवश्यक है किसमाज तथा विद्यालय को एक दूसरे के निकट लाया जाए। विद्यालय में आयोजित होने वाले विभिन्न कार्यक्रमों में समाज तथा समुदाय के प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया जाए तथा विद्यालय के छात्र तथा शिक्षक भी समय–समय पर समाज तथा समुदाय की विभिन्न गतिविधियों में अपना सहयोग प्रदान करें, जिसके लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना अपेक्षित है–

1) समुदाय को छात्रों (विद्यालय) के निकट लाना— समुदाय अधिक से अधिक विद्यालय के निकट आए, इसके लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिए

- समुदाय के विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को आमन्त्रित करना महत्वपूर्ण कार्यक्रमों तथा दिवसों पर शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, व्यावसायिक क्षेत्रों से जुड़े हुए प्रतिनिधि को विद्यालय आमन्त्रित कर अवसरानुसार उनके भाषण कराएं जाएं जैसे शिक्षक दिवस पर किसी शिक्षा शास्त्री, पर्यावरण दिवस पर किसी पर्यावरण विद्, गणतन्त्र अथवा स्वाधीनता दिवस पर किसी महान राजनेता के भाषण का आयोजन छात्रों के ज्ञानवर्द्धन में अत्यन्त सहायक होगा। किसी पर्व अथवा जयन्ती पर धार्मिक गुरू का उदबोधन छात्रों में अपने धर्म तथा संस्कृति के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करने में सहायक होगा। नगरपालिका का चेयरमैन स्थानीय शासन के सन्दर्भ में छात्रों को उनके कर्तव्यों से अवगत कराए। इसी प्रकार बैंक के कर्मचारी, डॉक्टर, इन्जीनियर, वकील, व्यावसायी तथा सम्पादक छात्रों को अपने—अपने क्षेत्र के विषय में व्यापक जानकारी प्रदान कर उन्हें जागरूक बना सकते हैं तथा भविष्य में छात्रों को अपने व्यवसाय चयन का आधार भी प्रस्तुत कर सकते हैं।

2) अभिभावक शिक्षक संघ का आयोजनः— इस संघ के माध्यम से अभिभावक और शिक्षक एक दूसरे के निकट आते हैं, उनमें वैचारिक आदान—प्रदान होता है। इसके सन्दर्भ में एम० पी० मुफात का कथन है कि " अभिभावक—शिक्षक संघ अभिभावकों, शिक्षकों तथा छात्रों को एक दूसरे के समीप लाने के लिए विभिन्न बैठकों का आयोजन करता है। ऐसी बैठकों में शिक्षक तथा अभिभावक आपसी मामलों पर विचार—विर्मश कर सकते हैं।" वास्तव में ऐसे आयोजन पर अभिभावक भी विद्यालय आकर गौरान्वित होते हैं तथा विद्यालय के प्रति उनमें कुछ करने का चाह प्रबल हो उठती है।

- समाज सेवा क्रियाए—विद्यालय विभिन्न सामाजिक सेवाओं यथा प्रौढ़ शिक्षा, स्त्री शिक्षा, निरक्षरता उन्मूलन कार्यक्रम, सरकारी भण्डारों का संचालन, स्कूल पंचायत, पर्यावरण स्वच्छता अभियान, स्काउटिंग—गाइडिंग, एन० सी० सी०, एन० एस० एस० तथा अन्य सामुदायिक कार्य यथा परिवार नियोजन, प्राथमिक चिकित्सा, बच्चों व बीमारों की देखभाल, वृक्षारोपण, स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरूकता के माध्यम से अपने छात्रों को समाज सेवा क्रियाओं हेतु प्रेरित कर समाज को विद्यालय के निकट ला सकता है। समाज सेवा क्रियाओं में भाग लेने से छात्रों में शारीरिक कार्यों के प्रति आदर भाव उत्पन्न होता है। उनमें अपने समाज का अच्छा सदस्य बनने तथा उसके कल्याण हेतु मिलजुल कर काम करने की भावना का विकास होता है। उनमें श्रम की महत्ता का ज्ञान होता है तथा उनमें आत्मविश्वास का भाव प्रबल होता है। समाज सेवा क्रियाएँ अधिगम संसाधन के उपयोग की सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्रिया है इसीलिए कई पाठ्यक्रम में इसे क्राफ्ट के स्थान पर एक विषय के रूप में लिए जाने का प्रावधान हैं।

- विद्यालय में विभिन्न उत्सवों तथा पर्वों का आयोजनः— विद्यालय में विभिन्न प्रकार के शैक्षिक उत्सवों यथा वाद विवाद, काव्य पाठ, नाटक, शैक्षिक संगोष्ठी आदि, राष्ट्रीय पर्वो यथा स्वाधीनता दिवस, गणतन्त्र दिवस, गांधी जयन्ती, आदि, धार्मिक उत्सव जैसे

जन्माष्टमी, रामनवमी, ईद, क्रिसमस डे, दशहरा, दिवाली, होली आदि तथा अन्य महापुरूषों की जयन्तियों का आयोजन कर समाज के लोगों को आमन्त्रित करना भी इस दिशा में सार्थक पहल होगी।

- विद्यालयी उत्सवः— विद्यालय में आयोजित किए जाने वाले विभिन्न उत्सव या कार्यक्रम जैसे वार्षिकोत्सव, नाटकोत्सव, विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिता यथा— खेलकूद, वाद—विवाद, काव्य पाठ आदि में भी समाज के लोगों को आमंन्त्रित कर उनके साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाया जा सकता है।

- बाल दिवस का आयोजनः— 14 नवम्बर को बाल दिवस के रूप में विद्यालय में मेले का आयोजन कर हम विद्यालय परिवार, छात्र तथा उनके अभिभावकों को एक दूसरे के सम्पक्र में लाकर विभिन्न संस्कारो तथा संस्कृतियों का अद्भुत समागम कर सकते हैं जो निसन्देह छात्रों को अपनी संस्कृति के करीब लाएगा।

- विचार संगोष्ठी का आयोजनः— महत्वपूर्ण मुद्दों पर विद्यालय में विचार संगोष्ठी का आयोजन तथा विषय विशेषज्ञों और समाज के प्रतिनिधि वर्ग का पारस्परिक विचार विमर्श भी विद्यालय और समाज को एक—दूसरे के बेहद करीब लाएगा तथा अभिभावक भी ऐसे आयोजनों में बेहद उत्साह से भाग लेंगे।

- पुराछात्र संघ की सथापना :— विद्यालय में विभिन्न अवसरों पर पुराने छात्रों को, जो समाज के महत्वपूर्ण पदों को सुशोभित कर रहे है, यदि आमन्त्रित किया जाए, तो वे भी अपनी पुरानी स्मृतियों को तलाशने विद्यालय अवश्य आएंगे तथा कई पहलुओं से आवश्यकतानुसार विद्यालय को सहयोग देंगे।

3) विद्यालय को समुदाय के निकट लानाः— निम्नलिखित गतिविधियों के माध्यम से विद्यालय को भी हम समुदाय के निकट लाकर समुदाय के विविध अधिगम संसाधनों का भरपूर उपयोग कर छात्रों का ज्ञानवर्द्धन कर सकते हैं :—

- आपदा कार्य में सहायता करनाः— किसी भी प्रकार की प्राकृतिक आपदा के दौरान छात्रअपने अध्यापक के नेतृत्व में इसके पीड़ितों की सहायता कर जीवन के प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त कर सकतें हैं।

- सामुदायिक सर्वेक्षणः— अवकाश काल में छात्र अपने समुदाय का सर्वेक्षण कर विभिन्न समस्याओं से अवगत होकर उनका समाधान करने के लिए तत्पर हो सकते हैं। इस प्रकार का सर्वेक्षण उनमें अपने कर्तव्यों का बोध करा कर उन्हें नागरिकता का प्रत्यक्ष शिक्षण प्रदान करेगा। समुदायिक सर्वेक्षण द्वारा किसी विषय का आलोचात्मक निरीक्षण करके उसके विषय में यर्थाथ जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इसे स्पष्ट करते हुए वेल्स ने कहा है कि " एक विशेष स्थान पर रहने वाले लोगों के समूह की सामाजिक संस्थाओं एवं क्रियाओं का अध्ययन ही सामाजिक सर्वेक्षण हैं।"

- समाज सेवाः— समाज में दीन दुखियों की सहायता, लोगों को अन्धविश्वास और कूपमंडूकता की दुनिया से बाहर निकालना, प्रौढ़ शिक्षा, निरक्षरता उन्मूलन, वृक्षारोपण, पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जन जागरूकता, परिवार नियोजन, शिक्षा के महत्व का

प्रचार–प्रसार आदि ऐसे कार्य हैं जिनको करते हुए छात्र न केवल समुदाय और विद्यालय को एक दूसरे के करीब लांएगे वरन विभिन्न सामाजिक तथा मानवीय गुणों की शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करेंगे।

- <u>भ्रमण तथा पर्यटनः</u>– छात्रों को विभिन्न सामाजिक स्थलों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों, फार्मो, छोटे–बड़े उद्योग, बैंको, औद्योगिक बस्तियों, ग्रामों, बाधों, ऐतिहासिक इमारतों, भौगोलिक क्षेत्र, शक्ति के संसाधनों तथा महत्वपूर्ण स्थानों पर ले जाकर भ्रमण कराने से उन्हें अपनी सभ्यता तथा कार्य–संस्कृति का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त होगा और वे समाज को वास्ताविक रूप से जानेंगे। इन समस्त क्षेत्रों का भ्रमण छात्रों में "अनेकता में एकता" के भाव को विकसित करेगा।

  भ्रमण एवं पर्यटन के द्वारा छात्र विषय वस्तु से सम्बन्धित विभिन्न स्थानों तथा बातों को देखकर उसके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करते हैं और इस प्रकार से प्राप्त ज्ञान अधिक स्थायी तथा वास्तविक होगा क्योंकि भ्रमण के दौरान छात्रों की ज्ञानेन्द्रियाँ तथा कर्मेन्द्रियाँ दोनो ही अत्यधिक क्रियाशील होती हैं।

भ्रमण एवं पर्यटन सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में अत्यन्त महत्वपूर्ण साबित हो सकता है बशर्ते इसके आयोजन में कुछ बातों को ध्यान में रखा जाए

(1) <u>भ्रमण एवं पर्यटन का उद्देश्य</u>–बिना उद्देश्य के भ्रमण भी दिशाहीन तथा महत्वहीन क्रिया बनकर रह जायगा इसलिए इसके द्वारा किन उद्देश्यों की प्राप्ति करनी है, यह पूर्व निर्धारित करना आवश्यक है। उदाहरणार्थ अर्थ व्यवस्था के अन्तर्गत एक छोटी फर्म को देखने का आयोजन किया गया हो तो फर्म से सम्बन्धित सम्प्रत्ययों जैसे औद्योगिक स्थिति, मजदूरी, पूंजी, विनियोग, व्यापार आदि का स्पष्टीकरण इस भ्रमण के माध्यम से किया जा सकता है। वहाँ के उद्यमकर्ता से तकनीकी प्रक्रियाओं, आर्थिक निर्णय लेने की प्रक्रिया, व्यापार को प्रारम्भ करने से पूर्व आने वाली समस्याओं आदि की जानकारी हो सकती है। साथ ही साथ मजदूरी निर्धारण, मजदूर यूनियन, फर्म के उस स्थान पर स्थित होने के कारण आदि का भी पता लगाना भ्रमण के उद्देश्य हो सकते हैं।

(2) <u>शिक्षक तथा शिक्षार्थी की तैयारी</u>– भ्रमण में जाने से पूर्व अध्यापक द्वारा उस भ्रमणीय स्थल की यदि पूरी जानकारी प्राप्त कर लिया जाए तो भ्रमण अधिक सार्थक तथा उद्देश्यपूर्ण हो जाएगा। इसके अतिरिक्त भ्रमण के दौरान ठहरने, खाने, परिवहन आदि की भी व्यवस्था पूर्व में ही कर लेनी चाहिए जिससे सभी लोग (शिक्षक तथा शिक्षार्थी) उसी के अनुरूप अपनी तैयारी कर सकें। इसके अतिरिक्त जिस विषय से सम्बन्धित भ्रमण का आयोजन किया जा रहा है उससे सम्बन्धित पाठ भी छात्रों को अध्यापक द्वारा पढ़ा देना चाहिए।

इस सर्वेक्षण द्वारा समाज के किसी विशेष पहलू यथा कृषि, उद्योग, सामाजिक सुरक्षा, गरीबी, निरक्षरता, बेरोजगारी, धार्मिक जीवन, रहन–सहन का स्तर आदि के विषय में तथ्यों का संकलन कर वैज्ञानिक विधियों का अनुसरण करते हुए उनका अपेक्षित समाधान निकालने का

प्रयास किया जाता है। इसके द्वारा छात्रों को जीवन की वास्तविक परिस्थितियों का ज्ञान होता है। सर्वेक्षण द्वारा छात्रों में तथ्यों के संकलन, निरूपण करने की क्षमता, ताक्रिक शक्ति एवं आलोचात्मक चिन्तन का विकास होता है। सीखने के सिद्धान्तों पर आधारित होने के कारण इस सर्वेक्षण द्वारा छात्रप्रभावशाली ढ़ंग से सीखते हैं और उनमें सहानुभूति, पारस्परिक सहयोग, निर्णय लेने की क्षमता, सूझ बूझ, जन कल्याण जैसे गुणों का भी विकास होता है।

इससे छात्र अधिक रूचि तथा उत्साह के साथ अधिगम करेंगे।

(3) भ्रमण – भ्रमण के समय निम्नलिखित तीन बिन्दुओं पर भी अमल करना जरूरी है :–

i. प्रारम्भिक बातचीत– भ्रमणीय स्थल पर पहुंचने के पश्चात् किसी गाइड अथवा वहाँ के किसी व्यक्ति (जिसे उस स्थल की सम्पूर्ण जानकारी हैं) के द्वारा उस स्थल के विषय में छात्रों को जानकारी देनी चाहिए तथा अपने सम्पूर्ण कार्यक्रम से उन्हें अवगत करना चाहिए। अध्यापक को भी छात्रों को समय–समय पर अपना मार्ग निर्देशन देते रहना चाहिए।

ii. विशिष्ट पहलुओं का अवलोकन–यदि छात्र ने सम्बन्धित स्थल के सन्दर्भ में कोई अध्ययन पत्र (उपकरण) तैयार किए हैं तो उन्हें तथ्यों के संकलन हेतु तत्पर हो जाना चाहिए।

iii. विशेषज्ञों द्वारा बातचीत – भ्रमणीय स्थल के विशेषज्ञों (उपलब्धता के अनुरूप) द्वारा भी छात्रों को विशिष्ट पहलुओं से (स्थापत्य शैली, स्मारक अथवा स्थल का प्रयोजन आदि) अवगत कराना चाहिए जिससे छात्रों को सही ज्ञान प्राप्त हो सके।

iv. भ्रमण के प्रश्चात– भ्रमण के उपरान्त सम्बन्धित विशेषज्ञों तथा गाइड को धन्यवाद ज्ञापित कर छात्रों द्वारा एक मौलिक प्रतिवेदन तैयार कर कक्षा में चर्चा–परिचर्चा करना चाहिए।

अन्ततः हम कह सकते हैं किविभिन्न संसाधनों तथा उनसे सम्बन्धित विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से हम छात्रों को सामाजिक अध्ययन का ज्ञान अत्यन्त रोचक तथा व्यावहारिक ढंग से दे सकते हैं। वैसे तो विद्यालय की समय–सारणी में विभिन्न विषयों को ही स्थान दिया जाता है जिसके कारण उपयफ्रक्त क्रियाएँ बहुत कम ही आयोजित हो पाती है। परन्तु यदि विषय का अध्ययन रोचक तथा प्रभावपूर्ण बनाना है तो इस प्रकार के कार्यो का आयोजन भी आवश्यक है जिससे छात्रों को सैद्धान्तिक ज्ञान का व्यावहारिक पहलू भी समझ में आ सके तथा वे जीवन की वास्तविकताओं से प्रत्यक्ष रूप से अवगत हो सकें।

बोध प्रश्न –

5) शिक्षक–अभिभावक बैठक का आयोजन किस प्रकार लाभप्रद है?

____

____

____

____

----

6) समाज सेवा क्रियाओं के माध्यम से हम छात्रों में श्रम के प्रति निष्ठा का भाव कैसे जागृत कर सकते हैं।

----

7) भ्रमण या पर्यटन का मुख्य उद्देश्य क्या है।

13.4 सारांश

वास्तव में प्रकृति ने हमारे आस पास ही न जाने कितने अधिगम संसाधनों को रखा है जिनके माध्यम से हम विषय के व्यावहारिक पहलू को समझ सकते हैं। उनसे सम्बन्धित विभिन्न क्रियाओं के माध्यम से हम विभिन्न तथ्यों, धारणाओं, सिद्धान्तों तथा सम्प्रत्ययों को मूर्त रूप में समझ सकते हैं और इस प्रकार का आयोजन छात्रों के ज्ञानार्जन में तो सहायक होगा ही, साथ ही साथ छात्रों का मनोरंजन भी होगा। बस आवश्यकता है इस प्रकार की क्रियाओं के आयोजन हेतु समय निकालने की और उनके कुशल नियोजन तथा संचालन की, जिससे छात्र सामाजिक अध्ययन विषय के समस्त उद्देश्यों को प्राप्त कर अपने कर्तव्यों तथा अधिकारों के प्रति जागरूक हो सके और अपनी सभ्यता तथा संस्कृति के महत्व को समझ सकें।

13.5 अभ्यास कार्य

1) छात्रों को अपनी सभ्यता तथा संस्कृति का ज्ञान प्रदान करने के लिए आप किन स्थलों के चयन को वरीयता देंगे?
2) सामुदायिक साधनों का ज्ञान छात्रों के जीविकोपार्जन में किस प्रकार सहायक होगा?
3) ऐतिहासिक इमारतों तथा स्थापत्य कला की जानकारी देने के लिए आप कौन सी क्रिया का चयन करेंगे? कारण सहित लिखिए।

13.6 चर्चा के बिन्दु

1) छात्रों में वैज्ञानिक तथा तकनीकी रूचि उत्पन्न करने में सहायक विभिन्न क्षेत्रों की सूची बनाइए।

2) यदि आपको अपने छात्रों को 'ताजमहल' दिखाना है तो इसके लिए आप किस प्रकार योजना बनाएगें?

3) अधिगम संसाधनों का छात्रों के लिए क्या महत्व हैं?

13.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सामुदायिक साधनों में वे समस्त स्थानीय साधन सम्मिलित किये जाते हैं जो शिक्षा के कार्यो में सहायक होते हैं और यही साधन अधिगम संसाधन होते हैं। वास्तव में पठन–पाठन समुदाय से जितना निकट रहकर किया जाता है वह उतना ही प्रभावशाली होता है। सामुदायिक संसाधनों से छात्रों को सामाजिक जीवन की शिक्षा प्राप्त होती हैं जिससे उनका ज्ञानवर्द्धन तो होता ही है साथ ही साथ उनकी अभिवृत्तियां, कुशलतांये तथा रूचियाँ भी विकसित होती है।

2. वेस्ले ने सामुदायिक अथवा अधिगम संसाधनो को तीन वर्गो में विभक्त किया हैः–

   i. भौगोलिक स्थितियॉ

   ii. सामाजिक संस्थायें

   iii. संस्कृति

3. सामाजिक विज्ञान की शिक्षा के लिये सम्पूर्ण समाज तथा समुदाय विभिन्न संसाधनो से युक्त एक प्रयोगशाला है। प्रत्येक समुदाय अपने संसाधनों के सम्बन्ध में अनूठा स्थान रखता है। अर्थात समाज व समुदाय में स्थिति विभिन्न संसाधन जैसे अजायबघर, पुस्तकालय, आर्ट गैलरी, तीर्थ स्थान, यातायात के केन्द्र, मनोरंजन के विविध साधन, व्यापार, उद्योग, कृषि तथा विज्ञान के प्रयोगात्मक स्थलों आदि सामाजिक अध्ययन की व्यावहारिक तथा सैद्धान्तिक दोनो ही प्रकार की शिक्षा देते हैं।

4. छात्रों में प्रजातान्त्रिक गुणों के विकास में सामुदायिक साधन बहुत अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योकि जब बच्चे विभिन्न सामुदायिक स्थलों पर जाते हैं, तो वहॉ सामूहिक रूप से सामुदायिक सर्वेक्षण करते हैं, समाज सेवा कार्य करते हैं तो उनमें प्रेम, सहयोग, समानता, सहकारिता, भ्रातृत्व भाव तथा न्याय जैसे गुणों का विकास होता है। वो सह–अस्तित्व तथा दूसरों के विचारों का सम्मान करना सीखते हैं।

5. अभिभावक शिक्षक बैठक का आयोजन, दोनो को एक दूसरे के निकट आने में मदद करता है । उनमें किसी भी मुद्दे पर वैचारिक आदान–प्रदान होता है। अभिभावक–शिक्षक बैठक का आयोजन अभिभावक, शिक्षक तथा छात्रों को एक दूसरे के समीप लाता है। ऐसे आयोजन पर अभिभावक विद्यालय आकर गौरान्वित होते हैं तथा विद्यालय के प्रति उनमें कुछ करने की चाह प्रबल हो उठती है।

6. छात्रों में श्रम के प्रति निष्ठा का भाव जागृत करने के लिये उन्हे समाज की विभिन्न सेवा क्रियाओं में भाग लेने को प्रेरित करना चाहिये। विद्यालय विभिन्न सामाजिक सेवाओं यथा प्रौढ शिक्षा, स्त्री शिक्षा, निरक्षरता उन्मूलन कार्यक्रम, सरकारी भण्डारों का संचालन, स्कूल पंचायत, पर्यावरण स्वच्छता अभियान, स्काउंटिग – गाइडिंग, एन0सी0सी0, एन0एस0एस0 तथा अन्य सामुदायिक कार्यो के माध्यम से छात्रों को

अपने समाज का अच्छा सदस्य बनने तथा उसके कल्याण हेतु मिलजुल कर काम करने की भावना का विकास करता है और इससे श्रम की महत्ता का ज्ञान होता है।

7. यदि भ्रमण या पर्यटन के उद्देश्यों को पूर्व निर्धारित नही किया गया, तो वह भ्रमण दिशाहीन तथा महत्वहीन क्रिया बनकर रह जायेगी। इसे आपको एक उदाहरण में माध्यम से स्पष्ट करती हूँ। मान लीजिये आपको मुगलकालीन वास्तु तथा स्थापत्य कला का अध्ययन कराना है तो अध्यापक पहले आपको इसकी सैद्धान्तिक जानकारी देगा, तत्पश्चात उन स्थलो का भ्रमण करायेगा, जिसका मुख्य उद्देश्य मुगलकालीन वास्तु तथा स्थापत्य कला की विशेषताओं से आपको परिचित कराना। इसी क्रम में वह इन स्मारकों के कालक्रमानुसार तथा उनकी भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखते हुये इन स्थलों व स्मारकों के भ्रमण की योजना बनायेगा

13.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1) रूहेला, सत्यपाल, सामाजिक सर्वेक्षण और अनुसन्धान सिद्धान्त और व्यवहार में/मसूरी, सरस्वती सदन, 1964।

2) त्यागी, गुरूसरन दास, सामाजिक अध्ययन का शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

3) वर्मा वीरेन्द्र तथा चन्द्र सोती शिवेन्द्र, सामाजिक विज्ञान शिक्षण, इण्टर नेशनल पब्लिंशिग हाउस, मेरठ,

इकाई –14 पाठ्य पुस्तक, जर्नल्स, हस्त पुस्तिकाएं, छात्रों की कार्य पुस्तिकाएं

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 पाठ्य पुस्तक का अभिप्राय

14.3.1 पाठ्य पुस्तकों का महत्व एवं उपयोगिता

14.3.2 अच्छी पाठ्य पुस्तक के चयन हेतु मानदण्ड

14.3.3 वर्तमान पाठ्य पुस्तक के दोष

14.3.4 पाठ्य पुस्तकों में सुधार हेतु अपेक्षित सुझाव

14.4 जर्नल्स

14.5 हस्त पुस्तिकाएं अथवा संदर्शिका

14.5.1 संदर्शिका का महत्व

14.6 छात्रों की कार्य पुस्तिकाएं

14.7 सारांश

14.8 अभ्यास कार्य

14.9 चर्चा के बिंन्दु

14.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

14.1 प्रस्तावना

शिक्षा की प्रक्रिया में अनुदेशनात्मक सामग्री का महत्वपूर्ण स्थान होता है जिसकी सहायता से छात्र पाठ्यक्रम की वास्तविक रूपरेखा समझ कर ज्ञानार्जन करता है। अनुदेशनात्मक सामग्री के अन्तर्गत वे समस्त सामग्रियाँ आती हैं जिनकी सहायता से छात्र विषय वस्तु को अपने संज्ञान में लेता है, ज्ञान को आत्मसात कर अपने शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करता है। आज का युग विज्ञान और तकनीकी का युग है जिसने अनेकों ऐसे माध्यम विकसित किए हैं जिनकी सहायता से छात्र विषयवस्तु को रोचक ढंग से ग्रहण करता है।

परन्तु परम्परागत अनुदेशन सामग्री में लिखित सामग्रियों का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि ये आसानी से प्राप्त हो जाती है इनमें पाठ्य–पुस्तक, जर्नल्स, हस्त पुस्तिकाएं अथवा संदर्शिकाएं तथा छात्रों की कार्य पुस्तिकाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इनमें अतीत के ज्ञान तथा अनुभवों के संचय के साथ–साथ समसामयिक तथा अद्यतन जानकारी का अक्षय भण्डार होता है जिन्हे छात्र सीखकर अपने ज्ञान को समद्धशाली बनाते हैं। प्रस्तुत इकाई में आप इन्ही अनुदेशनात्मक सामग्रियों का अध्ययन करेंगे।

14.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययनोपरान्त आप ।

1) पाठ्य–पुस्तक के आशय का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
2) पाठ्य–पुस्तक का शिक्षा की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान को बता सकेंगे।
3) पाठ्य–पुस्तक के चयन हेतु निर्धारित मानदण्डों को सूचीबद्ध कर सकेंगे।
4) वर्तमान पाठ्य–पुस्तक की उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे।
5) पाठ्य–पुस्तक के दोषों का विश्लेषण कर सकेंगे।
6) शिक्षा में जर्नल्स के महत्व को जान सकेंगे।
7) हस्त पुस्तिकाओं के निर्माण की आवश्यकता का वर्णन कर सकेंगे।
8) छात्रों के लिए हस्त पुस्तिकाओं की आवश्यकता को सूचीबद्ध कर सकेंगे।
9) पाठ्य–पुस्तक तथा कार्य पुस्तिका में विभेद कर सकेंगे।
10) शिक्षा की परम्परागत सहायक सामग्री का प्रयोग कर सकेंगे।

14.3 पाठ्य पुस्तक का अभिप्राय

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में पाठ्य पुस्तकों का महत्व सर्वविदित है। अनुदेशनात्मक सामग्री के रूप में सर्वाधिक प्रयोग की जाने वाली सामग्री पाठ्य पुस्तकें ही हैं। शिक्षा की प्रक्रिया में इनकी अतिशय महत्ता को सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है। इसके सन्दर्भ में विद्वानों के मतों को आप निम्नलिखित रूप से देख सकते हैं– हर्ल आर० डगलस के अनुसार – "शिक्षकों के बहुमत ने अन्तिम विश्लेषण के आधार पर पाठ्य–पुस्तकों को 'वे क्या और किस प्रकार पढ़ायेगें' की आधारशिला बताया है। "

आर० एन० दबे के शब्दों में "पाठ्य पुस्तकें इच्छित पाठ्यक्रम परिवर्तन के वाहक हैं।"

हैरोलिकर के अनुसार "पाठ्य पुस्तक ज्ञान, आदतों, भावनाओं, क्रियाओं तथा प्रवृतियों का सम्पूर्ण योग है।"

बेकन का मत है कि "पाठ्य पुस्तक कक्षा प्रयोग के लिए विशेषज्ञों द्वारा सावधानी से तैयार की जाती है। यह शिक्षण युक्तियों से भी सुसज्जित होती है।"

कींटिग के शब्दों में "पाठ्य पुस्तकें शिक्षण के लिए आधे उपकरण है।"

हालक्वेस्ट के शब्दों में "पाठ्य पुस्तकें शिक्षण क्रिया को एवं अभिप्रायों के लिए सुव्यवस्थित चिन्तन एवं ज्ञान का लिखित रूप हैं।"

शिक्षा के शब्दकोष में पाठ्य पुस्तक की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए लिखा गया हैं कि "पाठ्य पुस्तक अध्ययन की निश्चित विषयवस्तु से सम्बन्धित पुस्तक है, जो क्रमबद्ध ढंग से व्यवस्थित, शिक्षण के विशिष्ट स्तर पर प्रयोग के लिए उदिष्ट एवं प्रदत्त पाठ्यक्रम के लिए अध्ययन की सामग्री के मुख्य स्रोत के रूप में प्रयोग की जाती हैं।"

14.3.1 पाठ्य पुस्तकों का महत्व एवं उपयोगिता

पाठ्य पुस्तकों के महत्व तथा उपयोगिता को आप निम्नलिखित विद्वानों के मतों से भली भांति समझ सकतें हैं–

क्रो एवं क्रो के अनुसार "पाठ्य पुस्तकों का सीखने–सीखानें की क्रियाओं में अन्य साधनों के साथ महत्वपूर्ण स्थान है।"

मेकाम्बर के शब्दों में "आधुनिक पाठ्यक्रम में पाठ्य पुस्तकें स्वयं साध्य बनने की अपेक्षा शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहयोग देती है।"

हार्न का मत है कि "शिक्षण विधि एवं पाठ्यवस्तु के सुधार में अच्छी पाठ्य पुस्तकों का स्थान सर्वोपरि हैं।"

शिक्षा आयोग (1964) की रिपोर्ट के पृष्ठ संख्या 229 के अनुसार " विषय में योग्यता प्राप्त एवं सक्षम विशेषज्ञ द्वारा लिखित एक उत्तम पाठ्य पुस्तक छात्रों की रूचि को प्रेरित करती है और शिक्षक को उसके कार्य में पर्याप्त सहायता करती है।"

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि–

- पाठ्य पुस्तकें शिक्षण प्रकरणों की सीमा को निर्धारित करती है जिससे शिक्षक तथा छात्रों को यह संज्ञान में रहता है कि किसी कक्षा स्तर के लिए उन्हें कितनी विषय वस्तु का अध्ययन अध्यापन करना है।
- पाठ्य पुस्तक में निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार विषय का संगठित ज्ञान एक ही स्थान पर मिल जाता है।
- पाठ्य पुस्तकें शिक्षक को कक्षा में जाने से पूर्व पाठ की तैयारी करने का अवसर प्रदान करती है।
- पाठ्य पुस्तकें शिक्षकों तथा छात्रों को विद्वानों के बहुमूल्य विचारों एवं उपयोगी अनुभवों को प्रदान करती है जिससे वे लाभान्वित होते हैं।
- यह शिक्षण–अधिगम में एकरूपता लाने का महत्तपूर्ण माध्यम हैं।
- इनमें तथ्यों, प्रत्ययों तथा सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिससे छात्रों को भी अधिगम में सुविधा एवं सरलता होती है।

- कक्षा में शिक्षक द्वारा सम्प्रेषित बातों/तथ्यों को अपने ढंग से पुनः पढ़ने तथा उसे समझने का अवसर इन्ही पाठ्य पुस्तकों के ही माध्यम से ही सम्भव हो पाता है।

- छात्रों को कम मूल्य पर विषय से सम्बन्धित समस्त सूचनाएं एक ही पुस्तक में एकत्रित रूप में मिल जाती है जिससे उन्हें इधर–उधर भटकने की आवश्यकता नही पड़ती।

- किसी भी विषय से सम्बन्धित महत्तवपूर्ण तथ्य एक ही स्थान पर संकलित होने से शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों के ही समय की बचत होती है।

- इनके माध्यम से स्वाध्याय द्वारा ज्ञान प्राप्त करने के लिए छात्र अभिप्रेरित होते हैं।

- ये छात्रों की तक्रशक्ति तथा स्मरण शक्ति के विकास में भी सहायक होती हैं।

- इनकी सहायता से एक साथ कक्षा के सभी बालकों को पढ़ाया जा सकता है।

- सभी छात्रों का मानसिक स्तर अलग–अलग होता है। कुछ छात्र विद्यालय में पढ़ाई गई विषय वस्तु को एक ही बार में आत्मसात नही कर पातें। अतएव विषय वस्तु को कई बार पढ़ने तथा उसकी पुनरावृत्ति के लिए पाठ्य पुस्तकों की नितान्त आवश्यकता पड़ती है।

- पाठ्य पुस्तकों के ही माध्यम से प्रत्येक राज्य की प्रत्येक कक्षा में एक निश्चित विषय वस्तु का अध्यापन सम्भव हो पाता है जो छात्रों का सामूहिक रूप से मूल्याकंन करने में सहायक होता है।

- ये पुस्तकें मन्दबुद्धि तथा प्रतिभाशाली दोनो ही प्रकार के बालकों के लिए भी उपयोगी होती हैं।

- इनके माध्यम से कक्षा–शिक्षण की भी अनेक कमियों को दूर किया जा सकता है जैसे– कक्षा शिक्षण के दौरान अध्यापक प्रत्येक छात्र पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान नही दे पाता। परन्तु पाठ्य पुस्तक की सहायता से छात्र व्यक्तिगत रूचि तथा क्षमता के अनुसार अध्ययन कर शिक्षक के साथ–साथ चलता रहता है।

- पाठ्य पुस्तकें छात्रों को कक्षा कार्य के साथ–साथ गृहकार्य करने में भी सहायक होती हैं साथ–ही–साथ इनके माध्यम से छात्रों का मूल्याकंन भी होता रहता है।

- ये परीक्षा के समय छात्रों की तैयारी में अत्यन्त सहायक होती हैं।

- ये छात्रों को अतीतकालीन ज्ञान के साथ–साथ नवीन ऐतिहासिक तथ्यों का भी ज्ञान कराती हैं।

- ऐतिहासिक तथ्यों को कण्ठस्थ करने तथा ऐतिहासिक चित्रों, मानचित्रों तथा आँकड़ो को समझने में ये पाठ्य पुस्तकें ही अत्यन्त महत्वपूर्ण साबित होती हैं।

- ये शिक्षक तथा शिक्षार्थी की परम हितैषी तथा मित्र होती हैं।

- पाठ्य पुस्तकें शिक्षण का आधार प्रस्तुत करते हुए शिक्षक तथा शिक्षार्थी की मार्गदर्शक होती हैं।

- शिक्षा की डाल्टन प्रद्धति तथा योजना प्रणाली में तो पाठ्य पुस्तकों की परम आवश्यकता होती है। क्योंकि इनके माध्यम से छात्र अपनी रूचि, क्षमता, सामर्थ्य, आवश्यकता तथा गति के अनुसार अधिगम करते हैं।

यही कारण है कि उपरोक्त गुणों के कारण ही विभिन्न शिक्षा आयोगों द्वारा भी इन पाठ्य–पुस्तकों की आवश्यकता, महत्व तथा उपयोगिता को सर्व सम्मति के साथ स्वीकार किया गया हैं।

बोध प्रश्न –

1) पाठ्य पुस्तक का आशय स्पष्ट कीजिए।

____
____
____

2) शिक्षा की प्रक्रिया में पाठ्य–पुस्तक के महत्व को स्पष्ट कीजिए।

____
____
____

14.3.2 अच्छी पाठ्य पुस्तक के चयन हेतु मानदण्ड

शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में पाठ्य पुस्तकों के महत्व एवं उनकी उपयोगिता को आपने भी निश्चित रूप से स्वीकार किया होगा। एक छात्र के रूप में आपको भी अनेकों पुस्तकों के अनुशीलन की आवश्यकता पड़ती होगी। इसलिए आवश्यक है कि एक अच्छी पाठ्य पुस्तक के चयन हेतु वांछनीय मानदण्डों से आप भिज्ञ हो, जिसके लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है –

1) पुस्तक के लेखक–आज के समय में पुस्तक लिखना एक व्यवसाय सा हो गया है। लोगों ने इसे धनोपार्जन का माध्यम बना दिया है। अतएवं इसका चयन करते समय पुस्तक के लेखक की विद्धता, योग्यता, अनुभव तथा प्रसिद्धि के साथ–साथ उसकी विषय विशेषज्ञता को विशेष रूप से ध्यान मे रखना चाहिए। साथ ही साथ लेखक को मनोविज्ञान का ज्ञान होना भी आवश्यक है जिससे वह विषय सामग्री के प्रस्तुतिकरण में छात्रों की आयु, योग्यता, रूचि, रूझान आदि बातों को भी प्राथमिकता दे सके।

2) विषय वस्तु की गहनता तथा व्यापकता– पुस्तक में निहित प्रकरणों को पाठ्यक्रम के अनुकूल होना चाहिए तथा प्रत्येक प्रकरण के अन्तर्गत उल्लेखित सामग्री में पर्याप्त गहनता तथा व्यापकता होनी चाहिए जिससे छात्र विषय सामग्री के विषय में पर्याप्त ज्ञान अर्जन करते हुए खुद को परीक्षा की दृष्टि से भी तैयार करे सकें। पुस्तक में वर्णित विषय सामग्री का बालक की शक्तियों तथा मानवीय क्रियाओं के विभिन्न क्षेत्रों

एवं वास्ताविक जीवन से इतना सम्बन्ध अवश्य होना चाहिए वि प्रत्येक बालक अपनी–अपनी रूचियों, योग्यताओं तथा आवश्यकताओं के अनुसार वास्ताविक क्रियाओं में भाग लेकर वांछनीय अनुभव प्राप्त कर सके। पाठ्य सामग्री चारित्रिक, नैतिक, तथा सामाजिक दृष्टि से भी उपयोगी होनी चाहिए जिससे सभी छात्र अपना चारित्रिक विकास करते हुए अपनी जीविकोपार्जन सम्बन्धी कुशलता अर्जित कर समाज का एक उपयोगी सदस्य बन सकें। पुस्तक में निहित सामग्री को वास्तविक जीवन के उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट किया जाना चाहिए जिससे छात्र उन्हें भली भांति समझ सके तथा विषय के प्रति उनकी रूचि और अधिक बढ़ जाए।

3) पाठ्य पुस्तक का नियोजन– पाठ्य पुस्तक हेतु अपेक्षित नियोजन के सन्दर्भ में निम्नलिखित बातों को भी प्राथमिकता देनी चाहिए–

- पाठ का विस्तार कक्षानुरूप तथा पाठ्यक्रम के अनुरूप होना चाहिए।
- सामाजिक अध्ययन की पाठ्यपुस्तक हेतु वर्णित ऐतिहासिक स्थलों, इमारतों, अभिलेखों, शिलालेखों, महान पुरूषों के लिए चित्र, मानचित्र तथा आवश्यक आँकड़ों की व्यवस्था अवश्य होनी चाहिए।
- पाठ्यवस्तु का विस्तार उपयुक्त शीर्षक के अन्तर्गत हो।
- पाठ्यवस्तु सुव्यवस्थित तथ सुनियोजित हो।
- पाठों का विस्तार कालक्रम के अनुसार हो।
- विषयवस्तु तथा पाठों के पृष्ठ संख्या सहित अनुक्रमणिका अवश्य होनी चाहिए जिससे आवश्यकतानुसार सरलता से पृष्ठ खोला जा सके।
- विषयवस्तु का विवरण छोटे–छोटे वाक्यों तथा छोटे–छोटे अनुच्छेद में होना चाहिए जिससे छात्र भली भांति समझ सके।

4) पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण की शैली– विषयवस्तु को आवश्यकता अनुसार रंगीन चित्रों, मानचित्रों, तालिकाओं तथा सारणियों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया हो। ऐतिहासिक स्थलों के विवरण हेतु वांछित चित्र भी आवश्यक है जिससे छात्र उनके विषय में भली भांति समझ कर उसकी कल्पना कर सके। ऐतिहासिक महापुरूषों, इमारतों तथा शिलालेखों के चित्र भी छात्रों के ज्ञानवर्द्धन में सहायक होगें तथा छात्रों के लिए विषय सामग्री सरल तथा रोचक हो जाएगी।

➢ प्रकरणों के प्रस्तुतीकरण में "सरल से कठिन की ओर " तथा "ज्ञात से अज्ञात की ओर" के मनोवैज्ञानिक शिक्षण सूत्रों का अनुसरण किया गया हो।

➢ फॉरमेट के अन्तर्गत छोटे–बड़े शीर्षक, छोटे–बड़े टाइप, हाशिया, संकेत तथा चित्रों की प्रस्तुति भली भांति की गई हो।

5) पाठ्य पुस्तक की भाषा शैलीः– भाषा शैली के सन्दर्भ में निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना अपेक्षित है–

- भाषा की सरलता, सुबोधता तथा स्पष्टता कक्षा के अनुरूप होनी चाहिए जिससे छात्र भली भांति समझ सकें।

- उच्च कक्षाओं के लिए भाषा ताक्रिक तथा छात्रों के चिन्तन को उत्प्रेरित करने वाली होनी चाहिए।
- भाषा का स्वरूप तथा उसका प्रयोग शाब्दिक चित्रण प्रस्तुत करने वाला होना चाहिए।
- भाषा शुद्ध तथा परिष्कृत होनी चाहिए।
- तकनीकी शब्दों को अंग्रेजी शब्दों के साथ वर्णन किया गया हो।

6) अभ्यास प्रश्नछात्र पढ़े गए पाठ को कितना आत्मबोध कर चुके हैं इसके लिए उनसे अभ्यास प्रश्न कराए जाने का प्रावधान होता है जिसके लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना अपेक्षित है–

- प्रत्येक पाठ के अन्त में उससे सम्बन्धित कक्षा कार्य तथा गृह कार्य हेतु प्रश्न अवश्य दिए जाने चाहिए।
- प्रश्नों के अन्तर्गत निबन्धात्मक, लघु, अति लघु तथा वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की रचना की गई हो।
- कुछ प्रश्न छात्र के स्वाध्याय तथा सामान्य ज्ञान की वृद्धि हेतु भी दिए जाने चाहिए।

7) अन्य अपेक्षित बिन्दु–उपरोक्त बातों के अतिरिक्त कुछ अन्य बातों पर भी ध्यान देना आवश्यक है

- कक्षा स्तरानुकूल पुस्तक का उचित आकार होना चाहिए।
- पुस्तक की जिल्द मोटी, मजबूत तथा टिकाऊ होनी चाहिए जिस पर विषय से सम्बन्धित कोई आकर्षक, प्रासंगिक तथा रंगीन चित्र होना चाहिए।
- पाठ्पुस्तक की सिलाई मजबूत होनी चाहिए जिससे छात्र उसे आराम से खोलकर पढ़ सकें।
- छपाई में काली तथा चमकदार स्याही का प्रयोग किया गया हो।
- मुद्रण में शब्दों तथा पंक्तियों में मानकानुकूल दूरी होनी चाहिए।
- शब्द पर्याप्त मात्रा में बड़े तथा पठनीय होने चाहिए।
- पाठ के चारों ओर पर्याप्त स्थान (Margin) छोड़ा गया हो।
- पाठ्यपुस्तक का कागज पर्याप्त मोटा तथा सफेद होना चाहिए।
- पुस्तक का मूल्य बहुत अधिक नही होना चाहिए।
- विषय सूची, सन्दर्भ ग्रन्थ सूची, निर्देश नियमावली तथा प्रत्येक पृष्ठ पर संख्या का भी प्रत्येक पाठ्य पुस्तक में अनिवार्य रूप से होना चाहिए जिससे छात्र बिना किसी अवरोध तथा समय के अपव्यय के वांछित पृष्ठ खोल कर अध्ययन कर सकें।

* पाठ्य पुस्तक के प्रकाशन की विश्वसनीयता तथा प्रसिद्धि को भी ध्यान में रखना अपेक्षित होगा।

उपरोक्त बिन्दुओं को दृष्टिगत रखते हुए ही आपको पाठ्य पुस्तक का चयन करना चाहिए जिससे आप जिस उद्देश्य से पुस्तक खरीद रहे हैं वह उद्देश्य पूरा हो सके।

<u>बोध प्रश्न</u>

3) पाठ्य–पुस्तक का चयन करते समय सावधानी बरतना क्यों आवश्यक है।

____

____

____

4) पाठ्य–पुस्तक के प्रस्तुतिकरण की शैली आकर्षक क्यों होनी चाहिए।

____

____

____

14.3.3 वर्तमान पाठ्य–पुस्तकों के दोष

आपने उपयक्रक्त पंक्तियों में पाठ्य–पुस्तकों के महत्व तथा उपयोगिता का अध्ययन किया और सम्पूर्ण शैक्षिक कार्यक्रम में इनकी महत्ता तथा भूमिका को समझा। परन्तु वर्तमान पाठ्य पुस्तक की सोचनीय स्थिति की तरफ भी मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहूंगी क्योंकि जिस पाठ्य पुस्तक के बिना हम शिक्षा की कल्पना भी नही कर सकते, वही आज धनोपार्जन का मात्र माध्यम बन चुकी है। इनकी दयनीय स्थिति के विषय में माध्यमिक शिक्षा आयोग का कथन है कि "हम विद्यालय की पाठ्य पुस्तकों के आधुनिक स्तर से बहुत ही असन्तुष्ट हैं और हमारा विचार है वि इनमें आमूल सुधार किए जाने चाहिए। अधिकाशंतः पुस्तकें जो उपस्थित तथा प्रस्तावित की जाती हैं, वे प्रत्येक प्रकार से अत्यन्त खराब है। इनमें प्रायः कागज निम्न श्रेणी का प्रयुक्त किया जाता है, मुद्रण बहुत ही असन्तोषजनक हैं, उदाहरण निम्न स्तर के है तथा छपाई में बहुत त्रुटियाँ पायी जाती है। यदि ऐसी पुस्तकें छात्रों को पढ़ने के लिए प्रदान की गई, तो उनके द्वारा छात्रों में पुस्तकों के प्रति प्रेम उत्पन्न नही किया जा सकेगा। अभी तक पाठ्य पुस्तकों के उत्पादन का कार्य व्यापारियों के हाथ में है जो इनके स्तर को उच्च बनाने में असफल रहे हैं।"

इस सन्दर्भ में शिक्षा आयोग का विचार देखिए "दुर्भाग्यवश पाठ्य पुस्तक के लेखन तथा उत्पादन की ओर उसकी महत्ता के अनुसार उचित ध्यान नही दिया गया है। अधिकांश विद्यालयी विषयों में विशेषतः भाषाओं में ऐसी पुस्तकों की प्रचुरता है जिनका स्वरूप एवं स्तर निम्न कोटि का है तथा जिनका उत्पादन उपेक्षा की दृष्टि से किया गया है।"

<u>कोठारी आयोग (शिक्षा आयोग)</u> ने पाठ्य पुस्तकों के निकृष्ट कोटि होने के निम्नलिखित कारण बताएं

➢ सामान्यतया पाठ्य पुस्तकें ऐसे व्यक्तियों द्वारा लिखी जाती हैं जो इस कार्य को करने की पर्याप्त योग्यता नही रखते हैं।

- ➢ पाठ्य पुस्तकों के चुनाव में अनेक बुराइयों का प्रचलन हैं।
- ➢ पाठ्य पुस्तकों की भाषा शैली और प्रस्तुतिकरण का ढंग भी संन्तोषजनक नही है।
- ➢ उनके निर्माण एवं प्रकाशन में अनुसन्धान का अभाव है। प्रायः पुस्तकों की छपाई त्रुटिपूर्ण, कागज साधारण और जिल्द कमजोर होते हैं।
- ➢ पाठ्य पुस्तकों में व्यावहारिक पक्ष की अवहेलना की जाती है।

<u>शैक्षणिक अनुसंधान परिषद के सर्वेक्षण के अनुसार</u> –

- पाठ्य पुस्तकें महँगी हैं।
- भारतीय भाषाओं में छपी हुई पुस्तकों का स्तर घटिया है।
- इनमें शैली एवं लक्ष्य की अस्पष्टता के दोष हैं।
- पाठ्य पुस्तकें न तो ज्ञानवर्धन में सहायक होती है और न ही राष्ट्रीय उद्देश्यों को पूरा करने में सहायक होती हैं।
- पाठ्य पुस्तकें अच्छे लेखकों द्वारा कम लिखी गई हैं।

इसी प्रकार के अन्य दोषों को आप निम्नांकित रेखाचित्र के माध्यम से समझ सकते हैं

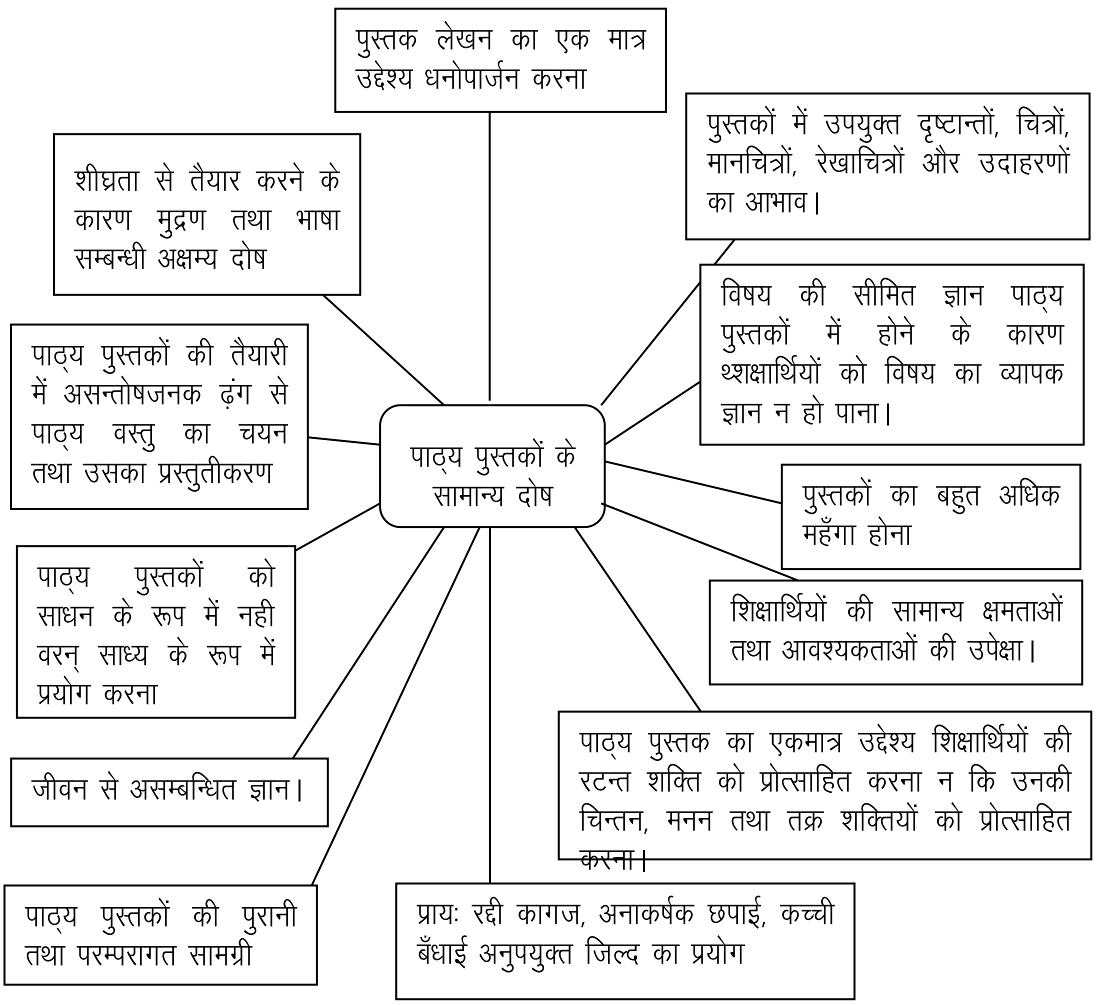

अभ्यास कार्य –

किसी भी पाठ्य–पुस्तक का अध्ययन करिए। अध्ययन के दौरान आप जो–जो कमियाँ महसूस करते हैं उसको सूचीबद्ध कीजिए।

____
____
____
____
____

14.3.4 पाठ्य पुस्तकों में सुधार हेतु अपेक्षित सुझाव

सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रम में इनकी अतिशय महत्ता को देखते हुए अनेक संस्थाओं ने अच्छी पाठ्य पुस्तकों के निर्माण तथा सुधार कार्यक्रम अपनाएं हैं जिनमें पाठ्य पुस्तकों के निर्माण के मूलभूत सिद्धातों, मनोवैज्ञानिक सिद्धातों, अधिगम के नियमों, शिक्षण विधियों तथा शिक्षण सूत्रों आदि को दृष्टिगत रखते हुए पाठ्य पुस्तकों की रचना पर बल दिया जाता हैं।

माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार इस सन्दर्भ में निम्नलिखित बातें व्यवहार में लाई जानी चाहिए :–

- प्रत्येक राज्य में पाठ्य पुस्तकों में सुधार लाने के लिए एक "उच्च शक्ति सम्पन्न पाठ्य पुस्तक समिति" की स्थापना की जाए जिसमें सात सदस्य होने चाहिए। इनमें एक सदस्य राज्य की न्याय व्यवस्था का हो अर्थात उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश, लोक सेवा आयोग का एक सदस्य, क्षेत्रीय विश्वविद्यालयों के उपकुलपतियों में से एक, राज्य का एक प्रधानाध्यापक या प्रधानाध्यापिका, दो प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री तथा शिक्षा संचालक होगा। शिक्षा संचालक इस समिति का सचिव होगा। इन सदस्यों की कार्यविधि 5 वर्ष होगी। यह समिति स्वतंन्त्र संस्था के रूप में कार्य करेगी।

- पाठ्य पुस्तक समिति कागज, मुद्रण, उदाहरण, चित्र, फॉरमेट आदि के सम्बन्ध में निश्चित मानदण्ड निर्धारित करें।

- प्रत्येक विषय के लिए एकाकी पाठ्य पुस्तकों को निर्धारित नही किया जाए, केवल भाषाओं के सम्बन्ध में ऐसी व्यवस्था की जा सकती है। अन्य विषयों के लिए पाठ्य पुस्तक समिति उपयुक्त पुस्तकों की सूची तैयार करके विद्यालयों को भेज दें। उनमें से पुस्तकों को चयन करने का कार्य संस्थाओं पर छोड़ दिया जाए।

- अच्छे उदाहरणों के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकारें मिलकर एक संग्रहालय की स्थापना करें। यह संग्रहालय पाठ्य पुस्तक समितियों तथा प्रकाशकों को पुस्तकों के उदाहरणों के स्तर को सुधारने के लिए ब्लॉक प्रदान करेगा।

- प्रस्तावित पाठ्यपुस्तकों में जल्दी–जल्दी परिवर्तन नही किए जाएं।

- प्रकाशनों की ब्रिकी से एक फण्ड की स्थापना की जाए।

इस फण्ड को निम्नलिखित कार्यो पर व्यय किया जाएं ।

1) योग्य तथा निर्धन छात्रों को छात्र वृतियाँ दी जाएं।

2) ऐसे छात्रों को आवश्यक पुस्तकें प्रदान की जाएं।

3) विद्यालय में बच्चों के दोपहर के भोजन, दूध, नाश्ता आदि की व्यवस्था की जाए।

4) माध्यमिक शिक्षा के सुधार हेतु उपयुक्त कार्यक्रमों के व्यय में योगदान दिया जाए।

शिक्षा आयोग ने पाठ्य पुस्तकों की निम्न दशा को सुधारने के लिए अग्रांकित सुझाव दिए–

- पाठ्य पुस्तकों का उत्पादन राज्य द्वारा किया जाए।
- पाठ्य पुस्तकों के राजकीय उत्पादन का उद्देश्य मुनाफाखोरी नही वरन् श्रेष्ठ पुस्तकों की रचना तथा न्यूनतम लागत पर उन्हें बालकों को उपलब्ध कराना होना चाहिए।
- पुस्तक लेखन के कार्य के लिए प्रत्येक सम्भव क्षेत्र को प्रोत्साहित किया जाए।
- अध्यापकों को इस लेखन कार्य हेतु विशेष रूप से प्रोत्साहित किया जाए।
- प्रत्येक विषय में प्रत्येक कक्षा के लिए कम से कम 3 या 4 पुस्तकों का चयन कर स्कूल के लिए सर्वोत्तम पुस्तक का चयन शिक्षक पर छोड़ दिया जाए।
- पाठ्य पुस्तकों एवं शिक्षण सामग्री के उत्पादन के लिए राज्य के शिक्षा विभाग के निकट सम्पक्र में काम करने वाली पृथक संस्था की स्थापना की जाए।
- पुस्तक लेखन हेतु योग्य तथा श्रेष्ठ लेखक आकर्षित हों, इसके लिए सरकार द्वारा उदारता के साथ पारिश्रमिक प्रदान किया जाए।
- देश में उपलब्ध विद्वानों की सहायता से एन.टी.ई.आर.टी. (**NCERT**) पाठ्य–पुस्तकों का उत्पादन राष्ट्रीय स्तर पर करे, जो राज्य सरकारों के लिए होगा। वे आवश्यकतानुसार इनमें परिवर्तन भी कर सकती हैं।
- पाठ्य पुस्तक उत्पादन के कार्यक्रम में उसके शैक्षिक पहलू, तैयारी सम्बन्धी पहलू तथा वितरण सम्बन्धी पहलू पर भी ध्यान दें।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य महत्वपूर्ण सुझाव भी हैं जिन पर विचार कर हम अच्छी पाठ्य पुस्तक का निर्माण कर सकते हैं यथा

- पाठ्यक्रम के उद्देश्यों के अनुरूप ही पाठ्य–पुस्तकों की रचना की जाए।
- अच्छी पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित हो, इसके लिए पाठ्य पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण होना चाहिए।

- लेखन का कार्य उन लेखकों को ही दिया जाए जो मौलिक रचनाकार हो।
- पाठ्य पुस्तकें राष्ट्रीयता के भाव से ओत प्रोत हो ।
- पाठ्य–पुस्तकों की विषयवस्तु किसी सम्प्रदाय या वर्ग विशेष की भावनाओं को ठेस पहुचाने वाली नही होनी चाहिए।
- पाठ्य–पुस्तकों के निर्माण एवं चयन का आधार व्यक्तिगत, वर्गगत तथा राजनीतिक हस्तक्षेप न होकर पाठ्य–पुस्तक की गुणवत्ता होनी चाहिए।
- पाठ्य–पुस्तक में आवश्यकतानुसार मानचित्र, चित्र, आँकड़े, ग्राफ तथा चार्ट का भी प्रयोग करना चाहिए जिससे छात्रों के ज्ञानार्जन के साथ–साथ उनकी पढ़ने में रूचि भी हो।
- राष्ट्रीय तथा राज्य स्तर पर विद्वान लेखकों की गोष्ठियों एवं सम्मेलन का आयोजन कर अच्छी पाठ्य–पुस्तकों के निर्माण सम्बन्धी चर्चा–परिचर्चा करनी चाहिए।

उपरोक्त बातों को हम व्यवहार में लाकर पाठ्य–पुस्तकों के महत्व तथा उपयोगिता को और अधिक बढ़ा सकते हैं। इस सन्दर्भ में शिक्षा आयोग का यह कथन अक्षरशः सत्य है

"एक ऐसी पाठ्य–पुस्तक, जो सुशिक्षित एवं सुयोग्य विषय–विशेषज्ञों द्वारा लिखी गई हो और जिसके निर्माण में मुद्रण स्तर, चित्र एवं सामान्य साज सज्जा के प्रति समुचित सावधानी बरती गई हो, ें की रूचि को जगाएगी और अध्यापक के कार्य में पर्याप्त सहायक सिद्ध होगी।"

इस प्रकार उच्च कोटि की पाठ्य पुस्तकों और अन्य अध्यापन सामग्रियों की व्यवस्था शिक्षा के स्तर को उच्च बनाने में सहायक होगी।

बोध प्रश्न

5) शिक्षा आयोग ने पाठ्य–पुस्तक के उत्पादन हेतु राज्य सरकार से क्या अपेक्षाएं की हैं।

____
____
____
____
____

14.4 जर्नल्स

सामान्यतया कक्षा शिक्षण के दौरान अध्यापक निर्धारित पाठ्यक्रम पर आधारित पाठ्य–पुस्तकों के अध्ययन–अध्यापन तक ही सीमित रह जाता है। परन्तु शिक्षा का अर्थ मात्र पुस्तकीय ज्ञान का अर्जन नही वरन उससे भी अधिक व्यापक होता है। इसलिए छात्र प्राप्त ज्ञान एवं अनुभव को प्रभावी तथा अद्यतन बनाने के लिए उसमें वृद्धि करके और अधिक समृद्ध

बनाता है जिसके लिए ज्ञानात्मक समृद्धि–सामग्री के रूप में जर्नल्स अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। यही कारण है कि विद्यालयों के पुस्तकालयों में जर्नल्स की व्यवस्था की जाती हैं।

जर्नल्स हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में होते हैं जिनका अध्ययन छात्र अपनी सुविधानुसार करता है। ये विभिन्न विषयों तथा समसामयिक ज्ञान से सम्बन्धित होते हैं जिसमें विषय से सम्बन्धित अद्यतन ज्ञान निहित होता है। इनका प्रकाशन राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होता है जिनके अनुशीलन से छात्रों को क्षेत्र की परिधि से बाहर के भी ज्ञान, उनके स्वरूप, उनका सम्प्रत्यय, उनकी कार्य–प्रणाली के विषय में विशद् तथा व्यापक ज्ञान पता चलता है। इनका प्रकाशन मासिक, त्रैमासिक, अर्द्ध वार्षिक तथा वार्षिक होता है।

ज्ञानात्मक समृद्धि सामग्री के रूप में जर्नल्स के अध्ययन से छात्रों को अनेकों लाभ होते हैं

- तत्कालिक घटनाओं, विभिन्न समसामयिक समस्याओं तथा उनके समाधान हेतु प्रस्तावित नवीन विधाओं से वे भिज्ञ हो पाते हैं।
- यह अध्ययनकर्ता की जानकारी को आधुनिकतम रखता है।
- जर्नल्स की विषयवस्तु परीक्षा केन्द्रित नही होती इसलिए विषय के व्यापक दृष्टिकोण के लिए इनका अध्ययन अत्यन्त लाभप्रद होता है।
- यह छात्रों के ज्ञान को समृद्ध बनाता है।
- छात्रों में विषय के प्रति अद्यतन जानकारी हेतु अधिक रूचि के विकास में यह अत्यन्त सहायक है।
- जर्नल्स से पाठ्य–पुस्तकों में दिए गए तथ्यों की भी जाँच हो जाती है।
- जर्नल्स के माध्यम से अनुसन्धान कार्य में बहुत सहायता मिलती है। इससे अनुसन्धानकर्ता को सम्बन्धित साहित्य के विस्तार में मदद मिलती है साथ ही साथ उसके क्षेत्र विशेष की अ़द्यतन जानकारी प्राप्त होती हैं।
- ये व्यक्तिगत भिन्नता की दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण साबित होते हैं।

बोध प्रश्न

6) जर्नल्स से आप क्या समझते हैं?

____
____
____
____
____

7) जर्नल्स की विद्यालयी पुस्तकालय में उपलब्धता क्यों आवश्यक हैं?

____

____

____

____

14.5 हस्तपुस्तिकाएं अथवा संदर्शिका (**HANDBOOK**)

सामान्यतया पाठ्यचर्या शिक्षण अधिगम क्रियाओं, शिक्षा के उद्देश्य तथा विषय वस्तु की मात्र सूची होता है जिसमें शिक्षक–शिक्षार्थी क्रियाओं, शिक्षण हेतु सहायक सामग्री तथा उपयुक्त अधिगम अनुभवों के विषय में कोई सुझाव नही दिया जाता। संदर्शिका इन्ही तमाम कमियों को दूर करने का प्रयास करती है जिसमें सूचनात्मक ज्ञान के साथ–साथ शिक्षक तथा छात्रों के लिए भी आवश्यक विस्तृत निर्देश दिए जाते हैं। शिक्षक तथा छात्र के अतिरिक्त पाठ्यक्रम आयोजकों के लिए भी संदर्शिका अत्यन्त उपयोगी होती हैं क्योकि इनमें पाठ्यक्रम संशोधन, संवर्धन एवं उन्नयन कार्य हेतु उचित दिशा–निर्देश प्राप्त होते हैं। यह एक प्रकार से गाइड के रूप में होती है।

संदर्शिका में पूरे शैक्षिक सत्र आयोजित तथा नियोजित की जाने वाली पाठ्यक्रम तथा पाठ्येत्तर क्रियाओं, शिक्षण उपागम, समयावधि तथा मूल्याकंन प्रविधि का पूरा ब्यौरा अंकित होता है जिससे अध्यापक पूर्व नियोजित तथा कुशलता के साथ अपना कार्य करता है। एक प्रकार से संदर्शिका अध्यापक के लिए मार्गदर्शक होती है जो अध्यापक को अपना सभी कार्य सही समय पर तथा सही उपागम के साथ करने के लिए सहायक होती है।

कुछ विद्यालय अपनी सत्र भर की क्रियाओं को नियोजित कर संदर्शिका में अंकित कर उसे अपने अध्यापक को देते हैं जिसके अनुरूप अध्यापक अपनी कार्य प्रणाली को विस्तार देता है। जबकि कुछ विद्यालय में अध्यापक अपनी संदर्शिका का निर्माण स्वंय कर उसके अनुसार शैक्षिक तथा शैक्षिकेत्तर गतिविधियों का संचालन करता है। इसमें मुख्य रूप से पाँच बातें उल्लेखित होती हैं

- विषय का महत्व तथा दृष्टिकोण ।
- विषय शिक्षण के स्पष्ट उद्देश्य।
- विषय का क्षेत्र तथा क्रमबद्ध रूप ।
- स्तर विशेष के लिए उपयुक्त इकाइयाँ एवं प्रकरण।
- उपयुक्त शिक्षण सामग्री एवं क्रियाएँ।

14.5.1 संदर्शिका का महत्व

निम्नलिखित बिन्दु इसके महत्व को स्पष्ट करते हैं–

- अनेक महत्वपूर्ण सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कभी–कभी शिक्षक विषय वस्तु, शिक्षण–विधि तथा सहायक सामग्री के विषय में दुविधा की स्थिति में रहता है। ऐसी स्थिति में संदर्शिका से काफी मदद मिलती है जिसमें इस सन्दर्भ में आवश्यक विशिष्ट निर्देशों की व्यवस्था होती है।

- संदर्शिकाओं के निर्माण का कार्य तकनीकी प्रकृति का हैं जिसमें विद्यालयी कार्यक्रम के विभिन्न पक्षों के सम्बन्ध में निश्चित एवं स्पष्ट व्यवस्थाएं करनी होती है। इस प्रकार संदर्शिकाएं विशिष्ट ज्ञान, कौशल तथा रचनात्मक नेतृत्व की क्षमता वाले विशेषज्ञ तैयार करने का माध्यम होती है।

- संदर्शिका शिक्षक को पाठ्यक्रम प्रतिमान समझाने तथा उसके अनुरूप कार्य करने में सहायक सिद्ध होती है।

- समस्त शैक्षिक तथा शैक्षिकेत्तर गतिविधियों के कुशल नियोजन तथा सम्पादन में संदर्शिकाओं का अत्यन्त महत्व होता है।

- छात्रों के लिए विशेष रूप से दूरस्थ शिक्षा के आप जैसे विद्यार्थियों के लिए तो ये संदर्शिकाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा मददगार साबित होती है क्योंकि अध्यापक की अनुपस्थिति में पाठ्यक्रम का स्वरूप, उसकी अवधि विषय वस्तु का विभाजन, मूल्याकंन, मूल्याकंन का स्वरूप आदि के सन्दर्भ ये संदर्शिकाएं ही छात्रों का मार्ग निर्देशन करती हैं।

इस प्रकार संदर्शिका एक प्रकार से मार्ग निर्देशिका होती है। इनके अनुपालन में शिक्षक के लिए बाध्यता नही होती। परिस्थिति के अनुसार इनमें परिवर्तन भी किया जा सकता है। इसमें सम्मिलित सामग्री तो मात्र सुझाव के रूप में होती है जिससे अध्यापक आवश्यकतानुसार मदद लेकर अपने कार्य को सुनियोजित ढ़ंग से कर सके। इन सुझावों का उद्देश्य अध्यापक के कार्य को दिशा निर्देशित मात्र करना है, न कि उनका मार्ग निश्चित करना। परन्तु दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थियों को इनका अक्षरशः पालन करना होता हैं जब तक कि उनके अध्ययन केन्द्र से कोई स्पष्ट निर्देश न दिया जाए।

<u>बोध प्रश्न</u>

8)हस्तपुस्तिकाएं अथवा संदर्शिका के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।

____
____
____

9)संदर्शिका का महत्व शिक्षा की प्रक्रिया में क्या होता है।

____
____
____

14.6 कार्य पुस्तिकाएं (**work books**)

कार्य पुस्तिकाओं से तात्पर्य उन पुस्तिकाओं से होता हैं जिन्हे छात्र व्यक्तिगत रूप से प्रयोग में लाते हैं जिनमें विषय से सम्बन्धित वांछित सूचनाएं, प्रश्न और उत्तर देने के प्रारूप, अधिन्यास (Assignments) तथा प्रोजेक्ट कार्यो को पूरा करने सम्बन्धी वांछित सूचनाएं, सुझाव तथा दिशा निर्देश दिए रहते हैं। इनका मुख्य उद्देश्य छात्रों द्वारा सम्पादित वैयक्तिक क्रियाकलापों हेतु वांछित मार्ग दर्शन करना है। ये कार्य पुस्तिकाएं अनुभवी तथा अपने विषय पर स्वामित्व रखने वाले लेखकों के द्वारा लिखी जाती है वर्तमान समय में ये कार्य पुस्तिकाएं, पुस्तकों (Books) का ही रूप ले रहीं हैं फिर भी मूलभूत अन्तर दोनों में यह है कि पुस्तकों में मात्र विषय सम्बन्धित सूचनाएं अथवा विषय वस्तु का ब्यौरा तथा अभ्यास हेतु प्रश्न ही होते हैं जबकि कार्य पुस्तिकाओं में इन सब के साथ–साथ अन्य कार्य यथा प्रश्नों के उत्तर लिखने का प्रारूप, प्रोजेक्ट कार्य तथा सत्रीय कार्य और उनको भली–भांति करने का निर्देश भी दिया रहता हैं ये कार्य पुस्तिकाएं छात्रों को स्वतन्त्र ढ़ंग से अपना–अपना कार्य करने तथा अपेक्षित अधिगम अनुभव अर्जित करने में पूर्ण रूप से सहायता तथा मार्ग निर्देशन करती हैं।

कार्य पुस्तिकाओं के प्रयोग में ध्यान रखने योग्य कुछ मुख्य बिन्दु– कार्य पुस्तिकाएं अपने उद्देश्य में पूर्ण रूप से सफल हो, इसके लिए विषय विशेष के अध्यापक द्वारा कुछ बातें अवश्य ध्यान में रखनी चाहिए जैसे –

- अध्यापक द्वारा अपने छात्रों को ऐसी पाठ्य पुस्तक के चयन हेतु सुझाव देना चाहिए जो उत्तम स्तर की हो, जिनमें स्व अध्ययन सामग्री, परीक्षण प्रश्नों, अग्रिम अध्ययन हेतु योग्य पुस्तकों के नाम, सत्रीय कार्य, प्रोजेक्ट कार्य, अभ्यास कार्य तथा सन्दर्भ ग्रन्थ का उल्लेख हो।

- अध्यापक को स्वंय भी कार्य पुस्तकों को साध्य न मानकर उसे शिक्षण साधन के रूप में स्वीकार करना चाहिए।

- कार्य पुस्तिकाओं में दिए हुए कार्यों को छात्र भलीं भांति तभी कर सकते हैं जब शिक्षक उनके कार्यो का भली भांति निरीक्षण करते हुए उन्हें वांछित दिशा निर्देश दें।

- अध्यापक द्वारा कार्य पुस्तिकाओं को कभी अपना विकल्प नही मानना चाहिए अर्थात् कार्य पुस्तिकाओं में सब कुछ दिया है, यह छात्रों से कह कर अपने शिक्षण कार्य से विरक्त नहीं होना चाहिए।

- अध्यापक को यह स्मरण रखना चाहिए कि कार्य पुस्तिकाएं छात्रों की व्यक्तिगत भिन्नता को ध्यान में रखकर नही बनाई जाती हैं। अतएवं इनमें दी गई विषय सामग्री को अपने अनुभव से जोड़कर छात्रों की वैयक्तिक भिन्नताओं तथा आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर शिक्षण कार्य करते हुए इन कार्य पुस्तिकाओं की उपयोगिताओं को सार्थक करना चाहिए।

- कार्य पुस्तिकाओं का प्रयोग मात्र ज्ञानात्मक उद्देश्य की प्राप्ति के लिए नही वरन

बोधात्मक तथा प्रयोगात्मक अथवा कौशलात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु भी किया जाना चाहिए जिससे विषय विशेष के शिक्षण–अधिगम लक्ष्य को पूरी तरह प्राप्त किया जा सके।

- कार्य पुस्तिकाओं द्वारा छात्रों से स्पष्ट एवं सुन्दर कार्य करने हेतु प्रेरित करके छात्रों की सृजनात्मक क्षमता का विकास किया जाना चाहिए।

- सामाजिक अध्ययन की कार्य पुस्तिकाओं में प्रायः महत्वपूर्ण सामग्रियों अथवा घटनाओं के चित्र भी दिए होते हैं जैसे– मोहनजोदड़ो का स्नानागार, मौसम चक्र, विधान सभा, उत्पादन से सम्बन्धित विविध चित्र तथा इसी प्रकार के अन्य, जो विषय सामग्री को और अधिक रोचक, प्रभावशाली व बोधगम्य बनाते हैं। अतएव अध्यापक का यह प्रयास होना चाहिए वि इसे अपने प्रभावशाली व्याख्यान से और अधिक जीवन्त बनाए और यथा सम्भव छात्रों को इन्हें वास्तविक रूप से भी दिखाएं।

<u>बोध प्रश्न</u>

10) कार्यपुस्तिकाओं से आप क्या समझते हैं ।

____

____

____

____

____

11) कार्यपुस्तिकाओं के चयन में सावधानी क्यों आवश्यक है?

____

____

____

14.7 सारांश

परम्परागत शिक्षण सामग्रियों के रूप में प्रस्तुत इकाई में आपने पाठ्य–पुस्तकों, जर्नल्स, हस्त पुस्तिकाएं अथवा संदर्शिका तथा छात्रों की कार्य पुस्तिकाओं का अध्ययन किया। इसके पश्चात् आप इनके महत्व तथा उपयोगिता को भी भली भांति समझ गए होगें। वास्तव में ये अनुदेशात्मक सामग्रियाँ छात्रों को मात्र विषय का ज्ञान नही प्रदान करती वरन उनमें रचनात्मक क्षमता को भी विकसित करती हैं।

14.8 अभ्यास के प्रश्न

1) पाठ्य पुस्तकें न केवल छात्र वरन शिक्षक के लिए भी महत्वपूर्ण क्यों हैं?

2) पाठ्य पुस्तकों के दोषों के सन्दर्भ में माध्यमिक शिक्षा आयोग के विचार स्पष्ट कीजिए।

3) जर्नल्स की शिक्षा में क्या उपयोगिता हैं?

4) "हस्तपुस्तिकाएं एक गाइड की भांति होती हैं" इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

5) कार्य पुस्तिका का क्या महत्व हैं।

14.9 चर्चा के बिन्दु

1) यदि आपके किसी साथी को कोई पुस्तक खरीदनी है तो आप उन्हें क्या–क्या सलाह देना पसन्द करेंगी।

2) जर्नल्स आपके ज्ञान को समृद्धशाली किस प्रकार बनाता है?

3) हस्तपुस्तिकाओं के महत्व के सन्दर्भ में आप कहां तक सहमत है अपने मत दीजिए।

4) हस्तपुस्तिकाएं छात्रों की सृजनात्मकता के विकास में अत्यन्त सहायक है।

14.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.अनुदेशनात्मक सामग्री के रूप में सर्वाधिक प्रयोग की जाने वाली सामग्री पाठ्य पुस्तकें ही है। इसमें निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार विषय का संगठित ज्ञान एक ही स्थान पर मिल जाता है। इनमें तथ्यों, प्रत्ययों तथा सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे छात्रों को भी अधिगम में सुविधा तथा सरलता रहती है। इस प्रकार पाठ्य पुस्तकें शिक्षण के लिये आधे उपकरण है।

2.शिक्षण की प्रक्रिया में पाठ्य पुस्तक का अत्यन्त महत्व है। ये शिक्षण प्रकरणों की सीमा निर्धारित कर शिक्षक तथा छात्र के लिये उनके शिक्षण तथा अध्ययन की सीमा निर्धारित करती हैं। पाठ्यक्रम के अनुसार विषय का संगठित स्वरूप एक ही स्थान पर मिल जाता है, तथ्यों, प्रत्ययों तथा सूचनाओं को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत होने के कारण छात्रों का अध्ययन सुव्यवस्थित हो जाता है। पुस्तकें छात्रों की तक्र तथा स्मरण शक्ति की वृद्धि में सहायक होती है साथ ही साथ इनसे समय, धन तथा श्रम की बचत होती है क्योकि विषयवस्तु एक ही स्थान पर मिलने के कारण छात्रों को भटकना नही पड़ता।

3.जैसा कि महान विद्वान मेकाम्बर का कथन है कि "आधुनिक पाठ्यक्रम में पाठ्य पुस्तकें स्वंय साध्य बनने की अपेक्षा शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहयोग देती हैं।" इसके अनुशीलन से हमे पाठ्य पुस्तक के महत्व एवं उपयोगिता का स्पष्ट भान हो रहा है। इसलिये हमे इसका चयन करते समय बहुत सतक्र रहना होगा, जिससे इन पुस्तकों के अध्ययन से हम अपने वांछित लक्ष्य तथा उद्देश्यों को प्राप्त कर सकें।

4.विषय वस्तु को आवश्यकतानुसार रंगीन चित्रों, मानचित्रों, तालिकाओं, सारणियों के माध्यम से प्रस्तुत करना, ऐतिहासिक स्थलों व स्मारकों के विवरण में वांछित चित्र, ऐतिहासिक महापुरूषों व शिलालेखों के चित्र आदि को पाठ्य पुस्तकों में सम्मिलित करने से एक ओर पाठ्य पुस्तक के प्रस्तुतिकरण की शैली आकर्षक होगी दूसरी ओर ऐसी पुस्तकें छात्रों के ज्ञान वृद्धि में तो सहायक होंगी, साथ ही साथ इसकी विषय सामग्री छात्रों के लिये रोचक

व बोधगम्य बन जायेगी।

5.शिक्षा आयोग (1964) ने पाठ्य पुस्तकों के लेखन से लेकर प्रकाशन तक आई त्रुटियों को दृष्टिगत रखते हुये राज्य सरकार से ये अपेक्षा की कि पाठ्य पुस्तक का उत्पादन राज्य द्वारा किया जाये। इनके राजकीय उत्पादन का मुख्य उद्देश्य मुनाफाखोरी नही वरन श्रेष्ठ पुस्तकों की रचना तथा न्यूनतम लागत पर उन्हे बालकों को उपलब्ध कराना होगा।

6.जर्नल्स विभिन्न विषयों तथा समसामयिक ज्ञान से सम्बन्धित होते हैं जिसमें विषय से सम्बन्धित अद्यतन ज्ञान निहित होता है। ये हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनो भाषाओं में होते हैं। इनका प्रकाशन राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होता है जिनके अनुशीलन से छात्रों को क्षेत्र की परिधि के बाहर के भी ज्ञान, उनके स्वरूप, उनका सम्प्रत्यय, उनकी कार्य प्रणाली के विषय में विशद् तथा व्यापक ज्ञान प्राप्त होता है।

7.शिक्षा का अर्थ मात्र पुस्तकीय ज्ञान का अर्जन नही वरन उससे भी अधिक व्यापक होता है। इसलिय छात्र प्राप्त ज्ञान एवं अनुभव को प्रभावी तथा अद्यतन बनाने के लिये उसमें वृद्धि करके और अधिक समृद्ध बनाता है जिसके लिये ज्ञानात्मक समृद्धि–सामग्री के रूप में जर्नल्स अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। यही कारण है कि विद्यालयों के पुस्तकालयों में जर्नल्स की व्यवस्था की जाती है।

8.सामान्यतया पाठ्यचर्या शिक्षण अधिगम क्रियाओं, शिक्षा के उद्देश्य तथा विषय वस्तु की मात्र सूची होती है जिसमें शिक्षक, शिक्षार्थी, क्रियाओं, शिक्षण हेतु सहायक सामग्री तथा उपयुक्त अधिगम अनुभवों के विषय में कोई सुझाव नही दिया जाता। संदर्शिका इन्ही तमाम कमियों को दूर करने का प्रयास करती है जिसमें सूचनात्मक ज्ञान के साथ – साथ शिक्षक तथा छात्रों के लिये भी आवश्यक विस्तृत निर्देश दिये जाते हैं। यह एक प्रकार से गाइड के रूप में होती है।

9.शिक्षा की प्रक्रिया में संदर्शिका का बहुत महत्व होता है। इसमें पूरे शैक्षिक सत्र आयोजित तथा नियोजित की जाने वाली पाठ्यक्रम तथा पाठ्येत्तर क्रियाओं शिक्षण उपागम, समयावधि तथा मूल्यांकन प्रविधि का पूरा ब्योरा अंकित होता है जिससे अध्यापक पूर्व नियोजित तथा कुशलता के साथ अपना कार्य करता है। यह एक प्रकार से अध्यापक के लिये मार्गदर्शक होती है जो अध्यापक को अपना सभी कार्य सही समय पर तथा सही उपागम के साथ करने के लिये सहायक होती है। आप जैसे प्रशिक्षणार्थियों के लिये, जो दूरस्थ शिक्षा के हैं, संदर्शिकाएं अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा मददगार साबित होती है।

10.कार्य पुस्तिकाओं से तात्पर्य उन पुस्तिकाओं से होता है, जिन्हे छात्र व्यक्तिगत रूप से प्रयोग में लाते हैं, जिनमें विषय से सम्बन्धित वांछित सूचनायें, प्रश्न और उत्तर देने के प्रारूप, अधिन्यास (Assignments) तथा प्रोजेक्ट, कार्यों को पूरा करने सम्बन्धी वांछित सूचनायें, सुझाव तथा दिशा निर्देश दिये रहते हैं। इनका मुख्य उद्देश्य छात्रों द्वारा सम्पादित वैयक्तिक क्रियाकलापों हेतु वांछित मार्ग दर्शन करना है।

11.कार्य पुस्तिकाओं के चयन के समय स्मरण रहे कि ये उत्तम स्तर की स्व अध्ययन सामग्री, परीक्षण प्रश्नों, अग्रिम अध्ययन हेतु योग्य पुस्तकें, सत्रीय कार्य, प्रोजेक्ट कार्य, अभ्यास कार्य

तथा सन्दर्भ ग्रन्थ तथा छात्रों की सृजनात्मक शक्ति का विकास करने वाली होनी चाहिये।

14.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1) यादव सियाराम, पाठ्यक्रम विकास, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा –2।

2) शर्मा, आर० ए०, पाठ्यक्रम, शिक्षण कला तथा मूल्याकंन, आर० लाल० बुक डिपो मेरठ–

3) त्यागी, गुरसरन, सामाजिक अध्ययन का शिक्षण विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

इकाई–15 सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला, कक्षा के बाहर तथा कक्षा के अन्दर सामाजिक अध्ययन

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला

15.3.1 सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला हेतु अपेक्षित साधन/उपकरण

15.3.2 सामाजिक अध्ययन प्रयोगशाला की आवश्यकता

15.3.3 सामाजिक अध्ययन प्रयोगशाला का महत्व

15.3.4 प्रयोगशाला के सन्दर्भ में व्यावहारिक समस्याएं

15.3.5 सामाजिक अध्ययन प्रयोगशाला का संगठन

15.4 कक्षा के अन्दर तथा कक्षा के बाहर सामाजिक अध्ययन

15.5 सारांश

15.6 अभ्यास कार्य

15.7 चर्चा के बिन्दु

15.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.9 सन्दर्भ पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वागींण विकास करना है जिसके लिए ज्ञानार्जन के साथ–2 उसमे विभिन्न कुशलताओं, क्षमताओं तथा कौशलों का विकास किया जाता है। आज की शिक्षा मात्र पाठ्य पुस्तकों के पठन–पाठन तक ही सीमित नही है। बल्कि छात्रों को करके सीखने के लिए प्रेरित किया जाता है। सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में प्रयोगशाला छात्रों को इसी सिद्धान्त के अनुसार अधिगम हेतु प्रेरित करती है। यह शब्द एक ऐसे गत्यात्मक वातावरण की ओर संकेत करता है जिसमें अध्यापक के उचित मार्ग निर्देशन तथा पथ प्रदर्शन में छात्र स्वक्रियाओं अथवा स्वप्रयासों के आधार पर ज्ञान प्राप्त करते हैं और इस प्रकार से प्राप्त ज्ञान तथा अनुभव छात्रों के मस्तिष्क के स्थायी अंग बन जाते हैं। अध्यापक छात्रों को विषय सम्बन्धी ज्ञान स्पष्ट कर उनके लिए कार्य निर्धारण कर देता है और छात्र प्रयोगशाला के विभिन्न उपकरणों का आवश्यकतानुसार प्रयोग कर पूर्ण करता है। प्रयोगशाला तथा पाठ्य पुस्तकों में प्राप्त ज्ञान के व्यावहारिक पहलू से छात्रों को अवगत कराने हेतु अध्यापक अपने छात्रों को भ्रमण तथा पर्यटन के लिए भी ले जाता है। इससे न केवल छात्रों का ज्ञानार्जन स्थायी रूप प्राप्त करता है वरन उनका मनोरंजन भी हो जाता है। प्रस्तुत इकाई में आप इसी

सन्दर्भ में अध्ययन करेंगे।

15.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्यनोपरान्त आप

1. प्रयोगशाला के सम्प्रत्यय का प्रत्यभिज्ञान कर सकेंगे।
2. प्रयोगशाला की आवश्यकता का वर्णन कर सकेंगे।
3. प्रयोगशाला के महत्व को सूचीबद्ध कर सकेंगे।
4. प्रयोगशाला के निर्माण में आने वाली व्यावहारिक समस्याओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
5. प्रयोगशाला के संगठन हेतु स्मरणीय बातों की सूची बना सकेंगे।
6. कक्षा के बाहर भी सामाजिक अध्ययन की जाने वाली शिक्षा के महत्व को समझ सकेंगे।
7. सामाजिक अध्ययन की शिक्षा में भ्रमण की उपयोगिता सिद्ध कर सकेंगे।

15.3 सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला

सामाजिक अध्ययन का शिक्षण विगत वर्षो की तुलना में आज आधुनिक हो गया है। प्रारम्भ में जहाँ इसका शिक्षण मात्र पुस्तकों के माध्यम से सम्भव था वहीं आज विज्ञान और तकनीकी के विकास ने इसके शिक्षण को पाठ्य–पुस्तकों के साथ–साथ विविध नवीन सामग्रियों के प्रयोग से अत्याधुनिक बना दिया है। विभिन्न मनोवैज्ञानिक शिक्षण सूत्रों जैसे स्वयं करके अधिगम करना, क्रिया द्वारा सीखना, वास्तविक परिस्थितियों में सीखना आदि ने शिक्षा की प्रक्रिया में छात्रों को अत्यधिक सक्रिय कर दिया है। परिणाम स्वरूप छात्र अब मात्र पाठ्य पुस्तकों से नही वरन विविध सहायक सामग्री यथा चार्ट, मॉडल, मानचित्र, चित्र, ग्लोब, प्रोजेक्टर तथा विविध श्रृव्य – दृश्य सामग्री को भी अपने अधिगम का आधार बनाता है। इसीलिए उपरोक्त समस्त सामग्रियों की उपलब्धता सामाजिक अध्ययन के कक्ष में की जाती है जिससे छात्र विषय का ज्ञान वास्तविक तथा यर्थाथ रूप से कर सके तथा वह कक्ष अधिगम की प्रयोगशाला बन सके। ऐसी तमाम सामग्रियाँ, जो छात्रों को उनके अतीत से परिचित कराकर उन्हे वर्तमान की समुचित जानकारी दे सके, की उत्तरोत्तर वृद्धि ने सामाजिक अध्ययन कक्ष को प्रयोगशाला का नाम दे दिया। सामाजिक अध्ययन विषय में प्रयोगशाला को एक विधि के रूप में स्वीकार कर मुफात ने इसके महत्व को और अधिक बढा दिया। इसके सन्दर्भ में उनका विचार है कि

"प्रयोगशाला विधि में समस्त शिक्षण पद्धतियों के सर्वोत्तम लक्षण निहित है। यह वैयक्तिक विभिन्नताओं, पहल – कदमी तथा सहयोग, रूचियों, वृत्तियों, आदतों, कुशलताओं तथा आदर्शो के विकास के लिए प्रावधान करती है। विशेषतः प्रयोगशाला विधि समस्या समाधान, निरीक्षित अध्ययन तथा सामाजीकृत स्थिति पर आधारित है।"

वैस्लेः– "सामाजिक अध्ययन प्रयोगशाला को एक कक्ष अथवा कक्षों के समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमे सामाजिक अध्ययन के अनुदेशन से सम्बन्धित समस्त

लिखित, श्रृव्य एवं दृश्य सामग्री रखी जाती है।"

प्रो0 घाटेः– "मुख्य रूप से इतिहास कक्ष एक ऐतिहासिक प्रयोगशाला अथवा कार्यशाला है, जहाँ प्रतिदिन छात्र अपनी जिज्ञासा को शान्त करने और ज्ञान को प्राप्त करने के लिए कार्य करेंगे।"

इस प्रकार सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला एक विशेष प्रकार का वह कक्ष है जिसमें छात्रों के प्रायोगिक कार्य हेतु समस्त अपेक्षित सुविधाएं निहित होती है। व्यापक दृष्टिकोण से यदि देखा जाए तो यह सम्पूर्ण विश्व ही सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला है तथा इसके समस्त संसाधन इस प्रयोगशाला की सामग्री है। परत्तु व्यवस्थित अध्ययन के क्रम में हम ऐसे प्रयोगशाला की कल्पना करते हैं जहाँ सामाजिक अध्ययन के अधिगम हेतु वे समस्त अधिगम सामग्री उपलब्ध तथा सुव्यवस्थित ढ़ंग से सजी होती है जहाँ छात्र उनका निरीक्षण करते हुए तथ्यों को समझता है तथा आवश्यकतानुसार अपने अध्यापक का मार्ग निर्देशन प्राप्त करता है। अध्यापक छात्रों के लिए कार्य निर्धारण करता है, उनके द्वारा किये जाने वाले कार्यो का निरीक्षण करता है, उनकी त्रुटियों अथवा जिज्ञासाओं का समाधान करता है तथा आवश्यकतानुसार चर्चा – परिचर्चा करता है। इस प्रयोगशाला में परीक्षण, आलोचना तथा समन्वय को भी स्थान दिया जाता है।

बोध प्रश्न

1. सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।

____
____
____
____

15.3.1 समाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला हेतु अपेक्षित साधन/उपकरण

1. इस प्रयोगशाला की सबसे बड़ी आवश्यकता पर्याप्त प्रकाश तथा हवा से युक्त एक विशाल कक्ष, जिसमे समस्त उपकरणों को सुव्यवस्थित ढ़ंग से रखा जा सके, जिससे छात्र अपनी आवश्यकतानुसार उनका प्रयोग कर सकें।

2. हल्के तथा आरामदायक फर्नीचर, जिससे उन्हे आवश्यकतानुसार एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर अध्ययन किया जा सके। इसके अतिरिक्त क्षमतानुसार कुछ बड़ी मेज होनी चाहिए जिस पर रखकर छात्र नक्शा या अन्य सामग्री बना सकें।

3. कक्ष के किनारे चॉक तथा बोर्ड होना चाहिए जिससे अध्यापक चित्र, रेखाचित्र, चार्ट तथा अन्य आवश्यकतानुसार कार्य करके छात्रों को समझा सकें।

4. चूंकि विषय की आधारभूत सामग्री पुस्तकों से ही उपलब्ध होती है इसलिए प्रयोगशाला कक्ष में पर्याप्त संख्या में विभिन्न पुस्तकें आलमारी में सजी होनी चाहिए जिससे छात्र उनका अध्ययन कर सकें। इसके अन्तर्गत महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थ, श्लोक– संदर्भ, मेगस्थनीज का भारत विवरण, फाह्यान का यात्रा विवरण, बाबरनामा, अकबरनामा आदि भी रखे जाने चाहिए।

5. बुलेटिन बोर्ड– चूंकि सामाजिक अध्ययन का विषय व्यावहारिक विषय है जिसकी विषयवस्तु समाज में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं से सम्बन्धित होती है इसलिए प्रयोगशाला कक्ष में बुलेटिन बोर्ड अनिवार्य रूप से होने चाहिए जिसमे विभिन्न प्रकार के चार्ट, रेखाचित्र, देश – विदेश के समाचार तथा अभिलेखों के छायाचित्र आदि लगे होने चाहिए। यह कार्य छात्रों द्वारा ही करवाए जाने चाहिए जिससे उनमे व्यावहारिक जीवन की समझ आ सके और व कार्य में रूचि ले सकें।

6. प्रयोग करने हेतु विभिन्न सामग्रियाँ यथा पेन्सिल, रबर, रंग, पेन, ब्रुश, गोंद, सूई, धागा, ड्राइंग सैट, हथौड़ी, कील, चाकू, कैंची तथा विभिन्न रंगो के कागज भी प्रयोगशाला कक्ष में होने चाहिए।

7. मौसम से सम्बन्धित विभिन्न जानकारी के लिए प्रयोगशाला कक्ष में जलवायु के तुलनात्मक ज्ञान के लिए बैरोमीटर, विभिन्न प्रकार के थर्मामीटर, दिशा सूचक यन्त्र, पवन के रूख का मापक यन्त्र, तथा नक्षत्रों से सम्बन्ध बताने वाले यन्त्र भी उपलब्ध होने चाहिए।

8. देश की भौगोलिक स्थिति समझने के लिए एटलस, नक्शे तथा ग्लोब का होना नितान्त आवश्यक है। साथ ही साथ विभिन्न प्रकार के मॉडल, महत्वपूर्ण चित्र (महान शासकों तथा महान पुरूषों के), त्योहारों एवं पर्वो के, विभिन्न ऐतिहासिक स्मारकों तथा उद्योग धन्धों के होने चाहिए। इससे छात्रों को अधिगम के लिए वास्तविक प्रेरणा मिलेगी।

9. छात्रों की कलात्मक अभिरूचि को विकसित करने के लिए छात्रों को आर्थिक, भौगोलिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक विषयों पर उद्देश्य पूर्ण चार्ट बनाने के लिए प्रेरित कर उनकी सज्जा करनी चाहिए जिससे वे उत्साहित होंगे।

10. मानचित्रों, आँकड़ों या चित्रों को कई प्रतियों में रखने अथवा प्रदर्शित करने के लिए डुप्लीकेटर भी होना चाहिए।

11. प्रयोगशाला कक्ष में एक पैन्टोग्राफ भी होना चाहिए जिससे आवश्यकतानुसार चित्र या मानचित्र को छोटा बड़ा किया जा सके।

12. छात्रों को युद्ध योजना, वंशावली, अवशेषों के प्राप्ति स्थल, युद्ध मार्गो, जनसंख्या, पैदावार, आमदनी, वंश का उत्थान – पतन से सम्बन्धित व्यापक जानकारी हेतु रेखाचित्रों की उपलब्धता होनी चाहिए।

13. छात्र मॉडल के माध्यम से अपने ज्ञान को अधिक व्यापक तथा स्थायी बना सकते हैं। इसलिए प्रयोगशाला कक्ष में दीवार पर लगे शो–केस में विभिन्न प्रकार के मॉडल जैसे ऐतिहासिक व्यक्तियों, भवनों, स्मारकों, दुर्गो, स्तम्भों, सिक्कों आदि को अवश्य सुसज्जित करके रखा जाना चाहिए।

14. प्रायः मानचित्रों को सुरक्षित रखने के लिए उन्हे लकड़ी के डण्डों में लपेटकर मानचित्र स्टैण्ड पर रख देते हैं जिससे इनके खराब होने का भय बना रहता है। इसलिए मानचित्र कपबोर्ड उपयोग में लाया जाना चाहिए। ये कपबोर्ड क्षैतिज एवं ऊर्ध्वधर दो प्रकार के होते हैं। 2′ X 1′ व्यास के कपबोर्ड में 30 मानचित्र रखकर उनका सुगमता से उपयोग किया जा सकता है।

15. प्रयोगशाला में छात्र विभिन्न प्रकार के कार्य करते हैं अतएव उन सामानों को सुरक्षित ढ़ंग से रखने तथा आवश्यकता पड़ने पर पुनः उन्हे पाने के लिए रैक्स, फाइल कैबिनेट्स, स्टैण्ड्स तथा शैल्फ्स होनी चाहिए। साथ–साथ इन कैबिनेट तथा फाइलों के आवरणों पर आवश्यकतानुसार लेबल भी लगा देना चाहिए।

16. आज शिक्षण कार्य में विभिन्न श्रव्य–दृश्य सामग्री का बहुतायत से प्रयोग किया जा रहा है अतएव सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला भी अत्याधुनिक श्रव्य–दृश्य सामग्री से युक्त होनी चाहिए जिसमे फिल्म प्रोजेक्टर स्लाइड्स, रेडियों, टेप रिकार्डर, कैसेट्स, वीडियों रिकार्डर, टेलीविजन, कैमरा, विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षण के लिए पूर्व तैयार सर्वेक्षण यंत्र आदि सम्मिलित होनी चाहिए।

17. प्रयोगशाला में विभिन्न प्रकार की मापनी जैसे सामाजिक अंत मापनी (Social distance), अभिवृत्ति मापनी (Attitude Scale) आदि की भी उपलब्धता आवश्यक है।

18. प्रयोगशाला की पुस्तकालय में विभिन्न ग्रेडों से सम्बन्धित पुस्तकें, सन्दर्भ पुस्तकें, पत्र पत्रिकाओं आदि का भी पर्याप्त संग्रह होना चाहिए। साथ ही साथ इससे सम्बन्धित उचित साज सज्जा जैसे मैगजीन, स्टैण्ड, बुकट्रक, आलमारियाँ आदि भी होनी चाहिए।

19. जहाँ तक सम्भव हो हर सामाजिक अध्ययन प्रयोगशाला का कक्ष ध्वनिरोधक हो जिससे न तो बाहर का शोर अन्दर आ सके और न ही अन्दर की आवाज बाहर जा सके।

20. प्रयोगशाला की सफाई का भी पूरा ध्यान रखना चाहिए। समय–समय पर सफाई करके व्यर्थ अथवा अनुपयोगी वस्तुओं को बाहर कर देना चाहिए। यदि प्रयोगशाला व्यवस्थित, साफ–सुथरी तथा सुसज्जित होगी तो छात्र उतना ही अधिक कार्य में रूचि लेंगे।

एम0पी मुफात के अनुसार सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला में निम्नलिखित क्रियाओं से सम्बन्धित सामग्री होनी चाहिएः–

- वे कियाएं, जो छात्रों को तत्कालीन घटनाओं, खोजों तथा विज्ञान के विकास के निकट सम्पक्र में रखती हैं।
- वे क्रियाएँ, जो छात्रों की आलोचनात्मक चिन्तन की रीतियों एवं समस्या समाधान कौशलों को ग्रहण करने तथा सामुदायिक साधनों के प्रयोग के लिए तत्पर बनाती हैं।
- वे क्रियाएँ, जो छात्रों को व्यापक शारीरिक तथा बौद्धिक क्षमता प्रदान करती हैं।
- वे क्रियाएँ, जो छात्रों की पहलशक्ति, सृजनात्मकता, मौलिकता तथा आत्म निर्देशन पर अधिक बल देती हैं।
- वे क्रियाएँ, जो सहयोगी कार्यो के माध्यम से लोकतन्त्रीय प्रक्रियाओं से अवगत कराती हैं।
- वे क्रियाएँ, जो समस्त प्रकार की श्रव्य–दृश्य सामग्रियों के प्रयोग पर बल देती हैं।

- वे क्रियाएँ, जो अवकाश के समय के सदुपयोग हेतु लाभप्रद हैं।

<u>बोध प्रश्न</u>

2. उन उपकरणों की सूची बनाइएं जिनकी उपलब्धता प्रयोगशाला में अपेक्षित है।

____
____
____
____

15.3.2 सामाजिक अध्ययन प्रयोगशाला की आवश्यकता

सामाजिक अध्ययन शिक्षण में भी प्रयोगशाला की उसी प्रकार आवश्यकता होती है जिस प्रकार विज्ञान शिक्षण में। इसकी आवश्यकता को हम निम्नलिखित पंक्तियों में देख सकते हैं।

- सामाजिक अध्ययन के दौरान प्रयुक्त होने वाले विभिन्न उपकरण तथा वस्तुएं यथा ग्लोब, मानचित्र, चार्ट, मॉडल, विभिन्न प्रकार के यन्त्र तथा अन्य श्रव्य दृश्य सामग्री को हर समय एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना सम्भव नही है इसलिए इनको एक जगह सुव्यवस्थित ढ़ंग से रखने के लिए प्रयोगशाला कक्ष की आवश्यकता पड़ती है।
- अध्ययन हेतु रूचिकर तथा प्रेरणात्मक वातावरण प्रस्तुत करने के लिए।
- सुविधाजनक ढ़ंग से अधिगम करने हेतु।
- छात्रों को क्रिया करने के लिए पूर्ण एकाग्रता प्रदान करने हेतु।
- छात्रों की रचनात्मक तथा सृजनात्मक क्षमता की अभिव्यक्ति को प्रेरित करने हेतु।
- छात्रों में मिलजुलकर सहयोगात्मक प्रवृत्ति के साथ काम करने की आदत के विकास हेतु।
- विभिन्न चार्टों, मॉडल तथा चित्रों के सुव्यवस्थित ढ़ंग से प्रदर्शन के माध्यम से अपनी सभ्यता तथा संस्कृति का ज्ञान प्रदान करने के लिए।
- विषय की स्वतन्त्रता तथा महत्ता स्थापित करने हेतु।
- वर्तमान शिक्षण विधि में सामाजिक अध्ययन के शिक्षण हेतु मात्र पाठ्य पुस्तक विधि तथा व्याख्यान विधि पर्याप्त नही है वरन समस्या समाधान, स्त्रोत तथा सामूहिक विवेचन विधि जैसी शिक्षण विधियों का प्रयोग भी आवश्यक है। तभी हम छात्रों को सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ–साथ व्यावहारिक ज्ञान दे सकेंगे और इन विधियों का

सफलतापूर्वक प्रयोग केवल प्रयोगशाला कक्ष में ही सम्भव हो सकता है।

बोध प्रश्न

3. सामाजिक अध्ययन के अधिगम हेतु प्रयोगशाला प्रेरणात्मक वातावरण किस प्रकार प्रस्तुत करता है

____

____

____

____

____

15.3.3 सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला का महत्व

प्रयोगशाला की आवश्यकता ही इसके महत्व को भी सिद्ध करती है। इसके महत्व के सन्दर्भ में निम्नांकित कथनों को भी देखा जा सकता है–

1. सामाजिक अध्ययन के कुछ प्रकरण ऐसे होते हैं जिनकी प्रस्तावना निकालने के लिए श्यापपट्ट पर चित्र अथवा रेखाचित्र अथवा वंश वृक्ष बनाना पड़ता है। यदि यह कार्य प्रयोगशाला में किया जाएगा तो अध्यापक इसे सुरक्षित रखते हुए आगे भी इसका प्रयोग कर सकता है। और यदि इस प्रकार का कार्य सामान्य कक्षा में किया जाता है तो कालांश समापन के उपरान्त दूसरे शिक्षक श्यामपट्ट को साफ करके ही अपने विषय का शिक्षण करेंगे। और जब सामाजिक अध्ययन के शिक्षक को ऐसी प्रस्तावना की आवश्यकता होगी तो वह पुनः उसे श्यामपट्ट पर बनायेगा जिससे समय तथा श्रम दोनो का ही अपव्यय होगा। परन्तु प्रयोगशाला इस समय तथा श्रम को बचाती है और विषय की निरन्तरता बनी रहती है।
2. सामाजिक अध्ययन शिक्षण की विभिन्न सहायक सामग्रियों को केवल प्रयोगशाला में ही सुरक्षित रखा जा सकता है न कि सामान्य कक्षाओं में।
3. समस्या समाधान विधि, योजना विधि तथा स्त्रोत विधि का सफलतापूर्वक प्रयोग प्रयोगशाला में ही सम्भव है।
4. छात्र प्रयोगशाला में क्रिया द्वारा सीखने का अवसर प्राप्त करते हैं क्योकि जब वह वहाँ की विभिन्न सामग्रियों का सुव्यवस्थित ढ़ंग से सजा पाता है तो वह कार्य करने हेतु अन्तः से प्रेरित होता है।
5. प्रयोगशाला में प्रयोग द्वारा किया गया कार्य ज्ञान को वास्तविक स्वरूप प्रदान करने में सहायक होता है।
6. प्रयोगशाला में छात्र किसी समस्या को लेकर उससे सम्बन्धित तथ्यों का संकलन करता है, विश्लेषण और संश्लेषण करके तथ्यों का सामान्यीकरण करता है। इस प्रकार वैज्ञानिक पदों का अनुसरण करने से उसमे वैज्ञानिक अभिवृत्ति का विकास होता है।

7. प्रयोगशाला छात्रों के सैद्धान्तिक ज्ञान का व्यावहारिक पहलु दर्शा कर उसके ज्ञान को उपयोगी बनाता है।

8. इसमे छात्रों का अपनी रूचि, योग्यता, क्षमता तथा आवश्यकतानुसार कार्य करने का अवसर प्राप्त होता है जिससे उनमे स्वानुशासन की भावना प्रबल होती है।

9. छात्रों में आत्मनिर्भरता के साथ कार्य करने की प्रवृत्ति का विकास होता है।

10. छात्रों में सहयोग, मित्रता, मिलजुल कर कार्य करने तथा सामाजिक कौशलों का विकास केवल प्रयोगशाला की कार्य पद्धति से ही सम्भव हो पाता है।

11. प्रयोगशाला के उपयुक्त वातावरण में छात्रों को चार्ट, मॉडल, चित्र तथा रेखाचित्र बनाने का स्वतन्त्र अवसर प्राप्त होता है। इससे उनकी रचनात्मक तथा सृजनात्मक क्षमता निखर कर बाहर आती है।

12. चूंकि प्रयोगशाला में विभिन्न पाठ्य पुस्तकें, सन्दर्भ ग्रन्थ तथा पत्र पत्रिकाएं भी उपलब्ध होती है इसलिए छात्रों को अपना दत्त कार्य (Home work) करने में बहुत सहायता मिलती है।

13.प्रेरणास्पद तथा प्रभावपूर्ण शिक्षण एवं अधिगम में प्रयोगशाला अत्यन्त सहायक होती है।

<u>बोध प्रश्न</u>

4. प्रयोगशाला छात्रों में स्वानुशासन की भावना उत्पन्न करने में किस प्रकार सहायक है।

____
____
____
____

15.3.4 प्रयोगशाला के सन्दर्भ में व्यावहारिक समस्याएं

सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला की व्यवस्था में कुछ व्यावहारिक समस्याएं भी है जैसेः–

- प्रयोगशाला के लिए आवश्यक संसाधनों को एकत्र करना कठिन होता है जिसके लिए अध्यापक श्रम नही करना चाहते।
- कुछ छात्र भी ऐसे होते हैं जो नये उपागमों को ग्रहण करने में अरूचि दिखाते हैं और मात्र पुस्तक का सहारा लेकर पढ़ना चाहते हैं।
- प्रयोगशाला के रख रखाव के लिए परिश्रमी तथा कुशल और दक्ष अध्यापक की ही आवश्यकता पड़ती है जो इस कार्य के लिए पूर्णतया समर्पित हों। परन्तु आज ऐसे अध्यापकों का आभाव है।
- इसमे समय का भी बहुत अपव्यय होता है क्योकि विभिन्न जानकारियों तथा कार्यो

के लिए छात्रको इसमे लगना पड़ता है जिससे छात्रों के शेष कालांश में व्यवधान उत्पन्न होता है।

- भारत जैसे देश में जहां सामाजिक अध्ययन हेतु एक कक्ष बनाना मुश्किल है (कुछ विद्यालयों के सन्दर्भ में) वहाँ प्रयोगशाला का निर्माण अत्यन्त व्यय साध्य पड़ जाता है।

<u>बोध प्रश्न</u>

5. प्रयोगशाला की सुव्यवस्था का सम्बन्ध अध्यापक से किस प्रकार होता है।

____
____
____
____

15.3.5 सामाजिक अध्ययन प्रयोगशाला का संगठन

किसी भी कार्य की कुशलता उसके सफल नियोजन, प्रबन्धन तथा संगठन पर निर्भर करती है। इसीलिए प्रयोगशाला के माध्यम से भी छात्र सामाजिक अध्ययन के उद्देश्यों को प्राप्त कर एक सफल और आदर्श नागरिक बन सके, इसके लिए प्रयोगशाला के सन्दर्भ में भी उचित नियोजन तथा संगठन पूर्व निर्धारित होना चाहिए। जैसा कि पूर्व नियोजन के आधार पर सभी को अपने–अपने कर्तब्य दे दिये जाएं तो कार्य की सफलता सुनिश्चित होती है। इसी प्रकार प्रयोगशाला की व्यवस्था में भी अध्यापक को छात्रों की विभिन्न समितियाँ बनाकर उन्हे उनके–उनके कर्तव्यों तथा दायित्वों को सौंप देना चाहिए। इससे छात्रों में अपने–अपने उत्तरदायित्वों के प्रति सजगता आयेगी, सामूहिक रूप से कार्य करने की आदत विकसित होगी तथा उनमे नेतृत्व की भावना का विकास होगा जो प्रजातन्त्रात्मक समाज के लिए भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

अध्यापक द्वारा प्रत्येक शैक्षणिक सत्र के प्रारम्भ में ही छात्रों को उनकी क्षमता तथा योग्यता के अनुसार प्रयोगशाला से जुड़े हुए विभिन्न उत्तरदायित्व सौंप देना चाहिए। उसे विभिन्न प्रकार की समिति का निर्माण करके उन प्रत्येक समितियों का अध्यक्ष भी किसी योग्य विद्यार्थी को बना देना चाहिए। इस सन्दर्भ में बनाई जाने वाली निम्नलिखित समितियाँ हो सकती हैं:–

1. सामग्री को वितरित तथा एकत्रित करने वाली समिति।
2. बड़ी संस्थाओं से सम्पक्र करने वाली समिति जो आवश्यकतानुसार सामग्रियों को अपने अध्यापक के निर्देशन में एकत्र करने का कार्य करेंगे।
3. पुस्तकों तथा पत्र पत्रिकाओं का चुनाव तथा क्रय करने वाली समिति।
4. बुलेटिन बोर्ड की सज्जा करने वाली समिति।
5. चित्रों, चार्टों, तथा मॉडलों को सुव्यवस्थित करने वाली समिति।
6. रचनात्मक कार्य के समय आवश्यक वस्तुओं को छात्रों को निर्गत करने वाली समिति।

7. प्रयोगशाला के सम्पूर्ण रख रखाव करने वाली समिति ।

उपरोक्त समितियाँ सामाजिक अध्ययन के निर्देशन में ही काम करेंगी तथा अपने –2 उत्तरदायित्वों का पालन करते हुए प्रयोगशाला के उद्देश्य को सफल बनाएंगी।

बोध प्रश्न

6. प्रयोगशाला छात्रों में प्रजातान्त्रिक भावना को विकसित करने में किस प्रकार सहायक है।

____

____

____

____

15.4 कक्षा के अन्दर तथा कक्षा के बाहर सामाजिक अध्ययन

प्राकृतिक विज्ञान में तो विविध प्रकार के यंत्रो तथा पदार्थो से युक्त प्रयोगशालाएं होती हैं जिनका निर्माण विद्यालयों में किया जाता है। परन्तु सामाजिक अध्ययन के सन्दर्भ में कहा जाता है कि यह सम्पूर्ण ब्रह्याण्ड ही उसकी प्रयोगशाला है और यहां की समस्त सामग्रियाँ उस प्रयोगशाला की अध्ययन सामग्री। जिनका अध्ययन बालक समाज में रह कर तथा सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के दौरान प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से करता है। यद्यपि सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला का सम्प्रत्यय अभी भी कुछ विद्यालयों में शैशवास्था में है परन्तु कुछ विद्यालयों में यह पूर्ण रूप से विकसित तथा सुसज्जित है।

1. कक्षा के अन्दर सामाजिक अध्ययन– कुछ वर्ष पूर्व इसका शिक्षण और अधिगम पाठ्य पुस्तक के माध्यम से ही मुख्य रूप से अध्यापक द्वारा कक्षा में किया जाता था जहाँ अध्यापक व्याख्यान के साथ आवश्यकतानुसार भौगोलिक स्थलों की सीमाओं को मानचित्र तथा ग्लोब के माध्यम से स्पष्ट करता था। विभिन्न ऐतिहासिक इमारतों, स्मारकों तथा स्थलों को वह विभिन्न चित्रों के माध्यम से समझाता था और छात्र भी उन्हे देखकर अपनी कल्पना में उन्हे मूर्त रूप देते थे। परन्तु समय के साथ–साथ ज्ञान – विज्ञान के क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन आया। तकनीकी ने शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश किया। परिणामतः विभिन्न श्रव्य दृश्य सामग्रियों का उपयोग किया जाने लगा। इन सामग्रियों का प्रयोग सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के लिए तो वरदान साबित हुआ। क्योकि जिन चित्रों को पहले छात्र कागज पर देख कर अपनी सभ्यता और संस्कृति की कल्पना करते थे, आज उन्हे टेलीविजन, वीडियों कैसेट्स के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से देख सकते हैं। देश की अर्थव्यवस्था और भौगोलिक सम्पदा के विषय में जान पाते हैं। समाज में हो रहे नित नए परिवर्तन तथा प्रगति का आंकलन वे इन्ही श्रव्य – दृश्य सामग्री के माध्यम से कर पा रहें हैं। आज वे इन्ही माध्यमों की सहायता से औद्योगिक, कृषि, तकनीकी, विज्ञान, कला, वाणिज्य, अभियान्त्रिकी आदि क्षेत्रों में विभिन्न जानकारी प्राप्त कर भविष्य में अपनी रोजगार की सम्भावनाओं को तलाशने में समर्थ हो रहे हैं। आज की मनोवैज्ञानिक शिक्षा पद्धति में अध्यापक सिफ्र पुरानी शिक्षा पद्धति चॉक एण्ड

टॉक का ही प्रयोग नही करता वरन छात्रों के साथ चर्चा – परिचर्चा करता है, उन्हे वैज्ञानिक पद्धति के माध्यम से समस्या समाधान हेतु प्रेरित करता है साथ ही साथ तक्र–वितक्र, विश्लेषण–संश्लेषण कर किसी भी तथ्य के सामान्यीकरण हेतु उन्हे उत्साहित करता है। आज छात्र इन्टरनेट के माध्यम से प्रत्येक प्रकार की जानकारी कक्षा के अन्दर ही बैठकर प्राप्त कर सकता है और अध्यापक उनको मार्ग निर्देशन देता रहता है। इस प्रकार आज कक्षा के अन्दर भी सामाजिक अध्ययन का शिक्षण अधिगम प्रयोगशाला तथा विभिन्न श्रव्य दृश्य सामग्रियों के माध्यम से अत्यन्त रोचकता, जीवन्तता तथा यर्थाथता के साथ किया जा रहा है।

2. कक्षा के बाहर सामाजिक अध्ययनः– पठन का कार्य उस समाज से जितना अधिक निकट रहकर करना अत्यन्त लाभप्रद होता है जिस समाज में बालक रहता है। छात्रों के परिवेश में उसका घर, परिवार, विद्यालय, समूह, समुदाय के अतिरिक्त भी बहुत से साधन तथा स्रोत आते हैं जो सामाजिक अध्ययन के छात्रों को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से बहुत कुछ सिखाते हैं जिनका विस्तार में अध्ययन आपने इकाई – 13 के अधिगम संसाधन के अन्तर्गत किया है। इन संसाधनों से छात्रों के ज्ञानार्जन में तो वृद्धि होती है साथ ही साथ उनकी ऐतिहासिक अभिवृत्तियों का विकास होता है और उनमे विभिन्न कुशलताएं तथा रूचियाँ भी विकसित होती हैं। वास्तव में छात्र के परिवेश की भौगोलिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक तथा राजनैतिक बातें सामाजिक अध्ययन के शिक्षण सम्बन्धित विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति में अत्यन्त सहायक है। इस विषय का जो सैद्धान्तिक ज्ञान छात्र कक्षा के अन्दर करता है उसका व्यावहारिक ज्ञान वह कक्षा के बाहर प्राप्त करने में सफल होता है। बस आवश्यकता है छात्रों को इन पहलुओं से अवगत कराने की, उन्हे इन वास्तविकताओं को अपने संज्ञान में लेने हेतु प्रेरित करने की और उनके साथ चर्चा – परिचर्चा करने की, जिसका उत्तरदायित्व अभिभावक और शिक्षक दोनो का ही है। और इसके लिए भ्रमण सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा उपयोगी विधि है जिसका आयोजन कर छात्रों को कक्षा के बाहर भी सामाजिक अध्ययन की शिक्षा अत्यन्त रूचिकर ढंग से दी जा सकती है। इससे छात्रों का न केवल ज्ञानवर्द्धन होता है वरन उनका मनोरंजन भी होता है। भ्रमण हेतु अध्यापक अपने छात्रों को ऐतिहासिक भवन, दुर्ग, युद्ध क्षेत्र (कुरूक्षेत्र, पानीपत, हल्दीघाटी आदि), संग्रहालय, प्राचीन राजधानियाँ, शिक्षा केन्द्र (तक्षशिला, नालन्दा आदि), ऐतिहासिक खनन क्षेत्र (मोहनजोदड़ो, हड़प्पा), मकबरें, गुफाएँ, स्तूप, प्राणि विज्ञान उद्यान, चर्च, संगोष्ठी, नाट्य समारोह, प्रदर्शनी, शैक्षिक तीर्थ स्थल (Literary Shrines), वेधशाला (Observatary) संगीत, नाटक, औद्योगिक क्षेत्रों आदि स्थलों पर ले जा सकता है जिससे होने वाले लाभों को आप निम्नलिखित पंक्तियों में देख सकते हैं–

- छात्रों को वास्तविक जगत का बोध होता है।
- उन्हे मानवीय सम्बन्धों की अनुभूति होती है।
- सामाजिक समस्याओं से अवगत हो उनके समाधान के लिए प्रेरित होते हैं।
- कक्षा में अध्यापक द्वारा बताई गई बातें मस्तिष्क में हो जाती है।
- ऐतिहासिक गूढ़ तथ्य भी सरल बन जाते हैं।
- ऐतिहासिक भ्रमण से अपने देश की प्राचीन उपलब्धियों के प्रति उनमे आदर भाव जागृत होता है।

- प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का साक्षात दर्शन हो जाता है। जगह–जगह की वेश–भूषा, रहन–सहन, खान–पान तथा धार्मिक आचरण का ज्ञान प्राप्त हो जाता है।
- छात्रों में उत्तरदायित्व निभाने की क्षमता, पारस्परिक सहयोग तथा सद्भावना की भावना विकसित होती है।
- छात्रों में सोचने – समझने, निरीक्षण करने तथा सौन्दर्यानुभूति करने का आदत विकसित होती है।
- उनके स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को बल मिलता है।
- उनमे स्वानुशासन की भावना प्रबल हो जाती है।
- सबसे बड़ी बात कक्षा – शिक्षण की नीरसता समाप्त हो जाती है।
- कक्षा के बाहर का ज्ञान छात्रों कें ज्ञान को पूर्ण एवं आधुनिक बनाता है।
- वसुधैव कुटुम्बकम की भावना विकसित होती है।
- छात्रों में विभिन्न महत्वपूर्ण चित्रों, नमूनों और पुरानी वस्तुओं के संग्रह की प्रवृत्ति विकसित होती है।

बोध प्रश्न

7. कक्षा में किन उपकरणों का सरलतापूर्वक प्रयोग करते हुए अध्यापक अपने छात्रों को सामाजिक अध्ययन का ज्ञान प्रदान कर सकता है।

____

____

8. भ्रमण हेतु उन स्थलों की सूची बनाइए, जिनके माध्यम से छात्रों का ज्ञानवर्द्धन किया जा सकता है।

____

____

15.5 सारांश

इस प्रकार प्रस्तुत इकाई में आपने सामाजिक अध्ययन विषय के शिक्षण तथा अधिगम हेतु प्रयोगशाला का प्रयोग तथा उसकी उपयोगिता का अध्ययन किया। साथ ही साथ आपने यह भी देखा कि प्रस्तुत विषय की शिक्षा को अब मात्र कक्षा के अन्दर नही वरन कक्षा के बाहर भी विभिन्न उपलब्ध संसाधनों के प्रयोग के माध्यम से अत्यन्त रोचक तथा सरसता के साथ प्राप्त किया जा सकता है।

15.6 अभ्यास कार्य

1. सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला हेतु अपेक्षित उपकरणों की सूची बनाते हुए आप उसकी व्यवस्था किस प्रकार करेंगे, इसका वर्णन कीजिए।

2. छात्रों में ऐतिहासिक अभिवृत्ति विकसित करने के लिए आप क्या प्रयास करना उचित समझते है, लिखिए।

3. भ्रमण या पर्यटन सामाजिक अध्ययन के लिए किस प्रकार उपयोगी है।

15.7 चर्चा के बिन्द

1. प्रयोगशाला छात्रों में जनतान्त्रिक गुणों का विकास करती है।

2. प्रयोगशाला के उचित रखरखाव तथा सुव्यवस्था के लिए समितियों का निर्माण आवश्यक है।

3. भ्रमण के माध्यम से प्राप्त ज्ञान और अनुभव स्थायी होता है।

15.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ऐसी तमाम सामग्रियाँ, जो छात्रों को उनके अतीत से परिचित कराकर उन्हे वर्तमान की समुचित जानकारी दे सकें, को सामाजिक अध्ययन कक्ष में रखा जाता है, जहॉ प्रतिदिन छात्र अपनी जिज्ञासाओं को शान्त कर सकते हैं, उस कक्ष को सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला कहते हैं। इस कक्ष में सामाजिक अध्ययन के अनुदेशन से सम्बन्धित समस्त लिखित, श्रव्य एवं दृश्य सामग्री रखी जाती हैं।

2. पर्याप्त प्रकाश तथा हवा से युक्त एक विशाल कक्ष में हल्के तथा आरामदायक फर्नीचर, मेज, चॉक, बोर्ड, सन्दर्भ पुस्तकें, पत्र पत्रिकायें, मैगजीन, महत्वपूर्ण पुस्तकों तथा ऐतिहासिक ग्रन्थों से सुसज्जित आलमारी, दिन प्रतिदिन में घटित होने वाली घटनाओं से सम्बन्धित चार्ट, रेखाचित्र, देश–विदेश के समाचार तथा अभिलेखों के छायाचित्रों को दर्शाने के लिये बुलेटिन बोर्ड, बैरोमीटर, थर्मामीटर, दिशा सूचक यंत्र, पवन तथा नक्षत्रों को बताने वाले यन्त्र, एटलस, नक्शे, ग्लोब, चित्रों को छोटा या बड़ा करने के लिये पैन्टोग्राफ, विभिन्न मॉडल, विभिन्न प्रकार की श्रव्य दृश्य सामग्री, आदि की उपलब्धता अपेक्षित है।

3. सामाजिक अध्ययन शिक्षण में भी प्रयोगशाला की उसी प्रकार आवश्यकता होती है जिस प्रकार विज्ञान शिक्षण में। विभिन्न वांछित, उपयोगी तथा ज्ञान वर्धक सामग्रियों से युक्त सामाजिक अध्ययन की प्रयोगशाला छात्रों को अध्ययन हेतु रूचिकर तथा प्रेरणादायक वातावरण प्रस्तुत करती है। चूंकि समस्त अध्ययन सामग्री की उपलब्धता एक ही जगह होती है इसलिये ये प्रयोगशाला छात्रों को अध्ययन हेतु प्रेरणात्मक वातावरण प्रस्तुत करता है।

4. प्रयोगशाला में सहयोग, मित्रता, मिलजुलकर कार्य करने से विभिन्न सामाजिक कौशलों का विकास होता है। जब वे अपनी रूचि, योग्यता, क्षमता तथा आवश्यकतानुसार कार्य करते हैं तो उनमें स्वानुशासन या आत्मानुशासन की भावना उत्पन्न होती है। चूंकि यह प्रयोगशाला छात्रों को सदैव व्यस्त रहने का वातावरण प्रस्तुत करता है इसलिये भी छात्रों में स्वानुशासन में रहने की आदत विकसित हो जाती है।

5. सामाजिक अध्ययन के प्रयोगशाला की सुव्यवस्था का सम्बन्ध अध्यापक से होता है। वह कक्ष की प्रत्येक सहायक सामग्री के रखरखाव तथा उसमें वांछित परिवर्तन के लिये पूर्ण रूप से उत्तरदायी होता है। यदि वह कुशल, परिश्रमी तथा दक्ष अध्यापक है तो प्रत्येक सहायक सामग्री को सुव्यवस्थित ढंग से रखेगा, जिससे सभी उससे लाभान्वित हो सके। सुव्यवस्था के इसी क्रम में वह साफ– सफाई पर भी विशेष ध्यान देगा। सामाजिक अध्ययन का अध्यापक अपनी प्रयोगशाला को जितना सुव्यवस्थित, साफ–सुथरी तथा सुसज्जित रखेगा, तो छात्र भी उतना ही अधिक अधिगम के लिये प्रेरित होंगे।

6. किसी भी कार्य की कुशलता उसके सफल नियोजन, प्रबन्धन तथा संगठन पर निर्भर करती है। इसलिये प्रयोगशाला के माध्यम से सामाजिक अध्ययन के व्यावहारिक उद्देश्यों को प्राप्त कराकर छात्रों में प्रजातान्त्रिक गुणों का विकास किया जा सकता है। प्रयोगशाला के सन्दर्भ में अध्यापक द्वारा छात्रों की विभिन्न समितियॉ बनाकर उन्हे उनके कार्यो तथा उत्तरदायित्वों को सौप देना चाहिये। इससे छात्रों में कर्तव्यपालन की सजगता आयेगी, सामूहिक रूप से कार्य करने की आदत विकसित होगी तथा उनमें नेतृत्व की भावना का विकास होगा, जो उनमें प्रजातान्त्रिक गुणों के विकास में सहायक होगा।

7. सामाजिक अध्ययन का अध्यापक अपनी कक्षा में ग्लोब, मानचित्र, चित्र, एटलस, मॉडल, चार्ट, रेखाचित्र, विभिन्न सिक्कों, तथा आवश्यकता के अनुसार विभिन्न श्रव्य–दृश्य शिक्षण सामग्रियों का उपयोग करते हुये छित्रे को विषय का ज्ञान अत्यन्त रोचक, सुबोध तथा प्रेरक ढंग से प्रदान कर सकता है।

8. सामाजिक अध्ययन के शिक्षण के दौरान छात्रों के ज्ञानवर्द्धन के साथ – साथ यदि मनोरंजन भी हो, तो वे अधिक उत्साह के साथ अधिगम करेंगे। इसके लिये भ्रमण सर्वोत्तम है। भ्रमण हेतु अध्यापक अपने छात्रों को ऐतिहासिक भवन, दुर्ग, युद्ध क्षेत्र (कुरूक्षेत्र, पानीपत, हल्दीघाटी आदि) संग्रहालय, प्राचीन राजधानियॉ, शिक्षा केन्द्र (तक्षशिला, नालन्दा), ऐतिहासिक खनन क्षेत्र (मोहनजोदड़ो, हड़प्पा), मकबरें, गुफाएँ, स्तूप, प्राणि विज्ञान, उद्योग, चर्च, संगोष्ठी, नाट्य समारोह, प्रदर्शनी, शैक्षिक तीर्थ स्थल, वेधशाला, संगीत, नाटक, औद्योगिक क्षेत्रों आदि का चयन कर सकता है जिससे छात्रों को वास्तविकता तथा बोधगम्यता के साथ ज्ञानार्जन का अवसर प्राप्त होता है।

15.9 सन्दर्भ पुस्तके

1. अग्रवाल जे0 सी0–टींचिग ऑफ सोशल स्टडीज, बैगलोर।

2. चन्द्र, सोती शिवेन्द्र तथा वर्मा, वीरेन्द्र – सामाजिक विज्ञान शिक्षण, इण्टरनेशनल पब्लिंशिग हाउस मेरठ